CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमारे ये पशु-पक्षी

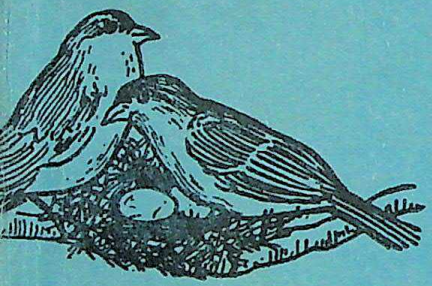

श्रीचन्द्र जैन

3537
3531

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

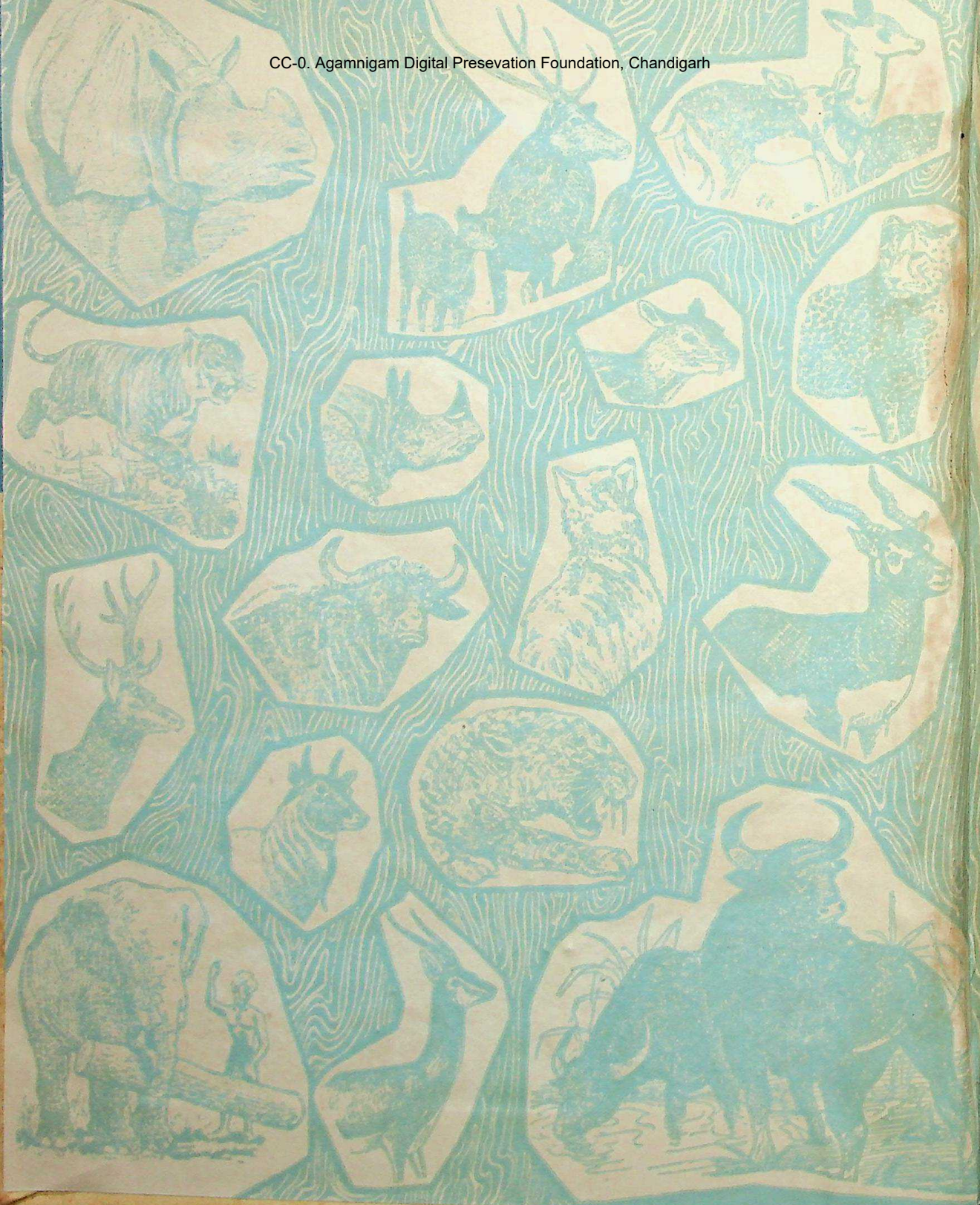

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जंगल तथा शिकार-साहित्य

(Wild-Life & Jungle-Lore)

हमारे ये पशु-पक्षी : श्रीचन्द्र जैन	(सचित्र)	12·50
हमारे वन्य पशु : राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह	(पुरस्कृत, सचित्र)	3·00
जंगल की ओर : सुरेश वैद्य	(सचित्र)	6·00
वनराज के राज में : विराज	(पुरस्कृत, सचित्र)	4·00
मचान पर उनंचास दिन : श्री निधि	(सचित्र)	6·00
मालिनी के वनों में : श्री निधि	(पुरस्कृत, सचित्र)	6·00
शिवालक की घाटियों में : श्री निधि	(सचित्र)	5·00
अजगर : रामेश बेदी	(सचित्र)	1·50
चिड़ियाघर की सैर : पृथ्वीनाथ शर्मा	(सचित्र)	1·50
सरीसृप : रमेशचन्द्र प्रेम	(सचित्र)	1·50
दानवसरट : रमेशचन्द्र प्रेम	(सचित्र)	1·50

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-6

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गैंडा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमारे ये पशु-पक्षी

प्रो. श्रीचन्द्र जैन

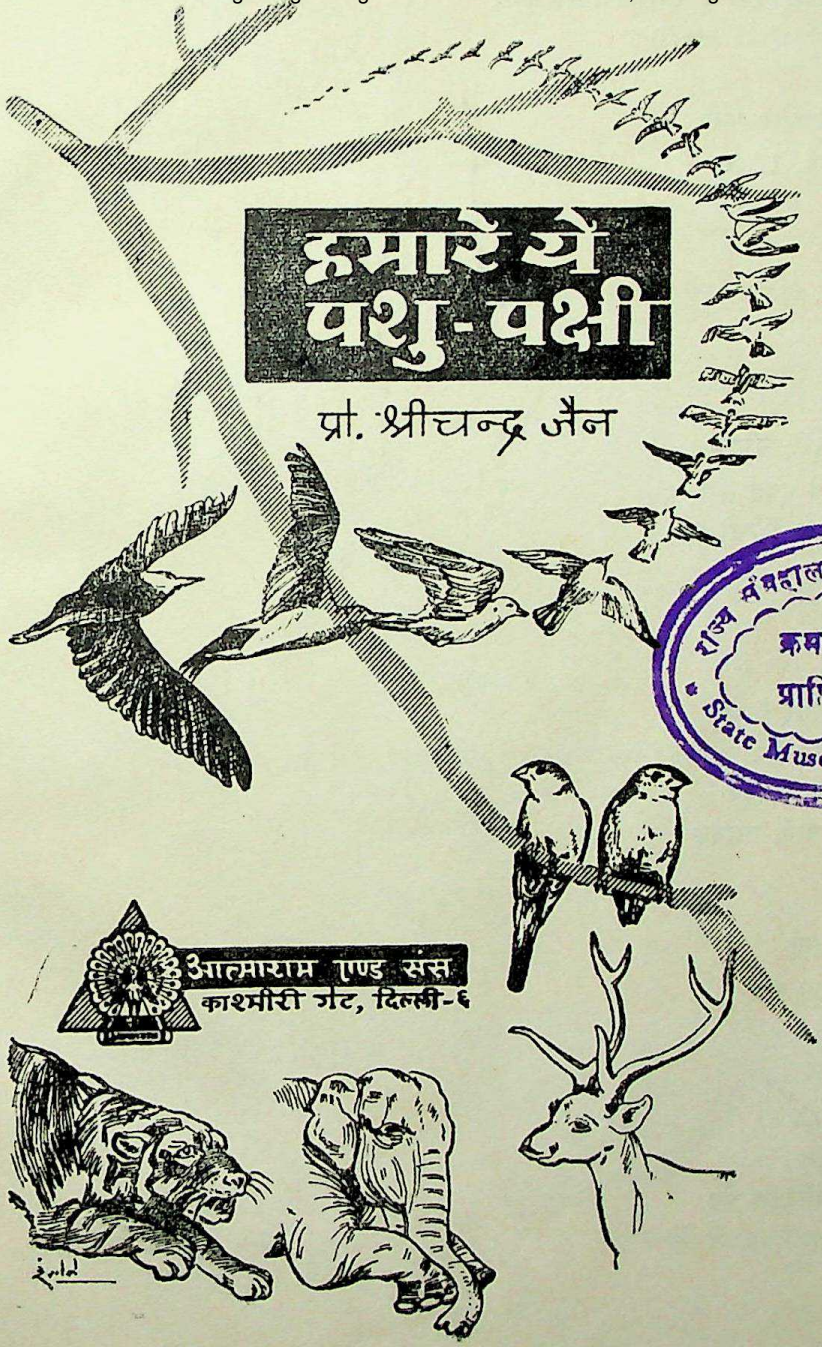

राज्य संग्रहालय
क्रम सं. 3537
प्राप्ति तिथि 30/1/68
State Museum, Library, J&K.

आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

HAMARE YE PASHU-PAKSHI

(*Our Animals & Birds*)

by

Shri Chandra Jain

Price : Rs. 12.50

© 1967, ATMA RAM & SONS, DELHI-6

प्रकाशक
रामलाल पुरी, संचालक
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-6

591
ज ह

शाखाएँ
हौज़ खास, नई दिल्ली
विश्वविद्यालय क्षेत्र, चण्डीगढ़
चौड़ा रास्ता, जयपुर
17-अशोक मार्ग, लखनऊ

प्रथम संस्करण
मूल्य : 12.50 रुपए

मुद्रक
सत्यपाल धवन
दी सैण्ट्रल इलैक्ट्रिक प्रेस
80-डी, कमला नगर, दिल्ली-7

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुरुवर्थ

डॉ० धीरेन्द्र वर्मा

एम० ए०, डी० लिट्

उपकुलपति

जबलपुर विश्वविद्यालय, जबलपुर

को

सश्रद्धा समर्पित

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भूमिका

पशु-पक्षी मानव के चिरन्तन साथी हैं। इनके अभाव में यह विराट् सृष्टि सौन्दर्यहीन तथा आकर्षण-विकर्षण रहित हो जायगी। इन प्राणियों के अस्तित्व से ही धरित्री वसुन्धरा बनी है और गिरि-कानन आमोद-प्रमोद के केन्द्र कहलाए हैं। उड़ते हुए नभचरों ने आकाश की नीलिमा को नापा है और गर्जना करते हुए सिंहों ने विस्तृत जंगलों की परिधि को निश्चित किया है।

प्रकृति-सुषमा के सहज उपकरण जगती के जीवन को संतुलित रखते है। काननों की हरीतिमा के ये ही शृंगार हैं। धरती की सुनहली फसलें इन पशु-पक्षियों के माध्यम से ही सुरक्षित रहती हैं। विहंग यदि हानिकारक कीड़ों का भक्षण न करें तो कृषि के उत्पादन की मात्रा बहुत ही कम हो जाएगी। इसी प्रकार खेती के विनाशक उपादानों को अनेक पशु नष्ट करते रहते हैं। विश्व का समस्त साहित्य एवं कलाएँ इन प्राणियों के सहचर्य से ही अलंकृत हुई हैं। प्रकृति और जीवन का सम्पर्क इन जीवों के ही द्वारा चिरकाल से सशक्त बनता चला आ रहा है। समन्वय की साधना आदि-मानव ने पशु-पक्षियों से ही सीखी है। मानसिक चेतना का उद्बोधन, अनुभूति की सघनता, आन्तरिक भावों की सहज अभिव्यक्ति, जीवन-संघर्ष-क्षमता आदि की उपलब्धि में इस स्वचेतनशील मानव ने पशु-पक्षी-जगत से ही सब कालों में सहायता प्राप्त की है।

इन जीवों की प्रत्यक्ष सार्थकता से प्रभावित होकर ही तो देवी-देवताओं ने इनको अपनाया है। स्वर्ग का सुरम्य नंदन वन-विहंगों के कलरव से आज भी मनमोहक बना हुआ है। भगवान् शंकर का कैलाश वृषभ के पद-चाप से न मालूम कब से शब्दायमान हो रहा है। भगवती दुर्गा का पराक्रम सिंह की बलवती शक्ति से साकार बना है। लक्ष्मीपति विष्णु की करुणाद्रता गरुड़ के अभाव में शीघ्र फलवती न बन पाती।

प्रकृति के आधार प्राणि-वर्ग तथा वनस्पति के प्रति आज हमारी केवल काल्पनिक सहानुभूति रह गई है। फलतः हमारा जीवन-कुसुम अपने सहज सुख-सौरभ को खो बैठा है। हमारे ऊपर विपत्तियों के बादल मँडरा रहे हैं। वर्षा का अभाव, अन्न की अपर्याप्त प्राप्ति, रोगों की वृद्धि, रसवती पृथ्वी की शुष्कता आदि आज हमारे राष्ट्र के लिए समस्याएँ बन गई हैं।

मुझे प्रसन्नता है कि श्री श्रीचन्द्र जैन ने 'हमारे ये पशु-पक्षी' नामक पुस्तक लिखकर एक अभाव की पूर्ति की और वैज्ञानिक विषय को साहित्यिक रूप दिया है। वे हमारे साधुवाद के पात्र हैं।

हिन्दी-साहित्य की श्रीवृद्धि ऐसी ही रचनाएँ करेंगी। लेखक की शैली सरस और आकर्षक है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मैं श्री सागरीय को भी धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकता, जिनकी प्रेरणा से ही ऐसी सुन्दर रचना हमारे सामने आ सकी। वह वन-वर्धन तथा वन-जीव-सुरक्षा की ओर जनता को आकर्षित करने के लिए जो प्रयास कर रहे हैं, वे सराहनीय तथा अनुकरणीय हैं।

विश्वास है कि श्री जैन की इस कृति को समुचित सम्मान प्राप्त होगा।

जड़ चेतन जग जीव जे,
सकल राममय जानि।
बंदउँ सबके पद कमल,
सदा जोरि जुग-पानि।

—पंजाबराव देशमुख

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दो शब्द

मानव-समाज के साथ पशु-पक्षियों का सतत सहचर्य है। सौन्दर्य-बोध की आस्था को परिष्कृत बनाने वाले ये विहंग और पशु ही हैं। विविध कलाओं की सृष्टि में इन प्राणियों का योगदान असाधारण है। ये मूक होकर भी वाग्पटु हैं, निरीह होकर भी समर्थ हैं, ज्ञान-हीन होने पर भी प्रबुद्ध हैं, निरालम्ब होकर भी जन-जन के आश्रयदाता हैं और आबद्ध होकर भी स्वतंत्रता को जीवित रख रहे हैं।

प्रकृति की रमणीयता के ये प्रमुख उपकरण हैं, साहित्य-सर्जना के प्रधान आधार हैं, एवं प्रबोधन के सरस उदाहरण हैं।

विश्व का समस्त साहित्य इनकी गाथाओं से परिपूर्ण है। इनके अभाव में मेधा कुंठित हो जायेगी, विचारणा भ्रमित होगी, साधना विक्षुब्ध बनेगी, और कामना असुन्दर बन जाएगी। ये पशु-पक्षी ही वसुन्धरा की हरियाली को अमरत्व प्रदान करते हैं, कानन की हरीतिमा को रम्य बनाते हैं, गगन की असीमित सीमा को अक्षुण रखते हैं एवं पवन के वेग में क्षिप्रता लाते हैं।

सत्य तो यह है कि यदि ये बहुरंगी विहंग न हों तो कल्पना की रंगीन मधुरिमा ही नष्ट हो जाय और पशु न हों तो मानवता पग-पग पर हताश होकर निष्प्रभ बन जाय।

ईश्वरत्व की भावना को साकार बनाने वाले ये द्विज (नभचर) और चतुष्पद हैं। इनका संरक्षण ही जीवन की रक्षा है तथा इनकी समुन्नति में ही जन-जन का उत्कर्ष सार्थक है।

प्रत्येक युग ने अपने जीवन की समृद्धि को इन जीवों के संवर्धन के साथ आँका है। ऐसी स्थिति में यह हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि हम इन्हें सुख से जीने दें और स्वयं जियें।

इस रचना से यदि मानव-मन इन प्राणियों के प्रति आकृष्ट हो सका तो मैं अपने प्रयास को सफल समझूँगा।

आदरणीय श्री कामताप्रसाद जी सागरीय, आई० एफ० एस० भूतपूर्व मुख्य वन-संरक्षक, मध्यप्रदेश का मैं अत्यधिक आभारी हूँ, जिन्होंने समय-समय पर आवश्यक साहित्य की उपलब्धि कराकर मुझे इस पुस्तक के लिखने के लिए सतत प्रोत्साहित किया। वस्तुतः विशिष्ट अवसरों पर पशु-पक्षियों के सम्बन्ध में दिये गए सागरीयजी के विद्वत्तापूर्ण भाषणों ने ही मेरे मानस में इन भोले-भाले प्राणियों के प्रति सहज आकर्षण उत्पन्न किया है। रचना को उपयोगी बनाने के लिए उन्होंने अपने लेखों को भी इसमें संग्रहीत करने की कृपापूर्वक अनुमति प्रदान की है।

माननीय डॉ० पंजाबराव देशमुख के प्रति मैं हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ जिन्होंने अत्यन्त कार्य-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

व्यस्त रहते हुए भी प्रस्तावना लिखने की कृपा की थी। खेद है कि प्रयास करने पर भी यह पुस्तक उनके जीवन-काल में प्रकाशित न हो सकी।

मैं उन भाषाओं के विद्वानों का भी कृतज्ञ हूँ जिनकी रचनाओं का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में उपयोग करके मैंने अपने प्रतिपाद्य विषय को सुगम एवं रोचक बनाया है।

श्रीमान् रामलाल जी पुरी, संचालक आत्माराम एण्ड संस, तथा प्रिय भाई योगेन्द्रकुमार लल्ला के प्रति मैं आभार प्रदर्शित करता हूँ जिन्होंने पुस्तक को सुसज्जित रूप में प्रकाशित करने की व्यवस्था की है।

—श्रीचन्द्र जैन

जुलाई, 1967

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

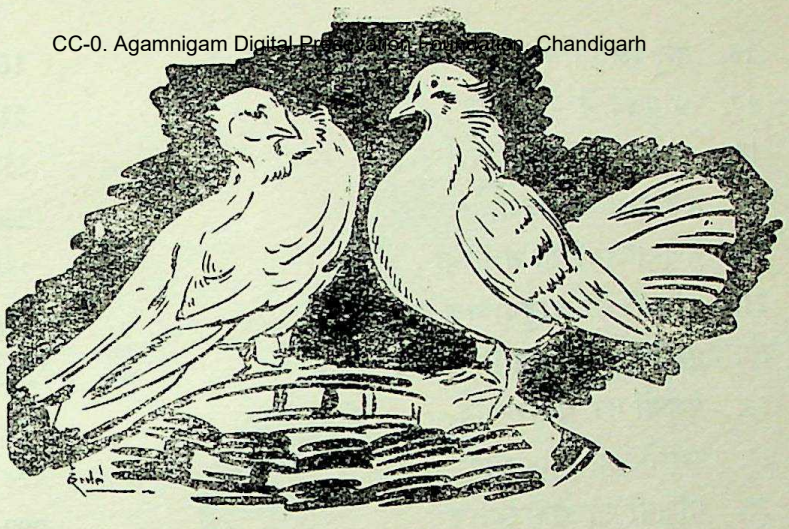

क्रम

1.	हमारे ये पशु-पक्षी	1
2.	आलौकिक पशु-पक्षी	18
3.	वेदों में पशु-पक्षी	31
4.	पशु-पक्षियों का पूजा-स्तवन	38
5.	पशु-पक्षी विषयक कवि-प्रसिद्धियाँ	44
6.	विहंग-प्रवजन	57
7.	पक्षियों का नीड़-निर्माण	61
8.	पशु-पक्षियों का प्रणय-प्रदर्शन	69
9.	भारतीय लोक-काव्य में पशु-पक्षी	78
10.	लोक-कथाओं में पशु-पक्षी	113
11.	संस्कृत-काव्य में पशु-पक्षी-वर्णन	123
12.	हिन्दी-कवि और पशु-पक्षी	136
13.	उर्दू-काव्य में पशु-पक्षी	151
14.	पशु-पक्षी-गृहीयण	162
15.	पशु-पक्षियों का शिशु-पालन एवं प्रशिक्षण	175

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

16. पशु-पक्षी-परिचय 183
17. आयुर्वेद में पशु-पक्षी 248
18. तांत्रिक साधना में पशु-पक्षी 255
19. पशु-पक्षी-नामावली 260
20. पशु-पक्षियों की बोलियाँ 264
21. पक्षियों की आनुमानिक आयु 278
22. पशुओं की आनुमानिक आयु 280
23. पशुओं का शरीर-माप 285
24. पशुओं का शरीर-भार 288
25. पक्षियों का शरीर-माप 290

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमारे ये 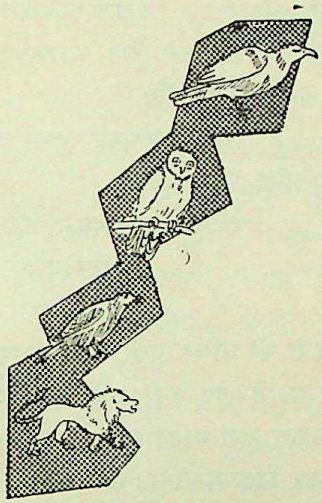 पशु-पक्षी

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः ।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काम मोहितम् ।।
(वाल्मीकि रामायण)

हे बहेलिए ! तूने कामोन्मत्त क्रौंच नर पक्षी को मारा है, इसलिए तुझे चिरकाल तक सुख-शान्ति न मिले ।

सिया राम मय सब जग जानी ।
करहुँ प्रणाम जोर जुग पानी ।। (गो० तुलसीदास)

मानव सदैव से पशु-पक्षियों के साहचर्य में रहा है । इनका पारस्परिक सहयोग चिरंतन है । जीवन के प्रत्येक क्षण में मानव इन प्रकृति के सहज उपकरणों को याद करता रहता है । उसने इनके सान्निध्य को ईश्वर के वरदान-रूप में स्वीकार किया है। एक युग था जब मनुष्य पशुओं के साथ क्रीड़ा-रत था और पक्षियों के साथ आत्मीयता का अनुभव करता था । आज भी मानव अपने इन सहयोगियों को नहीं भूला है । अपने काव्य में, अपनी विचारानुभूतियों में एवं विविध कलाओं में चित्रित करके कवि ने, विचारक ने तथा कलाविद् ने इन पशु-पक्षियों के माध्यम से चिरंतन सत्य को, अविनश्वर शिवत्व को और सहज सौन्दर्य को साकार बनाया है । वस्तुतः मानव के मानवत्व का विकास इन मौन साधकों के मध्य में ही हुआ है ।

सृष्टि के प्रारम्भ में सर्वप्रथम पशु-पक्षियों का ही अस्तित्व हमें मिलता है । जब मनुष्य ने अपनी आँखों को खोला तब उसे कानन में विहार करते हुए पशु और पादपों पर चहचहाते हुए विहंग देखने को मिले । विश्व-सृष्टा परमेश्वर ने सम-भाव से मानव और पशु-पक्षियों को अपनाया है । दोनों की पुकार को उसने करुणार्द्र होकर सुना और अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ उन्हें सुखी बनाने का प्रयत्न किया । ऋग्वेद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के अनेक मंत्रों में कहा गया है कि ऋषि, चर, जंगम, मनुष्य पशु-पक्षी आदि प्राणधारी और वृक्ष, पर्वत, आदि के पालक, परमात्मा को ज्ञान एवं रक्षा-प्राप्ति के लिए स्मरण करते हैं—

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं;
धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम् ।
पूषा नो यथावेद सामसद्वृधे,
रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ।
[ऋग्वेद 5/15 संहिता, भाषा-भाष्य भाग 1]

अनेक रूपों में पशु-पक्षी मानव से भी अधिक सुखी और सम्पन्न हैं। जितने ये स्वतन्त्र हैं उतना मनुष्य नहीं है। इच्छानुसार विहार करते हुए वनोपवनों में निवास करना इनके ही भाग्य में है। चौरासी लाख योनियों में परिभ्रमण करता हुआ मानव न मालूम कितने बार पशु बना होगा और न मालूम कितना समय इसने विहंग बनकर बिताया होगा। नील-गगन में उड़ते हुए खगों को देखकर मनुष्य ने कई बार विहग बनने की इच्छा की। वनों में उछलते-कूदते मृगों की ओर सदैव लालायित दृष्टि से इंसान ने देखा है। जैन तीर्थंकरों की जीवन-गाथाओं में इन पशु-पक्षियों का उल्लेख हुआ है। भगवान् बुद्ध अपने पूर्व जीवन में सिंह, खरगोश, हिरण, सफेद गज, कपि, मयूर, काग, श्वान, चील, शृगाल, सूकर, आदि बने थे।

स्वयं भगवान् को पृथ्वी के पाप-भार को हटाने तथा भक्तों के कल्याण के लिए कभी मच्छ, कभी कच्छ, कभी वाराह और कभी सिंह का रूप धारण करना पड़ा।

भगवान् राम की लंका-विजय में जो सहायता पशु-पक्षियों ने की है उसके लिए हमारा धार्मिक साहित्य सदैव प्रमाण-रूप में स्मरणीय है। हनुमान, बालि एवं सुग्रीव वानर थे। सम्पाति और जटायु गरुड़ के पुत्र थे। नागास्त्र से व्यथित राम तथा लक्ष्मण की सहायता गरुड़ास्त्र देकर गरुड़ ने ही की थी। जटायु (गीध) के उपकारों से उपकृत भगवान् राम ने इस पक्षी को अपने पिता तुल्य सम्मान दिया था और मरने पर इसका पितु की भाँति अंतिम संस्कार किया था।[1] वाल्मीकि रामायण के चौदहवें सर्ग के पाठक को ज्ञात होगा कि इन कतिपय पशु-पक्षियों की उत्पत्ति दक्ष प्रजापति की यशस्विनी कन्याओं, नातियों एवं पंतिनों से हुई है। पञ्चवटी में निवास करने वाले श्येनी के पुत्र (जटायू) ने भगवान् राम को सब जीवों की उत्पत्ति बतायी थी और अपना भी परिचय दिया था। गंभीर मुद्रा में बैठे उस गृद्ध जटायु ने कहा था—

हे महाबाहो (रामचन्द्र)—

---

1. पितु ज्यों गीध-क्रिया करि रघुपति अपने धाम पठायो।
ऐसो प्रभु बिसारि तुलसी सठ, तू चाहत सुख पायो ।। —(गीतावली)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्रोञ्ची के गर्भ से उलूक और भासी के गर्भ से भासक नाम के पक्षी उत्पन्न हुए ।[1]

श्येनी के गर्भ से अति तेजस्वी श्येन और गीध उत्पन्न हुए और धृतराष्ट्री से सब हंस तथा कल-हंस उत्पन्न हुए ।[2]

चक्रवाक भी उसी के गर्भ से उत्पन्न हुए ।[3]

मृगी से समस्त मृग उत्पन्न हुए और मृगनन्दा से रीछ, स्टमर और चमर (सुरागाय) उत्पन्न हुए ।[4]

हरी नामक स्त्री से बलवान सिंह और वानर उत्पन्न हुए ।[5]

इस प्रकार इन पशु-पक्षियों की उत्पत्ति मानवों के समान है । वह काल कितना सुन्दर होगा जब ये (पशु-पक्षी) मानव-बोली में बोलकर अपने विचारों को प्रकट करते होंगे । पञ्चतंत्र की कथाओं में राज-नीतिक सिद्धान्तों की विवेचना करने वाले ये पशु-पक्षी ही हैं । 'महाभारत' में एक नेवले ने ही गुरू के रूप में युधिष्ठिर को ज्ञानोपदेश दिया था ।

"संस्कृत साहित्य में पक्षियों की इतनी अधिक चर्चा है कि जितनी अन्य किसी साहित्य में शायद ही हो । जिन दिनों संस्कृत के काव्य-नाटकों का निर्माण अपने पूरे चढ़ाव पर था, उन दिनों केलि-गृह और अन्तःपुर के प्रासाद-प्रांगण से लेकर युद्ध-क्षेत्र और वानप्रस्थों के आश्रम तक कोई न कोई पक्षी भारतीय सहृदय के साथ अवश्य रहा करता था । वह विनोद का साथी था, रहस्यालाप का दूत था, भविष्य के शुभाशुभ का द्रष्टा था, वियोग का सहारा था, संयोग का योजक था, युद्ध का संदेशवाहक था और जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं था जहाँ वह मनुष्य का साथ न देता हो ।

कभी भवन-वलभी में सोये हुए पारावत के रूप में, कभी मानिनी को हँसा देने वाले शुक के रूप में, कभी अज्ञात प्रणयिनी के विरहोच्छ्वास को खोल देने वाली सारिका के रूप में, कभी नागरिकों की गोष्ठी को उत्तेजित कर देने वाले योद्धा कुक्कुट के रूप में, कभी भवन दीर्घिका (अन्तःपुर के तालाब) में मृणाल-तन्तु भक्षी कल-हंस के रूप में, कभी अज्ञात प्रिय के संदेशवाहक राजहंस के रूप में, कभी आम्र-कषाय-कण्ठ से विरहिणी के दिल में हूक पैदा कर देने वाले कोकिल के रूप में, कभी नूपुर की झंकार से क्रेंकार ध्वनिकारी सारस के रूप में, कभी कंकण की रुनझुन से नाच पड़नेवाले मयूर के रूप में, कभी चन्द्रिका-पान में मद-विह्वल होकर मुग्धा के मन में अपरिचित हलचल पैदा करने वाले चकोर के रूप में,

---

1. ताम्रापि सुषुवे कन्याः पञ्चैता लोक विश्रुताः ।
   उलूकञ्जनयत् क्रौंची, भासी भासान् व्यजायत ॥
2. श्येनी श्येनांश्च गृध्रांश्च व्यजायत सुतेजसः ।
   धृतराष्ट्री तु हंसांश्च कलहंसांश्च सर्वशः ॥
3. चक्रवाकांश्च भद्रं ते विजज्ञे साऽपि भामिनी ।
4. अपत्यं तु मृगाः सर्वे मृग्या नरवरोत्तम ।
   ऋक्षाश्च मृगमन्दायाः स्टमराश्चमरास्तथा ॥
5. हर्याश्च हरयोऽपत्यं वानराश्च तरस्विनः ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वह प्राय: इस साहित्य में पाठक की नज़रों से टकरा जाता है। इन पक्षियों को संस्कृत-साहित्य में से निकाल दीजिए, फिर देखिए कि वह कितना निर्जीव हो जाता है। हमारे प्राचीन साहित्य को जिन्होंने इतना सजीव कर रखा है, इतना सरल बना रखा है, उनके विषय में अभीतक हिन्दी में कोई विशेष उल्लेख योग्य अध्ययन नहीं हुआ है, यह हमारी उदासीनता का पक्का प्रमाण है।[1]

भारत की धरती पर पशुओं की पाँच सौ से अधिक जातियाँ उपलब्ध हैं। इसी प्रकार विश्व में आठ-दस हजार विहंगों की विभिन्न किस्में तथा लगभग 30,000 उपजातियाँ पाई जाती हैं। वेदों में तीस प्रकार के पशुओं का वर्णन मिलता है।

आर्थिक दृष्टि से भी इन वन-जन्तुओं का विशेष महत्त्व है। यह सत्य है कि इनके अभाव में कृषि का संरक्षण असंभव-सा हो जाता। भूतल पर ऐसे हजारों कीट हैं जो खेती की उपज को नष्ट कर डालते हैं इन कीटों को यदि ये विहंग उदरस्थ न करें तो मानव अन्नाभाव से भूखा मर जाय। टिड्डियाँ कृषि के विनाश में प्रधान कारण हैं। उनके दलों को देखकर किसान रो उठता है। आकाश में छाये हुए बादलों के समान फैलने वाली इन टिड्डियों को नभचर ही स्वाहा कर डालते हैं। चूहों से भी खाद्य-वस्तुओं को विशेष क्षति पहुँचती है। बाज़ तथा उल्लू उन मूषकों की वृद्धि को सतत रोकते रहते हैं। काष्ठ-विनाशक कीटों का विध्वंस इन खगों से ही होता है। संयुक्त राज्य अमरीका की 1921 की जांच से मालूम हुआ था कि चिड़ियों ने 222 करोड़ रु० से अधिक क़ीमत की वनोपज कीड़ों से बचायी थी।[2] अनेक पशु-पक्षियों के सींग, दंत, चर्म, केश, पंख आदि आय के सुलभ साधन हैं। पाश्चात्य देशों में जंगली जानवरों के लिए सुन्दर आश्रय गृह बनाए जाते हैं जिनमें ये सुख से निवास करते हैं।

इन पशुओं को देखने के लिए पर्यटक अधिक संख्या में आते हैं जिनसे राज्यों को अच्छी आय होती है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रत्येक विद्यार्थी शिक्षा प्राप्ति के काल में अपने राष्ट्र के वन तथा वन-प्राणियों की रक्षा की शपथ लेता है।

सांस्कृतिक गरिमा के प्रतीक ये वन-जीव हमारी सौन्दर्यानुभूति में विशेष सहायक होते हैं। नृत्य करते हुए मयूर को देखकर हमारा हृदय उल्लास से भर जाता है। संसार की मनोरमता वन-जन्तुओं पर आधारित है। उद्यानों में अगर मधुर स्वर करते हुए विहग न हों तो इनके प्रफुल्लित पुष्प आभाहीन प्रतीत होते हैं। सरिताओं के तटों पर यदि चहकते हुए पक्षी न रहें तो इनकी सुषमा फीकी लगती है।

वन और वन-जीवों का सम्बन्ध घनिष्ठ है। एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व संदेहात्मक है। अत: यदि वनों की रक्षा के लिए हम आतुर हैं तो हमें वन-जीवों का भी संरक्षण करना पड़ेगा। सघन वनों का आकर्षण तभी अच्छा लगता है, जब उनमें मधुर-कलरव हो, तथा पशुओं का मंद-तीव्र पद-चाप हो। हमारा देश कृषि-प्रधान है, इसे समय-समय पर पर्याप्त वर्षा की आवश्यकता है जो वनों पर अवलंबित है। वन

---

1. 'प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद' पृष्ठ 46. 47 —आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी।
2. 'हमारे देश के वनजन्तु' —श्री भोला पासवान शास्त्री, वन-मंत्री, बिहार राज्य,

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संवर्धन में पक्षियों का सहयोग उपेक्षणीय नहीं है। कतिपय पशु तथा खग फलों का भक्षण करते हैं और अपने मल द्वारा बीजों को निकालकर पादपों की उत्पत्ति में सहायता देते हैं।

कतिपय व्यक्तियों का कथन है कि शेर, चीता आदि हिंसक वन-जीवों का सर्वनाश ही सुखकर है। इस धारणा में पूर्ण तथ्य नहीं है। यदि शेर और चीतों का निर्दयता के साथ विध्वंस कर दिया जाय तो मृगों, बारहसिंगों, सूकरों आदि की अतिवृद्धि से कृषि का विनाश निश्चित है। अपनी बुभुक्षा की शान्ति के लिए ये भयावह पशु (शेर, चीता आदि) हरिणों तथा सूकरों का कुछ सीमा तक नाश करते ही रहते हैं। किसानों की ओर से यह कहा जाता है कि हरिणों, सूकरों, बारहसिंगों, नीलगायों, खरगोशों आदि का यथा-शीघ्र अस्तित्व मिटा दिया जाय क्योंकि इनके द्वारा कृषि की अत्यधिक हानि हो रही है। इस विषय में यही कहना उचित प्रतीत होता है कि यदि इन जीवों को भूतल से हटा दिया गया तो विपिन-विहारी ये केहरी तथा व्याघ्र अपनी क्षुधा मिटाने के लिए या तो मानवों का संहार करेंगे अथवा गाय-बैलों के खून पीने में तत्पर होंगे।

भारत अहिंसावादी राष्ट्र है। यहीं पर अहिंसा का जन्म हुआ था और इसी देश की पावन धरती पर यह (अहिंसा) धर्म फूला-फला था। इसी पुनीत धरा के प्रांगण में भगवान् महावीर की दिव्य-ध्वनि प्रसारित हुई थी जिसमें पर-पीड़न को महापाप बताया गया था। इसी आर्यावर्त के सन्मुख भगवान् बुद्ध ने 'जियो और जीने दो' का आदर्श स्पष्ट किया था। भारतीय साहित्य की सृष्टि आश्रमों में ही हुई थी जहाँ कानन-चारी मृग और पादप-विहारी पक्षी स्वतन्त्र होकर विहार करते थे। राजा शिवि ने शरणागत कपोत की रक्षार्थ अपने प्रिय प्राणों को विसर्जित किया था। राजा दिलीप की गौ-रक्षा आज भी स्मरणीय है। हमारे धर्म-ग्रन्थों में प्रत्येक जीव की रक्षा का आदेश है। पुरुष-सूक्त की प्रार्थनाओं में द्विपद-तथा चतुष्पद के कल्याण की भावना अनेक बार दुहराई गई है। इस वसुन्धरा के शासकों ने समय-समय पर आज्ञाएँ देकर पशु-हिंसा को रोका था और अपराधियों को कठोर से कठोर दंड देने का निर्णय दिया था। सम्राट् अशोक के ऊँचे स्तम्भों में अंकित आदेशों ने लाखों जीवों के प्राणों को बचाया था।

सम्राट् अकबर ने एक दिन महाकवि नरहरि के मुख से कसाई के हाथ से छूटकर भागी हुई गाय की विनय सुनकर राज्य में गौ-हत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाया था। और गौ-हत्यारे को मृत्युदंड की व्यवस्था भी स्थिर की थी।[1]

अरिहु दन्त तृन धरत तिनहि मारत न सबल कोइ,
हम संतत तृन चरहिं वचन उच्चरहिं दीन होई।
अमरित पय नित स्रवहिं बच्छ महि थंभन जावहि
हिन्दुहिं मधुर न देहि, कटुक तुरकहिं न पियावहिं।
कह कवि नरहरि अकबर सुनौ, विनवति गउ जोरे करन।
अपराध कौन मोहि मारियत, मुएहु चाम सेवइ चरन॥

○ ○ ○

1. 'अकबरी दरबार के हिन्दी-कवि', पृष्ठ 72-73

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नरहरि कवि सो गऊ की विनती,
सुनि सांची गुन खलन पै कै मति अकससी।
अकबर जारी परवाने किए मारिवे को,
चारिहुँ महीपन लखानी बात हकसी।
व्यापि गयो हुकुम दिल्लीपति को हिंद भरि,
वाजिवी विचारि मन अति कै करकसी।
जीवन कसाइन कौ गाइन को देत भयो,
गाइन की मौत ले कसाइन को बकसी।

○ ○ ○

आधुनिक सभ्यता के युग में मानव के अत्याचरों से वन के ये प्राणी अधिक सन्तप्त हैं। इन्हें इन सभ्य कहे जाने वाले मनुष्यों से ऐसे क्रूर-व्यवहार की स्वप्न में भी आशा नहीं थी। यदि ये पशु-पक्षी मानव की वाणी में बोल सकते तो इस अमानवीय अनाचार का ऐसे स्पष्ट शब्दों में विरोध करते कि जिसे सुनकर मनुष्य लज्जा से सदैव के लिए मस्तक नीचा कर लेता। आज भी मानव केवल मनोविनोद के लिए सैकड़ों वन-जीवों के प्राण हरता है और उन्हें कलपते देखकर मुस्कराता है। Why Preserve Wild Life (वन्य-जीवों का संरक्षण क्यों करें?) नामक पुस्तक के लिए संदेश देते हुए हमारे पूज्य प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल जी ने लिखा था—"कभी-कभी मैं अचरज करता हूँ कि ये जीव-जन्तु और पक्षी, मनुष्य के बारे में क्या सोचते होंगे और अगर उनमें क्षमता होती तो वे किस तरह उसका वर्णन करते। मैं नहीं समझता कि उनका वर्णन मनुष्य को प्रिय होगा। हमारी संस्कृति और सभ्यता के बावजूद मनुष्य अनेक प्रकार से न केवल जंगली, बल्कि इन तथाकथित वनजंतुओं से अधिक खतरनाक बना हुआ है। रास्तों में जीपों के आने-जाने तथा टार्च, फ्लैशलाइटा और शिकारी हथियारों में सुधार होने के कारण, इधर वन-जीवों पर मनुष्य का अत्याचार और बढ़ गय है। मनुष्य वन-जन्तुओं से भी अधिक जंगली हो गया है। हमें वन के मूक निवासियों की सुरक्षा का काम उठाना होगा, नहीं तो हम अपनी इस पवित्र धरती और राष्ट्रीय परम्परा को सदा के लिए खो देगें।"[1]

मनुष्य चिरकाल से इन पशु-पक्षियों से सीखता आ रहा है। कतिपय आदर्श इन मूक प्राणियों के इतने महान् हैं कि इनका मूल्यांकन शब्दों में नहीं किया जा सकता है। अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए चातक की रटन में कितनी तन्मयता है। वह स्वाति-बिन्दु के लिए ही जीता है और अन्य जल की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखता।[2]

---

1. आदिवासी—(हमारे देश के वन-जन्तु)
2. जाचै बारह मास, पिये पपीहा स्वाति जल।
जान्यो तुलसीदास, जोगवत नेही मेह मन।
... ...
सरवर नीर न पीवहीं, स्वांति बूंद की आस।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पपीहा की इस अनन्यता पर ही मुग्ध होकर महाकवि तुलसीदासजी ने सच्चे राम-भक्त को चातक (पपीहा) के समान दृढ़-प्रतिज्ञ बनने के लिए प्रोत्साहित किया है।[1]

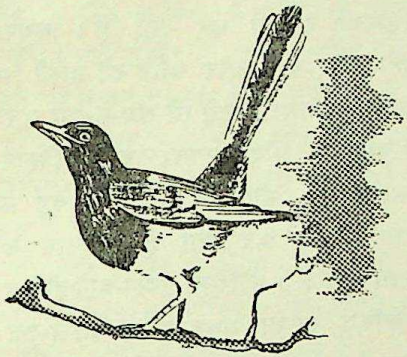

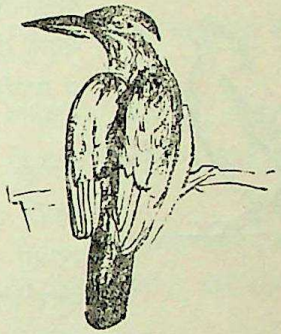

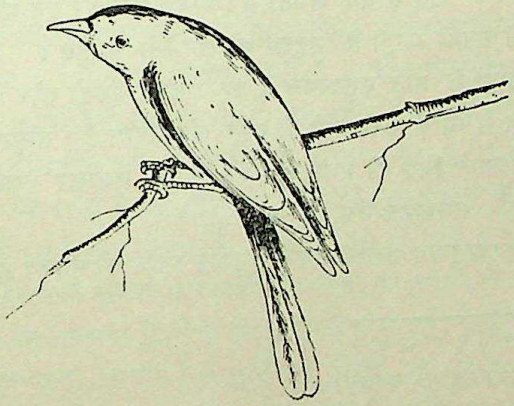

सिंह का स्वाभिमान प्रसिद्ध है। वह वन-शासक है। किसी के सन्मुख झुकना उसके लिए मृत्यु से भी अधिक भयावह है। कहते हैं कि केहरी एक बार ही सिंहनी के साथ संभोग करता है। यह वीर-व्रत मनस्वी के लिए सदैव अनुकरणीय है। यह पशु का नियम ही उसे मानव से ऊँचा उठाता है। बुभुक्षित पशुपति घास नहीं खा सकता, वह तो अपने करों से शिकार करता है और अपनी क्षुधा को शान्त करके सुख की साँस लेता है। दैन्य भाव को तो उसने अपने जीवन में कभी अपनाया ही नहीं है। प्रत्येक मानव

---

1. एक भरोसो एक बल, एक आस विस्वास।
एक राम घनस्याम हित, चातक तुलसीदास।
तीनि लोक तिहुँ काल जस, चातक ही कें माथ।
तुलसी जासु न दीनता, सुनी दूसरे नाथ। —दोहावली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को सिंह के इस गुण को ग्रहण करना चाहिए।[1]

सारस का स्वपत्नी प्रेम अलौकिक है। कहा जाता है कि यह पक्षी जीवन में एक ही संगिनी चुनता है। उसके बिछुड़ जाने पर वह फिर अपने शेष जीवन को एकाकी रहकर बिताता है और उसके वियोग में रो-रोकर अपनी ज़िन्दगी समाप्त कर देता है। मधुप-प्रवृत्ति वाले मनुष्य तू भी अपनी ओर देख और अग्नि को साक्षी मानकर जिसे तू अपनी जीवन-संगिनी बनाता है उसे तो कम-से-कम मत भूल।

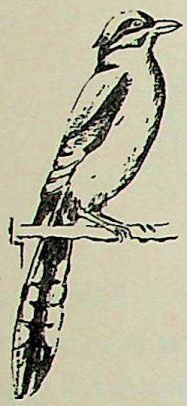

हँस मोती चुगता है और मानसरोवर में विहार करके अपने व्रत की साधना करता है। मोती न मिलने पर वह उपवास करके अपनी जीवन-लीला समाप्त कर देता है।[2] इंसान का जीवन तो पग-पग पर फिसलता रहा है। कोकिला कृष्ण-वर्ण होने पर भी कितना मधुर बोलती है, लेकिन इसका मधुर-भाषण आम्र-वृक्ष की पुष्पित डालियों पर ही होता है। असमय पर अपनी वाणी का दुरुपयोग करना उसे अप्रिय लगता है। पावस आने पर वह मौन हो जाती है।[3] मनुष्य को भी इस काली कोयल से अपनी वाणी के महत्त्व को समझना चाहिए।

चकोर का स्नेह चन्द्रमा के प्रति समुज्ज्वल है वह रातभर उसकी ओर निहारता रहता है। ठीक है जिसे चाहो, उसे तन-मन-धन से प्यार करो यही तो स्नेह की गरिमा है। सम्पूर्ण संसार निशा में सुख की नींद सोता है लेकिन चकोर अपने प्रिय की मनोहरता को टकटकी लगाकर देखता है।[4] वह इतना प्रेमांध हो जाता है कि अंगारे को शशि समझकर उसे खा जाता है।[5]

संगीत के प्रति मृग का अनुराग उल्लेखनीय है। सुन्दर ध्वनि को सुनकर हरिण आत्म-विस्मृत होकर

---

1. सरवर नीर न पीवहीं, स्वांति बूंद की आस।
   केहरि कब हुं न तृन चरै, जो व्रत करै पचास।
   जो व्रत करै पचास, विपुल गज जूह विदारै।
   धन ह्वै गर्व न करै, निधन नहिं दीन उचारै।
   नरहरि कुलक सुभाव मिटै नहिं जब लग जीवै।
   वरु चातक मरि जाय, नीर सरवर नहिं पीवै।
   × × ×
   सिंह गमन सुपुरुष वचन, कदलि फलै इक सार।
   तिरिया तेल हमीर हठ, चढ़ै न दूजी बार।
2. कै हंसा मोती चुगै कै भूखौं मर जाय।
3. पावस देखि रहीम मन, कोइल साधे मौन।
   अब दादुर वक्ता भए, हमको पूछत कौन।।
4. ज्यों चकोर चितवत रहे, पल-पल शशि की ओर।
5. जो चकोर को देइ कपूर कोउ, तजि अंगारन अघात।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपने गायक के समीप आ जाते हैं। भले ही वह उन्हें पकड़कर बन्दी बना ले अथवा उनकी भौतिक लीलाएँ समाप्त कर दे। अनेक बार संकट में पड़ने पर मृग मधुर राग के प्रति आकर्षण नहीं भूल पाता। यह है उसका मधुरध्वनि के प्रति सहज-प्रेम। मनुष्य एक बार किसी की ओर आकर्षित होता है तो दूसरी बार किसी और को अपना बना बैठता है। इंसान संगीत-प्रिय होने पर भी मृग के समान अनन्य अनुरागी नहीं है। हरिण से हमें यह पावन अनुराग सीखना चाहिए।[1]

अपने प्रेमी को देखकर आनन्द-विभोर होना मयूर और चातक का स्वभाव है। श्यामल मेघ-घटा की ओर मोर लालायित दृष्टि से देखता है। वह मे-आओ की टेर से उसका स्वागत करता है और स्वच्छन्द होकर नाच उठता है।[2]

मनुष्य को अपने स्नेही की स्वागत-विधि को मोर और चातक से सीखना चाहिए। इनकी मन्द आँखों में जलधर की श्यामता इस प्रकार छा जाती है कि वे जब कभी भगवान् राम अथवा मुरलीधर श्याम की मूर्ति देखते हैं तो उसे मेघ मान बैठते हैं।

कवियों का कहना है कि निशा होने पर चकवा और चकवी का वियोग हो जाता है। वे रात भर एक-दूसरे को देखने के लिए चिल्लाते रहते हैं। वह चन्द्रमा, जो सबको प्रिय लगता है चकवा-चकवी के लिए दुःखदायी हो जाता है क्योंकि निशाकर तो वही है। जो प्रेमियों के प्रेम में व्यवधान लाये, वह उनके लिए हितकर कैसे हो सकता है ? उन पक्षियों का यह प्रगाढ़ प्रेम किसे आकर्षित न करेगा ?[3]

भगवान् कृष्ण के परमोपासक कविवर सूरदास ने बारंबार कहा है कि जैसे हारिल (हारीत) पक्षी सदैव अपने पंजे में लकड़ी पकड़े रहता है वैसे ही सच्चे भक्त कृष्ण को पकड़ते हैं।[4]

गजराज की गति में स्वाभिमान टपकता है। कुत्ते भोंकते ही रहते हैं, और हस्तिराज झूमता हुआ चला जाता है। मानव को भी अपने कुटिल आलोचकों की निन्दा की उपेक्षा करते हुए अपने कार्य में तत्पर रहना चाहिए। यही जीवन की सफलता है, जिसे हमें नागराज से सीखना चाहिए।

महाकवि बिहारी तो परेवा (कबूतर) की सात्विक भावना पर विशेष मुग्ध थे।[5] अनावश्यक संग्रह तथा मन की लुब्धता जीवन को नीरस तथा कष्टमय बना देती है।

---

1. सारंग प्रीतिकरी जो नाद सों, सन्मुख बान सहयो।
   सुनिकै विपंची धुनि, विशिख कुरंग सहैं।...
2. चातक, मयूर, मन मेह के सनेह ऊधो,
   जाहि लगै नेह सोई याहि भले जानई।
3. चकवा ज्यों चन्द्र चितै चौगुनो चपत है।
4. हमारे हरि हारिल की लकरी।
   मन बच क्रम नंदनंदन सों, उर यह दृढ़ करि पकरी॥
5. पट पांखे भखु कांकरे सदा परेई संग।
   सुखी परेवा जगत में एकै तुही विहंग। —बिहारी सतसई, 658

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संतों ने पक्षी के माध्यम से एक चिरंतन तथ्य की सुन्दर उद्भावना की है। उन्होंने आत्मा को हंस माना है और उसे सांसारिक वैभव से विरक्त रहने का सदा उपदेश दिया है। संत दादू ने कहा कि प्रत्येक मानव को पक्षी की तरह इस संसार को घोंसला मानना चाहिए और कुछ समय के लिए इसमें बसेरा करके आगे बढ़ जाना चाहिए।[1]

काव्यकारों ने पशु-पक्षियों एवं उनके विविध अंगों को ललित सौन्दर्य का उपमान मानकर अपने हृदय में उनकी सुकुमारता, मनोहरता एवं रमणीयता को स्थापित किया है। कवियों तथा साहित्यकारों की यह प्रवृत्ति इन मूक-जीवों की उत्कृष्टता की परिचायक है। सुन्दर नेत्रों के लिए चकोर, मृग-नेत्र तथा खंजन उपमान के रूप में प्रसिद्ध हैं। मनोहर नाक की तुलना शुक-नासिका से की जाती है। मनोरम ग्रीवा कपोत-गर्दन की भाँति बताई जाती है। मधुर-भाषिणी को पिकबैनी कहते हैं। रसिकों ने वक्षों के लिए चक्रवाक को उपमान माना है।

पतली कमर की तुलना सिंह-कटि से दी जाती है। मदमाती चाल के लिए गजगति और हंस-गमन का कवि लोग उल्लेख करते हैं।

इसी प्रकार प्रतीकों के रूप में भी पशु-पक्षियों को लिया गया है। प्रकृति-वर्णन, स्वप्न-दर्शन, वैभव-चित्रण, शकुनापशकुन-उल्लेख, युद्ध-वर्णन, दूत-विधान, अलंकार-परिचय, दान-यज्ञ-पूजादि आदेश, वाहन वैविध्य, शरीर-चिह्न-कथन आदि में पशु-पक्षियों का विशेष रूप से निरुपण हुआ है।

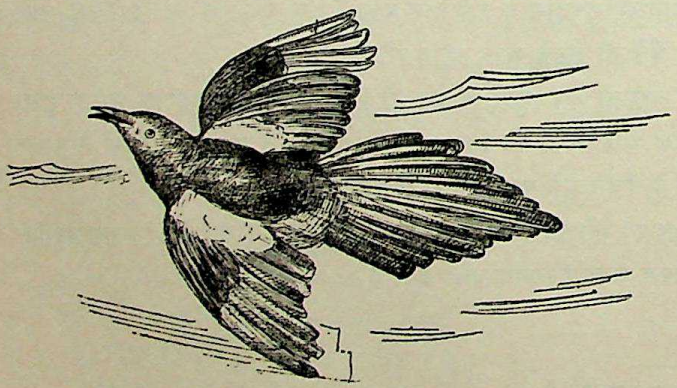

अलंकारों में अन्योक्ति का विशेष स्थान है। इसमें किसी को लक्ष्य करके बहुत कुछ कहा जाता है। अन्योक्तिकारों ने अपनी व्यंग्यात्मक उक्तियों के लिए पशु-पक्षियों को अधिक मात्रा में चुना है।[2]

पक्षियों की दृष्टि बड़ी तेज होती है। और इनकी श्रवण-शक्ति भी पर्याप्त मात्रा में बलवती मानी गई है।

---

1. बटाऊ रे चलना आजि कि काल्हि।
   जैसे तरवर बिरस बसेरा, पंखी बैठे आइ।
   ऐसे यह सब हाट पसारा, आप आप कौं जाइ।

2. साँई घोड़न के अछत, गदहन पायो राज।
   कौआ लीजत हाथ में, दूर कीजियत बाज।
   दूर कीजियत बाज, राज ऐसो ही आयो।
   सिंह कैद में कियो, स्यार गजराज चढ़ायो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तेज़ दृष्टि वाले ये खग, मानवीय भावनाओं से वञ्चित नहीं हैं। यह कहना अत्युक्ति न होगी कि इनकी सहानुभूति मानव की हमदर्दी से कुछ अंशों में अधिक ही है। राजा रत्नसेन के वियोग में रानी नागमती दिन-रात विलाप करती रहती थी जिसे सुनकर नभचर विकल हो उठते थे। वन में व्यथित रानी जिस पक्षी से विरह की बात कहती थी वह उसके (विरह-जन्य) संताप से दग्ध हो जाता था[1] यदि मनुष्य गम्भीरता से विचार करे तो उसे अनुभव होगा कि पशु-पक्षी की ममता एवं पर-दुःख-कातरता अपने रूपों में महान् हैं।[2] भावुक कवि जायसी ने 'पद्मावत' में मनुष्य के साथ इन मूक प्राणियों का रागात्मक सम्बन्ध बड़ी स्वाभाविकता के साथ चित्रित किया है। "और कवियों ने पशु-पक्षियों को सम्बोधित करने का उल्लेख करके बात और आगे नहीं बढ़ाई है। जिससे ऊपर से देखने वालों का ध्यान 'उन्माद' की दशा तक ही रह जाता है। पर जायसी ने जिस प्रकार मनुष्य के हृदय में पशु-पक्षियों से सहानुभूति प्राप्त करने की सम्भावना की है उसी प्रकार पक्षियों के हृदय में सहानुभूति के संचार की भी। उन्होंने सामान्य हृदय-तत्व की सृष्टि-व्यापिनी भावना द्वारा मनुष्य और पशु-पक्षि सबको एक जीवन-सूत्र में बद्ध देखा है। राम के प्रश्न का खग और मधुकर कुछ जवाब नहीं देते। राजा पुरुरवा कोकिल, हंस इत्यादि को पुकारता ही फिरता है पर कोई सहानुभूति प्रकट करता नहीं दिखाई पड़ता (विक्रमोर्वशी अंक 4) पर नागमती की दशा पर एक पक्षी को दया आती है।[3] वह उसके दुःख का कारण पूछता है नागमती कहती है—

'चारिउ चक्र उजार भए, कोई न संदेसा टेक।
कहौं विरह-दुख आपन, बैठि सुनहुँ दँड एक॥

इस पर वह पक्षी संदेशा ले जाने को तैयार हो जाता है।[4] 'पद्मावत' का हिरामन तोता एवं दमयन्ती का संदेशवाहक हंस कम भावुक नहीं हैं।

भगवान् राम के बनवास में रहने के कारण उनके अश्व अयोध्या में तड़पते रहे। भरत ने उनकी पूरी देख-भाल की लेकिन अपने स्वामी के वियोग को ये घोड़े न सह सके और सूख कर निर्बल हो गए। यह पशु की विकलता कितनी मार्मिक है। माता कौशल्या ने एक पथिक से कहा था—तुम वन की ओर जा रहे हो यदि तुम्हें राम मिलें तो कहना कि उनके घोड़े दिन प्रतिदिन विरह के कारण सूखते जा रहे

कह गिरधर कविराय, जहाँ यह बूझ बड़ाई।
तहाँ न कीजै साँझ, भोर ही चलिए साँई। —काव्य कानन, पृष्ठ 202

1. जेहि पंखी के नियर होइ कहै विरह कै बात।
सोई पंखी जाइ जर, तरिवर होहिं निपात॥—जायसी ग्रन्थावली, पृष्ठ 41

2. धरावा रोवे धरनी ए लोभिया
बाहारवा राम हरिनिया।
दाहावा रोवे चाका चकइया,
विछोहवा कइले निरवामोहिया।—भोजपुरी लोक गीत, पृ० 303

3. फिरि फिरि रोव, कोइ नहिं डोला, आधी रात विहंगम बोला।
फिरि फिरि तू दाहै सब पाँखी, केहि दुख रैन न लखति आँखी॥

4. 'जायसी ग्रन्थावली'—सं० आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० 41-42

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं। कौशल्या के इस संदेश में मार्मिक वेदना छिपी हुई है।[1]

भगवान् कृष्ण के मथुरा जाते समय ब्रज की गायें वियोग-विकल होकर रथ के आगे खड़ी हो गई थीं और तृण चरना तो दूर रहा उन्होंने अपने बच्चों को दूध पिलाना भी छोड़ दिया था।[2] पशुओं की यह भावना सिद्ध करती है कि उनमें भी प्रेम है और सच्चा स्नेह है। श्री नंद के गृह-द्वार पर बैठा हुआ काकातूआ चिल्लाकर कहता था—हम लोगों को व्यथित करके हे लाल ! तुम कहाँ जा रहे हो ?[3]

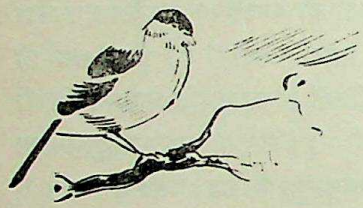

मथुरा की ओर बढ़ते हुए रथ को ब्रज कानन के पशु-पक्षियों ने आतुर होकर देखा ! वे अपने मनमोहन श्याम को अच्छी तरह से पहचानते थे। उनके मथुरा चले जाने पर ब्रज-मण्डल आभाहीन हो चुका था और उनकी आँखों से अविरल अश्रुधार बहती थी। इन भावुक पशु-पक्षियों की 'कृष्ण-विरह'-जन्य अनुभूतियों का चित्रण 'कृष्णायन' में बड़ा ही हृदय-स्पर्शी हुआ है। गोकुल के हाथियों ने वारि-विहार, कपोतों ने कूजन, मयूरों

---

1. राघौ ! एक बार फिरि आवौ।
   ए बर बाजि बिलोकि आपने बहुरौ बनहिं सिधावौ।
   जे पय प्याइ पोखि कर-पंकज, बार बार चुचुकारे।
   क्यों जीवहिं मेरे राम लाड़िले ! ते अब निपट बिसारे।
   भरत सौ गुनी सार करत हैं. अति प्रिय जानि तिहारे।
   तदपि दिनहिं दिन होत झाँवरे, मनहुं कमल हिम-मारे।
   सुनहु पथिक ! जो राम मिलहिं बन, कहियो मातु संदेसो।
   तुलसी मोहिं और सबहिन तें इन्हको बड़ो अँदेसो। —गीतावली, गो० तुलसीदास कृत
2. दौड़ा ग्वाला ब्रज नृपति के सामने एक आया।
   बोला गायें सकल वन को आपकी हैं न जाती।
   दाँतों से हैं न तृन गहती हैं न बच्चे पिलाती।
   हा ! हा ! मेरी सुरभि सबको आज क्या हो गया है।
   ... ...
   रोता ही था जब वह तभी नंद की सर्व गायें।
   दौड़ी आईं निकट हरि के पूँछ ऊँची उठाये।
   वे थीं खिन्ना विपुल विकला वारि था नेत्र लाता।
   ऊँची आँखें कमल मुख थीं दीखती शंकिता हो। —प्रियप्रवास, पृ० 51
3. काकातूआ महर-गृह के द्वार का भी दुखी था।
   भूला जाता सकल स्वर था, उन्मना हो रहा था।
   चिल्लाता कर अति विकल था और यही बोलता था।
   यों लोगों को व्यथित करके लाल जाते कहाँ हो ? —प्रिय-प्रवास, पृ० 51

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ने नर्त्तन छोड़ दिया था।[1] हंस कलोल करना भूल गए थे। सारस उन्नत ग्रीवा करके और मृग अर्ध-बद्ध विलोचनों से स्पंदन को देख रहे थे कई विरहिणियों के संदेशों को उनके प्रियतमों के पास लेजाकर हंस अमर हो गए हैं। शास्त्रार्थों में सुललित संस्कृत बोलकर शुकों ने अपना पांडित्य दिखाया है। प्रेमकथाएँ कहकर मैना सबके हृदयों में आज भी निवास कर रही है। प्रेम के प्रतीक कबूतर का शान्ति स्थापना में कम महत्त्व नहीं है। अनेक ऐतिहासिक प्रसिद्ध महापुरुषों के जीवन में इन पक्षियों की गाथाएँ ग्रन्थित हैं। अनेक दुर्घटनाओं की पूर्व सूचना देकर इन पशु-पक्षियों ने मानव-समाज को सजग किया है।

ऐसी हज़ारों पौराणिक कथाएँ हैं जिनमें पशु-पक्षियों को धार्मिक, व्रती, अहिंसावादी, परमभक्त एवं दयामय बताया गया है। मार्कण्डेय पुराण में उल्लेख है कि व्यासजी के शिष्य जैमिनि की अनेक शंकाओं का निराकरण धर्म पक्षियों ने किया था। ये विन्ध्य पर्वत की गुफा में रहकर शुद्ध एवं स्पष्ट उच्चारण से मंत्र-जाप करते थे जिसे सुनकर जैमिनि को विशेष आश्चर्य हुआ था।

ब्रह्मपुराण में कपोत और उलूक तीर्थों की महिमा का गान हुआ है। उसमें दो पक्षियों (कपोत और उलूक) के पारस्परिक विरोध को बताते हुए ऋषियों ने उनकी मुक्ति-कामना की ओर संकेत किया है। इन्हें अग्निदेव एवं यमराज के दर्शनों का भी लाभ प्राप्त हुआ था और गंगा-तट पर स्थित इनके (कपोत और उलूक) आश्रम पुण्य-तीर्थों में परिणत हो गए थे।

जैन शास्त्रों में पञ्च-नमस्कार मंत्र का विशेष महत्त्व बताया गया है। इसके प्रभाव से बैल, बंदर, बकरा, हथिनी, कुतिया, सिंह आदि को सद्गति प्राप्त हुई है।[2] महाभारत की कथा से परिचित पाठक जानता है कि श्वान ने युधिष्ठिर का स्वर्ग तक साथ दिया था। जड़ भरत एक हिरन के बच्चे को पालकर स्वयं एक पर्याय में वे हिरण हुए थे। ज्ञान के द्वारा अपने पूर्वानुभव को जानकर वे विरक्त हुए और पूर्ण संन्यासी कहलाए।

इस प्रकार इन मूक-पक्षियों की गाथाएँ अनन्त हैं और इनके विविध रूपों ने मानव को अनादि काल से मोहित कर रखा है।

---

1. गोकुल दिशि व्याकुल वन-चारी।
   श्यामहिं रहे सशंक निहारी।
   रुकेउ करिनि-करि वारि विहारा।
   रुकेउ सुमन भ्रमरन गुंजारा।
   सोइ घनस्याम सोह रथ-घर्घर।
   नर्तन विरत शान्त शिखि तरुवर।
   चकित कपोत करत नहिं कूजन!
   करत न कुट कुट कुक्कुट कूलन। —कृष्णायन, पृ० 124
2. देखिय 'पुण्याश्रव' कथाकोष की कथाएँ—(क) सुग्रीव बैल की कथा, (ख) अधजला पुरुष और बकरे की कथा, (ग) कीचड़ में फंसी हुई हथिनी की कथा, (घ) बन्दर की कथा, (ङ) चंडाल और कुत्ती की कथा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ये वे ही कलहंस और खंजन हैं जिनको देखकर विरही राम ने सीता की गति एवं आँखों की भावना को कई बार अपने मानस-पटल पर झांका था।[1] यदि ये न होते तो विरह-व्यथित राम के दिन बड़ी कठिनता से बीतते। जिन्हें हम मूक कहते हैं और हृदय-हीन एवं अरसिक बताते हैं वे हमसे अधिक वाक्पटु, सहृदय और रसिक हैं। इनकी जीवन-दशा गहरी मस्ती की जीवित छाया है। तभी तो आचार्य केशवदास ने कहा था कि मोर की केका, कोकिल की मधुर ध्वनि एवं शुक-सारिका के मधुकंठ से प्रसूत कोकशास्त्र के सूत्र किसे मोहित नहीं करते! हंसों की बोली को सुनकर मानवती मान को छोड़कर प्रिय-मिलन के लिए विकल हो उठती है।[2]

संस्कृत-साहित्य में पक्षियों के विविध नाम पढ़ने को मिलते हैं, जिनसे उनके स्वभाव, प्रवृत्ति एवं आकार-प्रकार का भलीभाँति ज्ञान हो जाता है। इतनी अधिक लम्बी नामावली हमें अन्य साहित्य में प्राप्त नहीं है। पक्षी शब्द से पक्षधारी का बोध हो ही जाता है। पक्षियों के पंख होते ही हैं। पक्ष शब्द के आधार पर पक्षालु, पक्षधर, पक्षवाहन आदि नामों का निर्माण हुआ है। शकुन भी पक्षी का पर्यायवाची ही है। शक् धातु से शकुन, शकुनक, शकुनि आदि नाम निर्मित हैं। चिड़ियों की उत्पत्ति अंडे से होती है इसीलिए पक्षी अंडज भी कहा जाता है। घोंसले में विहग जन्म लेता है, इसीसे उसे नीडज एवं नीडोद्भव कहते हैं। पेड़ों पर निवास करने से कोषकारों ने पक्षी को वृक्षवासी तथा वृक्ष-गृह कहा है। हाथों के अभाव में यह प्राणी चोंच से ही खाता है अतः त्रोटक हस्त से भी संस्कृत कवियों ने उसे सम्बोधित किया है। स्वच्छन्द होकर पक्षी आकाश में विहार करता है। नील-गगन में उड़ते हुए पक्षी को देखकर ही तो विमान की

---

1. कलहंस कलानिधि खंजन कंज,
   कछू दिन केसव देखि जिए।
   गति, आनन, लोचन, पायन के,
   अनुरूपक के मन मानि लिए।
   यहि काल कराल तें सोधि सबै,
   हठि के बरसा मिस दूर किए।
   अवधौं बिन प्रान प्रिया रहि हैं,
   कहि कौन हितू अवलम्बि हिए। —रामचन्द्रिका, केशवदास
2. केकिन की केका सुनि काके न मथत मन,
   मनमथ - मनोरथ - रथ - पथ सोहिए।
   कोकिला की काकलीन-कलित-ललित बाग,
   देखत न अनुराग उर अवरोहिए।
   कोकन की कारिका कहत सुक सारिकानि,
   'केसोदास' नारिका कुमारिका हू मोहिए।
   हंस माल बोलत, ही मान की उतारि माल,
   बोलै नंदलाल तौं न ऐसि बाल कोहिए। —कवि-प्रिया

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कल्पना आविष्कारक के मन में उत्पन्न हुई थी। अतः संस्कृत-काव्य में खगम्, विहग, खग, खेचर, विहंग, नभचर, अम्बरचर, व्योम बिहारी, गगनचर आदि अनेक नाम पक्षी के लिए प्रयुक्त हुए हैं। दो पैर होने से पक्षी को द्विपाद भी कहा गया है। दो बार जन्म होने के कारण (एक बार अंडे के रूप में और फिर अंडे से जन्म होने से) इसे द्विज भी नाम प्राप्त हुआ है। लम्बी पूँछ होने से दीर्घ पुच्छ, पतँग भक्षी होने से मशकारी, चंचलता के कारण चंचला, एवं नेत्रों के चारों ओर सफेद चक्र होने से सित-नयन नाम भी कतिपय पक्षियों के पड़ गए हैं।

डॉ० रघुवीर ने 'आङ्गल-भारतीय-पक्षि नामावलि' नामक ग्रन्थ की विद्वत्तापूर्ण भूमिका में पक्षियों के विविध नामों पर गंभीरता से विचार किया है। पाश्चात्य विद्वानों ने भारतीय पशु-पक्षियों के विषय में बहुत कुछ लिखा है—सर्वश्री जगपति चतुर्वेदी एवं सुरेशसिंहजी लिखित पक्षी-विषयक पुस्तकें संग्रहणीय एवं पठनीय हैं। 'योजना' नामक पत्रिका के प्रत्येक अंक में 'हमारे पेड़ पौधे और पक्षी' शीर्षक से सुन्दर लेख निकल रहे हैं।

यह परिताप का विषय है एक अहिंसावादी एवं अध्यात्मवादी भारत में इन मूक-जीवों की अरक्षा हो और भौतिकवादी एवं मांसाहारी पाश्चात्य देशों में इन प्राणियों के लिए अभयवन या मृगाश्रय बनें।[1]

श्रीमंत फतेहसिंह राव गायकवाड़ (बड़ौदा-महाराजा) ने अपनी पुस्तिका "The Black Buck' (मृग) में हरिण के बंदी जीवन एवं विनाश पर हार्दिक संताप प्रकट किया है। उनका कथन है कि भगवान् बुद्ध और महात्मा गांधी की तपोभूमि में इस भोले मृग की रक्षा होना अत्यावश्यक है।[2]

यह जानकर किसे संतोष न होगा कि हमारी सरकार वन्य पशु-पक्षियों की रक्षा में विशेष संलग्न

---

1. विदेशों में वन्य पशुओं का उनके प्राकृतिक आवास में संरक्षण करने की विशेष व्यवस्था की जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में 40 राष्ट्रीय उद्यान तथा अभयवन या मृगाश्रय हैं। जापान में 20 राष्ट्रीय उद्यान तथा अफ्रीका में 20 अभयारण्य हैं। अफ्रीका के सबसे बड़े क्रूगर राष्ट्रीय उद्यान का क्षेत्रफल लगभग 8000 वर्गमील है। इन उद्यानों में लाखों की संख्या में पर्यटक तथा वैज्ञानिक जाते हैं।—श्री कामताप्रसाद जी सागरीय, मुख्य वन संरक्षक, मध्य प्रदेश के भाषण से उद्धृत।

2. It is indeed, a poor sight to see the black buck in small enclosures in Zoological parks and gardens in contrast to the open vast land in which he formerly roamed.....What a fate for this splendid animal that is held by Shiva as sign of good omen.....Woe to the man of Bharat who destroys this noble animal indiscriminately by cruel and unsporting means and bites with relish the meat of the black buck, which once was sacrificed to the Gods by the Brahmins and tasted by most devout as a holy offering.....for the black-buck deserves to be protected in the land of Budha and Gandhi, symbolic of an ancient and glorious past.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। सन् 1952 में केन्द्रीय वन्य-जीव-संरक्षण बोर्ड की स्थापना इस आशा का संबल है कि अहिंसावादी राष्ट्र में इन जीवों का विनाश न होगा। इस बोर्ड ने निम्नस्थ सुझाव दिये हैं—

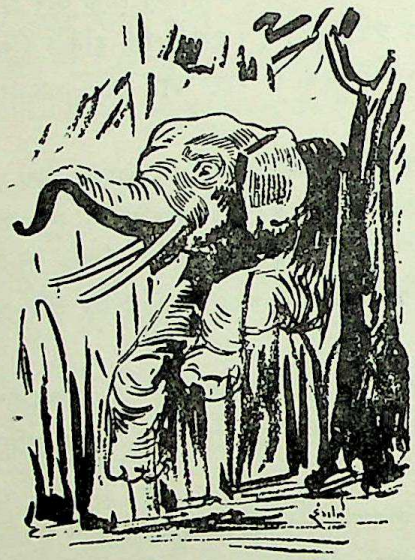

(1) वन्य पशु-पक्षी संरक्षण के लिए राष्ट्रीय उद्यान तथा अभयारण्यों अथवा मृगाश्रयों की स्थापना की जावे।

(2) जिन पशु-पक्षियों का अत्यधिक संहार होने से उनकी नस्लें लुप्त हो रही हैं, उन्हें रक्षित पशु-पक्षी घोषित कर उनका संरक्षण किया जावे।

(3) वन्य पशु-पक्षियों के हाड़-माँस-चर्म आदि से संबंधित व्यापार पर प्रतिबन्ध लगाया जावे।

(4) वन्य पशु-पक्षियों के संरक्षण के हेतु नियम बनाए जावें।

(5) वन्य पशु-पक्षियों को एक देश से दूसरे देश में भेजने पर प्रतिबन्ध लगाया जावे।

(6) फसलों की रक्षा के हेतु जिन आग्नेय अस्त्रों के लायसेंस दिये जाते हैं उनकी किस्म पर पुनर्विचार किया जावे।

(7) जनता में वन्य पशु-पक्षियों के संरक्षण की भावना जागृत की जावे।

उक्त सुझावों के अनुसार मध्य प्रदेश शासन ने मंडला जिले में कान्हा राष्ट्रीय वनोद्यान, शिवपुरी में मृगाश्रय तथा खीवनी में अभयारण्य की स्थापना की है।

साथ ही आखेट-विधान, मृगया नियम राष्ट्रीय वनोद्यान तथा वन पशु-पक्षी संरक्षण आदि नियम भी बनाए हैं।[1]

---

1. तृतीय वन्य पशु-पक्षी-संरक्षण सप्ताह (मध्य प्रदेश) के अवसर पर दिया गया श्री कामताप्रसाद सागरीय का भाषण।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वर्त्तमान मध्यप्रदेश एक विशाल भूखण्ड है जिसका क्षेत्रफल 171200 वर्गमील है इसमें सम्मिलित भूभाग हैं— बुन्देलखंड, बघेलखंड, मध्य भारत एवं पुरातन मध्य प्रदेश—जिनमें विविध प्रकार के पशुपक्षी पाए जाते हैं। 'भारत के सारे पक्षी 86 वंशों में विभाजित किये गए हैं। इनमें से 60 से अधिक वंशों के अन्तर्भूत 400 से अधिक जाति-उपजाति के पक्षी मध्य प्रदेश में पाए जाते हैं जो हमारे वन, नदी, तालाब, उपवन और नगरों को सुशोभित करते हैं।[1]

शन्नो अस्तु द्विपदे सन चतुष्पदे—(पुरुष सूक्त)

मानवों एवं पशुओं को सुख-शान्ति प्राप्त हो।

---

1. संस्कृत साहित्य में मध्यप्रदेश के कतिपय पक्षी—ले० करुणाशंकर दवे (श्री शुक्ल-अभिनंदन ग्रन्थ पृष्ठ, 72)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अलौकिक पशु-पक्षी

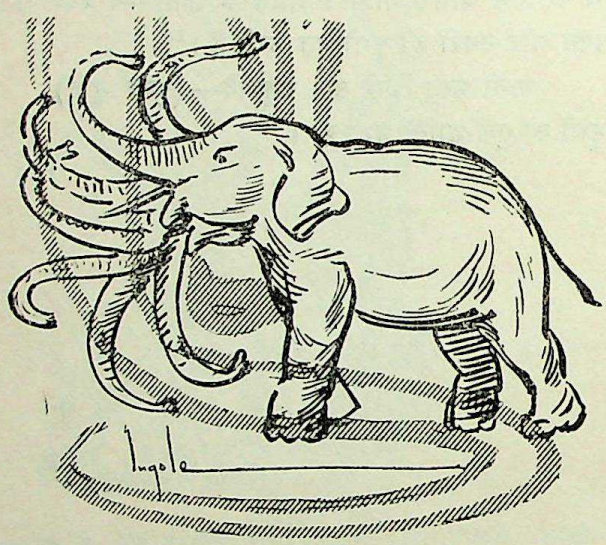

ये अलौकिक पशु-पक्षी स्रष्टा की विचित्र सृष्टि के प्रतीक हैं ।

यह समस्त संसार अलौकिकता का केन्द्र है । विकासवादियों ने अनेक सिद्धान्तों की स्थापना करके इस भौतिक विलक्षणता को इतिहास-क्रम से रखने का प्रयत्न किया है । लेकिन हमारे वेदज्ञों ने इस रहस्यमय सृष्टि को एक पृथक् दृष्टिकोण से आँका है । वस्तुतः यह विश्ववैचित्र्य अध्ययन का विषय है, जिसके द्वारा मानव इस विराट् विश्व की विशालता एवं असाधारणता को अनुभव कर सकता है । इस सांसारिक विचित्र रचना को देखकर गोस्वामी तुलसीदासजी ने आश्चर्य-चकित होकर भगवान् की एक विराट्-पुरुष के रूप में वन्दना की थी[1]। विमुग्ध अर्जुन को भगवान कृष्ण ने अपने विराट्स्वरूप को दिखाकर प्रबुद्ध किया था । इसी प्रकार वेदों और पुराणों में इस रहस्यमय सृष्टि का आदिविधाता परमेश्वर ही बताया गया है । जैन धर्मावलम्बियों का सृष्टिविषयक सिद्धान्त अलग है । वे इस रचना को स्वयं प्रभूत मानते हैं । इसमें उन्होंने पुद्गल की अनन्त शक्ति का उद्घाटन किया है । सैद्धान्तिक विवादों का अनुशीलन भी एक समस्या है । फिर भी हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि इस विस्तृत भूतल पर असंख्यात ऐसे

---

1 केसव, कहि न जाइ का कहिए ।
देखत तव रचना विचित्र अति ।
समुझ मनहि मन रहिए । —विनय पत्रिका

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विलक्षण पशु-पक्षी उत्पन्न होते रहे और रहेंगे जिनकी तालिका नहीं दी जा सकती है।[1] ऐसे प्राणियों को न हम काल्पनिक कह सकते और न पौराणिक। चिन्तन-शक्ति से दूर होने के कारण हमें किसी प्राणी विशेष को सहसा असम्भव नहीं कह देना चाहिए। अगाध ज्ञान के प्रतीक भारतीय ऋषियों के कथन विशेष-महत्त्वशाली हैं। वैज्ञानिक अन्वेषण उनकी समीचीनता तथा सत्यता को एक दिन सिद्ध करेगा। कतिपय असम्भावित बातें आज हमारे लिए सत्य बन गई हैं। विचारधाराएँ विभिन्न हो सकती हैं। किसी तथ्य का निरूपण पृथक्-पृथक् उपादानों से भी किया जा सकता है, लेकिन अपरिपक्व बुद्धि से किसी गूढ़ रहस्य का आकाश-कुसुमवत् बताना उचित प्रतीत नहीं होता। ये अलौकिक पशु-पक्षी प्रतीकात्मक हो सकते हैं और विकासवाद के सिद्धान्तों के स्पष्टीकरण के सुलभ साधन भी कहे जा सकते हैं लेकिन इनकी उत्पत्ति को काल्पनिक कहना एक नवीन विवाद को जन्म देना है। वैदिक, पौराणिक, स्मृति विषयक तथा लोक-कथा-गाथा-आधारित साहित्य को हम केवल कल्पना प्रसूत नहीं कह सकते। कुछ विद्वानों का कहना है कि ये अद्भुत प्राणी देवता ही थे, जो समय-समय पर अपनी ऋद्धि-सिद्धि द्वारा रूप परिवर्तन करके भक्तों को श्रद्धावान बनाते थे। लेकिन इस प्रकार किसी विशेष जीव के रूप को धारण करना सिद्ध करता है कि उस आकार का प्राणी कभी मौजूद अवश्य था। प्रस्तुत विषय को अधिक विवादास्पद न बनाकर कतिपय अलौकिक पशु-पक्षियों का संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जाता है जिसका आधार विभिन्न धार्मिक ग्रंथ, तथा लोक-विश्वास है।

(1) **इन्द्र-गज**—जन पुराणों में इस विशालकाय एवं अलौकिक गज का उल्लेख हुआ है। जब तीर्थंकर जन्म लेते हैं तब सुरेन्द्र इस गजराज पर बैठकर अपनी सप्त सेना के साथ स्वर्ग से मध्यलोक में आता है और शिशुरूप भगवान (तीर्थंकर) को इस गजेन्द्र पर बैठाकर बड़ी धूम-धाम के साथ मेरु पर्वत पर अभिषेक के लिए ले जाता है। परम पूज्य भगवान महावीर के जन्मोत्सव को मनाने के लिए सुरपति ऐसे ही गजराज को लेकर (सप्त अनीक के साथ) कुण्डलपुर में आया था। यह ऐरावत एक लाख योजन (चार कोस का एक योजन होता है) के आकार का होता है। इसके सौ मुख होते हैं। प्रत्येक मुख में आठ दाँत रहते हैं। हरेक दन्त पर एक सरोवर सुशोभित होता है। प्रत्येक सर में स्थित कमलिनियों और कमलों का समूह दर्शकों को आकर्षित करता है। इसके प्रत्येक दल पर एक मनोहारिणी अप्सरा नृत्य करती हुई भगवान के गुणों का गायन करती है—

सौधर्मेन्द्र आदि बहु देव, जन्म जिनेश जानकर भेव।
कल्याणक प्रभु कीजै जाय, लीजै निज पर पुण्य उपाय।
दल साजन आज्ञा की इन्द्र, सप्त अनीक रच्यौ आनन्द।
हस्ती प्रथम दुतिय हय जान, रथ गन्धर्व नृतक पय दान।
वृषभ सातसों वरनौ भेव, देव वलाहक विक्रिय एव।
जोजन लख ऐरावत भयौ, सौ मुख तास दशों दिश ठयौ।

---

1 देखिए, 'विलुप्त जन्तु,' 'अद्भुत जन्तु' तथा 'विलक्षण जन्तु'—लेखक श्री जगपति चतुर्वेदी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुख मुख प्रति बसु दन्त धरेह, दन्त दन्त इक इक सर लेह ।
सर सर माहि कमलिनी जान, सवा सवा सौ है परवान ।
कमलिनी प्रति-प्रति कमल बखान, ते पचीस पच्चीसहि ठान ।
कमल कमल प्रति दल सोभंत, अष्टोत्तर शत है विकसन्त ।
दल प्रति एक अप्सरा जान, सब सत्ताइस कोड़ प्रमान ।
ता गज पै आरुढ़ जु इन्द्र, अरु सब संग इन्द्राणी वृन्द ।
सामानिक सब देव अनेक, षोडश सर्व तनें कर टेक ।
आये सकल महोत्सव काज, अपने अपने वाहन साज ।

—श्री वर्द्धमान पुराण, 177-178

इसी प्रकार दिग्गज भी विशाल और बलिष्ठ होते हैं । जिनकी सामान्य चिंघाड़ से पृथ्वी कम्पित हो उठती है । ये गजराज पृथ्वी को अपने पैरों से दबाए रखते हैं । इनके नाम निम्न हैं[1]—

दिशा	दिग्गज
(1) पूर्व	ऐरावत
(2) पश्चिम	अंजन
(3) उत्तर	सार्वभौम
(4) दक्षिण	वामन
(5) अग्निकोण (पूर्व और दक्षिण का)	पुण्डरीक
(6) नैऋत कोण (पश्चिम और दक्षिण का)	कुमुद
(7) वायुकोण (उत्तर और पश्चिम का)	पुष्पदन्त
(8) ईशान कोण (पूर्व और उत्तर का)	सप्ततीक

समुद्र मन्थन के समय सागर से उत्पन्न ऐरावत एक ऐसा गजराज है कि जिसके दर्शन करके मानव क्या सुर भी स्वयं को भाग्यशाली मानता है । इसका रंग श्वेत होता है और चार दांतों से सुशोभित इसका मुख बड़ा ही मनोहर लगता है । सुरेन्द्र को यह वाहन के रूप में प्राप्त हुआ था ।

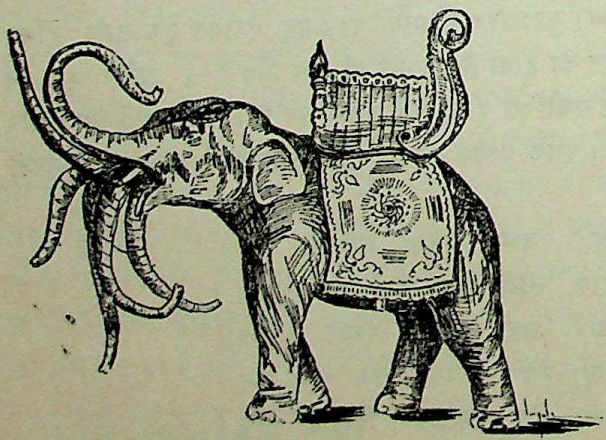

(2) अश्वों के सम्बन्ध में अनेक कथाएँ प्रचलित हैं । कहा जाता है कि सूर्य का रथ सात घोड़ों से खींचा जाता है । ये अश्व बड़े ही तीव्रगामी और चंचल होते हैं । इनकी रंग-विभिन्नता से ही दिनकर की किरणों का रंग परिवर्तित होता रहता है ।

1 'हिन्दी साहित्य की अन्तर्कथाएँ—' लेखक श्री भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ 71

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन्द्र का उच्चैःश्रवा नामक अश्व सागर से समुत्पन्न अमूल्य निधियों में से एक था। इसके सात मुख थे। सफेद रंग वाला यह घोड़ा न कुछ काल में सम्पूर्ण पृथ्वी की परिक्रमा कर सकता था। ईश्वर के रूप में पूजित स्वर्गपति इन्द्र इस अश्व पर सवार होकर कभी-कभी अपने परमभक्तों को दर्शन देकर अनुगृहीत करता था।

(3) **काकभुशुण्डि**—यह एक राम-भक्त काग थे। कौआ बनकर इस अद्भुत पक्षी ने भगवान् राम के दर्शन किए थे। अयोध्या में जाकर भगवान् रामचन्द्र के बाल-रूप को देखकर काकभुशुण्डि बड़े प्रसन्न हुए थे। और जब-जब भगवान् अपने राज-महल के आँगन में बाल-क्रीड़ा करते तब-तब काकभुशुण्डि फुदक-फुदक कर उनके साथ घूमते और उनके हाथ से कभी पूआ तो कभी मिठाई लेकर भागते थे। एक दिन भगवान् ने अपने छोटे हाथ से इन्हें पकड़ना चाहा, ये उड़े और आकाश में घूमने लगे। लेकिन भगवान् राम का हाथ भी बढ़ता गया। ऊँचे नभ में जिधर काकभुशुण्डि देखते, उधर ही उन्हें भगवान् की भुजा दिखाई देती थी। भयभीत होकर इन्होंने आँखें मूँदीं और ये पलभर अयोध्या में आगए।

एक दिन हँसते हुए भगवान् राम के मुख में काकभुशुण्डि घुस गए और भगवान् के उदर में पहुँच कर उन्होंने विचित्र ब्रह्माण्डों को देखा। इन लोकों में असंख्य समुद्र, तालाब, तारे, दिनकर, निशाकर, देवी-देवता थे, जिनके दर्शन काकभुशुण्डि ने किए थे। प्रत्येक ब्रह्माण्ड में ये सौ-सौ वर्ष तक रहे। इस प्रकार भगवान् की विचित्र लीलाओं को देखते हुए ये काग-रूप, काकभुशुण्डि एक सौ कल्प तक इधर-उधर फिरते रहे। भगवान् रामचन्द्र के उदर में बहुत समय तक रहने से काकभुशुण्डि घबड़ाए। एक दिन भगवान् हँसे और मुख के खुलते ही ये बाहर आगए। इन परम भक्त काग-शिरोमणि ने सर्व प्रथम राम-कथा कहकर संसार को भगवान् राम के चरित्रों से अवगत कराया था। भगवान् शंकर ने भी मराल-वेश धारण कर इस कथा को सुना था। गोस्वामी तुलसीदासजी ने रामचरितमानस के उत्तर काण्ड में इस अलौकिक नभचर की कथा का इस प्रकार उल्लेख किया है—

तब तब अवधपुरी मैं जाऊँ।
बालचरित बिलोकि हरषाऊँ।
इष्टदेव मम बालक रामा।
सोभा वपुष कोटि सत कामा।
निज प्रभु बदन निहारी निहारी।
लोचन सफल करउँ उरगारी।
लघु वायस वपु धरि हरि संगा।
देखउँ बाल चरित बहुरंगा।

दोहा—लरिकाई जहँ जहँ फिरहिं, तहँ तहँ संग उड़ाउँ।
जूठनि परइ अजिर महँ, सो उठाइ करि खाउँ।

... ...

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तब मैं भागि चलेउँ उरगारी।
राम गहत कहँ भुजा पसारी।
जिमि जिमि दूरि उड़उँ अकासा।
तहँ भुज हरि देखउँ निज पासा।
... ...

मूदेउँ नयन त्रसित जब भयऊँ।
पुनि चितवत कोसलपुर गयऊँ।
मोहि बिलोकि राम मुसुकाहीं।
बिहँसत तुरत गयउँ मुख माहीं।
उदर माँझ सुनु अंडजराया।
देखेउँ बहु ब्रह्माण्ड निकाया।
अति विचित्र तहँ लोक अनेका।
रचना अधिक एक ते एका।
कोटिन्ह चतुरानन गौरीसा।
अगनित उडगन रवि रजनीसा।
अगनित लोकपाल जम काला।
अगनित भूधर भूमि विसाला।
... ...

एक एक ब्रह्माण्ड महँ रहउँ बरष सत एक।
एहि विधि देखत फिरउँ मैं अँड कटाह अनेक।
... ...

भ्रमत मोहि ब्रह्माण्ड अनेका, बीते मनहुँ कल्प सत एका।
फिरत फिरत निज आश्रम आयउँ, तहँ पुनि रहि कछु काल गवाँयउँ।
... ...

राम उदर देखेउँ जग नाना, देखत बनइ न जाइ बखाना।
तहँ पुनि देखेउँ राम सुजाना, मायापति कृपाल भगवाना।
करउँ विचार बहोरि बहोरि।
मोह कलिल व्यापित मति मोरी।
उभय घरी महँ मैं सब देखा।
भयउँ भ्रमित मन मोह विसेषा।
दोहा—देखि कृपाल विकल मोहि बिहँसे तब रघुबीर।
बिहँसतहीं मुख बहिर, आयउँ सुनु मति धीर।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh

(4) **कामधेनु**—यह एक विलक्षण गाय है, जो याचक की सम्पूर्ण मनोकामनाओं की पूर्ति करती है। जब देवताओं तथा असुरों ने मिलकर समुद्र का मंथन किया था उस समय यह अद्भुत गौ सागर के भीतर से उत्पन्न हुई थी। संसार की समस्त वस्तुओं को यह पशु दे सकता है। निर्धन यदि इसकी सेवा

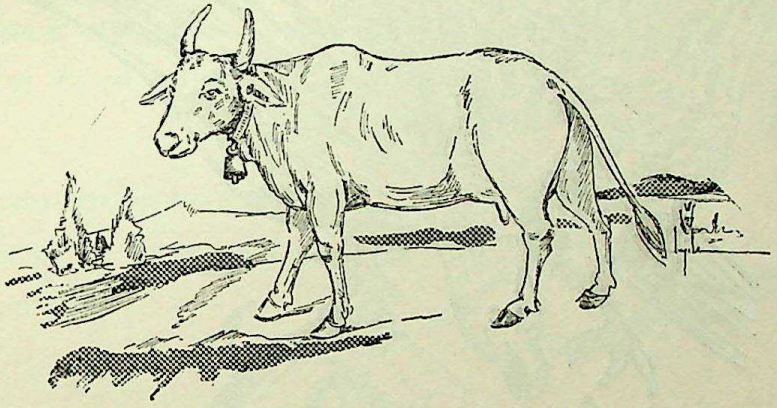

करे तो लक्ष्मीपति हो जाता है। सन्तानहीन नारी इस कामधेनु की पूजा करके पुत्रवती बन जाती है। महर्षि वसिष्ठ ने इस धेनु के बल पर ही कार्तवीर्य के साथ घोर संग्राम किया था और विजयी बनकर अपना पराक्रम दिखाया था। कामधेनु को ही नंदिनी कहते हैं। इसकी आराधना करके महाराजा दिलीप ने रघु नामक प्रतापी पुत्र को प्राप्त किया था। इसका रंग श्वेत होता है।

(5) **जटायु**—यह एक भीमकाय गीध था। इसकी दृष्टि बहुत तेज़ थी। हजारों मीलों तक यह देख सकता था। यह गृध्रराज महाराज दशरथ का अभिन्न मित्र था। भगवान् राम जब माता सीता एवं अनुज लक्ष्मण के साथ वन में निवास कर रहे थे तब जंगल की भयानकता का वर्णन करके इसी पक्षी ने भगवान् रामचन्द्र को सजग किया था और आवश्यकता पड़ने पर सहायता करने की प्रतिज्ञा की थी। जब रावण सीता को हरकर लंका की ओर जा रहा था उस समय भगवती सीता की पुकार को सुनकर यही गीध रावण से युद्ध करने को दौड़ा था। लेकिन भीषण चंचु-प्रहार करके भी जटायु लंका-पति को न और उसने तीक्ष्ण तलवार से इस पक्षिराज के पंखों को काटकर बलहीन कर दिया था। सीतान्वेषण में विकल भगवान् राम को जटायु ने ही जानकीहरण की पूरी कथा सुनाई थी और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
लंका की गतिविधि का बहुत कुछ परिचय कराया था। दीनदयालु राम ने मुक्ति देकर इस पक्षी को अमर बना दिया है।

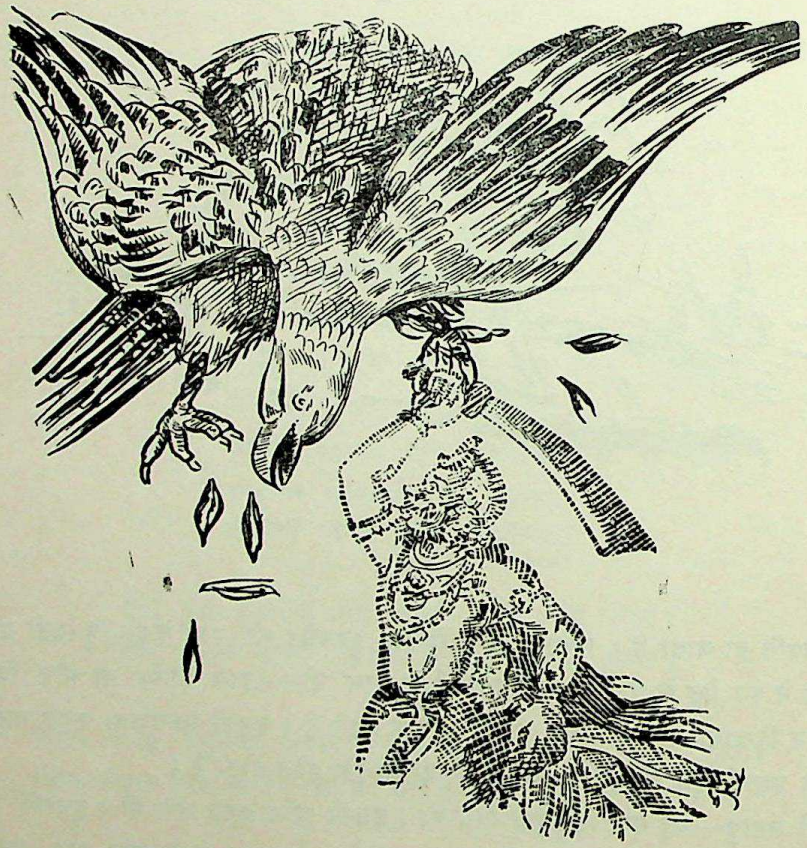

(6) हनुमान—भारत के समस्त हिन्दू मर्कटाधिपति हनुमान को श्रद्धा से पूजते हैं। ये बन्दर थे। इनकी माता अंजनी और पिता केसरी थे। अंजनीकुमार के पराक्रम को देखकर भगवान् राम भी प्रसन्न हुए थे और इन्हें अपना भक्त बनाया था। हनुमानजी ने ही विशाल सागर को एक छलांग में पार किया था और लंका में जाकर अशोक वाटिका में बैठी हुई सीताजी का पता लगाया था।

लंकायुद्ध में शक्ति लगने पर जब लक्ष्मण संज्ञाहीन हुए थे तब संजीवनी बूटी सुशोभित पहाड़

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को हाथ में रखकर बलशाली हनुमान ही लाये थे। रावण के साथ युद्ध करते हुए पवन-सुत (हनुमान) ने अपना शरीर आकाश से भी ऊँचा कर लिया था। राक्षसों के विनाश में इनका विशेष हाथ था। संकटों को दूर करने वाले हनुमान जी भगवान राम के महान् भक्तों में हैं। बंदर होने पर भी इनके कार्य अलौकिक थे।

युद्धरत वीर हनुमान जी का चित्र गोस्वामी जी ने इस प्रकार अंकित किया है :—

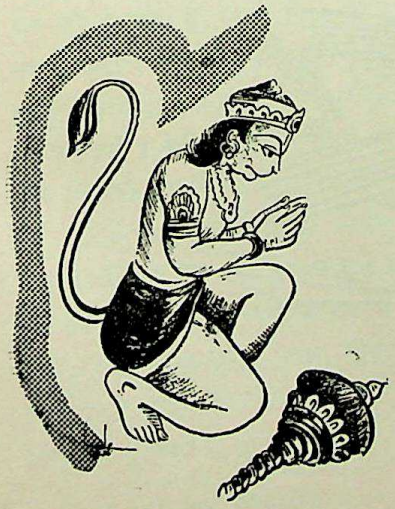

कतहुँ विटप भूधर उपारि परसेन बरक्खत।
कबहुँ बाजि सों बाजि मर्दि, गजराज करक्खत।
चरन कोट चटकन चकोट अरि-उर-सिर बज्जत।
विकट कटक बिछरत, वीर वारिद जिमि गज्जत।
लंगूर लपेटत पटकि भट, जयति राम जय उच्चरत।
तुलसीस पवन-नंदन अटल, जुद्ध ऋद्ध कौतुक करत।
—कवितावली, लंकाकांड, छंद 47

(7) **सुषेण**—बन्दरों को हेय भावना से देखने वाले मानव हनुमान एवं सुषेण के चरित्रों को ध्यान से पढ़ें। सुषेण भी एक बन्दर थे, जो विद्वत्ता एवं आयुर्वेद-विज्ञान में ज्ञानपूत मानस से भी अधिक मनीषी तथा प्रज्ञावान् थे। लंकापति रावण से भीषण युद्ध करते हुए जब लक्ष्मण दशानन-पुत्र मेघनाद की वीर-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

घातिनी शक्ति से मूर्छित हो गए थे और उनका जीवन शंकास्पद हो गया था तब वैद्यराज सुषेण ने ही इनकी प्राणरक्षा की थी। मर्कट होते हुए भी इस विलक्षण बन्दर में मृत को जीवित करने की अद्भुत शक्ति थी। मूर्छित लक्ष्मण को देखकर भगवान् राम भी विकल हो गए थे। राम-सेना शोक-सागर में डूब चुकी थी। इस विषम परिस्थिति में सुषेण ने आकर सबको धैर्य बँधाया था और संजीवनी जड़ी मँगवाकर लक्ष्मण को स्वस्थ किया था।

(8) **भक्त शिरोमणि गरुड़**—पक्षिराज गरुड़ भगवान् विष्णु के वाहन हैं। इन पर ही बैठकर भगवान् हरि और भगवती लक्ष्मी अपने भक्तों के पास जाते हैं। पक्षी होते हुए भी ये परम धार्मिक विद्वान् तत्त्वज्ञ और भक्ति पारंगत हैं। भगवान् रामचन्द्र की जीवन-गाथा में गरुड़ जी का विशिष्ट स्थान है। इस विज्ञ पक्षी के नाम पर लिखा गया गरुड़-पुराण भक्तों के लिए श्रद्धा की वस्तु है।

एक समय की बात है भगवान् रामचन्द्र लंका की भूमि में रावण के साथ युद्ध कर रहे थे। मेघनाद ने

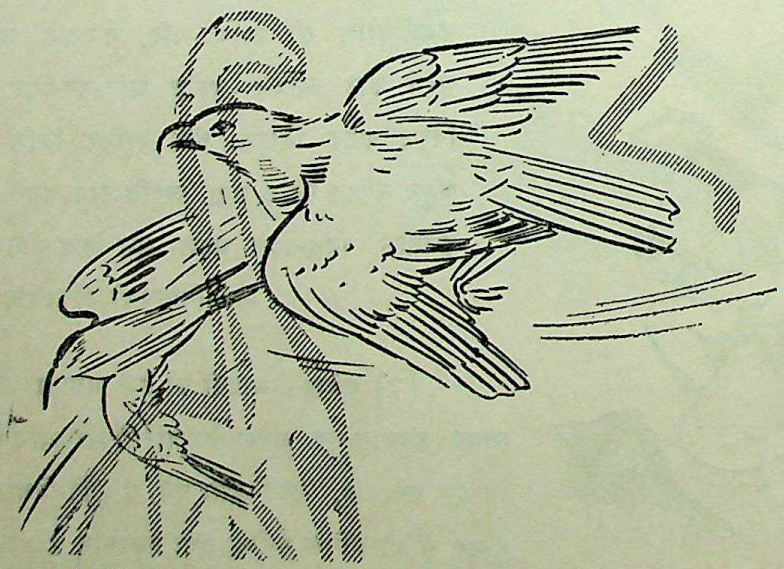

नागपाश से भगवान् को बाँध दिया। इतने में नारदमुनि की आज्ञा से गरुड़ रण-भूमि में पहुँचे और सर्पों का भक्षण करके उन्होंने भगवान् रामचन्द्र को पाशमुक्त किया। गरुड़ को इसी समय सन्देह हुआ और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन्होंने विचारा कि जो भगवान् राम व्यापक, विकाररहित, एवं अज हैं, वे कैसे पाश में बद्ध हुए।

इस प्रकार भ्रमित गरुड़ नारदजी के पास शंका-निवारण के लिये गए। इन्होंने ब्रह्मा जी के पास भेजा। ब्रह्मा जी ने गरुड़ के मोह को समझा और भगवान् शंकर की शरण में जाने को कहा। भगवान् शंकर ने सुविधा को ध्यान में रखकर गरुड़ को काक-भुशुण्डि के पास जाकर रामकथा सुनने का आदेश दिया। पक्षी पक्षी की भाषा को सुगमता से समझ लेते हैं। अतः गरुड़ काक-भुशुण्डि के पास जाकर रहे और रामकथा के श्रवण से उनके मन का भ्रम दूर हुआ और वे महान् ज्ञानी बनकर विश्व-विख्यात रामभक्त कहलाए। गोस्वामी तुलसीदासजी ने अपने रामचरितमानस के उत्तर कांड में इस प्रसंग को विस्तार से लिखा है। यह अलौकिक नभचर (गरुड़) प्रत्येक रामभक्त के लिए निष्काम भक्ति का आदर्श बन गया है।

(9) **सम्पाती**—यह एक रामभक्त पक्षी था, जिसके जले हुए पंख भगवान् राम के दूतों के दर्शन मात्र से पुनः उगकर सुन्दर हो गए थे। गरुड़ का ज्येष्ठ पुत्र सम्पाती जटायु का भाई था। एक दिन इन दोनों भाइयों ने सूर्य-लोक पर आधिपत्य स्थापित करने के लिए दिनकर के समीप जाने का विचार किया। उड़ते-उड़ते ये सूर्य के पास पहुँचे, लेकिन उसके असहनीय ताप से इनके पंख जलने लगे। सम्पाती ने अपने भाई जटायु को वापस जाने के लिए कहा और स्वयं आगे बढ़ा। जटायु नीचे आकर एक पेड़ के नीचे विश्राम करने लगा और सम्पाती पंखों के जल जाने से विह्वल होकर ज़मीन पर आ गिरा। चन्द्रमा नामक मुनि को सम्पाती की दशा पर दया आ गई और उन्होंने उसे सम्बोधित करते हुए कहा—"तुम्हारा साहस सराहनीय अवश्य है, लेकिन सूर्य भगवान् पर शासन करना पक्षी के लिए अनुचित है। अब जो हो चुका है, उसके लिए पश्चात्ताप करना व्यर्थ है। भगवान् का ध्यान करते हुए तुम अपना समय काटो। त्रेता युग में भगवान् राम का अवतार होगा और उनकी स्त्री का अपहरण राक्षसों का स्वामी करेगा। उस समय तुम रामदूतों के दर्शन करोगे और अपने पंखों को पुनः प्राप्त करके अपने भाग्य को सराहोगे। लेकिन तुम्हें भगवती सीता के हरण की पूरी सूचना देनी होगी।" चन्द्रमा मुनि की बात सत्य निकली और यथासमय रामदूतों को अपने समीप पाकर सम्पाती ने कहा था—"मैं अपनी आँखों से देख रहा हूँ कि सीताजी त्रिकूट पर्वत पर बसी हुई लंका के अशोक नामक उपवन में बैठी हुई भगवान् राम का चिंतन कर रही हैं। मैं वृद्ध हो चुका हूँ। शक्ति मेरी क्षीण हो चुकी है अतः लंका में प्रवेश नहीं कर सकता हूँ। मैं चेतावनी के रूप में यह ही कहना चाहता हूँ कि हरेक व्यक्ति अथवा बन्दर लंका में जाने का प्रयास न करें। माता सीता का पूर्ण अन्वेषण लंका में जाकर वही कर सकेगा जो चारसौ कोस समुद्र लांघने में समर्थ हो।[1] चिंतित होने की आवश्यकता नहीं है। भगवान् राम की कृपा से सब कार्य सुगमता से हो जावेगा।

---

1 जो नावइ सत जोजन सागर।
करइ सो रामकाज मति आगर।
मोहि विलोकि धरहु मन धीरा।
रामकृपा कस भयउ सरीरा॥—रामचरित मानस, किष्किन्धा कांड

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सम्पाती ने अपने यौवन-काल में अनेक साहसपूर्ण कार्य किए थे, जिनको सुनकर देवी-देवता भी चकित हुए थे।

(10) **जामवन्त**—ऋक्षराज जामवन्त अद्भुत शक्ति के पुञ्ज थे। भगवान् के वामनावतार में ये युवक थे। और दो ही घड़ी में इन्होंने बलि के बाँधते समय भगवान् के विराट् शरीर की सात प्रदक्षिणाएँ की थीं।[1] जामवंत ने ही हनुमानजी को समुद्र पार करने के लिए प्रेरित किया था :—

कहई रीछपति सुनु हनुमाना।
का चुप साधि रहे हु बलवाना।
पवन तनय बल पवन समाना।
बुद्धि विवेक विग्यान निधाना।
कवन सो काज कठिन जग माहीं
जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहीं।
राम काज लगि तव अवतारा।
सुनतहिं भयउ पर्वताकारा।
कनक वरन तन तेज विराजा।
मानहुँ ऊपर गिरिन्ह कर राजा।
सिंहनाद करि बारहिं बारा।
लीलहिं नाघऊँ जलनिधि खारा।
सहित सहाय रावनहिं मारी।
आनउँ इहाँ त्रिकूट उपारी।
जामवंत मैं पूछउँ तोही।
उचित सिखावनु दीजहु मोही।
एतना करहु तात तुम्ह जाई।
सीतहि देखि कहहु सुधि आई।
तब निज भुजबल राजिव नैना।
कौतुक लागि संगकपि सेना।

—रामचरित मानस, किष्किन्धाकाण्ड

लंका-विजय में भगवान् राम की सहायता करने वालों में जामवन्त का नाम उल्लेखनीय है। रीछ

---

1. जरठ भयऊं अब कहइ रिछेसा, नहिं तन रहा प्रथम बल लेसा।
जबहिं त्रिविक्रम भए खरारी, तब मैं तरुन रहे ऊँ बल भारी॥
दोहा—बलि बाँधत प्रभु बाढेउ, सो तनु बरनि न जाइ।
उभय घरी महँ दीन्हीं, सात पदच्छिन धाइ।

—रामचरितमानस, किष्किन्धाकाण्ड

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होकर भी इस पुण्यशाली पशु ने राम-दर्शन करके अपनी पावनता को चिरवन्दनीय बना लिया है।

तुलसी-शब्दसागर (पृष्ठ 173) में इस राम-भक्त का परिचय इस प्रकार दिया गया है :—

जामवंत (सं० जांबवत)—सुग्रीव के मंत्री का नाम जो ब्रह्मा का पुत्र माना जाता है। प्रसिद्ध है कि जामवन्त रीछ था। त्रेतायुग में रावण के विरुद्ध राम की सहायता करने वालों तथा लड़ने वालों में यह प्रमुख था। भागवत के अनुसार द्वापर में इसकी कन्या जीववती से कृष्ण ने विवाह किया था। सतयुग में जामवंत ने वामन भगवान् की परिक्रमा की थी। इस प्रकार यह तीनों युगों में जीवित था।

(11) **हीरामन तोता**—इस पक्षी को लेकर अनेक कथाएँ आज भी सुनी जाती हैं। प्राचीन काल में शुक मानव की बोली का सुन्दर रूप में अनुकरण करके गाथाओं, श्लोकों, एवं मंत्रों का उच्चारण करता था। शास्त्रार्थ में भाग लेने वाले प्राचीन शुकों की कथाएँ पुराणों में मिलती हैं। कहा जाता है कि भगवान् शंकर के मुख से ज्ञान-चर्चा को सुनकर एक शुक-शिशु शुकदेव के नाम से प्रख्यात हुआ था। जिसे संसार ने ज्ञान-सागर कहकर प्रणाम किया है।

महाविद्वान् मंडनमिश्र के मकान के दरवाजे पर टँगे हुए पिंजड़ों में बन्द कीराङ्गनाएँ आपस में संस्कृत भाषा के द्वारा वेदान्त के तत्वों की चर्चा किया करती थीं। एक समय की बात है शंकराचार्य शास्त्रार्थ करने की इच्छा से महापंडित मंडन मिश्र के धाम का अन्वेषण कर रहे थे। एक कूप पर कुछ युवतियाँ जल भर रही थीं। शंकराचार्य ने एक सुन्दरी से मंडन मिश्र का मकान पूछा। उत्तर में उसने कहा कि जिस मकान के मुख्य द्वार पर टँगी हुई शुक-नारियाँ संस्कृत में धर्म-चर्चा कर रही हों, वही मंडन मिश्र का महल है।[1]

संदेश-वाहन में पटु तथा वरान्वेषण में चतुर तोते का उल्लेख विश्व के साहित्य में अनेक रूपों में हुआ है। कादम्बरी के शुक को संस्कृत-काव्य का पाठक भूल ही नहीं सकता है।

यहाँ हीरामन तोते की कथा दी जा रही है। इसको आधार मानकर मलिक मुहम्मद जायसी ने अपने प्रसिद्ध प्रबंधकाव्य 'पद्मावत' को विशेष सरस बनाया है।

कहा जाता है कि सिंहल द्वीप के राजा गंधर्वसेन के राजभवन में एक अद्भुत तोता रहता था। उसका नाम हीरामन था। राजा की पुत्री पद्मावती इससे अनेक प्रकार की कथाएँ सुनती और मनोविनोद करती थी। सयानी होने पर पद्मावती ने हीरामन तोते से अपने विवाह की बात कही। चतुर तोता वरान्वेषण के लिए आतुर होकर राजमहल से मना करने पर भी उड़ गया और दुर्भाग्य से एक बहेलिया के द्वारा पकड़ा गया। सिंहल द्वीप के बाजार में आये हुए चित्तौड़गढ़ के एक दीन विप्र ने लाभ की आशा से

---

1. स्वतःप्रमाणं परतः प्रमाणम्।
कीराङ्गना यत्र गिरो गिरन्ति।
शिष्योप शिष्यै रूपचीय मान
मवेही तत् मण्डन मिश्र धाम।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसे खरीदा और अपने घर वापिस आया। चित्तौड़ के राजा रत्नसेन ने इस शुक को एक लाख रुपए देकर मोल ले लिया। हीरामन सुख से रहने लगा। एक दिन महाराजा रत्नसेन की महारानी नागमती पूर्ण शृंगार करके तोते के सामने खड़ी हुई और बोली—"कहो हीरामन, मैं कितनी सुन्दर हूँ।"

तोते ने कहा—"अभी तुमने सिंहल द्वीप की सुन्दरियों को नहीं देखा है। तुम सरीखी युवतियाँ तो उनके पैरों को धोती हैं। सिंहलद्वीप के राजा की पुत्री पद्मावती तो इतनी सुन्दर है कि उसके सामने स्वर्ग की रंभा भी न कुछ है।"

नागमती क्रुद्ध हुई और उसने अपनी दासी को हीरामन को मार डालने की आज्ञा दे दी। दासी चतुर थी। उसने तोते को जंगल में छिपा दिया और रानी को उसकी मृत्यु का पूरा हाल कह सुनाया।

जब राजा रत्नसेन को सब बातें मालूम हुईं तो उसने दासी को फटकारा और तोते को लाने का हुक्म दिया। हीरामन राजा के सामने आया और उसने सब कुछ कह दिया। फिर क्या था राजा रत्नसेन पद्मावती के साथ विवाह करने के लिए तोते के साथ चल दिया। हीरामन ने बड़ी चतुराई के साथ पद्मावती का राजा रत्नसेन के साथ विवाह कराया और स्वयं को अपने स्वामी के ऋण से उऋण किया। यह अलौकिक शुक आज भी विभिन्न प्रान्तों की लोक-कथाओं में जीवित है।

इन अलौकिक पशु-पक्षियों की ये कथाएँ उनकी विलक्षण मेधा का परिचय कराती हैं। पशु-पक्षियों का बहुत कुछ उल्लेख देवी-देवताओं के दर्शनों में भी मिलता है। समय-समय पर उनके रूपों में भी अवतीर्ण होकर विश्व के देवी-देवताओं ने संसार का कल्याण किया है और दुष्टों का दलन करके एक सुख-शान्तिमय आदर्श उपस्थित किया है। भारतीय पुराणों में भगवान् विष्णु ने मत्स्य, कच्छप, वाराह, हंस, नृसिंह, आदि का अवतार लिया है। पश्चिमीय देशों के देवी-देवताओं के रूपादि का अध्ययन करने वाले जानते हैं कि Dionysus (डायोनीसस), Demeter (डिमीटार), Adonis (ॲडोनिस), Attis (ॲट्टिस) एवं Osiris (ओसाइरिस्) कभी बकरा तथा बैल तो कभी सूकर, अश्व आदि के रूपों में चित्रित किए जाते हैं। कभी इनका सम्पूर्ण शरीर पशुवत् रहता है तो कभी मुखाकृति बकरे के समान होकर ेर अन्य पशु के समान होते हैं। कभी इनका शरीर सूकर की भाँति होता है और मस्तक पर बैल के सींग दिखाई देते हैं। अन्न-देवताओं की कल्पना पशुओं के रूप में अधिक हुई है। अलौकिक पशु-पक्षियों का यह सीमित विवरण हमें एक नूतन शोध की ओर संकेत करता है।

कुछ पुरातन देवालयों की समुन्नत भित्तियों पर अंकित शेर पंखों से उड्डीयमान दिखाया गया है।

चित्रित उन्मत्तगजराज की पीठ पर स्थित मृगराज के मस्तक पर वैष्णव तिलक सुशोभित होता हुआ आज भी देखा जा सकता है। गरुड के पंजों में लटकते हुए सात हाथियों का चित्र प्राचीन दुर्गों की दीवारों पर एक समय विशेष रूप से दिखाया जाता था। ये सब विशेष आकृतियाँ पशु-पौरुष के प्रतीक तथा पशु-संसार की अद्भुतता के अमर चिह्न हैं।

---

1. Golden Bocyh—(Part V, Vol. II. Chapter IX 'Ancient Deities of Vegetation as Animals)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वेदों में पशु-पक्षी

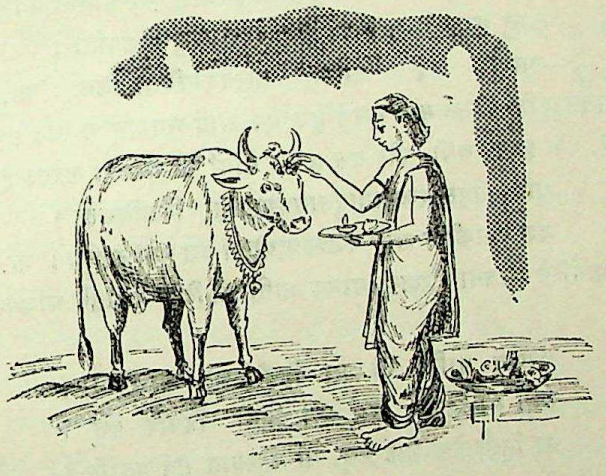

पशून् पाहि, गा मा हिंसीः
अजां मा हिंसीः ।
अविं मा हिंसीः, इमं मा हिंसी द्विपादं पशुं, मा हिंसी रेकशफं पशु,
मा हिस्यात् सर्व भूतानि ।

—यजुर्वेद

वेद हमारी संस्कृति के आदि परिचायक हैं। इनका प्रत्येक शब्द साहित्य की अमूल्य निधि है। वेदों के द्वारा ही हम ईश्वर-जगत-जीव की पूर्ण अभिव्यञ्जना कर पाते हैं। इन पुनीत ग्रंथों में सृष्टि के प्रत्येक अवयव एवं उपकरण के प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा प्रदर्शित की गई। संसार का कोई ऐसा पदार्थ नहीं है जिसका प्रतिपादन इनमें नहीं हुआ है। जिन्हें हम मूक, पराधीन, विमूढ़ अथवा विनाशक मानते हैं। उन पशु-पक्षियों का जितना सुन्दर चित्रण इन आदि ग्रंथों में मिलता है उतना अन्यत्र उपलब्ध होना असम्भव-सा है। इन आर्ष वाक्यों में विश्व के प्रधान अंग इन पशु-पक्षियों को सुखी बनाने तथा सुरक्षित रखने का सदुपदेश है। इसीलिए भारतीय संस्कृति का आराधक अथवा प्रशंसक कभी भी पशु का अनादर तथा विहगों का विनाशक नहीं बन सकता है। वैदिक युग में पशु एक प्रमुख धन था और विहंग एक प्रकृष्ट मनो-विनोद का साधन। वैदिक सभ्यता पशु-पक्षियों के प्रेम-स्नेह की अमर गाथा है। आर्य सदैव हिंसा से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भयभीत रहा है उसके सामने अहिंसा ही परम धर्म और परपीड़ा ही अधम पाप था । ऋग्वेद में कहा गया है कि मानव-अश्व एवं गौ के माँस भक्षी का सिर कुचल दो—

यः पौरषेयेण क्रविषा समङ्क्ते यो अश्व्येन पशुना यातुधानः ।
यो अघ्न्यायाः भरति क्षीर मग्ने तेषां शीर्षाणि हरसापि वृश्च । 8।4।18

यहाँ तो माता-पिता एवं नौकरों के साथ कुत्ते के कल्याण की भावना को अपनाया गया है—

सस्तु माता सस्तु पिता सस्तु श्वा सस्तु विशपतिः ।
ससन्तु सर्वे ज्ञातयः सस्त्वयमभितो जनः । ऋ. 7।55।5

पशु-धन की सतत वृद्धि की कामना करते हुए एक आर्य भगवान् से साठ हजार घोड़ी, दस हजार ऊँट, तीन हजार भेड़ी, एक हजार गधी, और दस हजार गायों की याचना करता है—

षष्टि सहस्राश्व्यास्यायुतासनमुष्ट्राणां विंशतिशता ।
दश श्याकीनां शता दशत्र्यऋषीणां दश गवां सहस्रा । ऋ. 8।46।22

अहिंसावादी आर्यों ने जितना संरक्षण मानव जाति को दिया है उससे अधिक रक्षा पशु-पक्षियों की ये सदैव करते रहे—

"पशून् पाहि, गां मा हिंसीः अजां मा हिंसीः ।
अविं मा हिंसीः, इमं मा हिंसी द्विपादं पशुं ।
मा हिंसी रेक शफं पशु, मा हिंस्यात् सर्व भूतानि ।

—अर्थात् पशुओं की रक्षा करो, गाय को मत मारो, बकरी को मत मारो, भेड़ को मत मारो, इस मनुष्य और द्विपद पक्षियों को मत मारो, एक खुर वाले घोड़े, गधे को मत मारो और किसी भी प्राणी को मत मारो ।[1]

सामवेद के एक मन्त्र में गाया गया है कि परमात्मा ने ही वनस्पतियों, गायों, पशु-पक्षियों एवं भूमियों को उत्पन्न किया है—

त्वमिमा ओषधीः सोम,
विश्वास्त्वमयो अजनयस्त्वगा ।
त्व मातनोरुर्वा अन्तरिक्षं त्वं
ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ।

यजुर्वेद संहिता के 24वें अध्याय में ऋतुओं के अनुसार पक्षियों के स्वभाव का वर्णन तथा उसके अध्ययन की ओर संकेत किया गया है । मानव को अपनी वृद्धि इन पशुओं एवं पक्षियों के चरित्रों को देख कर करनी चाहिए । हमें इन मूक प्राणियों से बहुत कुछ सीखना है । महर्षियों ने इनके बीच रहकर आत्म-संशोधन एवं विकास किया है ।

---

1 वैदिक सम्पत्ति, पृष्ठ 569 ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अग्नये कुटरूनालभते वनस्पतिभ्यऽउलूकानग्नीषोमाभ्यां ।
चाषानश्विभ्यां मयूरान् मित्रावरुणाभ्यां कपोतान् ।

—यजुर्वेद संहिता, भाग 2, पृष्ठ 316

—अग्नि के प्रयोग के लिए कुटरु मुर्गा नामक पक्षियों को प्राप्त करे । वनस्पतियों के ज्ञान के लिए उल्लू जातियों के पक्षियों को प्राप्त करे, उनके जीवन का अनुशीलन करे । अग्नि और जल की परीक्षा के लिए चाष नामक पक्षियों को देखे । स्त्री-पुरुषों के संयमी और प्रेमी और सुन्दर सुखप्रद आलाप के लिए मयूरों को देखे । मित्र और वरुण अर्थात् मित्रता स्नेह और परस्पर वरण के लिए कपोत नामक पक्षियों को देखे ।

यजुर्वेद संहिता के निम्नस्थ मन्त्र में कपोत, उलूक और शशक को आने वाली विपत्ति का सूचक बनाकर इनके स्वभाव के अध्ययनार्थ संकेत किया गया है :—

वर्षाहूर्ऋतूनामाखुः कशो मन्थालस्ते पितृणां बलाया नगरो ।
वसूनां कपिञ्जलः कपोतः ऽउलूकः शशस्तेनिर्ऋत्यै वरुणायारण्यो मेषः ।

गैंडा नामक पशु का चर्म ढाल के लिए उपयुक्त है। काला कुत्ता, कानोंवाला गधा तथा चीता आत्म रक्षा के लिए सदा सतर्क रहता है। भूमि विदारण में सूअर की प्रवृत्ति अनुकरणीय है । वीरता के लिए सिंह एक महान् आदर्श उपस्थित करता है । इसी प्रकार कृक्लास, सरट, गिरगिट का लक्ष्य प्राप्ति के लिए प्रयास अभिनन्दनीय है । पृषत् नामक मृग का चर्म वस्त्राभाव की पूर्ति करता है । इस प्रकार इन पशु-पक्षियों की प्रवृत्तियाँ मानव-समाज के सम्मुख एक महान् कर्तव्य की स्थापना करती हैं —

'खड्गो वश्वदेवः श्वा कृष्णः कर्णो गर्दभस्तरक्षुते
रक्षसामिन्द्राय सूकरः सिंहो मारुतः कृक्लासः
पिप्पका शकुनिस्ते शरव्यायै विश्वेषां देवानां पृषतः ।

—यजुर्वेद संहिता

वेदों में सर्वत्र मानव के स्वयं अपने परिवार तथा पशुओं के स्वस्थ जीवन की कामना करते हुए परमात्मा से रोगरहित एवं बलदायक अन्न के लिए प्रार्थना की है ।

लवा पक्षी कितना सौम्य होता है । वया नामक विहग अपने घोंसले को बनाकर एक उत्कृष्ट कारीगरी का दृष्टान्त हमारे सामने रखता है । गुरुसल पक्षी गौ की पीठ पर बैठकर कीटों का भक्षण करता है लेकिन गाय को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचाता है । कुलीकं तथा पारुष्ण पक्षियों का स्वभाव लपेक्षा के योग्य नहीं है । उष्ण शरीरी होकर भी वे (पारुष्ण) अपने शिशुओं को छाती से चिकापये रहते हैं । कपोत प्रातःकाल उठकर हमें जगाते हैं—चमगीदड़ संध्याकाल का हमें परिचय देते हैं । मासों की उत्तमता का परिज्ञान काग कराता है । मृगों का स्नेह आकर्षक होता है । भैंस का प्रतिरोध हमें शत्रु-विनाश की प्रेरणा देता है । भार-वाहन की क्षमता हमें ऊँट से सीखनी है । भूमि-ज्ञान चूहों से तथा—नभ-विज्ञान पशुओं से सीखिए ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमाय लवाना लभते, व्वष्ट्रे कौलीकान्
गोषादीर्देवानां पत्नीभ्यः
कुलीका देव जामिभ्योऽग्नये गृहपतये पाकंष्णात्

× × ×

अह्ने पारावतानालभते, रात्र्यै सीचापूरहो रात्रयोः सन्धिभ्यो ।
जतूर्मासेभ्यो दात्यौहान्त्संवत्सराय महतः सुपर्णान् ।

× × ×

भूम्याऽआखूना लभतेऽन्तरिक्षाय पाङ्क्तान् दिवे कशान् दिग्भ्यो ।
नकुला वभ्रुकावान्तर दिशाभ्यः ।

× × ×

ईशनाय परस्वतऽआलभते मित्राय गौरान्
वरुणाय महिषान् वृहस्तये गवयांस्त्वष्ट्र उष्ट्रान् ।

—यजुर्वेद संहिता 24वाँ अध्याय

इससे स्पष्ट है कि मनुष्य का पशु-जगत से चिरन्तन सम्बन्ध और सम्पर्क रहा है—

अन्नपेत अन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः ।
प्रप्रदातारं तारिष ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ।

यजु० 1 ।83

ऋग्वेद में सेनापति से प्रार्थना करते हुए अनुरोध किया गया है कि वह कुत्ते के समान आज्ञाकारी सैनिकों की सहायता से दुष्टों का विनाश करे । श्वान का आज्ञा-पालन प्रसिद्ध है—

त्वं करञ्जमुत पर्णयं बधीस्तेजिष्ठयातिथिग्वस्य वर्तनी ।
त्वं शता वङ्गृदस्याभिनत् पुरोऽनानुदः परिषूता ऋजिश्वना ।।

× × ×

हंस नामक पक्षी का गुण, स्वभाव, प्रवृत्ति अनुकरणीय है । वह जल में निमग्न होकर भी श्वसा लेता है उसी प्रकार शासक को प्रजारत होकर जीता-जागता रहना चाहिए ।

श्वसित्यप्सु हंसो न सीदन् क्रत्वा चेतिष्ठो विशामुषर्भुत् ।
सोमो न वेधा ऋत प्रजातः पशुर्नशिश्वा विभुर्दूरेभाः । —ऋग्वेद

परमात्माओं की वंदनाओं में ऋषियों ने यही कहा है कि वह परमेश्वर मानव, पशु-पक्षी आदि का समान भाव से पालन पोषण करता है । अतः उसकी दृष्टि में जो महत्त्व ज्ञानी मानव का है, वही गरिमा उसके हृदय में इन परोपकारी पशु-पक्षियों की है ।

तमीशीनं जगतस्तस्थुषपतिं, धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम् ।
पूषा नो यथा वेद साम सद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये । —ऋग्वेद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय पुरातन-सभ्यता में गोधन का विशिष्ट सम्मान था। गायों की संख्या पर ही मानव के वैभव का उस युग में अनुमान किया जाता था। इस निरन्तर बढ़ने वाले धन की पूर्णरूपेण रक्षा होती थी और इसे सुरक्षित रखने के लिए प्रत्येक व्यक्ति इन्द्र (परमात्मा) से रात-दिन प्रार्थना करता था।

न ता नशन्ति न दभाति तस्करो, नासामामित्रो व्यथिरा दधर्षति।
देवांश्च याभिर्यजते ददाति च, ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिः सह।

—ऋग्वेद

—हमारे समीप से गौएँ नष्ट न हों। हमारी गौओं को चोर नहीं चुरावें। हमारी गौओं पर शत्रुओं का शस्त्र पतित न हो। गोस्वामी यजमान जिन गौओं से इन्द्रादि का यजन करते हैं और जिन गौओं को इन्द्र के लिए प्रदान करते हैं, उनके साथ वे चिरकाल तक रहें। (वैदिक साहित्य, पृ० 357)

अन्य वेदों के ही समान अथर्ववेद में भी पशु-पक्षियों का उल्लेख विभिन्न रूपों में हुआ है। वैदिक काल में यज्ञों की प्रधानता थी अतः दूध-घृतादि की प्राप्ति के सुलभ-साधन होने से गाय, भैंस, बकरी, भेड़ आदि का उल्लेख इन ग्रन्थों में होना आवश्यक ही था। अश्वमेध के प्रचार ने अश्वों के संरक्षण की ओर ध्यान आकर्षित किया था। इसके अतिरिक्त युद्धों में भी तो घोड़ों का प्रयोग होता था। श्वान यज्ञों की रक्षा करता था। शूकर सफाई करके अपने अस्तित्व को उपयोगी सिद्ध करता था।

यज्ञों में अनेक प्रकार के पशुओं की आवश्यकता होती है। इन पशुओं का नाम वेद में में ग्राम्य पशु है। उन ग्राम्य पशुओं में गाय, भैंस,बकरी, भेड़ी, घोड़ा, कुत्ता और सुअर यज्ञ-पशु हैं। यज्ञ में इन पशुओं का उपयोग होता है। शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि 'कतमो प्रजापतिरिति, यज्ञरिति, कतमो यज्ञरिति पशुरिति' अर्थात् प्रजापति क्या है ? प्रजापति यज्ञ है। यज्ञ क्या है ? पशु ही यज्ञ है। यहाँ पशु को यज्ञ और प्रजापति कहा गया है। मनुष्य उन्हीं से पालित होते हैं और यज्ञ भी उन्हीं से सम्पन्न होते हैं। इसलिए वही प्रजापति और यज्ञ है। इन यज्ञीय पशुओं में गाय का स्थान सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि यज्ञकी प्रधान वस्तु घी और अन्न गाय, बैलों से ही प्राप्त होता है।[1]

यहाँ अथर्ववेद संहिता से कुछ मन्त्र उद्धृत किए जाते हैं जिनमें पशु-पक्षियों की चर्चा हुई है। एक ईश्वर-भक्त भगवान् से प्रार्थना करता है कि वह उसे पशुओं का दूध प्रदान करे तथा दोपाये और चौपायों के खाने योग्य धान्य भी दे।

पुष्टिं पशूनां परि जग्रभाहं चतुष्पदां द्विपदां पञ्च धान्यम्।
पयः पशूनां रसमौषधीनां बृहस्पतिः सवितामेनि यच्छात्।

(पृष्ठ 137)

एक मंत्र में राजसत्ता से विनय की गई है कि वह गायों, भेड़ों तथा घोड़ों की रक्षा भेड़िये के समान छुपकर आक्रमण करने वाले चोरों से करे।

---

1 'वैदिक सम्पत्ति', पृष्ठ 360

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक ऋषि समस्त पदार्थों में व्यापक ईश्वर की तुलना हृष्ट-पुष्ट बैल से करता हुआ कहता है कि जिस प्रकार उत्तम गति वाला बैल गोयूथ में शोभा देता है और कृषि-कार्य में सहायता प्रदान करता है उसी प्रकार परमेश्वर चराचर में व्याप्त होता हुआ सबका संचालक है—

वृषा यथेव वंसगः कृषीरियर्त्योजसा। ईशानो अप्रतिष्कतः।

(पृ० 326)

सर्वत्र पशुधन की कामना करते हुए वैदिककालीन मनुष्यों ने अपने-अपने राज्यों में गायों और घोड़ों की पर्याप्त वृद्धि चाही थी—

इह गावः प्रजायध्वमिहाश्वा इह पूरुषाः।
इहो सहस्र दक्षिणोऽपि पूषा निषीदति ।

× × ×

मेमा इन्द्र गावोरिषन् मो आसां गोपति रिषत्।
मासाममित्र पुर्जन इन्द्र मा स्तेन ईशत । (पृष्ठ 419)

एक सूत्र में कहा गया है कि बलशालिनी राजशक्ति सिंह के समान प्रभुतामयी होती है और वह व्याघ्र एवं चीते के तेज को ग्रहण करती हुई दुष्टों को आतंकित करती है—

सिंहस्य रात्र्युशती पींषस्य व्याघ्रस्य द्वीपदो वर्च आददे।
अश्वस्य व्रघ्नं पुरुषस्य मायुं पुरू रूपाणि कणुषे विभाति। (पृष्ठ 175)[1]

वैदिक युग में हिंसा होती थी अथवा नहीं, यह एक विवादास्पद विषय है। कुछ विद्वानों ने शब्दों के विभिन्न अर्थ बनाकर यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि वैदिककाल पूर्ण अहिंसा का पावन प्रतीक था अतः उस समय हिंसा होती ही न थी। जीव-मात्र की रक्षा का ही उद्देश्य ऋषि-वाणी का था। हिंसा को एक स्थान पर सम्बोधित करके (अथर्ववेद में) कहा गया है—

'अना गोहत्या वै भीमा कृत्ये मानो गामश्वं पुरुषं वधीः।
यत्र यत्रासि निहिता ततस्त्वोत्था- पयामसि, पणाल्लघीयसीभव। (अथर्व० 10-1-29)
ये श्रद्धाधन काम्या क्रव्यादा समासत्ते।
तेवा अन्येषां कुम्भीं मयदिघति सर्वदा। (अथर्व० 12-1-51)

—अर्थात् हे हिंसा ! निर्दोषों की हत्या निश्चय ही महान् पातक है। अतः तू हमारी गौ, घोड़े और पुरुषों को मत मार। जहाँ-जहाँ तू गुप्त रूप से छिपी हुई है वहाँ-वहाँ से हम तुझे निकालते हैं। अतः तू पत्ते से भी अधिक हलकी हो जा। अश्रद्धा वाले जो धन की कामना से मांस खाने वालों का साथ करते हैं वे सदैव दूसरों की ही हंडी का खाते हैं।[2]

---

1. पृष्ठ संख्यायें अथर्ववेद संहिता भाषा-भाष्य की हैं।
2. वैदिक सम्पत्ति, पृष्ठ 408

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस प्रकार वैदिक-साहित्य में की गई इन मूक प्राणियों की चर्चा कम महत्त्व की नहीं है, यह इस बात को प्रमाणित करती है कि ये प्राणी भी उतने ही पुरातन हैं जितनी प्राचीन हमारी यह सृष्टि है। इस निबन्ध के लिखने में मुझे निम्नस्थ ग्रंथों से विशेष सहायता मिली है अतः मैं विद्वान लेखकों का कृतज्ञ हूँ।

(1) वैदिक सम्पत्ति	पंडित रघुनन्दन शर्मा
(2) ऋग्वेद संहिता (3) सामवेद संहिता (4) यजुर्वेद संहिता (5) अथर्ववेद संहिता	श्री पंडित जयदेव शर्मा
(6) वैदिक साहित्य	पंडित रामगोपाल त्रिवेदी

पशु-पक्षियों का पूजा-स्तवन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

× × ×

श्री गरुड़ाय नमः

श्री उलूकाय नमः

श्री कागाय नमः

श्री सिंहाय नमः

गावो यज्ञस्य हि फलं गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः ।

एक युग था जिसमें पशु-पक्षियों के साथ मानव बिना किसी भेद-भाव के रहा करता था । उस समय इन सब में मैत्री के साथ पारस्परिक पुनीत सौहार्द्र भी था । ये एक साथ रहते और अपने परिमित जीवन की समस्याओं का समाधान किया करते थे । समय बदला और इस परिवर्तन से इन दोनों के बीच में एक गहरी भिन्नत्व की खाई खुद गई; फिर भी पशु-पक्षियों ने कुछ सीमा तक अपने प्रेम-भाव को सुरक्षित रखा। मानव ने कभी इन अपने साथियों को अपमानित किया तो कभी अपना दास भी बनाया । मनुष्य ने इन्हें भुलाने का प्रयत्न किया लेकिन अपनी सहिष्णुता के कारण इन पशु-पक्षियों ने अपने मानवत्व को हीन अथवा दीन न होने दिया । मनुष्य के प्राप्त अनादर के बदले में इन्होंने उसे स्नेह दिया। इंसान की कठोरता के प्रतिफलों में इन पशु-पक्षियों ने उन्हें नम्रता के साथ अपनाया । प्रतिहिंसा की भावना इनमें बहुत समय तक जाग्रत ही न हुई। मानव ने इन की इस महानता का अनुभव कभी भय-भावना से तो कभी धार्मिक कामना से अथवा कभी उपकार जनित कृतज्ञतावश तथा ईश्वर प्रतिरूप एवं वाहन के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कारण अपने मानस में किया। परिणामस्वरूप मानव ने इन्हें पूजा, इनकी आराधना-वन्दना की और विवश होकर इन्हें मारने पर क्षमा-याचना की। उस आदि युग को छोड़िए आज भी गज-अश्व की पूजा होती है। नीलकण्ठ को विष्णु-रूप होने के कारण प्रणाम किया जाता है। गरुड़ की वन्दना धार्मिक महत्त्व रखती है। पितृ-पज्ञ में काग-आह्वान, मन्त्र-सिद्धि में उलूक-पूजन तथा विशेष धार्मिकोत्सव पर शुक-प्रशस्ति हमारी परम्परागत धार्मिक संस्कृति की भावना का प्रतीक है।

आधुनिक काल में गौ-पूजा एवं वृषभ-वन्दना, धर्माचार्यों द्वारा प्रणीत धार्मिक-साधना-सिद्धि में साधन-रूप से वाञ्छनीय हैं। यह सत्य है कि हमारी आर्य-संस्कृति में अनेक अनार्य तत्त्वों का सम्मिश्रण हुआ है, फिर भी इनका महत्त्व है। अब तो यह एकीकरण इतना पुरातन हो गया है कि इसका त्याग हमारे लिए धार्मिक अनुराग के प्रति अनादर सूचक है। कुछ पशु-पक्षी तो स्वभावतः पावन होने से हमारे लिए पूज्य हैं। कतिपय पशुओं की पूजा का भाव हमारी धार्मिक सीमा में वाह्य प्रभाव से प्रविष्ट हुआ है। कुछ विद्वानों के मतानुसार पशु-पक्षियों की आराधना का मूलाधार पुनर्जन्म की मान्यता है। यज्ञ, जादू-टोना तथा अन्य तान्त्रिक प्रवृत्तियों ने भी इन मूक प्राणियों के प्रति श्रद्धा-भाव उत्पन्न किया है।

वर्तमान सभ्यता से दूर रहने वाले मानव आज भी पशु-पक्षियों की विशेष पूजा करते हैं और इस पूजन में कतिपय वे ही भावनाएँ सन्निहित हैं जिनका उल्लेख पहले हो चुका है।

ऐनो (एक वनवासी जाति) कई पक्षियों की पूजा करते हैं। इनमें गरुड़ का विशेष महत्त्व है। पिजड़ों में बन्द करके वे इन्हें पूजते हैं तथा मिठाई एवं फलादि अर्पित करके इनको देवी-देवताओं के सम्मुख बलि-रूप में काटते हैं। इनके गले पर छुरी चलाते समय वे प्रार्थना करते हैं जिसमें इस पक्षी का गुण-गान होता है।

गरुड़ की पूजा भगवान् विष्णु के वाहन के रूप में आज भी विष्णु-भक्त करते हैं। गरुड़ पुराण में इस पावन पक्षधर का स्तवन हुआ है। गरुड़ का रूप धारण करके अनेक देवताओं ने अपने भक्तों को दर्शन दिया है। 'महायज्ञ' में 'श्री गरुड़ाय नमः' कहकर आहुति दी जाती है। वन-वासियों का विश्वास है कि वन्य-पशुओं को मारने से उनके वंशज बदला लेते हैं और मारने वालों को अनेक रूपों में कष्ट देते हैं। सुमात्रा के समीपस्थ निवास करने वाली अनेक वन-जातियाँ शेर (Tiger) को नहीं मारती हैं। विवश होकर इस भयावह पशु को यदि वे मारते हैं तो क्षमा-याचना करके अपने आप को पाप मुक्त भी कर लेते हैं। यहाँ के कुछ आदिवासी अपने आप को व्याघ्र के वंशज एवं सम्बन्धी मानते हैं और इसी लिए इस वन्य पशु की मृत्यु पर वे शोक मनाना अपना धर्म समझते हैं।

राजमहल (बंगाल) के पहाड़ों में निवास करने वालों का यह विश्वास है कि जो परमात्मा की आज्ञा के बिना शेर को मारता है, उसे तथा उसके सम्बन्धियों को अन्य जीवित शेर खा जाते हैं। कतिपय आदिवासियों ने शेर को भगवान के रूप में माना है और इसीलिए वे इसे 'बाघ देवता' कहकर पूजते हैं और यथावसर मिट्टी की बाघ-मूर्ति बनाकर उसके सन्मुख करमा नृत्य करते तथा बकरों की बलि चढ़ाते हैं। भगवती दुर्गा के आराधक इस भयंकर पशु को देवी का वाहन मानते हैं। पौराणिक कथा के अनुसार एक समय भगवान् ने सिंह का अवतार लेकर हिरण्यकशिपु का वध किया था। यह पशु अपराजित शक्ति का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रतीक माना गया है। कुछ आदिवासियों का विश्वास है कि भेड़िये को मारने से जंगल में शिकार का आभाव हो जाता है अतः जब वे किसी कारणवश इस पशु को मारते हैं तो उसकी मृत देह की पूजा करते हैं और क्षमा-याचना करके ही उसके मांस का भक्षण कर पाते हैं। क्षमा-प्रार्थना में वे हाथ जोड़कर चिल्लाते हैं।

हे भेड़िये ! तुम क्रुद्ध मत होना। तुम्हें हमने नहीं मारा है, रसियन्स ने तुम्हारा नाश किया है।[1] हमें क्षमा करो।

कुछ कृष्ण पक्षियों को पावन मानकर आज भी कतिपय मनुष्य उनके घोंसलों का छूना पाप मानते हैं। वे न उनके मांस को खाते हैं और न उनका शिकार करते हैं। उनका विश्वास है कि इन विहंगों को मारने से भयंकर तूफान आते हैं और जंगलों का नाश हो जाता है। वे इन पक्षियों को देवता के ही रूप में पूजते हैं। कुछ नीग्रो (Black raven) डोमे काग को अपना चचा मानते हैं।

अफ्रीका के कुछ वनवासी हाथी को महादेवता मानकर पूजते हैं और कारणवश उसे मारकर उसकी सूंड को विशेष उत्सव के साथ गाड़ते हैं। भारत के उदार वैष्णव भगवान् गणेश की स्तुति करते हुए 'गजानन' कहकर उनको प्रणाम करते हैं। विवाह के प्रारम्भ में गज-पूजा (भगवान गणेश के रूप में) आज भी होती है। गज शक्ति का रूप है। विजयदशमी के दिन गज एवं अश्व की पूजा राजपरिवारों में आज भी होती है।

इस विशाल पृथ्वी के हास्य भागों में रहने वाले कुछ आदिवासी अपने आपको हरिण तथा शेर के वंशज मानते हैं। और वे इनको कभी भी नहीं सताते। अपने पुत्र-पुत्रियों के नामों को वे इन पशुओं पर आधारित करते हैं। खैरवार बन्दर को ईश्वर का दूत मानकर पूजते हैं और इसे सताना वे पाप मानते हैं। हनुमान की पूजा भारत में विशेष रूप से होती है। भगवान् राम की सहायता करके (लंका युद्ध में) ये वानर तथा रीछ श्रद्धेय बन गए हैं।

देवी-देवताओं के वाहन रूप में शेर, गज, उलूका, हंस, मयूर, मूषक गरुड, कबूतर, भैंसा श्वान, आदि पूज्य माने जाते हैं और किसी न किसी प्रकार से इनकी पूजा होती ही रहती है। महाभैरव के पूजक कुत्ते को मिठाई खिलाते हैं और उसे प्यार करते हैं। बिल्ली का मारना भारतीयों की दृष्टि में महापाप है। ऐसा अपराध करने वाला सोने की बिल्ली का दान करके ही पाप मुक्त हो पाता है।

पूर्व-जन्म के सिद्धान्तों में दृढ़ विश्वास रखने वाले मानव, हरिण, खरगोश, व्याघ्र, गज, हंस, भेड़िया, लोमड़ी, सूअर, काग, चील, नील गाय, तेंदुआ, बारहसिंगा आदि को अपने पूर्वज मानते हैं और उनकी पूजा

---

1. When the Chuckchees of North Eestern Siberia have killed a wolf, they hold a fastival at which they cry 'Wolf' be not angry with us. It was not we, who killed you, it was the Russians who destroyed you.

—'The Golden Bough' part V Vol. II p. 221

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करके अपनी मनोकामना की सिद्धि प्राप्त करते हैं। उनका वध करना उनकी दृष्टि में पूर्वजों के नाश के समान ही निंदनीय है।

वन तथा पहाड़ों को ही अपना निवास मानने वाले कुछ आदिवासि कहते हैं कि मृत्यु के पश्चात् आत्मा कभी मृग बनती है तो कभी कपोत का रूप धारण कर लेती है। कुछ जनजातियों का विश्वास है कि मृतक के दाह संस्कार के स्थान पर यदि कोई मृग चरता हुआ दिखाई देता है तो वह मृत जीव की ही हरिण के रूप में अवतीर्ण आत्मा है। इसलिए वे न तो इस वन्य जीव को मारते हैं न कभी सताते हैं। इसे देखते ही वे मस्तक झुकाकर प्रणाम करते हैं और कभी-कभी भूमि पर लेटकर उसकी अराधना करने लगते हैं। इसी प्रकार पक्षियों, उलूकों, चूहों तथा खरगोशों में अपने पूर्वजों के अस्तित्व को मानकर इन्हें पूजने वाली वन-जातियों की कमी नहीं है। राजा-महाराजा तथा वीर-पुरुष मरकर या तो शेर बनते हैं अथवा गज एवं व्याघ्र ऐसा कुछ लोगों का कथन है। अतः वीर उपासक जातियाँ इन भयंकर पशुओं की पूजा-आराधना करके अपने सन्तप्त मन को शान्त करती हैं और भूल करके भी इन भयावह कानन-चारियों को नहीं सताते हैं। कुछ असभ्य जातियों का यह निश्चित धार्मिक विश्वास है कि पुनर्जन्मों में या तो आत्मा मानव रूप ग्रहण करती है अथवा वन-जीव बनकर इधर-उधर भ्रमण करती रहती है। यह पर्याय-ग्रहण शुभाशुभ कृत्यों पर आधारित है। उदाहरण के रूप में कहा जाता है कि व्यभिचारिणी स्त्री मरकर शृगाल बनती है और चोरी करने वाला मनुष्य मरने के पश्चात् लोमड़ी अथवा तीतर बनकर भटकता-फिरता है। भारतीय धर्मों में भी पापरत प्राणी कुगति को प्राप्त होते हैं और दुष्कर्मों को करने वाला पशु-पक्षियों की योनियों में जन्म लेकर कठोर परिताप सहता है।

मार्कण्डेय पुराण में एक स्थल पर यमदूत कहता है— राजन् ! पतित से दान लेने पर ब्राह्मण गदहे की योनि में जाता है। पतित का यज्ञ कराने वाला द्विज नरक से लौटकर कीड़ा होता है। अपने गुरु के साथ छल करने पर उसे कुत्ते की योनि में जन्म लेना पड़ता है।.....माता-पिता का अपमान करने वाला मनुष्य, उनके प्रति कटुवचन कहने से मैना की योनि में जन्म लेता है। भाई की स्त्री का अपमान करने वाला कबूतर होता है और उसे पीड़ा देने वाला मनुष्य कछुए की योनि में जन्म लेता है।.....मोहाछन्न मनुष्य मरने के बाद वानर होता है.....।

जो मनुष्य अज्ञानवश धान, जौ, तिल, उड़द, कुलथी, सरसों, चना, मटर, कलमी धान, मूंग, गेहूँ, तीसी तथा दूसरे-दूसरे अनाजों की चोरी करता है वह नेवले के समान बड़े मुंह का चूहा होता है। परायी स्त्री के साथ संभोग करने से मनुष्य भयंकर भेड़िया होता है। उसके बाद क्रमशः कुत्ता, सियार, बगुला, गिद्ध, साँप तथा कौए की योनी में जन्म लेता है.....।

शास्त्रहीन पुरुष की हत्या करने वाला मनुष्य गदहा होता है, स्त्री और बालकों की हत्या करने वाले का कीड़े की योनि में जन्म होता है.....। लोहा चुराने वाला पापात्मा कौआ होता है। काँसे का अपहरण करने से हारीत (हरियल) पक्षी की योनि मिलती है। और चाँदी का बर्तन चुराने से कबूतर होना पड़ता है.....। रेशमी वस्त्र की चोरी करने पर चकवे की योनि मिलती है तथा रेशम का कीड़ा भी होना पड़ता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हरिण के रोएँ से बना हुआ वस्त्र, महीन वस्त्र, भेड़ और बकरी के रोएँ से बना हुआ वस्त्र तथा पाटंवर चुराने पर तोते की योनि मिलती है।

रूई का बना हुआ वस्त्र चुराने से कौंच और अग्नि के अपहरण से बगुला अथवा गदहा होना पड़ता है। अंगराग और पत्तियों का साग चुराने वाला मोर होता है। लाल वस्त्र की चोरी करने वाले को चकवे की योनि मिलती है। उत्तम सुगंध युक्त पदार्थों की चोरी करने पर छछूंदर और वस्त्र का अपहरण करने पर खरगोश की योनि में जाना पड़ता है।[1]

इस पूर्वजन्म की भावना ने भी पशु-पक्षी के पूजा-स्तवन की ओर मानव को प्रेरित किया है।

पशु-पूजा के सम्बन्ध में यह भी कहा जाता है कि ये चतुष्पद कृषि-देवी-देवता के अवतार हैं, अतः कृषि में समृद्धि प्राप्त करने के हेतु कतिपय पशुओं की पूजा आदिकाल से होती आ रही है। सूकर, अश्व, हरिण, वृषभ, सारस, शुक आदि पशु-पक्षी कृषि-देवी-देवताओं के प्रतिरूप ही हैं। कृषि-प्रधान देश भारत में गौ तथा बैल का पूजन शास्त्र-विहित है। सूकर का अवतार लेकर तो भगवान् ने जल-मग्न पृथ्वी का उद्धार किया था।

सूकर के सम्बन्ध में ये धारणाएँ हैं। कुछ मानव तो इसे महा अपावन समझ कर अस्पृश्य मानते हैं और कुछ प्रदेश के वासी इस पशु को देवता का अवतार-रूप मानकर पूजते हैं। कुछ विद्वानों के कथनानुसार पावन वस्तु के स्पर्श के बाद स्नान करना एवं वस्त्रों को धोना आवश्यक है। कुछ देशों के निवासी इस धारणा को स्वीकार भी करते हैं। अतः सूकर को छूकर यदि कोई व्यक्ति स्वयं स्नान करता है तथा अपने कपड़ों को धोता है तो इसका अर्थ है कि उसकी दृष्टि में सूकर पवित्र है।

यज्ञीय पशुओं (गाय, भैंस, बकरी, भेड़ी, घोड़ा, कुत्ता आदि) में सूकर को भी स्थान दिया गया है। भागवत् में इसे यज्ञ कहा गया है। वहाँ लिखा है कि 'छन्दांसि यस्य त्वचि वर्हि रोमस्याज्यंदृशित्वंघ्रिषु चातु होत्रम्' अर्थात् शूकर यज्ञ-रूप है, गायत्र्यादि उसकी त्वचा है, रोम कुश हैं, दृष्टि घृत और चारों पैर यज्ञ के चारों ऋत्विज हैं। यही बात पद्मपुराण में इस प्रकार लिखी है कि 'अग्नि जिह्वा दर्भ लोमा ब्रह्मशीर्षा महातपः' अर्थात् उसकी जिह्वा अग्नि है,[2] रोम कुश हैं और शिर ब्रह्म है। निस्संदेह शूकर इतना ही उपकारी है। यह यज्ञ रूपीय है। जो सार्वजनिक स्वास्थ्य की रक्षा करता हो वह यज्ञ ही है। शतपथ में लिखा है कि 'यज्ञो वै विष्णु' अर्थात् यज्ञ ही विष्णु है यहाँ शूकर-यज्ञ कहा गया है, इसीलिए उसे विष्णु का अवतार कहते हैं। विष्णु का अर्थ पालनकर्त्ता है। निस्सन्देह मनुष्यों के पालन करने से शूकर विष्णु ही है। क्योंकि यज्ञ में सुअर के द्वारा सफाई सम्बन्धी जो लाभ होता है वह तो अत्यन्त उपयोगी ही है परन्तु उसके सिवा उसके बालों का यज्ञ में दर्भकूर्च भी बनाया जाता है। अभी आप पढ़ चुकें हैं कि

---

1. संक्षिप्त मार्कण्डेय पुराण (पापों के अनुसार भिन्न-भिन्न योनियों की प्राप्ति)
2. जिस प्रकार अग्नि मल को जला देती है और वायु को शुद्ध कर देती है उसी तरह शूकर भी मल को नष्ट कर देता है। इसीलिए शूकर 'अग्नि-जिह्वा' कहलाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसके राम कुश हैं। यज्ञ में झाड़ने-मांजने के लिए इन्हीं बालों का कूर्च बनाया जाता है। कपड़ा बुनने वाले अब तक इसके बालों का कूर्च बनवाते हैं, जिसको वे कूँच कहते हैं। उसी के बालों से बनी हुई छोटी ब्रश को सभी लोग कूंची कहते हैं। इस प्रकार यह सुअर यज्ञ में अपना खास स्थान रखता है। इसलिए वह 'यज्ञ-पशु' है।[1]

काग सर्वभक्षी होने पर भी पूज्य माना गया है। पितृ-पक्ष में काग को खिलाकर हिन्दू अपने पूर्वजों को सन्तुष्ट करते हैं। एक कथा में बताया गया है कि यमराज ने एक समय काग-रूप धारण किया था और अपने भक्तों को समझाया था कि जो काग को पूजेगा अथवा भोजन देगा उसके पूर्वजों को मैं सद्गति दूंगा। कोचीन राज्य की सीमा में निवास करने वाले प्रलिया मानते हैं कि मानव में पाँच आत्माओं का निवास रहता है। एक आत्मा मृत्यु के पश्चात् अपने शुभाशुभ-कर्मों के अनुसार स्वर्ग या नरक में जाती है। दूसरी आत्मा घर में रहती है, जिसे उसके सम्बन्धी पूजते हैं। तीसरी आत्मा श्मशान में रहती है। चौथी आत्मा उस नदी या सरिता पर निवास करती रहती है जिसमें उसके सम्बन्धी दाह-संस्कार के पश्चात् नहाते हैं। पाँचवीं आत्मा कागों में रहती है इसीलिए ये लोग (प्रलिया) मृत के सम्मान में भोज देने के पश्चात् कागों को भी खिलाते हैं।

हिन्दू शास्त्रों में गौ-पूजन की अत्यधिक महिमा गाई गई है। इसे न मारने योग्य कहा गया है। विश्व को गौ-रूप बनाकर इसकी पूजा को शिव प्राप्ति का प्रमुख साधन बनाया गया है। ऋग्वेद के गौसूक्त में गाय का स्तवन सुन्दर शब्दों में हुआ है।

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसाऽऽदित्यानां अमृतस्यनाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट।

—ऋग्वेद 8। 100।15

—जो गौ रुद्रों की माता, वसुओं की पुत्री, आदित्यों की भगिनी और दुग्ध का निवास स्थान है, हे मनुष्यो उस निरपराध और अदितिरूपिणी गो-देवी का वध नहीं करना। (वैदिक-साहित्य, पृष्ठ 357)

अनेक हिन्दू-व्रतों में गो-पूजन का उल्लेख किया गया है। जिसके न करने से व्रत का पूर्ण फल प्राप्त नहीं होता। मरणासन्न हिन्दू गो-दान करके सद्गति को प्राप्त होता है। 'नारद-पुराण' के अनुसार सात धेनुओं का दान करने वाला पुण्यात्मा निश्चत्यतः मोक्षगामी होता है। अग्निपुराण में बताया गया है कि जो मार्गशीर्ष की पूर्णिमा को यथाविधि तिलमयी धेनु का दान करता है वह स्वर्गलोक में जाकर सम्पूर्ण सुख को भोगता है।

इस प्रकार वेद-पुराण-शास्त्रानुमोदित पशु पक्षियों का पूजा-स्तवन हमारी भारतीय पुनीत संस्कृति का एक पावन अंग है।

---

1 'वैदिक सम्पत्ति' लेखक साहित्य-भूषण पं० रघुनदन्न शर्मा, पृष्ठ 360-361

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशु-पक्षी-विषयक कवि-प्रसिद्धियाँ

पशून् पाहि, गां मा हिंसीः
अजां मा हिंसीः।
अविं मा हिंसीः, इमं मा हिंसीर्द्विपादं पशुं,
मा हिंसीरेक शफं पशु, मा हिंस्यात् सविभूतानि।
—यजुर्वेद

... ...

यथा मांसं यथा सुरा यथाक्षापरिदेवने।
यथा पुंसो वृषण्यते स्त्रियं निहन्यते मनः।
—अथर्ववेद

मांसभक्षी, मदिरा पीने वाला तथा व्यभिचार-रत मनुष्य मार डालने योग्य हैं।

● ● ●

कवि भावुक और कल्पनाशील होता है। वह अपनी भावुकता को कल्पना के बल पर रसवती बनाता है और विविध मान्यताओं तथा धारणाओं को जन्म देता है। काव्यकार का विश्व अलौकिक है, इसमें नित्य नूतन सृष्टि होती है। जगत्-स्रष्टा से विशेष आकर्षक कवि का संसार है। उसके जग में छः रस हैं और इसकी दुनिया नवरसों से सरस हुई है। इसी अलौकिकता के कारण कवियों ने कुछ अपनी मान्यताएँ स्थापित की हैं, जिनकी सत्यता काव्य-लोक में ही निर्धारित हुई है। संभव है यह सत्य सार्वभौमिक बने और विश्व-कवि के विस्तृत अनुभव से लाभान्वित हो। इन मान्यताओं को कवि-प्रसिद्धियाँ, कवि प्रौढ़ोक्तियाँ कवि-समय, काव्य-समय आदि नामों से सम्बोधित किया जाता है।

'कवि-समय' शब्द का अर्थ है कवियों का आचार या सम्प्रदाय। इस शब्द का प्रयोग सबसे पहले राजशेखर ने किया था। उनका मतलब यह था कि यद्यपि देश-काल आदि के विरुद्ध विषयों का वर्णन करना कवित्व का दोष है, तथापि कुछ ऐसी बातें कविजन परम्परा से वर्णन करते आये हैं जिन्हें निर्दोष मान लेना उचित है। कवि-समय शब्द से मिलता-जुलता एक और शब्द अलंकार-शास्त्र में प्रयुक्त हुआ है, वह है काव्य-समय। इस शब्द का प्रथम और शायद अन्तिम भी, प्रयोग वामन के 'अलंकार-सूत्र' में पाया

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाता है (काव्यालंकार-सूत्र 5-1)। किन्तु इन दोनों शब्दों के प्रयोग अलग-अलग अर्थों में हुए हैं। वामन के मत से लोक-शास्त्र के विरुद्ध अर्थों का प्रयोग ही काव्य-समय है। इसका अन्तर्भाव बाद को किये हुए आलंकारिकों के दोष-प्रकरण में हो जाता है। भामह और दण्डी ने 'काव्य-समय' शब्द का प्रयोग नहीं किया है, परन्तु 'दोष' शब्द से उनका भी अभिप्राय देश, काल, कला, न्याय और आगम का विरोधी और प्रतिज्ञा हेतु और दृष्टान्त से हीन होना है (भामह—4-2)। राजशेखर यह तो मानते हैं कि अशास्त्रीय और अलौकिक अर्थों का निबन्धन दोष है पर उनका कहना यह है कि प्राचीन काल के कवि परम्परा से जिन बातों का वर्णन करते आ रहे हैं, आज इस काल और देश में वे बातें नहीं मिलतीं तो भी उन्हें हम दोष नहीं कह सकते, जबकि शास्त्र अनन्त हैं, काल अनन्त है और देश भी अनन्त हैं। इसलिए लोक और शास्त्र विरोधी वे ही बातें कवि-समय के अन्तर्गत आती हैं, जिन्हें प्राचीन काल के पंडित सहस्रशाख वेदों का अवगाहन करके, शास्त्रों का अवबोध करके, देशान्तर और द्वीपान्तर का परिभ्रमण करके निश्चित कर गए हैं। देश कालवश उनका यदि व्यतिक्रम हो भी गया हो तो उन्हें अस्वीकार नहीं करना चाहिये।[1]

'महाजनो येन गतः स पन्थाः' के अनुसार अनुभव प्रवीण एवं प्रकृति के सूक्ष्म-निरीक्षक महा-काव्यकारों की मान्यताओं पर गंभीरता से विचार करना आवश्यक है। आधुनिक युग में विज्ञान ने बहुत-सी हमारी कल्पित धारणाओं को सत्य सिद्ध कर दिया है।

संस्कृत के महान् कवियों के समान हिन्दी के काव्यकारों ने अनेक परम्परागत कवि प्रसिद्धियों का उल्लेख किया है। यहाँ पर पशु-पक्षी-विषयक कवि-समय की ही कुछ रूपों में चर्चा की जा रही है।

1. कोयल

कवि प्रसिद्धि के अनुसार मधुर भाषिणी पिकी वसन्त के सुरभित वातावरण से प्रभावित होकर ही कूकती है। इसकी मधुमय कूक वसन्तागमन की सूचिका है और उसका मौन ऋतुराज की समाप्ति का परिचायक है। इसीलिए वसन्त वर्णन में कोयल की कूक का बारम्बार उल्लेख हुआ है।

और भाँति कोकिल-चकोर ठौर-ठौर बोलें,
और भाँति सबद पपीहन के वै गए।
... ...

किन्तु कोयल का अन्य ऋतुओं में भी बोलना सुना गया है। हाँ, जैसी मिठास इसकी कूक में बसन्त में रहती है वैसी अन्य ऋतुओं में नहीं।

---

1. हिन्दी-साहित्य की भूमिका—ले० आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ 225

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कविवर रहीम ने अपने निम्नस्थ[1] दोहे से सिद्ध किया है कि पावस में पिक मौन रहता है, लेकिन ऐसे अनेक छन्द मिले हैं, जिनसे प्रकट है कि वर्षा काल में कोयल मस्ती से बोलती है—

कूकै लगी कोयलैं कदंवन पै बैठि फेरि,
धोए-धोए पात हिलि-हिलि सरसै लगे।
बोलै लगे दादुर मयूर लगे नांचै फेरि,
देखिकै संयोगी जन हिय हरषै लगे।
हरी भई भूमि, सीरी पवन चलन लागी,
लखि 'हरीचन्द' फेरि प्रान तरसै लागे।
फेरि झूमि-झूमि बरषा की ऋतु आई घेरि,
बादर निगोरे झुकि-झुकि बरसै लगे।

× × ×

शीतकाल में कोयल मौन रहती है परन्तु ग्रीष्म ऋतु के आते ही यह कूकने लगती है।[2]

2. चकोर

चन्द्रिका का अनन्य प्रेमी चकोर, हिन्दी-कवियों की भावुक लेखनी द्वारा अधिक चित्रित हुआ है। कहा जाता है कि यह पक्षी चाँदनी का पान करके तृप्त होता है। अतः चन्द्रमा की ओर टकटकी लगाकर देखता रहता है। काव्यकारों ने प्रेमी प्रेमिका के प्रगाढ़ प्रेम को बताने के लिए चन्द्रिका और चकोर की भावना को आमने-सामने रखा है। कवि-प्रसिद्धि के अनुसार यह पक्षी सुधाधर-यार होता हुआ भी अंगार चुगता है—

बड़ेन सों जान-पहिचान तो कहा 'रहीम',
जो पै करतार ही न सुख देनहार है।
सीतहर सूरज सों प्रीति करी पंकज ने,
तउ कंज बनन को मारत तुषार है।

---

1. पावस देखि रहीम मन, कोइल साधे मौन।
अब दादुर वक्ता भए, हम को पूछत कौन।
'तुलसी' पावस के समय धरी कोकिलन मौन।
अब तो दादुर बोलिहैं हमहिं पूछि है कौन।

—तुलसी सत्सई

2. During winter the bird is silent but with the approach of the hot weather and its coincident breading season it waxes extremly vociferous. All through that season its loud, shrill, shricking notes resound on the countryside through out the day and often far into the night.

—The koel. The Book of I ndian Birds' by Salim Ali. P. 180

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उदधि के बीच धंस्यो, शंकर के सीस वस्यो,
तउ न कलंक नस्यो, सीस में सदा रहै।
बड़े रीझिवार है चकोर दरबार देख्यो,
सुधाधर यार ए पै चुगत अंगार है।

यही बात महाकवि सूरदास ने कही है—

ऊधो मन माने की बात।
दाख छोहरा छाँडि अमृतफल,
विष कीरा विष खात।
जो चकोर को देइ कपूर कोउ,
तजि अंगार न अघात।
... ...

केशवदास ने भी अंगारों के लिए चकोर को इधर-उधर फिरते दिखाया है—

फूले पलास भली विधि सों बहु,
'केसवदास' प्रकाशन घोरै।
सेष असेष मुखानल की जतु ज्वाल,
विसाल चली दिसी औरै।
किंसुक श्रीशुक तुंडन की रुचि,
रासे रसातल में चित चोरै।
चंचुन चाप चहूं दिसि डोलत,
चारु चकोर अंगारन भोरै।
× × ×
चिनगी चुगै अंगार की, चुगै कि चन्द्र मयूख।

3. चकवा-चकई

कवि सम्प्रदाय के अनुसार रात होते ही इन दोनों का वियोग हो जाता है। स्वतन्त्र रूप से सरिता अथवा सरोवर-तट पर दिन में विहार करते हुए ये दोनों अपनी जीवन की सफलता पर विमुग्ध रहते हैं। दिनकर के अस्त होते ही काली निशा इन्हें वियोग की आग से जलाने लगती है। एक किनारे पर बैठा हुआ चकवा दूसरे तट की सीमित परिधि में बद्ध चकई को बुला-बुलाकर दिन की याद दिलाता है और एकाकिनी चकई अधीर होकर ऊषा की लालिमा की ओर ध्यान लगाती है। विधि के द्वारा निर्धारित इन मूक-प्राणियों का यह रात्रि-वियोग चिरकाल से चला आ रहा है। कहा जाता है कि पिंजड़े में बन्द

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होने पर भी ये रात में अपना-अपना मुँह फेर लेते हैं और समीप में रहते हुए भी वियोग की आहें भरते हैं—

'कोटि जतन हूँ फिरत न विधि की बात ।
चकवा पिंजरे हू सुनि, विमुख बसात ।।
—रहिमन-विलास, पृ० 62

महाकवि तुलसीदास जी ने भी इस कवि प्रसिद्धि को अनेक स्थलों पर प्रयुक्त किया है ।

ऋषिवर भरद्वाज ने पूर्ण भोग-विलास की सामग्री से भरत का स्वागत किया लेकिन राम-भक्त भरत ने निशा-वियोगी चकवी-चकवे के समान उसकी ओर देखा ही नहीं ।

सम्पति चकई भरतु चक मुनि आयस खेलवार ।
तेहि निशि आश्रम पिंजरां, राखे भा भिनुसार ।।
—रामचरितमानस, अयोध्या कांड

रात्रि देखकर चकवे के मन में वैसे ही दुःख होता है जैसे दूसरे की सम्पत्ति देखकर दुष्ट को होता है—

'गुंजत मधुकर मुखर अनूपा, सुन्दर खग-रव नाना रूपा ।
चक्रवाक मन दुःख निसि देखी, जिमि दुर्जन पर सम्पति देखी ।
—रामचरितमानस, किष्किधाकांड

4. चातक

कवि-प्रसिद्धि है कि यह पक्षी केवल स्वाति-नक्षत्र में बरसे हुए पानी को पीकर एक वर्ष के लिए अपनी प्यास शान्त कर लेता है । गंगा, कूप, सरोवर, सरिता, यमुना नहर आदि के सलिल में अपनी चोंच डुबाना चातक पाप समझता है। प्यास लगने पर यह पिउ-पिउ चिल्लाता फिरता है । क्योंकि वृक्षों का पालन-पोषण अन्य जल से होता है इसलिए यह पक्षी ग्रीष्म-काल में भी इन विटपों की छाया में बैठ कर विश्राम करना अपने व्रत के प्रतिकूल समझता है, अपने आराध्य के प्रति प्रत्येक भक्त को, गोस्वामी तुलसीदास के मतानुसार चातक के समान दृढ़-प्रतिज्ञ होना चाहिए । पपीहा की पुकार वियोगिनी के हृदय को कष्ट पहुँचाती है अतः उन्हें इसकी दर्दभरी ध्वनि अप्रिय लगती है । इस पक्षी की लगन पर मुग्ध होकर गोस्वामी तुलसीदास जी ने अनेक दोहे लिखे हैं—जो चातक चौतीसी के नाम से प्रसिद्ध हैं ।

तुलसी चातक ही फवै, मान राखिवो प्रेम ।
वक्र बुन्द लखि स्वाति हू, निदरि निबाहत नेम ।।
... ...

तुलसी के मत चातकहिं, केवल प्रेम पिआस ।
पिअत स्वाति जल जान जग, जांचत बारह मास ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उष्न काल अरु देहखिन, मग पंथी तन रूख ।
चातक बतियाँ ना रुचीं, अन जल सींचे रुख ।।

... ...

जाचै बारह मास, पिए पपीहा स्वाति जल ।
जान्यो तुलसीदास, जोगवत नेहि मेह मन ।।

... ...

(5) मयूर

काव्य-समय के अनुसार मयूर केवल पावस में नृत्य करता है। श्यामल घटाओं को नभ में देखकर वह 'मे आओ' की टेर लगाता है और पंखों को फैलाकर प्रकृत भाव से नृत्य-रत हो जाता है। वर्षा-ऋतु का वर्णन कोकिल, पपीहा, मयूर से प्रारम्भ होकर इनकी ध्वनियों से समाप्त होता है।

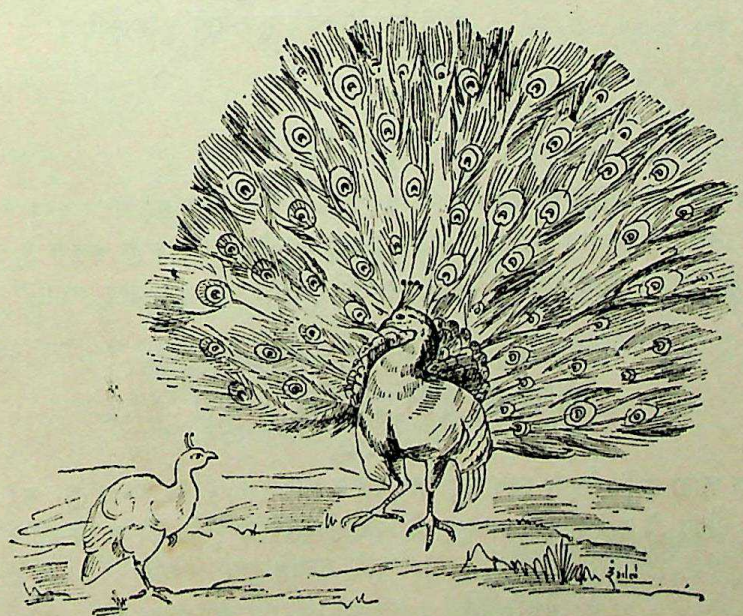

बोलत मयूर हम ऐहैं ये पहारन में,
दादुर कहत हम ऐहैं खँदरान में।
चातक पुकारैं पिउ-पिउ द्रुम डारन में,
झिल्ली झमकानी पिक प्रेम मदरान में।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ठाकुर कहत ऐसी पावस प्रभा में दुख,
दैन विरहीन आजु आली गदरान में।
छम-छम-छम बाजैं छम-छम, छेई-छेई,
थेई-थेई चंचल नँचन बदरान में।

... ...

लेकिन कतिपय कवियों ने मयूर-नृत्य का उल्लेख वसन्त ऋतु में भी किया है—

आयौ रितुराज आज देखत बनै री आली,
छायो महा मोद सों प्रमोद वन भूमि-भूमि।
नाँचत मयूर मद उमँद मयूरिनि कों,
मधुर-मनोज सुख चाखैं मुख चूमि-चूमि।
'पंडित प्रवीन' मधु लंपत मधुप पुँज,
कुंजन में मंजरी कौ लेत रस घूमि-घूमि।
हेली ! पौन प्रेरित नवेली सी द्रुमन बेलि,
फैली फूल-बेलिन में झूम रही झूमि-झूमि।

× × ×

(6) सिंह

कवि-सम्प्रदाय में सिंह को बलवान मानते हुए कहा गया है कि वह अपने सम्पूर्ण जीवन में केवल एक ही बार सिंहनी से सहवास करता है—जिस प्रकार कदली एक बार ही फलती है, और कन्या का विवाह एक ही बार सम्पन्न होता है उसी प्रकार मृगराज एक ही बार स्वपत्नी के साथ संभोग करता है—

सिंह गमन सुपुरुष वचन, कदलि फलै इक सार।
तिरिया तेल हमीर हठ, चढ़ै न दूजी बार॥

× × ×

कहा जाता है कि केहरी स्वयं पशु मार कर अपनी भूख शान्त करता है। मरे हुए जीव का माँस खाना उसने सीखा ही नहीं है। गज-समूह को विदीर्ण करने में मृगेन्द्र को आत्म-संतोष होता है—

सरवर नीर न पीवती, स्वांति बुन्द की आस।
केहरि कबहुँ न तृन चरै, जो व्रत करै पचास।
जो व्रत करै पचास, विपुल गज-जूह विदारै।
धन ह्वै गर्व न करै, निधन नहीं दीन उचारै।
नरहरि कुलक सुभाव मिटै नहिं जब लग जीवै।
बस चातक मरी जाय, नीर सरवर नहिं पीवै।

... ...

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बैठि सिंघासन गूंजै, सिंघ चरै नहिं घास।
जौ लगि मिरिग न पावै, भोजन करै उपवास ।।

(पद्मावत)

(7) काक (कौआ)

काग के सम्बन्ध में कहा जाता है कि उसके एक ही आँख है। वह सबको एक चक्षु से ही देखता है। काक-न्याय आदर्श रूप में प्रसिद्ध है। इस पक्षी के विषय में सुना जाता है कि अंगूर पकने पर इसके गले में घाव हो जाते हैं, इसलिए यह दाख नहीं खा पाता।

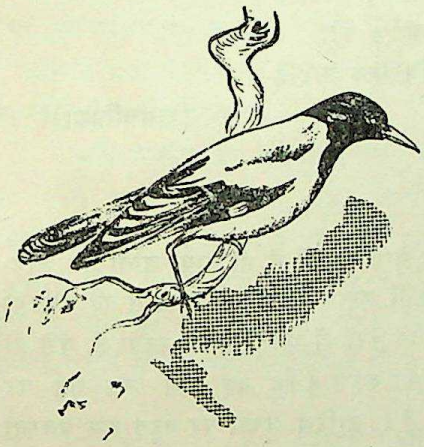

दाख पकी तब चोंचौ पकी,
जब बीन बज्यो बहिरो भयी कानो।
मेनका आय मिली तबहीं,
जब देह से कामहु दूरि परानो।
जैसोई चाहत तैसो करै जग,
जाहिर है विधि को यह बानो।
पारस पायो पर्‌यो जो कहूँ,
तो जहान ते लोह को लेश हिरानो।

(8) मराल (हंस)

कवि समय के अनुसार पावस में हंस मानसरोवर में निवास करते हैं। केवल मोती चुगते हैं। और जल मिश्रित दूध में से दुग्ध पीकर जल को छोड़ देते हैं। नीर-क्षीर-विवेक हंस को ही होता है।

बास वेष बोलनि चलनि, मानस मंजु मराल।
'तुलसी' चातक प्रेम की, कीरति विसद विसाल।

... ...

जाको खोजत सो मिलै, या में संसय नाहिं।
विरचे माखि मधु-सुधा, भीषण वन के माँहि।
भीषण वन के माँहि, सिंह गजराज विदारै।
मुकुता मिलै मराल मिलिन्द सरोज बिहारै।
बरनै 'दीन दयाल' स्वाति जलऊ पपिहा को।
मिलै भली विधि आय जौन जग खोजत जाको।

... ...

मुकुता चुगै मराक, कै फिर भूखन मर जावै।

... ...

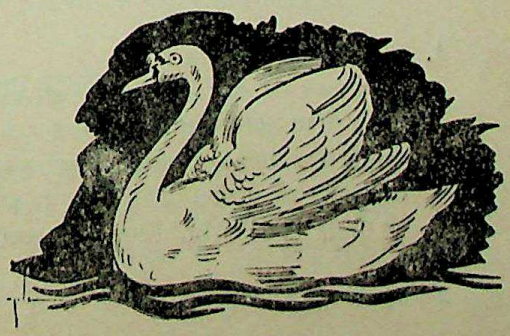

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाकवि केशवदास ने वर्षा-काल में हंस का अभाव बताया है—

भौंहैं सुरचाप चारु प्रमुदित पयोधर,
भूषन जराय जोति तड़ित रलाई है।
दूरि करी सुख मुख सुखमा ससी की नैन,
अमल कमल-दल दलित निकाई है।
केसोदास प्रबल करेनु का गमनहार,
मुकुल सुहंसक सबद सुखदाई है।
अम्बर बलित मति सोहै नील कंठ जू की,
कालिका कि वर्षा हरषि हिय आई है।

(रामचन्द्रिका)

(9) हारिल

कबूतर के आकार का यह पक्षी भारत के अतिरिक्त अन्य स्थानों में भी पाया जाता है। कवि-समय के अनुसार हारिल सदैव अपने पंजों में एक छोटी-सी लकड़ी दबाए रहता है। सूरदास की गोपियों ने ऊधो से एक बार कहा था—कि जैसे हारिल रात-दिन अपने पैरों में लकड़ी पकड़े रहता है, वैसे ही भगवान् कृष्ण को हम लोगों ने पकड़ रखा है।[1] पक्षी विशेषज्ञों का कथन है कि यह खग जब पेड़ पर बैठता है तो टहनी को पकड़ लेता है और उससे चिपक जाता है। हारिल पृथ्वी पर बहुत कम उतरता है, फलदार वृक्षों की शाखाओं पर ही रहना उसे रुचिकर लगता है।

(10) टिटिहिरी

झीलों और नदियों के तटों पर फिरने वाली तेज ध्वनि करने वाली एवं अपनी लम्बी पीली टाँगों के साथ तेज उड़ने वाली टिटिहिरी भारत की बारहमासी चिड़िया है। रेत में मादा अण्डे देती है और

---

1. हमारे हरि-हारिल की लकरी।
मन-वच-क्रम नंद-नंदन सौंउर यह दृढ़ करि पकरी।
जागत, सोवत, सपने सौंतुख कान्ह-कान्ह जकरी।
सननहिं जोग लगत ऐसो अलि, ज्यों करुई ककरी।
सोई व्याधि हमें ले आए, देखी सुनी न करी।
यह तौ सूर तिन्हें लै दीजै, जिनके मन चकरी।

(भ्रमरगीत सार)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उनकी सतर्क होकर रक्षा करती है। एक पौराणिक कथा के अनुसार उसने सागर को सुखाने का प्रयास किया था। कहते हैं समुद्र ने एक बार इसके अण्डों को बहाकर जल-मग्न कर दिया था, जिससे अप्रसन्न होकर टिटिहिरी ने सागर के पानी को अपनी चोंच में भरकर बाहर फेंकना प्रारम्भ किया था। उसके इस साहस को देखकर अगस्त्य मुनि को दया आई और उन्होंने एक ही अंजलि में पूर्ण समुद्र को भरकर पी लिया। विकल सागर ने ऋषि से क्षमा-याचना की और टिटिहिरी के अण्डों को वापिस किया।

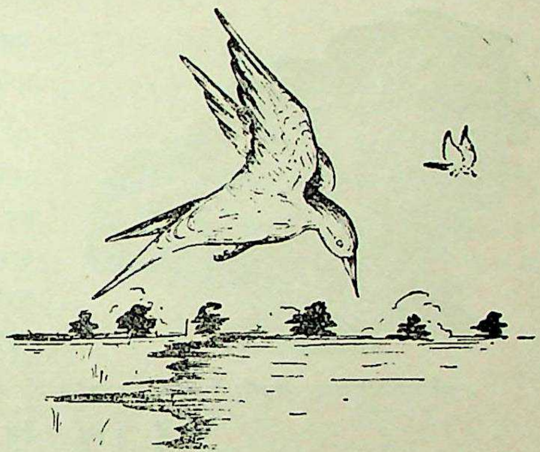

कवि-प्रसिद्धि के अनुसार रात में यह पक्षी अपनी टाँगों को ऊपर करके सोता है। उसे आकाश गिरने का भय रहता है और गिरते हुए नभ को अपने पैरों पर थाम कर वह अपनी और समस्त संसार की रक्षा करने का प्रयास करता है। रामचरित-मानस के लंकाकाण्ड में गोस्वामी तुलसीदास जी ने इसी कवि-समय का उल्लेख इस प्रकार किया है—

सुभट सकल चारि हुँ दिसि जाहू।
धरि-धरि भालु कीस सब खाहु।
उमा रावनहि अस अभिमाना।
जिमि टिट्टिभ खग सूत उताना।

—रावण बोला "सब लोग चारों दिशाओं में जाओ और रीछ-वानर सबको पकड़-पकड़ कर खाओ। (शिवजी कहते हैं)—हे उमा! रावण का राम-सेना को विध्वंस करने का यह अभियान टिटिहिरी पक्षी के पैर ऊपर की ओर करके आकाश को थाम लेने के प्रयास के समान हास्यास्पद था।

(11) ककनू पक्षी

कवि-मान्यता के अनुसार यह विहंग एकाकी रहकर अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करता है। इसे सहचरी प्राप्त करने का कभी भी अवसर नहीं मिला। कहा जाता है कि ईश्वर ने ककनू की जीवन-संगिनी को आज तक नहीं बनाया है। विरही बनकर यह इधर-उधर फिरता है और मृत्यु दिवस की प्रतीक्षा करता रहता है। यह नर ही होता है मादा नहीं। भगवान् की कृपा से यह अपनी आयु समाप्ति के क्षण

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को जान लेता है और प्रसन्न होकर घोंसले में गाने लगता है। विकलता परिपूर्ण जीवन का अन्त उसके लिए सुखकर होता है! यह दीपक राग गाता है जिससे चारों ओर आग प्रज्वलित होती है और उसका घोंसला जलकर राख हो जाता है। वह भी स्वयं जलकर अपने जीवन को समाप्त करता है और केवल अपनी दुखद स्मृति संसार में छोड़ जाता है।

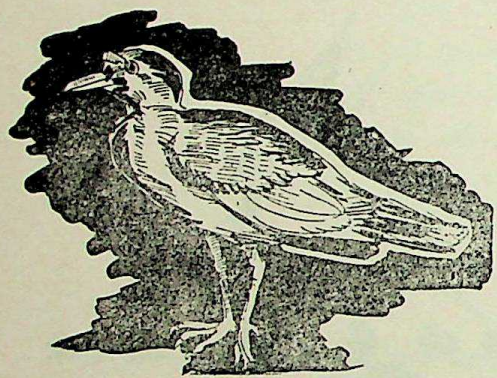

पावस आने पर श्याम मेघ वर्षा करते हैं। इसके जले हुए शरीर की राख शीतल होती है और एक सुन्दर अंडे को जन्म देती है। कुछ दिनों के बाद इसी अंडे से एक नर ककनू उत्पन्न होता है। अरबी में इस पक्षी को क़क़नूस और फारसी में आतशजन कहते हैं।

मलिक मुहम्मद जायसी ने विरही रत्नसेन की ककनू से तुलना करते हुए कहा है

ककनूं पंखि जैस सरसाजा।
सर चढ़ि तबहिं जरा चह राजा।

(पद्मावत, राजा रत्नसेन सती खंड)[1]

आँग्ल काव्य में भी एक ऐसे ही अलौकिक पक्षी का उल्लेख मिलता है। इसे फैनिक्स (Phenix) कहते हैं, जो 500 वर्ष की लम्बी आयु समाप्त करके एक दिन अपने घोंसले में स्वयं आग लगाता है और अपनी जीवन-लीला समाप्त कर देता है। वर्षा-काल में इसके ही घोंसले की राख जल-सिक्त होकर एक अण्डे को जन्म देती है।[2] यह पक्षी अमरता का प्रतीक माना गया है।

(12) गज-मुक्ता

गजराज के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के काल्पनिक विश्वास प्रचलित हैं। कहा जाता है कि हाथी कपित्थ (कैथा) को निगल जाता है और अपने मल-द्वारा से इसे ज्यों का त्यों निकाल भी देता है। फल के स्वाद को वह नहीं ले पाता है। इसलिए कवियों की दृष्टि में कपित्थ का भक्षण गज के लिए अर्थहीन

---

1. पद्मावत (मूल और संजीवनी व्याख्या, व्याख्याकार डा॰ वासुदेव शरण अग्रवाल); पृष्ठ 196।

2. Phenix, Phoenix—A fabulous bird said to have existed for 500 years all alone in the wilderness and after burning itself on a funeral pile to have risen from its own ashes—hence the emblem of immortality. (Newnes-New Imperial Dictionary of the English language, p. 688).

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है।[1] कुछ लोग कहते हैं कि इस महापशु की उदराग्नि बड़ी प्रबल होती है और उससे कैथे के भीतर का भाग (गूदा) भस्म हो जाता है तथा फल की बाह्य आकृति में किसी भी प्रकार की विकृति नहीं आ पाती है।

आइने-अकबरी में हाथियों की चार जातियों का उल्लेख है[2]—(क) भद्दर, (ख) मंद, (ग) मिर्ग, और (घ) मीर।

भद्दर जाति का गजेन्द्र बलशाली और सुन्दर होता है। इसके सुगठित शरीर को देखकर दर्शक मुग्ध हो जाता है। ये गजराज भाग्यशाली के प्रासाद के ही आगे झूमते हैं। कवि मान्यता के अनुसार भद्दर के मस्तक में मणि रहती है। यद्यपि इस बहुमूल्य रत्न को आजतक किसी ने भी नहीं देखा है फिर भी इस का उल्लेख प्रायः प्रत्येक भाषा के कवियों ने किया है। वीर-रस के प्रसिद्ध कलाकारों ने तो युद्ध-भूमि में आहत गजेन्द्रों के मस्तकों से निकले हुए गज-मुक्ताओं के विशाल ढेरों का चित्रण किया है। महाकवि कालिदास ने कुमार संभव के प्रथम सर्ग में बताया है कि किरात हाथियों को मारकर गये हुए सिंहों का पता उनके पंजों से गिरे हुए गज-मुक्ताओं से लगाते थे—

पदं तुषार स्रुति धौतरक्तं,
यस्मिन्न दृष्टापि हत द्विपानाम् ॥
विदन्ति मार्गं नखरन्ध्रमुक्तै
र्मुक्ताफलैः केसरिणां किराताः।

एक संस्कृत-कवि का कथन है कि गज-मणि मृगेन्द्र के मंदिर में प्राप्त हो सकती है और शृगाल के घर में तो बछड़े की पूँछ, खुर, चर्म आदि ही मिलते हैं।

गम्यते यदि मृगेन्द्र-मन्दिरे
लभ्यते करि-कपोल-मौक्तिकम्,
जम्बुकालय गतेन लभ्यते
वत्स पुच्छ खुर चर्म खंडनम्।

महाकवि तुलसीदास ने गज-मणि (गज-मुक्ता) की चर्चा यों की है—

मात्र सुविसाल चहुँपास बनी गज मनी।

(गीतावली)

---

1. नाथ बली हो कोई कितना
यदि उसके भीतर है पाप।
तो गज-मुक्त-कपित्थ तुल्य वह,
निष्फल होगा अपने आप। (साकेत)

2. Some little known facts on the well-known Elephants, by K. R. Venkatesan. (Indian Forest College. Magazine, p. 134, October, 1958.)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गजमुकुता हीरामनि चौक पुराइय हो ।

(रा०)

अरुन कंज महँ जुग-जुग पाँतिकचिर गज मोति ।

(गीतावली)

रुचिर उर उपवीत राजत,

पदिक गज मनि हाक ।

(गीतावली)

जैसा कि संकेत किया जा चुका है, गज मणि प्रत्येक हाथी के मस्तक में नहीं होती । जाति-विशेष के गजेन्द्र का ही माथा इस मणि से सुशोभित रहता है ।[1]

कवि-प्रसिद्धि है कि केवल ताम्रपर्णी नदी में ही मोती पैदा होते हैं। शास्त्रों के अनुसार हाथी, मेघ, सुअर, मछली, शुक्ति, बाँस और मेढक इन आठ चीज़ों से मोती पैदा होते हैं ।

(हि० सा० की भूमिका, पृष्ठ 225)

करीन्द्र जीमूत वराह शंख मत्स्याहि शुक्त्युद्भव वेणु जानि मुक्ता फलानि प्रथितानि लोके, तेषांतु शुक्त्युद्भवमेव भूरि ।

---

1. शैले शैले न माणिक्यं
मौक्तिकं न गजे-गजे ।
साधवो न हि सर्वत्र,
चन्दनं न वने वने ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

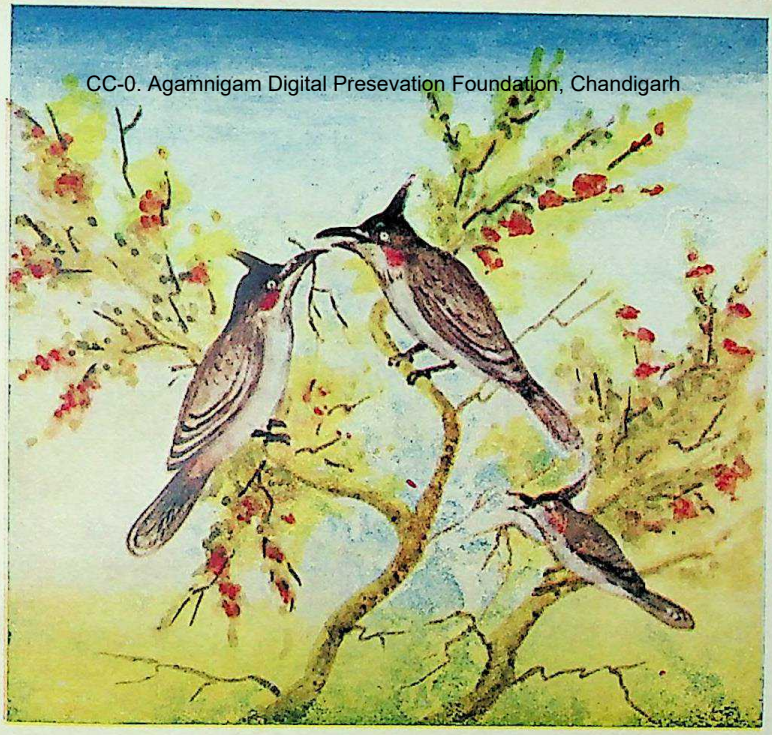

बुलबुल

बया

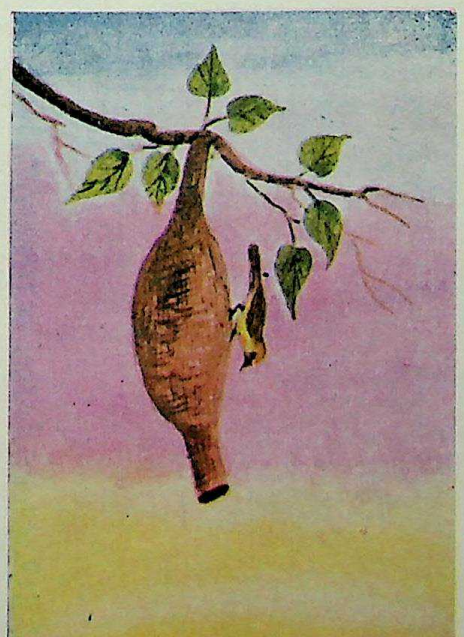

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

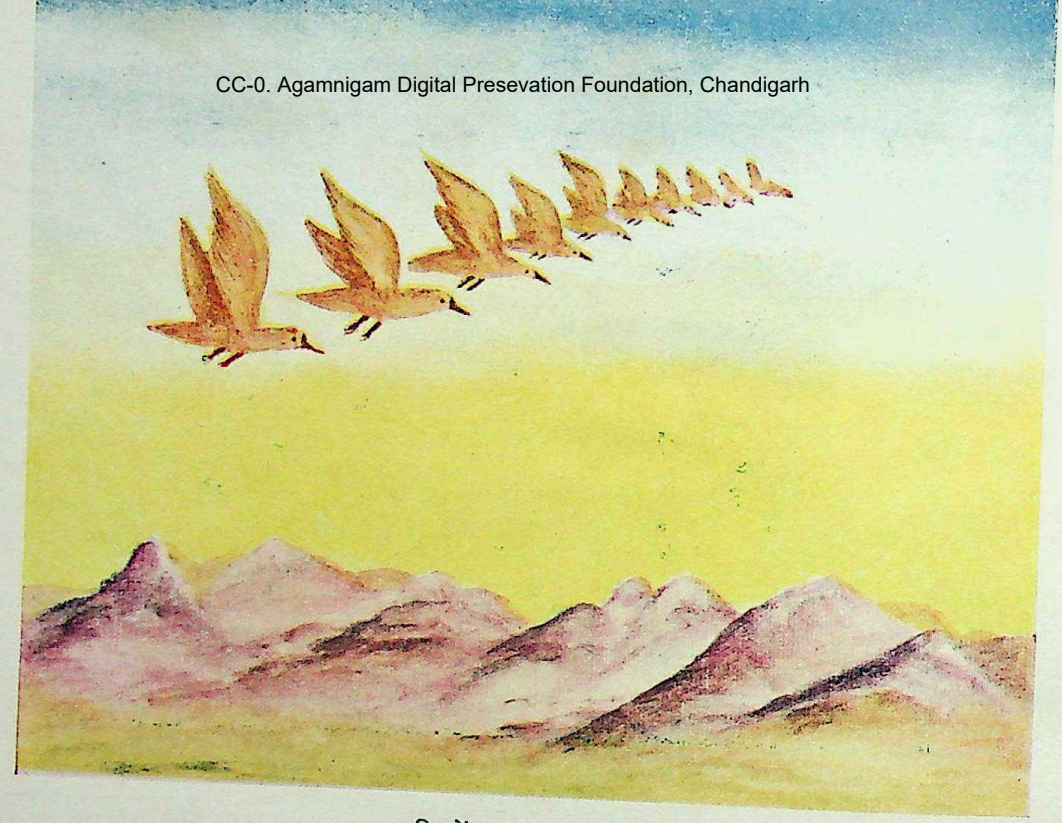

पक्षियों का देशाटन
सारस

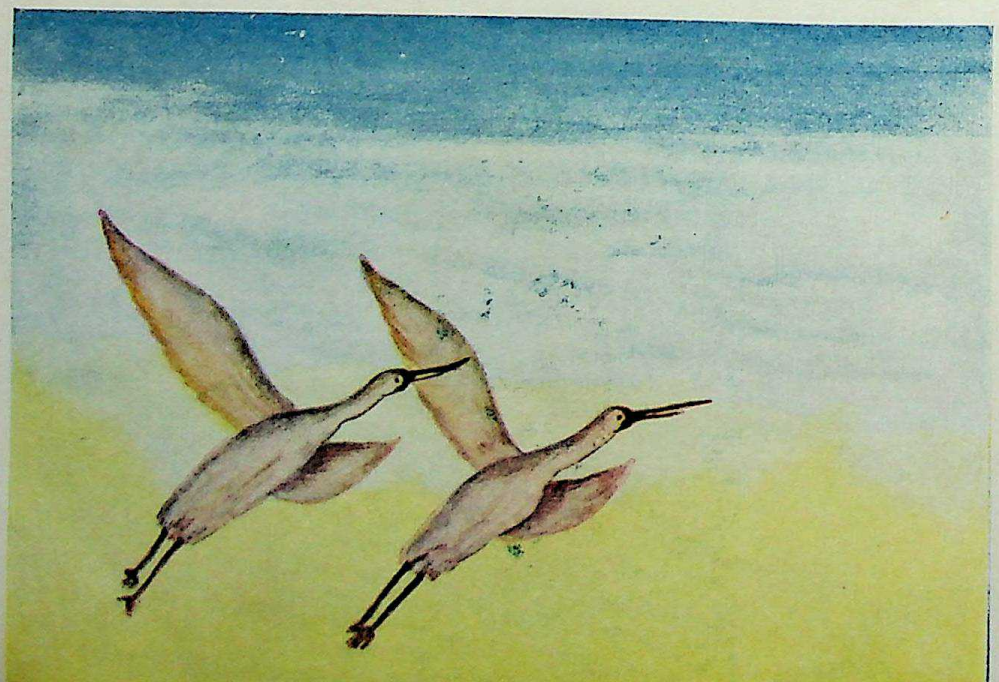

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विहंग प्रव्रजन

(पक्षियों का देशाटन)

"जानि सरद ऋतु खंजन आये।
पाइ समय जिमि सुकृत सुहाये।"

— तुलसीदास

अपनी जन्म-भूमि मानव, पशु एवं पक्षी सभी को समान रूप से प्रिय होती है। यह सत्य है कि जननी और जन्म-भूमि स्वर्ग से भी अधिक गरिमामयी कही जाती है। सोने के पिंजड़े में बन्द होकर भी मैना अपने उस पेड़ के लिए रोती है जिस पर उसका जन्म हुआ है।[1] शुक दूध-भात को खाता हुआ भी बन्धन-मुक्त होना चाहता है और उस पादप की टहनी पर बैठने के लिए लालायित रहता है, जिस पर उसकी माता ने उसे पाला-पोसा था। विहंग का देश-प्रेम एक लोकोक्ति के रूप में प्रख्यात है। जन्म-भूमि कोई भी हो, फिर भी प्राणी के लिए वह सदैव प्यारी रही है। वह सूखी रोटियों के मिलने पर भी अपने जन्म-स्थान का परित्याग नहीं करता। पशु भी दिनास्त होते ही अपने घर की ओर दौड़ता है। संध्या-समय आकाश की ओर देखने पर हजारों पक्षी अपने गृह की स्मृति में विकल होते हुए दृष्टिगत होते हैं। शीघ्रता से हिलते हुए उनके पंख बताते हैं कि ये विहंग अपने घोंसलों को जल्दी से जल्दी देखना चाहते हैं। जन्म-भूमि से प्रगाढ़ प्रेम होने पर भी इन पक्षियों को कुछ कारणवश देशाटन करना ही पड़ता है। ऋतु प्रभाव, भोज्यान्वेषण एवं प्रजनन-सुविधाएँ इन पक्षियों को दूर-स्थित देशों में जाने के लिए विवश कर देती हैं। कभी-कभी आमोद-प्रमोद-प्रियता भी प्रदेश गमन का कारण बन जाती है। मानव के समान ही इन विहंगों में सुखानुभूति होती है। वे भी ऋतुओं के परिवर्तनों को अच्छी तरह समझते हैं और उनके प्रकोप से बचने के लिए पूर्ण प्रयास भी करते रहते हैं। ग्रीष्म के असह्य ताप से पीड़ित मानव शीत प्रधान देशों की ओर दौड़ता है, लेकिन यह सबके लिए सुगम नहीं है। धनिक वर्ग ही ऐसा कर सकता है। निर्धन मानव के लिए देशाटन एक समस्या है। लेकिन पक्षी एक ही उड़ान में हजारों मीलों की दूरी पार कर लेता हैं। खग की स्वतन्त्रता पर मनुष्य चिरकाल से ईर्ष्या करता चला आ रहा

---

1. चिड़िया भी तो वतन के लिए रोती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। उसने वायुयान बनाकर गगन-विहारी बनने के स्वप्न को साकार किया। इन पक्षधरों की देशाटन-प्रवृत्ति को देखकर हमें आश्चर्य-चकित हो जाना पड़ता है। प्रति वर्ष भारतवर्ष में असंख्य पक्षी बाहर से आते हैं और चले जाते हैं। यह स्थान-परिवर्तन इन खेचरों की शक्ति, सहनशीलता, दृढ़ता, सहज-प्रवृत्ति-प्रदर्शन-पटुता एवं संघर्ष-प्रियता का परिचायक है। मानव की तुलना में भले ही पक्षियों का ज्ञान परिमित हो लेकिन इनका दिशा-ज्ञान शिक्षित मनुष्यों से भी विशेष परिपक्व माना गया है। हज़ारों मील पार करते हुए ये जीवधारी एक ही मार्ग से आते हैं और अपनी नैसर्गिक प्रवृत्ति के बल पर एक पूर्व निर्धारित मार्ग से लौटते हैं। यह देखा गया है कि ये विहंग निश्चित, दिन, समय एवं स्थान पर एक ही साथ आते हैं और एक ही साथ वापिस चले जाते हैं। इन्हें दिन, तिथि और स्थान-विशेष की स्मृति किस प्रकार सजग बनाए रहती है—यह एक शोध का विषय है। इनके पथ-ज्ञान के सम्बन्ध में अनेक पक्षी-विशेषज्ञों ने अपने अनुभव प्रकाशित किए तथा कराये हैं, जिनसे प्रकट होता है कि ये विहंग एक ही मार्ग से कई वर्षों तक अपना आवागमन निर्धारित करते हैं।

विशेषतः हमारे देश में विदेशों से पक्षी आते हैं। निम्नस्थ पक्षी भारतीय नहीं हैं। उदरपूर्ति एवं अधिक शीत से बचने के लिए यहाँ आते रहते हैं—

1. सारंग — जर्मनी से राजपूताना
2. मैना — हंगरी से पंजाब
3. चुपका — रूस से कोचीन
4. मुर्गाबी — ताशकन्द से आगरा
5. चकवा — साइबेरिया से आसाम
6. किरी — रूस से मालवा
7. नीलहंस — साइबेरिया से इन्दौर
8. बत्तख — साइबेरिया से धार
9. बूजा — रूस से बम्बई
10. खंजन — कामश्चाटका से भोपाल

'हमारे देश में भी सितम्बर-अक्टूबर में उत्तर की ओर से मौसमी चिड़ियों की बाढ़-सी आनी शुरू हो जाती है जो सर्दी के बढ़ने के साथ ही साथ दक्षिण की ओर बढ़ती जाती है। सर्दी कम होते ही उनकी यह लहर फिर उत्तर की ओर लौटने लगती है और अप्रैल-मई तक ये सब हमारे देश को छोड़कर फिर उसी ओर लौट जाती हैं।'[1]

इन पक्षियों की उड़ने की शक्ति वस्तुतः आश्चर्यजनक होती है। साधारणतः बत्तखें और हंस 40-50 मील प्रति घंटे के हिसाब से उड़ते हैं। शान्तिमय वातावरण एवं अनुकूल ऋतु में इनकी गति 60 मील प्रति घण्टा तक हो जाती है। कुछ पक्षी ऐसे हैं जो रात-दिन उड़ते रहते हैं, केवल क्षुधा-शान्ति के लिए धरातल पर आते हैं और कुछ खा-पीकर फिर गगन के प्रांगण में विचरने लगते हैं। कतिपय खग केवल दिन में उड़ते

1. हमारी चिड़िया—लेखक श्री सुरेशसिंह।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं और रात में विश्राम करके अपनी थकान मिटाते हैं। कुछ ऐसे भी पक्षधर हैं जो संध्या होते ही उड़ते हैं और प्रातःकाल के मन्द प्रकाश में अपनी उड़ान को स्थगित कर देते हैं।

पक्षियों का सतत कई घण्टों तक उड़ना, उनकी शारीरिक शक्ति-विशेष एवं क्षमता का द्योतक है। मुर्गाबी, सारंग, कठकोला एवं टिटई नामक पक्षी एक ही उड़ान में क्रमशः 160, 125, 300 एवं 550 मीलों की दूरी को नाप लेते हैं। समुद्री-मार्ग से आने-जाने वाले नभचरों की उड़ान विचित्र होती है। ये 2000 मील के फासले को लगातार उड़कर पूरा करते हैं। चहा नामक खग सदैव जापान में अण्डा देता है और पूर्वीय आस्ट्रेलिया में शीतकाल व्यतीत करता है। ऐसी स्थिति में इसे एक ही उड़ान में 3000 मील लम्बे सागर को पार करना ही पड़ता है। इसी प्रकार अनेक विहंग एक साथ उड़कर हजारों मील जाते हैं और अपनी दीर्घ पर्यटन-शीलता से मानव-जाति को आश्चर्यान्वित कर देते है। इनकी ऊँची उड़ानें और भी विस्मयजनक हैं। साधारणतः सागर-तल से इन पक्षधरों को 1300 फीट ऊँचा भी जाना पड़ता है। हिमालय के गगनचुम्बी शिखरों पर से उड़ने वाले नभचरों की ऊँची उड़ान का अनमान सुगमता से किया जा सकता है। पर्वतारोहियों का कथन है कि उन्होंने कई पक्षियों को 17000 फीट की ऊँचाई पर आराम के साथ उड़ते देखा है। काराकोरम की चोटियों पर चढ़ने वाले साहसियों ने 16000 फीट पर असहनीय शीत से प्राणहीन बत्तखों के शरीर को देखा है। 20000 फीट ऊँचे उड़ने वाले कई पक्षी आज भी देखे जा सकते हैं।

आवश्यकता पड़ने पर ये गगन-विहारी 20000 से लेकर 27000 फीट की ऊँचाई को अपने शक्ति परिपूर्ण पक्षों से नापते हैं। 23000 फीट की ऊँचाई पर चढ़ते हुए कुछ कर्मठ व्यक्तियों ने काग और गीध को उड़ान भरते देखा था। रामचरितमानस में बताया गया है कि काग भुशण्डि सुन्दर नील पर्वत पर रहते थे और इनकी रामकथा सुनने के लिए बूढ़े-बूढ़े पक्षी आते थे। इसी स्थान पर पक्षीराज गरुड़ भी अपने मोहजनित अज्ञान को दूर करने गए थे।[1] महाकवि कालिदास ने मेघदूत में लिखा है कि हिमालय के क्रौंच-रंध्र से राजहंस मानसरोवर को जाते हैं।[2] पक्षी-विज्ञान के विशेषज्ञों के कथनानुसार चन्द्रमा की

---

1. उत्तर दिसि सुन्दर गिरि नीला, तहँ रह काक भुसुण्डि सुसीला।
   गयउ गरुड़ जहं बसइ भुसुंडा, मति ऊकुएठ हरि भगति अखंडा।
   देखि सैल प्रसन्न मग भयऊ, माया मोह सोच सब गयऊ।
   करि तड़ाग मज्जन जलपाना, बटतर गयउ हृदयं हरषाना।
   वृद्ध-वृद्ध विहंग तहँ आए, सुनै राम के चरित सुहाए।

   —उत्तर काण्ड, पृष्ठ 899

2 प्रालेयोद्रेरुपतटमतिक्रम्य तांस्तान्विशेषा।
   न्हंसद्वारं भृगुपति यशोवर्त्म यत्क्रौंच रंध्रम्।
   तेनोदीचीं दिशमनुसरेस्तिर्यगायामशोभी!
   श्यामः पादौ बलि नियमनाम्युद्यतस्येव विष्णोः।

   —पूर्वमेघ, 58

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रजत-किरणों से आलोकित रात में एक हंसिनी 5 मील की ऊँचाई पर उड़ती हुई देखी गई थी।[1] पैसे-भर की काया वाली छोटी चिड़ियों की तीव्रतम एवं उच्चतम उड़ान विहंग-विश्व का एक चमत्कार विशेष है।[2]

पक्षियों का स्थान-परिवर्तन एक मनोरंजक विषय है जिसका वैज्ञानिक अध्ययन भारत में बहुत कम हुआ है। इस सम्बन्ध में पाश्चात्य विद्वानों ने बहुत कुछ लिखा है, जिसके प्रकाश में आधुनिक भारतीय मनीषियों को भी कार्य करना आवश्यक है। हमारे प्राचीन साहित्यकारों ने पक्षियों के सम्बन्ध में पर्याप्त विचार किया है। विभिन्न जातियों के विहंगों का वर्णन करते हुए उनकी प्रवृत्तियों का भी चित्रण इन विद्वानों द्वारा हुआ है। ऋतुओं के उल्लेख में इन्होंने पक्षियों के देशाटन का भी संकेत किया है। विशेष अनुशीलन करके हमें इन काव्यकारों के अनुभवों से समुचित लाभ उठाना चाहिए। संस्कृत के महान् कवि कालिदास ने अपने काव्यग्रन्थों में मयूर, चकोर, चातक, कोकिल, गृध्र, श्येन, सारिका, शुक, हारीत, पारावत, कपोत, श्यामा, पुंस्कोकिल, हंस, राजहंस, सारस, कारण्डव, कुररी, क्रौंच, कंक, आदि अनेक खगों का सरस विवरण दिया है।

विहंग-प्रव्रजन पक्षी-समाज की कर्मशीलता और जीवन-गति विधि का नैसर्गिक इतिहास है।

अध्ययन सामग्री

1. W. Eagle Clarke—Studies in Bird Migration (1912)
2. F. Von Lucanus—Die Ratsel des Vogelzuges.
3. A. Landsborough Thomson—Problems of Bird-Migration.
4. Alex Wetmore—The Migration of Birds (The Enclyclopedia Britannica Vol. 3.)
   कालिदास का भारत—श्री भगवतशरण उपाध्याय, पृष्ठ 70-73
5. Lincoln, F. C.—Migration of Birds.
6. Mathews, G. V. T.—Bird Navigation.
7. Wetmore, A. The Migration of Birds.
8. David Lack,—Swifts in a Tower.
9. Rawan, W. The Riddle of Migration.
10. Munro Fox. 4.—The personality of Animals.
11. भारत के पक्षी—श्री राजेश्वर प्रसाद नारायणसिंह।

---

1. पक्षियों का आश्चर्यजनक देशाटन।

—नवनीत, जनवरी 1958

2. चिड़िया नन्ही पैसे भर, तय कर जाती सात समंदर।

—नवनीत, मई 1958

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

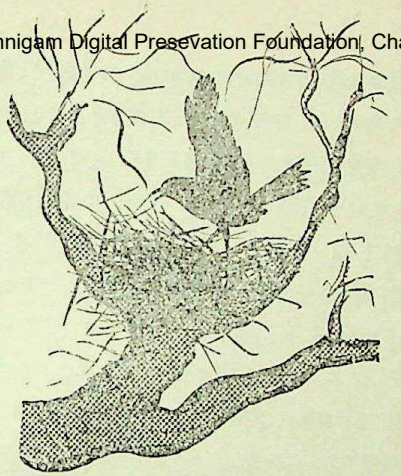

पक्षियों का नीड़-निर्माण

वह चले झोंके कि काँपे,
भीम कायावान भूधर।
गिर पड़े टूटे विटप वर,
हाय तिनकों से विनिर्मित,
घोंसलों पर क्या न बीती,
डगमगाए जबकि कंकड़,
ईंट-पत्थर के महल घर,
बोल आशा के विहंगम,
किस जगह पर तू छिपा था,
जो गगन पर चढ़ उठाता गर्व निज तान,
फिर-फिर।
नीड़ का निर्माण फिर-फिर।

(कविवर बच्चन)

नारीत्व की सफलता जननी-रूप में ही मानी गई है। नारी अपनी गोद को सूनी देखकर विलख उठती है। वह एक शिशु-प्राप्ति के लिए अनेक यातनाएँ सहती है और अपनी साधना से उसे प्राप्त करके स्वयं को भाग्यशालिनी मानती है।

नारी की जीवन गाथा में उसका शिशु पालन विशेष महत्त्व रखता है। मनुष्य अपनी काम-वासना को पूर्ण करके कुछ समय के लिए निर्मोही बनने का स्वांग रचता है। स्त्री दुःख झेलती हुई अपने गर्भस्थ शिशु के संरक्षणार्थ सदैव चिन्तातुर रहती है। मानव जगत की अपेक्षा पशु-पक्षी संसार

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में अधिक सहानुभूति एवं पारस्परिक स्नेह है। गर्भ-धारण के पश्चात् चिड़िया माता बनने के स्वप्न को देखती है और चिड़ा उसके सुख-साधनों को एकत्रित करने के लिए प्रयत्नशील रहता है। प्रसव के लिए समुचित स्थान का अन्वेषण करना एवं सुन्दर तथा सुखदायक नीड़ का बनाना चिड़े का प्रमुख कार्य है। कभी वह एकाकी और कभी-कभी दम्पति घोंसले के बनाने में दत्तचित्त रहते हैं। नीड़ के निमित्त ऐसा स्थान चुना जाता है जो सब प्रकार वे सुरक्षित हो। अण्डों के नाश के लिए अनेक शत्रु इस संसार में जीवित हैं। एक पक्षी दूसरे की वंश-वृद्धि को नहीं देख सकता। ऐसी परिस्थिति में वृक्ष की शाखाओं एवं टहनियों पर तथा कोटरों में नीड़ बनाए जाते हैं। कतिपय पक्षी अपनी कठोर और तेज चोंच से पादप के तने को काटकर उसमें मनोरम नीड़ बना लेते हैं। कुछ खग ऐसे भी हैं जो इस कार्य से दूर रहते हैं और बेचारी मादा को अपना प्रसूती-गृह स्वयं बनाना पड़ता है। आकाश में उड़ते हुए कठोर हृदय वाले कुछ ऐसे भी नभचर हैं, जो अपनी सूक्ष्म दृष्टि से पादपों पर निर्मित नीड़ों को देख लेते हैं और उनमें सुरक्षित अण्डों के भक्षण के लिए लालायित हो उठते हैं। अतः कुछ घोंसले उन शाखाओं पर बनाए जाते हैं जो सदैव पल्लवों से आच्छादित रहती हैं। इस रूप में वे कठिनता से दिखाई पड़ते हैं। कतिपय चतुर पक्षधर अपने नीड़ों को शाखाओं के अग्रतम भागों पर बनाते हैं जहाँ गिलहरी, साँप आदि रेंगनेवाले प्राणधारियों का पहुँचना असंभव-सा प्रतीत होता है। विशेषतः मांस-भक्षी पशु, पक्षी एवं रेंगनेवाले जीव ही अण्डों के विनाशक माने जाते हैं। पीलक (Orioles) तथा डोमकाग (King Crows) टहनियों के अगले भागों पर नीड़ बनाकर अपने अण्डों का संरक्षण करते हैं। ऊँचे वृक्षों की उच्चतम शाखाओं पर घोंसला बनानेवाले भी अनेक खेचर हैं। लटोरा (Shrike Tits) का नाम इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है। गृद्ध, चील, बाज शिकरा आदि पक्षधर उच्च पादपों पर घोंसला बनाना पसन्द करते हैं। लेकिन वायु के झोंके ऐसे नीड़ों को सहज में नष्ट कर देते हैं। शत्रुओं से बचाने के लिए कुछ पक्षी कंटीली झाड़ियों के नीचे अण्डे देते हैं और गुप्त मार्ग से पहुँच कर उनका पालन-पोषण करते रहते हैं। लेकिन उसी अप्रकट मग से जाकर दुश्मन उनका विनाश कर डालते हैं। जलाशयों के समीप रहने वाले पक्षी रेत में अथवा चट्टानों के बीच में अण्डे देकर नीड़-निर्माण के श्रम से बच जाते हैं। इस प्रकार के कुछ खग तटों पर गड्ढा खोद कर अपनी पत्नी के लिए सुखदायक प्रसूति-गृह बना लेते हैं। कतिपय ताजाबी चिड़ियाँ सर-सरिताओं के समीपस्थ वृक्षों पर भी घोंसले बना लेती हैं जैसे लगलग (Storks), बगुले, पनकौए (Cormorants) तथा अबाबील (Swallow) ऊँचे महलों की भित्तियों पर कीचड़ के घोंसले बनाती है। मानव समाज से विशेष सम्पर्क स्थापित करने वाले कौवा, कबूतर, पड़कुलिया, मैना आदि पक्षी मकानों में भी नीड़ बनाकर मनुष्यों से संरक्षण की आशा करते हैं। कोयल नीड़ बनाने की ओर ध्यान नहीं देती है। वह काग के घोंसले में उसके अण्डे गिराकर अपने अण्डों को रखकर पालन-पोषण के कष्ट से भी मुक्त हो जाती है।

पक्षी विशेषज्ञों का कथन है कि कुछ पक्षी ऐसे हैं जो केवल अपनी पत्नी के साथ रहकर नीड़-निर्माण करते हैं और अण्डों का पालन-पोषण कर अपने नवजात शिशुओं को देखते हैं तथा आत्मसुख

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का अनुभव कर लेते हैं। भुजंगा (Black Drongo) दम्पति एकाकी रूप में घोंसले को बनाते हैं और वंश-वृद्धि में पूर्ण सतर्क रहते हैं। लेकिन बया (Weaver bird), अबाबील (Cliff Swollows), चटक (Common and Edible swifts) एवं लगलग (Storks) आदि सामूहिक रूप से घोंसले बनाते हैं और पारस्परिक सहयोग का आदर्श उपस्थित करते हैं।

प्रकृति संरक्षण के लिए सदा तत्पर रहती है। इस सिद्धान्त का अध्ययन हम अण्डों के रंग-निरीक्षण से करते हैं। अनेक पक्षधर श्वेत अण्डे देते हैं। लेकिन ऐसे पक्षियों की भी कमी नहीं है जिनके अण्डे विविध रंगों के देखे गए हैं। संरक्षण का साधन अण्डों का रंग भी है। टिटहरी खुली जगह में अण्डा देती है इनका रंग मिट्टी के सदृश होता है। अतः इनको सुगमता से पहचानना कठिन होता है। इसी प्रकार कुररी (Tern) सरिता के बालुका को अपना प्रसूतिगृह बनाती है। फलतः इसके अण्डे रेत-सदृश प्रतीत होते हैं। जल-कपोत तैरते हुए सिंघाड़े के पल्लव पर अण्डे देती है जो पत्ते के रंग के समान होने से कठिनता से जाने जाते हैं। नीड़ के अनुरूप अण्डों का रंगादि होना प्रकृति का विलक्षणता ही है।

नीड़-निर्माण में ऋतुओं के प्रभाव का भी ध्यान रखा जाता है। बया नामक पक्षी के घोंसले में जो प्रवेश-द्वार होता है वह उस दिशा की ओर रहता है जहाँ से वर्षा-वायु का प्रकोप सहसा नहीं हो पाता। इसी प्रकार शीतकाल से बचने के लिए जो घोंसले बनते हैं वे कटोरे के समान गहरे होते है, और इसीलिए उनमें बैठे हुए शिशुओं पर ठंडी वायु का कटु प्रभाव नहीं पड़ पाता। कोटरों में रहने वाले पक्षी शावक वर्षा की बूंदों से सुरक्षित रहते हैं। बया के नीड़ में पावस की जल-धार पहुँच ही नहीं पाती। इसी प्रकार कर्दम-निर्मित अबाबील का नीड़ ऋतुओं के कुप्रभाव से सदा सुरक्षित माना गया है।

नीड़ों के आकारों में भी असमानता है। विभिन्न पक्षी अपनी-अपनी सहज प्रवृतियों के अनुसार पृथक्-पृथक् आकार-प्रकार के घोंसले बनाते हैं। बटेर जंगली मुरगी एवं शिकार योग्य खेचर का घोंसला साधारण होता है। पृथ्वी पर किञ्चित् मिट्टी को इधर-उधर करके पक्षी घास-पत्तियों के द्वारा नीड़ का निर्माण कर लेते हैं।

काग, चील, फाखता, गिद्ध, लगलग, एवं जल-काक आदि नभचर वृक्षों, ऊँची इमारतों अथवा समुन्नत चट्टानों पर कटोरे की भाँति गहरा नीड़ बनाते हैं। घास, सन, पंख आदि कोमल पदार्थों को घोंसले के बनाने में प्रयुक्त किया जाता है। ये नीड़ चबूतरे के समान समतल होते हुए भी बीच में गहरे रहते हैं। राम गंगरा, कुलिङ्ग, कठकोला, बसन्ता, धनेश, उलूक, बत्तख एव मैना वृक्षों के कोटरों में नीड़ बनाकर अपनी भावी सन्तानों को पालते-पोसते हैं। पुरातन पादपों में स्वयं निर्मित खोथों में अथवा अपनी तीक्ष्ण चञ्चु द्वारा बनाए हुए कोटरों में ये नभचर घास, जीर्ण पट, पंख, पल्लव आदि को एकत्रित करके सुखदायक घोंसला बन लेते हैं। पत्रिगा, किलकिल, हुदहुद, पुत्रप्रिय, आदि खेचर सरिता-तट में खोदी हुई लघु सुरंग में, ऊँची इमारतों की दरार में अथवा चट्टानों के घुमाव में नीड़ का

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निर्माण किया करते हैं। कस्तूरा, तर्दाश, अबाबील एवं चटी किसी ऊँची अट्टालिका की भित्ति पर अथवा उच्चस्थल पर कर्दम से नीड़ बनाकर अपनी गर्भिणी पत्नियों को सुखदायी प्रसूति-गृह प्रदान करते हैं।

सुभागी, चाकदिल, पीलक, सितनयनी, सहेली, फुदकी, कृष्णिका आदि के नीड़ कटोरे के समान मध्य में कुछ गहरे होते हैं। शाखाओं की फूटन अथवा जोड़ों पर ये (घोंसले) किसलयों, शुष्क पल्लवों, घास, रुई, सींकों आदि से निर्मित होते हैं। मकड़ियों के जालों से ये पदार्थ आपस में बाँधे जाते हैं। मकड़ी का जाला नीड़-निर्माण में विशेष उपयोगी है। इसका प्रयोग घोंसले को चिकना करने अथवा दृढ़ बनाने में होता है।

मुनिया एवं गँगई के घोंसले घास, टहनियों एवं तिनकों से बनते हैं। ये गुम्बज अथवा गेंद के समान गोल होते हैं जिनमें एक छिद्र प्रवेश-द्वार का काम करता है।

बया, फुल चुही, शकर खोरा, पुष्पान्वेशी आदि विहंगों के झूमते हुए अथवा लटकते हुए नीड़ बहुत ही सुन्दर एवं आकर्षक होते हैं। बया का नीड़ उसकी कारीगरी का एक विलक्षण नमूना है। एक लम्बी थैली के समान ये नीड़ दर्शक को आश्चर्यचकित कर देते हैं। घास पत्तियों से ये विहंग कितना सुसज्जित गृह बनाते हैं।

फुदकी (दरजिन), चिकुर कूजिनी तथा भस्म फुदकी के घोंसले कम मनसोहक नहीं होते हैं। दरजिन (फुदकी) तो पत्तों को सीकर अपना घोंसला बनाती है। दो पल्लवों को धागे के माध्यम से यह चिड़िया अपनी नुकीली चोंच से इस प्रकार जोड़ती है कि दर्शक को यह प्रतीत होने लगता है कि किसी कुशल दर्जी ने धागे से इन्हें सी दिया है। वस्तुतः पक्षियों का नीड़-निर्माण उनकी बुद्धि की कुशलता का परिचायक है। विविध विषयों के अध्ययन में लीन मानव भी इतना प्रवीण नहीं हो पाया है।

धनेश के घोंसले को देखकर तो मानव को कारावास की स्मृति हो आती है। धनेश अपनी आसन्न-प्रसवा पत्नी को पेड़ के कोटर में बद कर देता है। उसके छेद को भी मिट्टी से ढककर वह निश्चिन्त हो जाता है। केवल एक छिद्र रख देता है जिसमें से मादा अपनी चोंच को बाहर निकालती है और अपने पति द्वारा प्राप्त भोजन से अपने को जीवित रखती है। जबतक अंडे बच्चे बनकर चलने-फिरने एवं उड़ने के योग्य नहीं हो जाते हैं तबतक इसे स्वयंनिर्मित कारावास में रहना पड़ता है।

नीड़ के निर्माण का प्रमुख प्रयोजन अण्डों की रक्षा एवं नवजात शिशुओं का पालन-पोषण है। इसी स्थान पर ये दोनों कार्य होते हैं। समीपस्थ परिस्थितियों एवं शिशुओं की सुख-सुविधाओं को ध्यान में रखकर ही घोंसलों के लिए उपयुक्त स्थल चुना जाता है।

विहंगों का नीड़-निर्माण एक शोध का विषय है। ये किस प्रकार घोंसले बनाते हैं? यह अद्भुत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

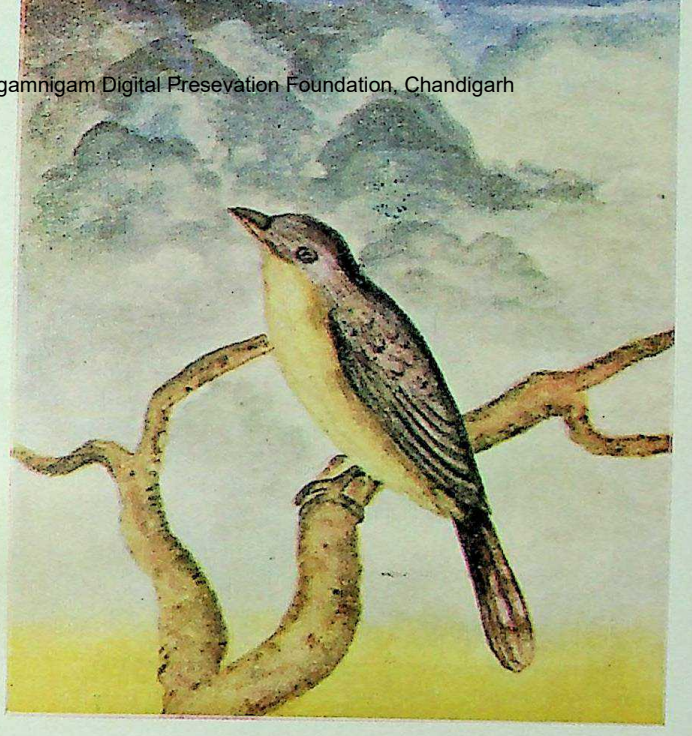

चातक

नीड़-निर्माण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मधुर गीत गाती हुई चिड़िया

कौआ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बच्चों को भोजन देती हुई चिड़िया

प्रशिक्षण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

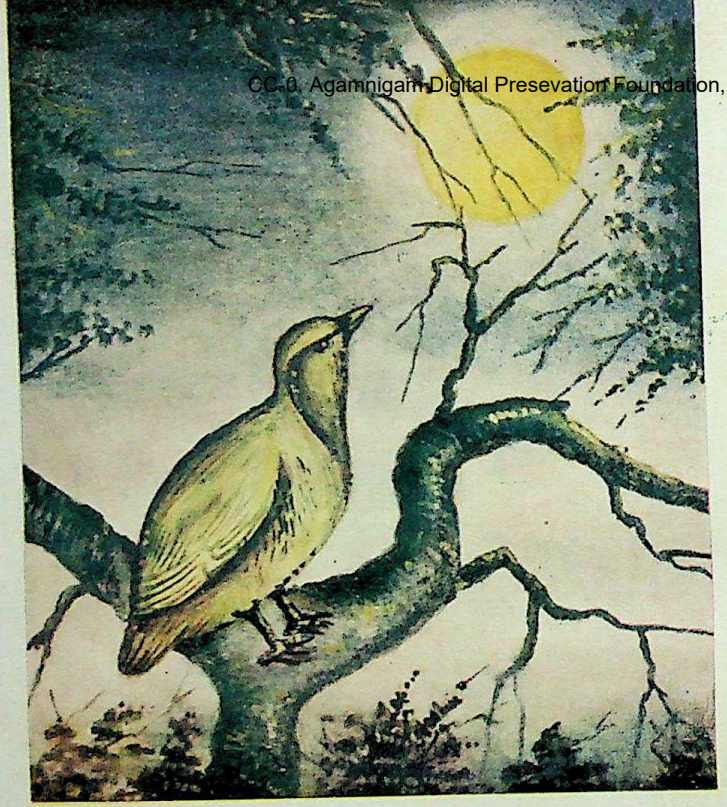

चकोर

कुहुकती कोयल

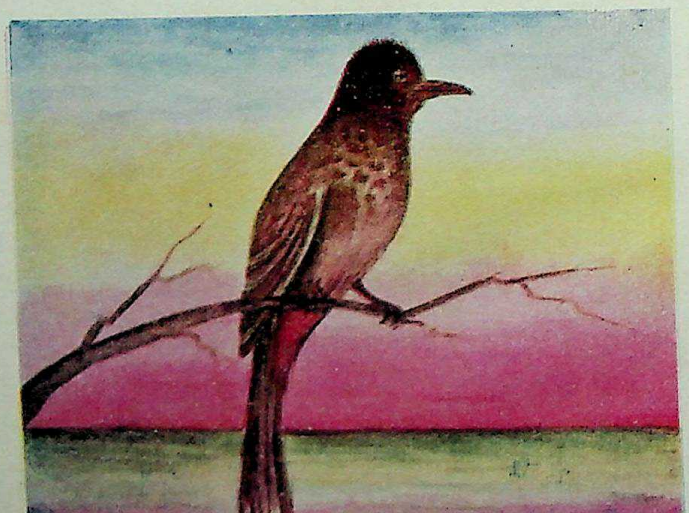

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कौशल उन्हें किस प्रकार प्राप्त हुआ है ? तथा जाति विशेष के विहग एक ही प्रकार का नीड़ क्यों बनाते हैं—ये प्रश्न आज भी उचित उत्तर-हीन हैं। समाधान कई प्रकार से हुआ है लेकिन सन्तोषप्रद नहीं है। बिना उचित शिक्षा के पक्षियों के बच्चे युवक होकर कैसे अपने पिता के समान ही नीड़ निर्मित कर सकते है। यह एक समस्या है।

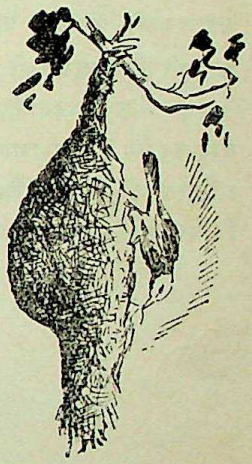

Little Ringed plover (टिटहरी), Babbler (चरखी) एवं Ashy-Wren Warbler (काली फुदकी) सर्वत्र एक ही आकार-प्रकार के घोंसले बनाते हुए देखे गए हैं। चलने-फिरने की शक्ति प्राप्त करते ही इन विहंगों के शावक हजारों मील दूर जाकर निश्चित ऋतु में वैसा ही घोंसला बनाने लगते हैं जैसे में उनका जन्म हुआ था। संभवतः यह इनकी नैसर्गिक प्रवृत्ति का ही विकास है। कुछ पक्षी विशेषज्ञों का कहना है कि जिस नीड़ में ये पक्षी उत्पन्न होते हैं उन्हें वे ध्यान से देखते हैं। और अवसर प्राप्त होने पर वैसा ही घोंसला बना लेते हैं। यहाँ पक्षी-शावक की स्मृति-विलक्षणता बताई गई है। इस सम्बन्ध में यह भी कहा जाता है कि शिशु अपने अनुभवी माता-पिता से नीड़-निर्माण विधि सीखते हैं।

पक्षी विशेषज्ञ श्री सालिम अली नीड़ निर्माण में कुछ अंशों में अंध एवं अतर्कित नैसर्गिक प्रवृत्ति को कारण मानते हैं। नीड़-निर्माण का समय भी निश्चित रहता है। डोम काग अथवा कौआ भारत के विभिन्न स्थानों में प्रजनन काल की विभिन्नता के कारण कहीं अप्रैल-जून में, कहीं कुछ पूर्व अथवा कहीं मई में घोंसला बनाते हैं। खैरी सिस्सी फरवरी से मई तक घोंसलों का निर्माण करती है। सुभागी नामक पक्षी का नीड़-निर्माण समय मई एवं सितम्बर है। बुलबुल मार्च से सितम्बर तक नीड़-निर्माण में रत रहती है। भृंगराज मार्च-जून के बीच में घोंसला बनाता है। इसी प्रकार घनेल (Common Grey Hornbill) की नीड़ सृष्टि इन्हीं मासों में (मार्च तथा जून) होती है। सिंगिया घुग्घू लगभग नवम्बर से अप्रैल तक घोंसला बनाते हुए देखे गए हैं। अक्टूबर से मार्च तक सफेद पीठ गिद्ध, दिसम्बर से मार्च तक साँपमार गरुड़ (Crested Serpent Eagle), सितम्बर से मार्च-अप्रैल तक चील (The Common Pariah kite), जुलाई से सितम्बर तक पहाड़ी कबूतर (Blue Rock Pigeon), अप्रैल से जुलाई तक तीतर (Black Partıidge) एवं अप्रैल से जून तक कुररी (Curlew) नीड़ की रचना करती है। नीड़ की उपयोगिता अण्डों का संरक्षण एवं शिशुओं का पालन-पोषण है अतः कुछ विद्वानों की सम्मति में घोंसला बनाने की मौसम के निश्चित करने में गर्भाधान एवं प्रजनन-काल विशेष सहायक होते हैं। इन कालों की पृथक्ता में ही नीड़-निर्माण-समय में भिन्नता देखी जाती है। इस विषय में स्थानीय जल-वायु ऋतु परिवर्तन, एवं भौगोलिक परिस्थितियों का भी उल्लेखनीय महत्त्व है। दयामयी प्रकृति भी अपना करुणा-पूर्ण व्यवहार प्रदर्शित करती रहती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सरिताओं की रेत अथवा तटों में घोंसला बनाने वाले विहंग वर्षा-काल अथवा ग्रीष्म-काल (जब हिम के पिघलने से नदियों में बाढ़ आ जाती है) के पूर्व मातृ-पितृ कर्त्तव्य से मुक्त हो जाते हैं। इसी प्रकार वृक्षों पर एवं पादप-कोटरों तथा धरती में नीड़ बनाने वाले नभचर वर्षा कालीन वायु के आगमन के पहले ही शिशुओं को पालकर फिरने योग्य कर लेते हैं।

नीड़ चिरस्थायी नहीं होता है। प्रयोजन की सिद्धि हो जाने पर पक्षी इसे भूल जाता है और वायु का वेग इसे धराशायी बना देता है। कोमल एवं लचीली डाल का घोंसला तो न मालूम कब अपना अस्तित्व खो बैठे। आशियाना (घोंसला) कारावास तथा गृह का प्रतीक भी है। इस प्रकार नीड़ को विविध रूपों में मानकर उर्दू के शायरों ने बहुत कुछ लिखा है :—

तुम्हारी तहज़ीब अपने खंजर से,
आप ही खुदक़शी करेगी।
जो शाख़े नाज़ुक पै आशियाना बनेगा,
नापाएदार होगा।

—इक़बाल

× × ×

परिन्दों की दुनियाँ का दरवेश हूँ मैं।
कि शाही बनाता नहीं आशियाना।

—इकबाल

× × ×

झाड़नी है कौन से गुल की नज़र ?
बुलबुले फिरती हैं क्यों तिनके लिए ?

—अमीर मीनाई

× × ×

दिल घुट रहा है आपसे आप आशियाने में।
अच्छी नहीं चमन की हवा इस ज़माने में।

—साकिब लखनवी

× × ×

उस साल फ़स्ले गुल में उजड़ा था बनते-बनते
रहता तो आशियाँ को अब एक साल होता।

—आसी लखनवी

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गिरी न बंक कुछ, इस खौफ़ से मेरे होते।
तड़पके आग बुझा दूँ न आशियाने की।

—फ़ानी बदायूनी।

एक दिन कविवर बच्चन के विह्वल हृदय ने सूर्यास्त के समय गगन में उड़ते हुए पक्षियों को देखा था। उनके चंचल परों में नीड़ों से झाँकते हुए शिशुओं की याद भरी थी। एकाकी कवि-हृदय कह उठा—

दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।
बच्चे प्रत्याशा में होंगे।
नीड़ों से झाँक रहे होंगे।
यह ध्यान परों में चिड़ियों के भरता कितनी चंचलता है।
दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।

(निशा-निमन्त्रण)

कविवर पन्त की दृष्टि में जब विहग का हृदय नीड़-निलय में विकल होने लगता है तब वह अनन्त आकाश में लीन हो जाता है—

·····छिपकर उडेलते कर्णों में,
मञ्जरित मधुर
स्वर-ग्राम प्रचुर,
उन्मुक्त नील·····
तुम पंख ढील,
उड़ उड़ सलील,
हो जाते लय,
निःसीम शान्ति में चिर सुखमय—
जब नीड़-निलय में रुद्ध हृदय।
हो उठता पीड़ातुर अतिशय।

(आम्र विहग—युगवाणि)

महादेवी जी चाहती हैं कि उनका दीपक अकंपित एवं अचंचल होकर प्रकाशित रहे जिससे कि कोई भी लघु विहग अपने घर को अंधकार के कारण न भूल सके—

दीप मेरे जल अकम्पित,
घुल अचंचल!

··· ··· ···

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पथ न भूले, एक पग भी,
घर न खोए लघु विहग भी।
स्निग्ध लौ की तूलिका से,
आँक सबकी छाँह उज्ज्वल।

× × ×

संस्कृत के महाकवि कालिदास ने अपनी विरह-व्यथिता जीवन-सहचरी के समीप भेजते हुए श्यामल-सजल जलधर को नीड़-निर्माण में संलग्न ग्राम-पक्षियों की भी याद दिलाई थी—

"पाण्डुच्छायो पवन वृत्तय; केतकैः सूचिभिन्न—
नीडारम्भैर्गृह बलिभुजामाकुल ग्राम चैत्याः।
त्वय्यासन्ने परिणत फल श्याम जम्बू वनान्ताः
संपत्स्यन्ते कतिपय दिन स्थायि हंसा दशार्णाः।

(पूर्व मेघ)

—दशार्ण जन पद के समीप पहुँचने पर केतकी के फूलों से मुकुलित अग्र भाग के श्वेत वर्ण से तुम्हें वहाँ का उपवन-प्राकार पाण्डु प्रतीत होगा। उस समय ग्राम-पक्षियों (काकादि बलि-भोगी पक्षियों) के नीड़-निर्माण आरम्भ कर देने से ग्राम-मन्दिर संक्रान्त हो रहे होंगे। जनपद के उपान्त में रमणीय जामुन के वन परिपक्व फलों के कारण श्यामवर्ण दिखलाई देते होंगे। हंस कुछेक दिनों के लिए वहाँ निवास कर रहे होंगे। (श्री लक्ष्मीमल्ल सिंघवी)

परमात्मा ! नीड़ और नीड़ का निवासी सदा सुखमय रहे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

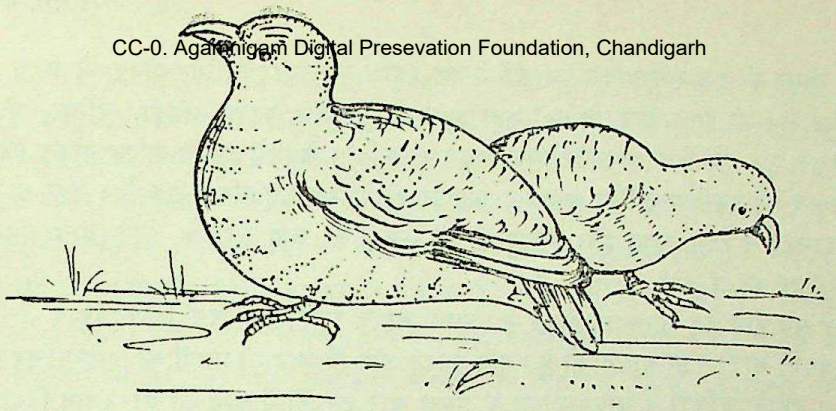

पशु-पक्षियों का प्रणय-प्रदर्शन

विश्व-विजयी कामदेव का प्रभाव सार्वभौमिक है। अतः समस्त जीवधारी काम-वासना से प्रभावित हैं। प्रेमोपसेवन स्वाभाविक है। यौवन में प्रणय की भावना मुखरित हो उठती है। जवानी जीवन का वसन्त है। इसी सुरभित जीवन में कामोन्माद विविध रूपों में प्रकट होता है। परम तपस्वी कामासक्ति से विकल हुए हैं।[1]

कामानुभूति प्राणी को अन्धा बना देती है। उसे चेतनाचेतन का भी विभेद नहीं रहता।[2]

---

1. उन्मत्त प्रेमसरम्भादारभन्ते यदंगनाः।
   तत्र प्रत्यूहमाधातुं ब्रह्मापि खलु कातरः ॥77॥

... ...

   विश्वामित्र पराशर प्रभृतयो वाताम्बुपर्णाशना।
   स्तेऽपि स्त्री मुख पंकजं सुललितं दृष्ट्वैव मोहं गताः।
   शाल्यन्नं सघृतं पयोदधि युतं ये भुञ्जते मानवा
   स्तेषामिन्द्रियनिग्रहो यदि भवेद्विध्यः प्लवेत् सागरे ॥82॥
   (शृंगार शतकम्)

2. धूम ज्योतिः सलिल मरुतां संनिपातः क्व मेघः।
   संदेशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः।
   इत्यौत्सुक्याद परिगणयन् गुह्यकस्तं ययाचे।
   कामार्ता हि प्रकृति कृपणाश्चेतनाचेतनेषु।
   (पूर्वमेघ)

× × ×

   इश्क के घाट किसको संभलते देखा।
   अच्छे अच्छों का यहाँ पाँव फिसलते देखा।

× × ×

Cupid is blind. (काम अंधा होता है)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जीवन की इस स्वाभाविक एवं अनियंत्रित प्रवृत्ति का उभार यों तो यौवन में आता है लेकिन वार्धक्य (बुढ़ापा) भी इसका अपवाद नहीं कहा जा सकता। दुर्बल, काना, लंगड़ा, बहिरा, पूँछ-विहीन, भूख से विह्वल वृद्ध एवं शिथिल शरीर वाला श्वान भी कुतिया के पीछे आमुख बनकर दौड़ता फिरता है।[1]

मन्मथ की इस अप्रत्याशित प्रभाव-पराकाष्ठा को देखकर भर्तृहरि ने एक दिन कहा था कि जिस पुष्पायुध कामदेव ने शिव, ब्रह्मा और विष्णु को भी स्त्रियों के कार्य करने के लिए दास बना रखा है उसे मैं नमस्कार करता हूँ।[2]

यह सब होते हुए भी काम जीवन में अपना महत्त्व रखता है। इस विराट् विश्व की स्थिति को प्राणवान् बनाने वाली काम-वासना ही है। यदि इसका लोप हो जाय तो प्राणों की निर्ममता सबको व्यथित करने लगे। हमारे ऋषियों ने मानव-जीवन के प्रमुख चार उद्देश्यों में काम को भी स्थान दिया है। प्रेम अथवा प्रणय अस्तित्वहीन प्रतीत होगा तो जवानी अपना लुत्फ खो देगी और ज़िन्दगी श्मशानपावक के समान भयानक लगेगी। इश्क ही तो इस दुःखपूर्ण संसार में मानव को जीने के लिए बाध्य करता है।[3]

---

1. कृशः काणः खंजः श्रवण रहितः पुच्छ विकलो।
   व्रणा पूयक्लिन्नः कृमिकुल शतैरावृत तनुः।
   क्षुधा क्षामो जीर्णः पिठरककपालार्पित गलः।
   शुनीमन्वेति श्वाहतमपि च हन्त्येव मदनः।
   (शृंगार शतकम्)
2. शम्भु स्वयंभु हरयो हरिणेक्षणानां,
   येनाक्रियन्त सततं गृह कुम्भ दासाः।
   वाचाम गोचर चरित्र विचित्रताय,
   तस्मै नमो भगवतै मकरध्वजाय॥
3. मुहब्बत मुनव्वर मुहब्बत मुअत्तर
   मुहब्बत नहीं तो जवानी नहीं है।
   —जिगर

× × ×

हो इश्क व मुहब्बत में अगर लुत्फ न बेहद।
हर रोज़ मुहब्बत में मरे और जिए कौन।
—अज्ञात

× × ×

जिन्दगी क्या है? नमूदे-आशिकी।
इश्क क्या है? हुस्न का आगाज़ है।
—जिगर

× × ×

वह सर नहीं जिसमें कि हो सौदा न किसी का।
वह दिल नहीं जो दिल न हो दीवाना किसी का।
—अज्ञात

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ऐहिक सुख के निमित्त प्रणय-लीला की उपयोगिता निर्विवाद सिद्ध है। हमारे महर्षियों ने काम-शास्त्र को लिखकर इस सम्बन्ध में बहुत कुछ अपना मन्तव्य प्रकट कर दिया है। काननवासी एवं इन्द्रिय-निग्रही ऋषि वात्स्यायन का कामसूत्र विशेष उल्लेखनीय है।

जिस प्रकार मानव के लिए केलि-क्रीड़ा, केलि-कलाप, प्रणयलीला, प्रणय-प्रदर्शन आदि स्वाभाव-जन्य कहे गए हैं, उसी प्रकार पशु-पक्षियों के सम्बन्ध में प्रेमोपसेवन आवश्यकीय है। नायिका अथवा प्रेमिका के हाव-भाव (अदाएँ) नायक को आकर्षित करते हैं और प्रेमी की सुन्दरता, पौरुष, क्षमता, दृढ़ता एवं संगीत-प्रियता माशूक को बेचैन कर देती है। यदि सुन्दरी की सलौनी आँखें युवक को अपना सन्देश कह सकती हैं तो शुकी भी अपनी मानसिक सरसता का प्रकाशन अपनी मदमाती अंखियों से कर ही डालती है।

यदि प्रेमी-प्रेमिका का प्रणय-बंधन अँगड़ाइयों[1] के माध्यम से दृढ़तर होता है तो कबूतर-कबूतरी की केलि-क्रीड़ा में मंद-पंख संचालन तथा ग्रीवा का झुकाव सरसता भर देता है। पक्षियों में नर का शरीर मादा से विशेष सुन्दर होता है। उसकी रंगीन देह मादा की रसीली आँखों में उन्माद भर देती है। मयूर (मोर) की आकर्षक काया दर्शक को लुभा लेती है। मोरनी बार-बार इसे देखकर अपने आपको भूल जाती है और मन्मथ-व्यथित हो जाती है। यह रूप-आकर्षण समान भाव से सर्वत्र पाया जाता है। यदि बिहारी[2] की नायिका लाल मनोहर रूप पर रीझती है तो तीतर (Black Partridge) के बहु रंगचित्रित माँसल शरीर को देखते ही तीतरी मुग्ध हो जाती है।

प्रणय-प्रदर्शन में नेत्रों की प्रमुखता मानी गई है। चुम्बन, आलिंगन, नर्तन, गायन, मंद मुस्कान कल्पित कलह, मधुर अलाप, उन्माद, क्रीड़ा लीला-प्रदर्शन आदि की अपेक्षा कजरारे नयन प्रणय लीला की सफलता को शीघ्र ही प्रकट कर देते हैं। गोपियों की प्यासी आँखों ने बता दिया था कि वे कृष्ण की

---

1. दरियाए-हुस्न और भी दो हाथ बढ़ गया।
   अँगड़ाई उसने नशे में ली जब उठा के हाथ।
   —नासिरन

   × × ×

   अँगड़ाई भी वह लेने न पाये थे उठा के हाथ।
   देखा जो मुझको छोड़ दिए मुस्करा के हाथ।
   —निजाम रामपुरी

   × × ×

2. लाल तुम्हारे रूप की, कहौ रीति यह कौन।
   जासौं लागत पलुक दृग लागत पलक पलौ न।
   (बिहारी रत्नाकर, 398)

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बन चुकी हैं। आँखों की भाषा आँखे ही समझती हैं, लेकिन दर्शक भी इसे ताड़ लेते हैं।[1] केलि-रत पक्षियों की चितवन में मादकता, झलकती रहती है। वसन्त ऋतु में सुरभित पवन से पुलकित होकर कोयल, पलीक, देशी मैना, श्यामा, सुभागी, शाह बुलबुल, पतिया फुदकी आदि अनेक पक्षधरों के नेत्र कामुक भावनाओं से चंचल होने लगते हैं। प्रणय-प्रदर्शन की अनेक विधाएँ हैं। जलचर पक्षी अपनी प्रेमिकाओं को आकर्षित अथवा विमोहित करने के लिए जल में डुबकियाँ लगाते हैं। कुछ ऊपर उड़कर शीघ्रता से नीचे आते हैं और पानी में तैरने लगते हैं। कभी-कभी ये पानी उछालते हैं और अपनी प्रेयसी को विविध प्रकार की जल क्रीड़ाएँ दिखाकर विमुग्ध करते हैं। कतिपय विहंग पंखों को फुलाकर, पूँछ को फैलाकर एवं ऊपर उठाकर, नृत्य करके एवं सुरीले गीत गाकर अपनी छबीली को प्रणय-लीला में रसमग्न कर लेते हैं। मयूर का नृत्य मोरनी को आकर्षित करने में सदैव सफल होता है। लावा (Skylark और तूती (Thrush) नामक विहंग गीतों को गाकर प्रियतमा को आकर्षित कर लेते हैं।

प्रणय-प्रदर्शन अथवा प्रेमोपसेवन प्रसुप्त काम-वासना को जाग्रत करने के हेतु किया जाता है। इसके अन्तर्गत नर-मादा का आकर्षक रंग, प्रकाशन, गायन, नर्तन, सुरभि-प्रदान, ऊँची उड़ान, भेंट, जल-क्रीड़ा, नीड़-निर्माण-साहाय्य, पुच्छ-संचालन, भोज-निमंत्रण, कलगी-पंख-फैलाव, आलिंगन, चम्बुन आदि समस्त उद्दीपक चेष्टाएँ एवं साधन आते हैं।

वंजुल घास, Penguins (पक्षी विशेष), कंकड़, (heron) बक, टहनियाँ, (Warbler) कूजिन, पत्तियाँ, भेंट करके अपनी प्रेमिकाओं को रिझाते हैं। यह सब सामग्री नीड़-निर्माण के लिए ही उपयोगी होती है। प्रेयसी प्रमुदित होकर अपने प्रियतम के उपहारों को स्वीकार करती है और घोंसले को सुसज्जित

---

1. नजरें उठीं और उठके झुकीं तमकनत के साथ।
गोया यही जवाब था मेरे सवाल का।
—असर

× × ×

देखो न आँख भर के किसी की तरफ कभी।
तुमको खबर नहीं जो तुम्हारी नज़र में है।
—असर

× × ×

नज़र जिसकी तरफ करके फिर आँखें फेर लेते हो।
क़यामत तक फिर उस दिल की परेशानी नहीं जाती।
—अज्ञात

× × ×

रस सिंगार मंजनु किए कंजनु भंजनु दैन।
अंजनु रंजनु हूँ बिना, खंजनु गंजनु नैन।
—बिहारी

 CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कर सुख की साँस लेने लगती है। बाज़ (Falcon) शीघ्रता से ऊँचे आकाश में पंख फैलाकर इधर-उधर घूमता है और फिर सहसा नीचे आकर अपनी भावी जीवन संगिनी को लुभाने लगता है। Golden eye drake (हिरण्याक्ष) रिझाने के लिए अपने पैरों से जल-बिन्दुओं को अपनी प्रेमिका के मुख पर फेंकता है। वंजुल, मज्जूक एवं अन्य बत्तखें जल में तैरकर, डुबकियाँ मारकर तथा वीचियों के साथ नृत्य करके प्रणयभाव को प्रदर्शित करती हैं।

कुञ्ज-विहंग (Bower-Birds) का प्रणय-प्रकाशन एक आकर्षक रूप में देखा गया है। ये अपनी प्राणवल्लभाओं को आकर्षित करने के लिए एक सुन्दर स्थान पर चमकीले पदार्थों को(चमचमाती हुई पत्ति याँसुनहले पुष्प, सीपियाँ, शंख, हड्डियाँ, आदि) एकत्रित करते हैं और मनोहारिणी ध्वनियों से उनका स्वागत गान करके अपने प्रेमानुभावों को प्रकट कर देते हैं।

प्रणय-प्रदर्शन में यह उल्लेखनीय है कि अनेक भार्याओं को रखने वाले पक्षियों का प्रेमोपसेवन बहुमुखी एवं उत्कट होता है। एक पत्नी से ही संतुष्ट रहने वाले नर-विहंग की प्रेम-लीला में प्रगाढ़ता कुछ काल के लिए रहती है। शनैः-शनैः यह दूध के उफान के समान विलुप्त होकर ऋतु-परिवर्तन के समय पुनः विकसित हो उठती है।

प्रेम-प्रदर्शन या प्रणयाराधन की जिस प्रकार विभिन्न प्रणालियाँ हैं उसी प्रकार प्रणय-स्थान भी अनेक हैं। पादपों की ऊँची शाखाएँ, पर्वतों के शिखर, सर-सरिताएँ, वनोपवन, प्रासाद, कुंज, देवालय, परित्यक्त गृह, नीड़, रेतीले तट, हरित्पल्लवों से अच्छादित वृक्ष, कोटर, झाड़ियाँ आदि प्रणय-केलि स्थल हैं। मज्जूक, बक, बलाका, वंजुल एवं Albotrosses (पक्षी विशेष) नीड़ों में बैठकर अंडों को सेती हुई मादाओं की सहायता करते हैं, उन्हें भोजन लाकर खिलाते हैं और शत्रुओं से शिशुओं की रक्षा करते हैं। इन कार्यों के सम्पादन में ही वे अपना प्रेम दिखाकर सुन्दरियों को अपनी ओर खींच लेते हैं। लेकिन नीड़ों को गुप्त रखनेवाले विहंग घोंसले में बैठकर प्रणय-लीला का प्रारम्भ कभी नहीं करते हैं। ऐसा करने से अन्य कुटिल नभचर नीड़ का ज्ञान करके अबोध बच्चों को या तो खा डालते हैं अथवा मारकर ही सन्तुष्ट हो जाते हैं।

अधिकृत भोजन-क्षेत्र (Food-territory) का प्रणय-लीला में विशेष स्थान है। इसी स्थल में विहंगों का प्रेम-व्यापार आनन्दपूर्वक चलता है। रसदार फलों को भक्षण करके ये नभगामी पृथ्वी पर ही स्वर्ग सुख भोगने लगते हैं। अधिकाँश पक्षी अपने बल से कुछ क्षेत्र पर अपना अधिकार कर लेते हैं। यह स्थान अनेक सुविधाओं से सम्पन्न रहता है। यहाँ जल भी सुलभ होता है और विविध प्रकार के मिष्ठ फल थोड़ी-सी उड़ान में ही प्राप्त हो जाते हैं। सुख-साधन-परिपूर्ण क्षेत्र पर अधिकार करके गायक पक्षधर उल्लास के गीत गाते हैं। इनके माध्यम से वह मादाओं को निमंत्रित करता है और अन्य विहंगों को सूचना देता है कि बिना आज्ञा के स्थान-प्रवेश निषिद्ध है। प्रेमिकाएँ ऐसे सुखमय क्षेत्रों में अपने प्रेमियों को पाकर भाग्यशालिनी बन जाती हैं। जिस प्रकार मानवों पर ऋतुओं, सुन्दर स्थलों एवं मनोनुकूल वातावरण का प्रभाव पड़ता है उसी प्रकार पशु-पक्षी भी उनसे प्रभावित होते रहते हैं। वासंती पवन, मानस को सुन्दरी के चुम्बन के लिए विवश कर देती है। श्यामल जलधर पावस के प्रांगण में जब इठलाते हैं तब

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तपस्वी भी मन्मथ-व्यथित हो उठते हैं। पशु-पक्षियों की कामोदीप्ति पर सुलभ-सुख-उपादनों तथा पर्याप्त भोजन-प्राप्ति का भी प्रभाव पड़ता है। बुभुक्षित मन में न संभोग-इच्छा होती है और न रमणी के प्रति आकर्षण झलकता है।[1] पतझड़ तथा मधु-ऋतु में मधुर फल-फूलों को खाकर विहंग मदभरी अंगड़ाइयाँ लेने लगते हैं। ऐसी स्थिति में शरीर यौवन-उभार से चंचल हो उठता है। यह शारीरिक चांचल्य प्रणय-क्रीड़ा का आधार माना गया है।

समादरणीय पं० द्वारकाप्रसाद मिश्र ने वसन्त के मधुमय वातावरण से उल्लसित पक्षियों की मनसिज-उद्दीप्त प्रणय-चेष्टाओं का सुन्दर चित्रण किया है——

कुसुमित मधु-निधि माधवी, कुसुमाकर-शृंगार।
पुलकित लहि अंग-संग अनिल, अलि-चुम्बन-गुँजार।
मही सुमन, सरि सर सुमन, शून्यहि सुरभि प्रसार।
बसेउ सुमनशर मिस सुमन, मनहुँ छाय संसार।

नव उत्कण्ठा विह्वल प्राणी
स्वरित विपिन विहगहु बहुवाणी।
गावत मधुर मंद ध्वनि खंजन।
पिउ! पिउ! रटत पपीहा वन-वन।
पर्ण निकुँज पुत्र-प्रिय हूकत।
भरि स्वर हृदय-हूक जनु फूँकत।
हेमकार निज ठुक, ठुक-माता,
प्रकटत उर मनसिज-आघाता।
विहरत व्रतति पुञ्ज अति चंचल,
गावत भृंगरोल नीलोज्ज्वल।
बिन्दुरेखहु कुँजन गावत।
छादन छहरि सुछवि दरसावत॥

सघन पर्णपुट पुरि तन्वंगिनि।
भरति हृदय मधुराग सुभाषिणी।

---

1. भुखिया के मारे विरहा बिसरिगा।
भूल गए कजरी कबीर।
गोरी के उठते देख जोवनवा।
उठै न कलेजवा में पीर।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बरसत दहियर प्राण उमंगा।
प्लावित महि गिरि, नभ स्वर-गंगा।

दोहा—कूजति, क्रीड़ति मंजरिन, कोकिल अलि-कुल-संग।
वादत जनु जय-दुन्दुभी, विजयी भुवन अनंग।

धृत कहुँ परिणय-हित नव चीरा
खोजत चातक प्रियहिं अधीरा।
कतहुँ पंचदश मिलि इक संगा।
जुरे स्वयंबर हेतु भोजंगा।
गाय गाय सब प्रिया रिझावत।
गावत अधिक बधू सोइ पावत।
नाद-होड़ जनु फिरि फिरि होई।
सब निज कहत सुनत नहिं कोई।
नीलकण्ठ बँधि मनसिज-पाशा।
प्रेयसि-संग उड़त आकाशा।
रीझि रिझावत उड़ि विधि नाना।
स्वरित प्रणय-आदान-प्रदाना।
शुक-ढिग शुकिहु मनोभव-भोरी।
प्रकटति छवि बहु विधि अँग मोरी।
शुकहु रीझि शुक-शिर सोहरायी।
प्रकटत मुद पुट चंचु मिलायी।

दोहा—मृगहु शृंग-सोहराय मृगि, रहेउ पुलक उपजाय।
कुसुम-चषक मधु प्रेयसिहि, मधुपहु रहेउ पियाय।

(कृष्णायन, द्वारकाकाण्ड पृ० 252-253)

पक्षी-विशेषज्ञों का कथन है कि प्रेमोपसेवन (courtship) पशुओं की अपेक्षा पक्षियों में बहुधा प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। विशेषत: पशुओं का गर्भाधान-काल निश्चित रहता है। गर्भ-स्थिति के पश्चात् मादा की कामेच्छा मंद अथवा कुछ काल के लिए नष्ट हो जाती है। नर-पशु भी संभोग-ऋतु में सन्तुष्ट होकर एकान्तवास करने लगता है। अनेक महीनों के पश्चात् शिशुओं को जन्म देकर मादा उनके पालन-पोषण में रत हो जाती है। इस काल में भी उसकी विषय-वासना कुछ समय के लिए अस्तित्व-हीन हो जाती है। इस प्रकार का काल-प्रतिबन्ध पक्षियों में नहीं देखा गया है। इसके अतिरिक्त विहंगों में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नर-मादा का पारस्परिक आकर्षण कुछ अंशों में आवश्यक है। अवाञ्छित नर पक्षी को मादा अपने समीप आने ही नहीं देती। लेकिन पशुओं का प्रेम-बन्धन पूर्णरूपेण आकर्षण का परिणाम नहीं कहा जा सकता। प्रतिद्वन्द्वियों को कठोरता के साथ पराजित करके बलवान पशु मादाओं को अपने वश में कर लेता है और उन्हें विवश होकर अपनी प्रज्वलित कामाग्नि को शान्त करने के लिए इस विजयी नर पशु का आश्रय लेना पड़ता है। पौरुष नारी के लिए सहज आकर्षण है। प्राचीन काल में वीरों को सुन्दरियाँ लालायित होकर अपना जीवन साथी बना लेती थीं। आज भी कतिपय वन्य जातियों के विवाह के अवसर पर युद्ध का रूप प्रदर्शित किया जाता है और वर को विजयी घोषित करके उसके गले में वरमाला भावी पत्नि द्वारा डलवाई जाती है। विहंग-समाज की प्रणय-लीला में प्रायः नर पक्षी अपनी केलि की क्षेत्र-सीमा निर्धारित कर लेता है। इसमें प्रवेश करने वाले पक्षियों को वह अपना शत्रु मानता है और युद्ध करके उन्हें बाहर कर देता है। पूरा आधिपत्य स्थापित कर वह साहसी नभचर अपनी विजय के स्वयं गीत गाता है और भावी प्रेयसी को आमंत्रित करता है। मादा पक्षी अपने सहचर के साथ रहकर स्व-जीवन को आनन्दमय बनाती है।

बया पक्षी का प्रणय-प्रदर्शन बड़ा ही सार्थक है? जिसके पास घर ही न हो वह गृहिणी कैसे रख सकता है। सुन्दरी भी सुन्दर आवास की इच्छुका रहती है। बया नारी की इस सहज भावना को अच्छी तरह से समझता है। अतः वह सुखद एवं आकर्षक नीड़ों को बनाकर उनमें यथा समय बैठता है और प्यार भरे शब्दों से युवतियों (बया युवतियों) को अमंत्रित करता है। बया-सुन्दरी नीड़ में प्रवेश करके उसकी कलात्मकता को ध्यान से देखती है। प्रभावित होने पर वह उसमें रहने लगती है और बया उसे अपनी पत्नी बनाकर सुख की नींद सोता है। इस प्रकार यह पक्षी तीन-चार सहचरियों के साथ अपना सीमित जीवन व्यतीत कर लेता है।

पक्षियों की भाषा अर्थहीन नहीं होती। उसमें उल्लास, संताप, क्रोध, विरह, प्रेम, स्नेह आदि के प्रकाशन की पूर्ण सामर्थ्य है। काम पीड़ित होने पर उनकी ध्वनि सब प्रकार के प्रणय भावों को प्रकाशित करने लगती है। जिस प्रकार विहगों के प्रेम-प्रदर्शन की विभिन्न शैलियाँ हैं उसी प्रकार पशु जगत में प्रणय-बन्धन के अनेक रूप हैं। मृगेन्द्र अपने पराक्रम से सिंहनी को मुग्ध करता है। उसके इस प्रेम-परिचय में यदि कोई बाधक बनता है तो उसे वह जीवित नहीं देख सकता। चुम्बन, कंपन, आलिंगन, साहचर्य, परिरंभण, दंशन, नैराश्य, विकलता, चिंतन, क्रीड़न आदि प्रणय-प्रदर्शन के साधन बताये गए हैं। कुछ अंशों में प्रत्येक प्राणी-समाज में ये सब एक रूप हैं पाए जाते हैं।

वन भैंसा काम व्यथित होने पर जमीन पर पैर पटकता हुआ एक प्रकार की ध्वनि करता है और भैंस के शरीर को अपने सींगों से खुजाने लगता है। कभी-कभी वह अपनी जीभ से उसके (भैंस के) मुँह को भी चाटता है। इसी प्रकार हरिण (Black Buck) साँभर एवं बारहसिंगा मादाओं को अनेक प्रकार से अपनी ओर आकर्षित करते हैं। अपने प्रतिद्वन्द्वियों को वे लड़कर भगाते हैं और उनको अपनी प्रेयसियों के समीप भी नहीं आने देते हैं। इस प्रकार वे अपनी प्रेमिकाओं को पूर्ण रूपेण प्यार करते हुए अपना जीवन बिताते हैं। हाथी, हथनियों को हरे-भरे जंगलों में लेजाकर उन्हें पर्याप्त सुख देकर तथा अपनी सूंड से उनके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शरीर को मलकर अपने प्रणय का परिचय देता है ।[1]

गर्दभ ग्रीष्म-काल में तप्त धूलि में लेटकर, कभी-कभी दुलत्ती झाड़ कर, गर्दभी के अनेक अंगों को काटकर एवं हेंचूँ-हेंचूँ-कहकर अपने प्रणय को दिखाता है । पद-बंधन, लाठी-प्रहार तथा पत्थरों की सतत मार भी इस सुरति-प्रदर्शन में बाधक नहीं बनती है—

पट-पट टूटत लट्ठ लला तब रें-रें रेंकत ।
तोरि अगाई और पिछाई लातें फेंकत ।
हेंचूँ-हेंचूँ करत-धरत कछु बनि नहिं आवत ।
बैठत, लेटत, उठत कबौं इत-उतकों धावत ।
चर-चर चर्रत घास पियत पानी पोखर को ।
न्हात सिहात अघात रात कों पोंचत घर को ।
रेंक-रेंक कबहूँ घरनी को राग सुनावत ।
कबहूँ दम्पति साधि-साधि, सुर हिल मिल गावत ।

(गर्दभ-गान, महाकाव्य)

प्रणय-प्रदर्शन जीवन-सहचर अथवा सहचरी की प्राप्ति का अव्यर्थ साधन है ।

---

1. घास पात जे खात हैं, तिन्हें सतावै काम ।
दूध मलाई जे भखैं, तिनकी जानै राम ॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय लोक-काव्य में पशु-पक्षी

लोक-काव्य जन-जीवन का सच्चा परिचायक है। इसमें सहजता, सरसता, एवं सर्व सुलभ कोमलता है। यह काव्य ग्राम के बौर के समान सुरभित, मयूर की ध्वनि के समान उन्मादक, कोयल की कूक की भाँति सुमधुर, पपीहा की पुकार के सदृश संमोहक एवं सूर्य की पहली किरण के समान संदेश-वाहक है। प्रत्येक शिष्ट-साहित्य की आधार भूमि यही लोक-काव्य है। सागर के समान असीमित, गगन के समान विस्तृत, तारिकावली की भांति अनन्त तथा हरियाली के सदृश नित-नूतन यह लोक-काव्य वेदों से भी पुरातन और ईश्वर कल्पना से भी अधिक गूढ़तर है। इस पुनीत काव्य का उद्गम मानव-मानस है। इसमें व्यक्तित्व का पूर्ण अभाव और समष्टि की पूर्ण कल्पना है। जिस प्रकार भगवान के विराट् स्वरूप में जड़-चेतन मय सम्पूर्ण सृष्टि समाहित है उसी प्रकार इस काव्य में भूतल का कण-कण विद्यमान और वाचाल है। मानव-जीवन के सुख-दुख, राग-विराग, आदर्शवाद व यथार्थ-वाद, जन्म, मरण विश्वास, मान्यताएँ, धारणाएँ, विरति, विवेक, उत्थान-पतन, हर्ष परितनाप, जवानी का अल्हड़पन, बुढ़ापे का नैराश्य, आदि सब कुछ इस लोक-काव्य की साँसों में प्रतिध्वनित हो रहा है। इस सहज कविता में धरती की धूलि पवित्र बनी है, पर्वत के समुन्नत शिखर उल्लसित हुए हैं, पादपों के कोमल किसलय वायु के झोकों से पुलकित बने हैं और पाषाण भी पीर से द्रवित हुआ है। विश्व का वह कौन मन है जो इस रसीले काव्य को पढ़कर न झुका हो। पशु-पक्षियों का जगत तो इस कविता की साँसों में सदैव से जीवित है। कहते हैं एक समय था जब पशु एव पक्षी मानव-वाणी में अपने विचारों को प्रकट करते थे। लोक-काव्य में तो आज भी ये मूक प्राणी मानव की भाषा में बोल रहे हैं, मानव-जगत की अपेक्षा पशु-पक्षी संसार इस काव्य में अधिक सप्राण बना है। इसमें तोता संदेशवाहक है, कोयल उदास मन को गाना सुनाती है, मैना रात में बैठकर किस्सा कहती है, कौआ विदेश में गए हुए प्रिय का संदेश सुनाता है, तोता रामायण की चौपाइयों का पाठ करता है, सारस विरहिणी को अपने पंखों पर बैठाकर आकाश में उड़ता है, मयूर कन्या की शादी में ताली बजाकर नाचता है, चिरैया विदा के समय रोती है, मृग अपने सिर पर लकड़ियाँ रखकर जंगल से आता है, हाथी सौभाग्यवती कन्या को पीठ पर बैठाकर झूमने लगता है, शेर हल में जुत कर खेत जोतता है, घोड़ा वर की सुहावनी सूरत पर रीझता है, और पपीहा पीउ-पीउ की बोली सुनाकर युवती के मन को विकल करता है। हमारा यह काव्य पनघट पर मचलता है, खेतों की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मेढ़ों पर सरस बनता है, चक्की की घर्र-घर्र से आमोद पाता है, घाटियों के उतार-चढ़ाव पर फिसलता है, तालों के लहरों पर नाचता है, अमराइयों में कूकता है, खलिहानों में अट्टहास करता है, लजीली नवोढ़ा के स्वर में तुतलाता है, डांगों में किलकता है, और झोपड़ियों में सुख की नींद सोता है। यही काव्य पावस में बूंद बनकर आकाश में छा जाता है और जरा-सा धक्का खाकर प्यासी धरती के मुँह में बरस पड़ता है। शीत की रातों में यह मानस-काव्य कभी विरहिणी की आह बन जाता है तो कभी प्रियतम की कोमल बाहों में लिपटकर कपोल की लालिमा में परिणत हो जाता है। वसन्त की मादकता में यह ललित काव्य कलिका के रूप में जन्म लेकर एक ही रात में कुसुम बनकर पवन की गति में मंदता ला देता है और रंगीला होली के आते ही यह जीवन का काव्य अब गुलाल और रंगीली पिचकारी में एकाकार होकर सबको अनंग-रस-रंग से प्रफुल्लित कर देता है। ग्रीष्म की तप्त बयार में यह कभी चोली का पसीना बनता है तो कभी मलमल की साड़ी बनकर चम्पा से गोरे शरीर पर लिपट जाता है। इस प्रकार अनेक अवतारों में अवतरित होकर इस नित नव्य-भव्य काव्य ने विश्व के प्रत्येक जीवन से स्पर्श किया है।

वस्तुतः लोक-गीत धरती के गीत हैं, ये जीवन के गीत हैं, ये विजय के गीत हैं, मंगल के गीत हैं और ये हमारी आशा के गीत हैं। जनता के द्वारा रचे गए जनता के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले ये गीत जनता की ही सम्पत्ति हैं। इसी कारण सुप्रसिद्ध विद्वान् ग्रिम न लोक-गीतों की परिभाषा बतलाते हुए इसे जनता के लिए रचा गया जनकाव्य कहा है।[1]

पूज्य बापू के शब्दों में लोक-गीत समूची संस्कृति के पहरेदार हैं। इनमें धरती गाती है, पहाड़ गाते हैं, नदियाँ गाती हैं, फसलें गाती हैं, उत्सव और मेले, ऋतुएँ सभी गाती हैं।[2]

सुप्रसिद्ध लोक-साहित्य-मर्मज्ञ श्री देवेन्द्र सत्यार्थी जी लिखते है—"लोकगीत प्रकृति के उद्गार हैं। इनमें अलंकार नहीं केवल रस है। छन्द नहीं केवल लय है। लालित्य नहीं केवल माधुर्य है। प्रकृति जब-जब तरंग में आती है तब वह गान करती है। उसके गीतों में हृदय का इतिहास इस प्रकार व्याप्त रहता है जैसे प्रेम में आकर्षण, श्रद्धा में विश्वास और करुणा में कोमलता। प्रकृति के गाने में मनुष्य समाज इस प्रकार प्रतिबिम्बित होता है जैसे कविता में कवि, क्षमा में मनोबल और तपस्या में त्याग। प्रकृति संगीतमय है। ग्रहगण एक नियत कक्षा में फिरकर उस संगीत का कोई स्वर सिद्ध कर रहे हैं। झरनों का अविराम छल छल नाद, पत्तों की मर्मर ध्वनि, चंचल जल का कलकल, मेघ का गरजन, पानी का छमाछम बरसना, आँधी का हाहाकार, कलियों का चटकना, विक्षुब्ध समुद्र का महारव, मनुष्य की भिन्न-भिन्न भाषाएँ और विचित्र उच्चारण, खग-पशु, कीट-पतंग आदि की बोलियाँ—ये सब उस संगीत के सहायक मन्द्र और तार, स्वर और लय है। बज्रपात काम है और नदियों का प्रवाह मूर्च्छना। लोक-गीत प्रकृति के उसी महासंगीत के अंश हैं।

---

1. A Ballad is the poetry of the people by the people for the people. (लोक साहित्य की भूमिका—ले० डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय, पृष्ठ 273।)

2. धरती गाती है—ले० देवेन्द्र सत्यार्थी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लोक-गीतों की स्वाभाविकता, अकृत्रिमता और सरलता के सम्बन्ध में फ्रान्सिस गूमर का कथन कितना समीचीन है कि लोक-गाथाओं का महत्त्व केवल इसी बात में नहीं है कि उनमें अकृत्रिम काव्य भावना उपलब्ध होती है। वे परम्परा की भाषा में ही अपनी अभिव्यक्ति नहीं करते प्रत्युत जन-समूह की वाणी द्वारा प्रकाशन करते हैं। उनमें किसी प्रकार भी गोपनीयता नहीं पायी जाती। जो वस्तु जैसी है उसका यथातथ्य रूप में वे वर्णन करते हैं। वे स्वतन्त्र हैं तथा खुली हवा की भाँति ताजे हैं। वायु और सूर्य का प्रकाश उनमें खेल करता है।[1]

जैसा कि पूर्व में निवेदन किया जा चुका है कि लोक-काव्य में पशु-पक्षियों का जितना स्वाभाविक रसपूर्ण एवं मनोरम चित्रण हुआ है उतना अन्यत्र मिलना कठिन है। इनका समीचीन मानवीय रूप हमें इसी काव्य में उपलब्ध हुआ है। लोक-जीवन में इन मूक जीवों के प्रति अत्यधिक आत्मीयता है। नारी-समाज ने तो इन नभचरों एवं थलचरों को अपने हृदय से लगाया है। इनके उपकारों से यह कोमल हृदय-समाज इतना द्रवीभूत है कि उसने अपने आभूषणों को, वस्त्रों को गृहों को केलि-गृहों को, मंदिरों को, गृह-द्वारों को, भित्तियों को, प्रासादों को, कलाओं को यहाँ तक कि अपने गुलाबी कपोलों को, उन्नत ललाट को, सलौनी नाक को एवं कलित कलेवर को इन जीवन-सहचरों की विभिन्न आकृतियों से सुसज्जित किया है। एक बुन्देली युवती की अँगिया पर तो पपीहा, मोर, चिरवा, चकोर, तोता, कोयल आदि अनेक पक्षियों के चित्र चित्रित हैं—

जीमें लिखे पपीरा मोरें,
ऐसी अँगियाँ तोरें,
मुकते लाल मुनैयाँ लिपटे,
चिरवा चारु चकोरें।
पीरी हरी चिरैयाँ चिपकी,
सुआ मुस्क मुख मोरें,
बूंटा भरे भुजन पै भारी,
बेलन बाँदी कोरें।
कायल करन कुयलियाँ 'ईसुर',
दो छाती के दोरें।

जिसमें पपीहा और मोर चित्रित हैं, ऐसी तेरी अंगिया है।

इस पर बहुत से लाल मुनैयाँ (पक्षी विशेष) चिरवा सुन्दर चकोर, हरी पीली चिड़ियाँ एवं पीछे की ओर (मुड़कर) देखते हुए तोते अंकित हैं। भुजाओं पर गहरे बेल-बूटे हैं तथा किनारों पर भी बेलें खींची गई हैं। विवश करने वाली कोयलियों के चित्र दोनों छातियों पर बनाये गए हैं।

---

1. लोक साहित्य की भूमिका—पष्ठ 273.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसी प्रकार पक्षियों से आत्मीयता स्थापित करती हुई एक सुन्दरी दर्जी से कहती है—मेरी चोला पर चार चिड़ियाँ और दो मोर अपनी सुई से बना दो।

मोरे पिछवारे दरजिया की बखरी,
अच्छी-अच्छी चोलिया सिलायो जी।
असकै सुइया चलाये दरजिया,
चारि चिरैया दुइ मोरैं जी।
कहवाँ बनावों चारि चिरैया,
कहँवा बनाओं दुइ मोरैं जी।
अँगिया बनाओ चारि चिरया,
अँचरे बनाओ दुइ मोरैं जी।

—मेरे मकान के पीछे एक दरजी रहता है। वह अच्छी-अच्छी चोलियाँ सीता है। दरजी ! मेरी चोली पर इस प्रकार सुई चलाओ कि उस पर चार चिड़ियाँ और दो मोरें (मयूर) चित्रित हो जायं।

दरजी पूछता है—कहाँ चार चिड़ियाँ चित्रित करूँ और कहाँ दो मोर बनाऊँ ?

युवती कहती है—अँगिया पर चार चिड़ियाँ बना दो और आँचल पर दोनों मोरों को चित्रित कर दो।

चोली अथवा अँगिया पर पक्षियों के चित्र काढ़ने की बात को आपने सुन ही लिया है। कतिपय युवतियाँ इन पक्षधरों की ओर इतनी अधिक आकर्षित हुई हैं कि वे क्षण भर के लिए भी अपने पास से इनको दूर नहीं करना चाहतीं। इसीलिए वे अपने शरीर पर कभी तोते को गुदवाती हैं तो कभी मोर को। गुदवाने की कला का एक समय विशेष आदर था। अच्छे-अच्छे रसिक लोग इस कला को सीख कर दिल के अरमानों को पूरा करते थे। केवल राधिका के कर-स्पर्श के लिए रास-बिहारी कृष्ण ने गोदनहारी का रूप धारण किया था। रसीली आँखों का कहना है कि गोरे शरीर पर गुदना विशेष आकर्षक लगता है।

—गुदना गोरे गाल में नीकौ।
मन मोहन सब ही कौ।
कै पूरन पूनौ के शशि में,
कुरा जमो रजनी कौ।
गरल बुन्द धर कंठ विराजत,
कै पति पारवती कौ।
कै निर्मल दरपन के ऊपर,
सुमन धरौ अरसी कौ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ईसुर कग्रत मुख लखत स्यामरो,
राधा चन्द्रमुखी कौ ।

—गोरे गाल पर गुदना अच्छा लगता है। यह सबके मन को हर लेता है। गौर कपोल पर गोदना ऐसा लगता है मानो पूर्णिमा के पूर्ण चन्द्र में निशा का अंकुर उगा हो, अथवा पार्वती-पति का विष-बिन्दु समन्वित कंठ हो, अथवा निर्मल दर्पण पर अलसी का फूल सुशोभित हो रहा हो। ईसुरी कहते हैं कि चन्द्रमुखी राधिका के मुख को श्री कृष्ण टकटकी लगाकर देखते हैं। देवी-देवताओं के चित्रों को खुदवाने की प्राचीन प्रथा है, लेकिन कानन निवासी आदिवासियों में पशु-पक्षियों के चित्रों द्वारा शरीर को विशेष सुन्दर करने की अधिक प्रवृत्ति देखी गई है। वे शेर, चीता, हाथी, हरिण, मोर, तोता, सारस, आदि के चित्रों को अपने शरीर के विविध अंगों पर खुदवाते हैं और चुभती हुई सुई के कष्ट को हँसते-हँसते सह लेते हैं। यह भावना आदिवासी युवक एवं युवती में समान रूप से व्याप्त है। इस प्रकार का पशु-पक्षी प्रेम आज सभ्यता के युग में भी देखा जा सकता है।

निम्नस्थ गीत में एक सुन्दरी गोदनहारी से कतिपय पक्षियों के चित्रों को अपने विभिन्न अंगों पर गोदने के लिए कह रही है। साथ ही साथ वह यह भी बता रही है कि किस पक्षी को किस पात्र में जल पिलाया जायेगा और किस खग को भोजन में क्या दिया जावेगा। इन नभचरों को जल-पिलाना और स्वादिष्ट भोजन खिलाना भारतीय संस्कृति में धार्मिक महत्त्व रखता है। एक लोकगीत में बताया गया हैं कि गंगा-माता ने पुत्र के लिए प्रार्थना करने पर वन्ध्या से कहा है कि वह नित्यप्रति चिरैयों को जल पिलावे और मोती चुगावे, ऐसा करने से उसकी सूनी गोद भरेगी। पुत्र-प्राप्ति के लिए लालायित नारी ने गंगा के आदेश को स्वीकार किया और वह पुत्रवती हुई।

—कहमा गोदयवइ में रतन चिड़इया, रतन सूगना,
कहमा गोदयवइ दुइ मोर रे, मुजुरवा के उड़यले जाये ?

जोवना गोदयवइ में रतन चिड़इया रतन सूगना,
जंघिया गोदयवइ दुइ मोर रे, मजुरवा के उड़यले जाये ?

किय जल देवइ में रतन चिड़इया, रतन सूगना।
किय जल देव दुइ मोर रे मजुरवा के उड़यले जाये ?

लोटा जल देवइ में रतन चिड़इया रतन सूगना,
झारी जल देव दुइ मोर रे मजुरवा के उड़यले जाये ?

किय भोजन देवइ में रतन चिड़इया रतन सूगना,
किय भोजन देव दुइ मोर रे मजुरवा के उड़यले जाये ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चूरा भोजन देवइ में रतन चिड़इया रतन सूगना,
दही भोजन देव दुइ मोर मजुरवा के उड़यले जाये ?
कहमा सुनयवइ में रतन चिड़इया रतन सूगना,
कहमा सुतयवइ में दुइ मोर रे मजुरवा के उड़यले जाये ?
अँखिया सुतयवइ में रतन चिड़इया रतन सूगना,
हिरदय लगयवइ दुइ मोर रे, मजुरवा के उड़यले जाये ?

—कहाँ रतन चिड़ियाँ और रतन सुग्गा गुदवाऊँगी और कहाँ मयूर तथा मयूरी चित्रित होंगे ? दोनों जोवन पर रतन चिड़िया और रतन सुग्गा गोदवाऊँ गी और जांघ पर मयूर तथा मयूरी चित्रित होंगे ? किस वस्तु में रतन चिड़िया और रतन सुग्गे को जल दूंगी और किस वस्तु में मयूर और मयूरी को ? लोटे में रतन चिड़िया और रतन सुग्गे को जल दूँगी और झारी में मयूर तथा मयूरी को। रतन चिड़िया और रतन सुग्गे को कौन-सी वस्तु खाने को दूँगी और मयूर-मयूरी को क्या खिलाऊँगी ? रतन चिड़िया और रतन सुरंगे को चिउड़ा खिलाऊँगी और मयूर तथा मयूरी को दही। रतन चिड़िया और रतन सुग्गे को कहाँ सुलाऊँगी और मयूर तथा मयूरी कहाँ सोयँगे। आँखों की सेज पर रतन चिड़िया और रतन सुग्गे को सुलाऊँगी और दिल के पलंग पर मयूर तथा मयूरी सोयेंगे। ('लोक-साहित्य में पक्षी-वर्णन'—श्री राकेश)

धन्य है उस भारतीय ललना को जो आँखों की सेज पर रतन चिड़िया और रतन सुग्गे को सुलाती है। परम सौभाग्यवती वह भारत की सुन्दरी है जो दिल के पलंग पर मयूर तथा मयूरी को सुलाकर शांति का अनुभव करती है।

पंछी भये न पंखन बारे, इतनी जाँगाँ हारे।
सांसन में हो कड़ कड़ जाते, चाते नाहीं द्वारे।
सब सब रातन मजा लूटते, परते नाहीं न्यारे।
'ईसर' उड़कें मिलो मित्र से, जाँ हुयँ यार हमारे।

बुन्देलखंड के लोक-कवि—ईसरी

हमारा देश अहिंसा का प्रतीक है इसलिए मूक पशु-पक्षियों को यहाँ सदैव स्नेहसिक्त आदर प्राप्त हुआ है। यही हमारा देश है जहाँ का किसान अपने खेत की रखवाली करता हुआ गाता है—

राम की चिरइयाँ,
राम जी कौ खेत।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खाव री चिरइयाँ,
भर-भर पेट।

× × ×

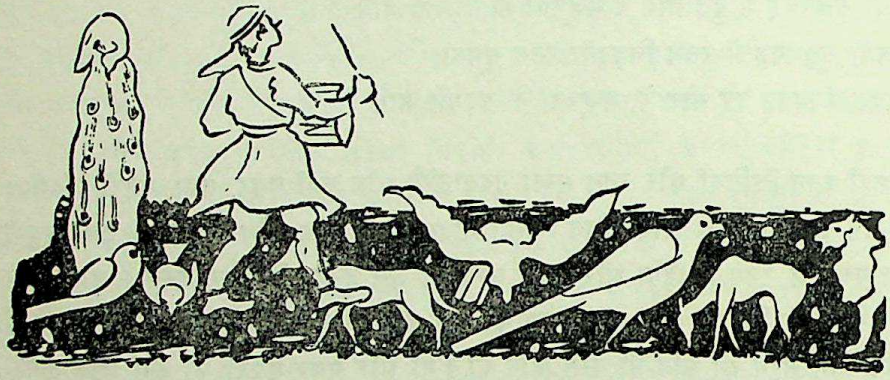

यही भारत है जहाँ पक्षियों एवं पशुओं की पूजा होती है और उनके संरक्षण के लिए पूर्ण प्रयास किया जाता है। गाय और शेर का स्नेह असंभव है। कहा जाता है कि ऋषि-वनों में एक ही पेड़ के नीचे मोर, सर्प एवं गौ और शेरनी दुपहरिया बिताते थे लेकिन लोक-काव्य के आँगन में आज भी बाघ हिरन से खेलता है और बकरी को अपनी पीठ पर बैठाता है। यहाँ गाय का बच्चा सिंह को मामा कहता है और दयालु शेर गाय को अपनी बहन मानकर स्नेह से पुलकित हो उठता है। राम राज्य की पुरातन अहिंसा-भावना इन लोक-गीतों में आज भी साकार है। यह 'गाय-शेर' का गीत विभिन्न प्रदेशों में सम्बन्धित प्रान्तीय बोलियों के कलेवरों में परिवद्ध होकर नाना रूपों में प्रचलित है लेकिन मुख्य भाव सब में समान हैं। गीत का बुन्देली रूप यहाँ दिया जा रहा है, जिसे देवी के भक्त आनन्द-विभोर होकर गाते हैं—

दिन की ऊँघन किरन की फूटन, सुरहिन बन को जाय हो माँ
इक बन चालीं सुरहिन दुज बन चालीं, तिज बन पौंची जाय हो माँ
कजली बन माँ चन्दन हरो विरछा, जाँ सुरहिन मों डारो हो माँ
इक मों घालो सुरहिन दुज मों घालो, तिज मों सिंघा गुंजार हो माँ
अब की चूक बगस बारे सिंघा, घर बछरा नादान हो माँ
को तोरो सुरहिन लाग-लगनियाँ, को तोरो होत जमान हो माँ
चन्दा सुरज मोरे लाग लगनियाँ, बनसपति होत जमान हो माँ
चन्दा सुरज दोइ ऊँगे अथैवें, बनसपति झर जाय हो माँ
धरती के बासक मोरे लाग लगनियाँ, धरती होत जमान हो माँ
इक बन चालीं सुरहिन दुज बन चालीं, तिज बन बगर रम्हानी हो माँ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बन की हेरीं सुरहिन टगरन आईं, बछरे राम्ह सुनाई हो माँ
आयो आयो बछरा पीलो मेरो दुधुआ, सिंघा बचन हार आई हो माँ
हारे दुधुआ न पियों मोरी माता, चलों तुमारे संग हो माँ
आँगे आँगे बछरा पीछें पीछें सुरहिन, दोऊ मिल बन को जाँय हो माँ
इक बन चालीं सुरहिन दुज बन चालीं, तिज बन पौंची जाय हो माँ
उठ उठ हेरे बन के सिंघा सुरहिन आज न आई हो माँ
बोल की बाँदी बचन की साँची, एक सें गई दो से आईं हो माँ
पैलो ममइयाँ हमईं को भख लो, पीछे हमाईं माय हो माँ
कोने भनेजा तोय सिख-बुध दीनीं कोन लगो गुर कान हो माँ
देवी जालपा सिख-बुध दीनीं, बीर लंगर लगे कान हो माँ
जो कजली बन तेरो भनेजा, छुटक चरो मैदान हो माँ
सौ गऊ आगे सौ गऊ पाँछे, होइयो बगर के साँढ़ हो माँ

जालपा देवी के सन्मुख इस गीत को गाते हुए एक किसान भाई ने बताया था कि देवी मैया ने हिंसक शेर के मन में दया उत्पन्न की और वह गाय को न खा सका। श्री देवेन्द्र सत्यार्थी ने इस लोकप्रिय बुन्देली लोक-गीत का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार किया है—

—दिन (सूर्य) उदय हो रहा है, किरणें फूट रही हैं। गाय बन को जा रही है। अहो माँ। एक वन चली, गाय ने दूसरा वन भी पार किया, वह तीसरे वन में जा पहुँची—अहो।

माँ कजली वन में चन्दन का वृक्ष है। जहाँ (पहुँचकर) गाय ने मुँह डाल दिया—अहो माँ।

एक बार मुँह डाला, दुबारा मुँह डाला, तीसरी बार मुँह डालने लगी कि सिंह दहाड़ उठा। अहो माँ।

'इस बार मेरी चूक बख्श दो, बारे सिंह, घर में बछड़ा नादान है'—अहो माँ। 'कौन तेरा गवाह होगा, ओ गाय ? कौन होगा तेरा जामिन ?' अहो, माँ। चांद और सूर्य मेरे गवाह हैं। वनस्पति होती है मेरी ज़ामिन ! अहो माँ। चाँद और सूर्य दोनों उदय और अस्त हुआ करते हैं। वनस्पति भी झड़ जाया करती हैं। अहो माँ।

'धरती का वासुकी नाग मेरा गवाह है। धरती होती है मेरी ज़ामिन !' अहो, माँ। एक वन चली, गाय ने दूसरा वन पार किया, तीसरे बन में, बगर में, पहुँचकर वह रंभाने लगी। अहो माँ। इस वन को देख-भाल कर गाय ग्राम के करीब पहुँची।

उसने बछड़े को रँभा सुनाया—अहो माँ। आओ मेरे बछड़े आओ दूध पी लो। मैं सिंह को वचन दे आई हूँ ! अहो माँ।

वचन दिया हुआ दूध तो मैं न पीऊँगा, ओ मेरी माता। मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा अहो माँ।

आगे-आगे बछड़ा चल रहा है। पीछे-पीछे गाय, दोनों मिल कर वन को जा रहे हैं—अहो माँ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक बन चली गाय ने दूसरा वन पार किया। वह तीसरे वन में आ पहुँची ! अहो माँ उठ-उठ कर सिंह ताक रहा है।

गाय अभी तक नहीं आई—अहो माँ (लो) वह बोल की बँधी और वचन की सच्ची निकली। अकेली गई थी, और दो होकर आई। अहो, माँ।

'पहले ओ मामा मुझे खालो, पीछे मेरी माँ को !' अहो माँ।

'किसने ओ भानजे तुझे यह सीख यह बुद्धि दी ? किस गुरु ने तेरे कान में मन्त्र दिया ?' ऊहो माँ।

'जालपा देवी ने मुझे सीख और बुद्धि दी है। वीर लँगूर (देवी का सेवक) ने कान में मन्त्र दिया।' "यह कजली वन (अब से) तेरा है, ओ भानजे ! स्वच्छन्दता पूर्वक मैदान में चरते फिरो अहो माँ।" एक सौ गाएँ आगे रहें एक सौ पीछे; तुम बगर के सांड़ बनो"—अहो माँ।

(मधुकर)

इस गीत से भी विशेष प्रभावक हरिणी का गीत है। यह (गीत) भी विभिन्न प्रान्तीय बोलियों में साधारण परिवर्तनों के साथ उपलब्ध है। इस में गुम्फित कथा इस प्रकार है—

ढाक (पलास) के पेड़ के नीचे हरिनी खड़ी है। वह उदास है। चरते-चरते हरिन ने पूछा—'मेरी प्यारी हरिनी ! तू उदास क्यों हैं ? क्या तेरा चरागाह सूख गया है। अथवा पानी कमी से तू दुखी है ?" हरिनी ने उत्तर दिया—"न मेरा चरागाह सूखा है और न पानी की कमी है। आज राम की पसनिया (अन्नप्राशन) है, मेरे प्यारे तुम मार डाले जाओगे। चलो अयोध्या के राज्य को छोड़कर नन्दन वन भाग चलें।" हिरन ने कहा—"तुझे किसने बहकाया है ? अच्छा है कि मेरी मृत्यु होगी मेरा मांस ज्यौनार में परोसा जायेगा और मेरी खाल को कोई साधु प्राप्त करेगा।"

हरिन मार डाला जाता है ! उसका माँस राजा दशरथ की रसोई में पक रहा है। हिरनी रानी कोशल्या के पास खड़ी हुई प्रार्थना करती है—"हे रानी ! हरिन की खाल मुझे दे दो, मैं उसे पेड़ पर टाँग कर अपने दुखी मन को समझाती रहूँगी और यह समझ लूँगी कि हरिण जीवित है।"

कौशल्या ने कहा—" हरिनी अपने घर जाओ मैं तुझे हरिण की खाल न दूँगी, इसकी खंजड़ी बनेगी और उससे मेरा राम खेलेगा।" एक गहरी साँस के साथ उदास मन लेकर हरिनी चुपचाप वन को चली जाती है। जब-जब खँजड़ी बजती है हरिनी उसी ढाक के पेड़ के नीचे खड़ी हुई हरिन की याद कर-कर विसूरती है।

सचमुच यह बड़ा ही मर्मस्पर्शी गीत है। भोली-भाली हरिनी की साधारण विनय को भी कौशल्या ने ठुकरा दिया ! सत्य है राजसत्ता से मदोन्मत्त मानव दीन की पुकार को कब सुनता है। लेकिन दीन की आह प्रभाव दिखाकर ही रहती है। और कवि के मतानुसार हरिनी की पुकार व्यर्थ नहीं गई। हो सकता है कि एक मूक विधवा हरिनी को ठुकराकर कौशल्या को स्वयं पति विरह का दुःख सहना पड़ा हो। गीत का बघेली रूप यहाँ उद्धृत किया जा रहा है—

छापक पेंड़ छिउलिया ते पनवन झापक हो,
रामा, तेहि तरि ठाढी हरिनिया त मन अति अनमन हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चरतइ चरत हरिनमा त हरिनी से पुँछइ हो,
हरिनी, की तोरा चरहा झुरान, कि पानी बिन मुरझेउ हो।
ना मोरेउ चरहा झुरान, न पानी बिना मुरझेंउ हो।
हरिना आजु रामा कै पसनिया, तोहि मारि डारि हँ हँ हो।
छोड़ अजुधिया केर राज, नदंन वन भागी हो।
भल बउरानी हरिनियाँ तोहि को बउराइस हो।
मोरे रामा कै आजु पसनियाँ, हमहि मारि डरि हइँ हो।
माँसु केर रचि ही जेउनरिया, त खाल साधु देइहीं हो।

× × × ×

मचियन बइठी हँइ कोसिला रानी, त हरिनी अरज करइ हो!
रानी मसुआ त सीझइ रोसइयाँ खलरिया हमहिं देतिउ हो।
पेंडवा ते टंगतेउँ खलरिया त हेरि फेरि देखतिउँ हो।
रानी मन समुझउतिउँ, जनकु हरिना जीतइ हो।
जाउ हरिनी घर अपने, खलरिया न देवइ हो।
हरिनी खलरी कै खंजनी मढउवइ त रामा मोर खेलि हँइँ हो।
जब-जब बाजइ खँजड़िया सबद सुन अनकइ हो।
हरिनी, ठाढ़ि ढकुलिया के नीचे त हरिन का बिसूरइ हो।

× × × ×

संदेश ले जाने का कार्य हमारी देवियों ने पक्षियों को ही सौंप रखा है। इनकी गति तीव्र होती है। आकाश में पहुँचते ही वे हवा से बातें करने लगते हैं। ये बहुत ऊँचे उड़ते हैं। एवरेस्ट पर चढ़ाई करनेवाले प्रथम दल ने 17000 फुट की ऊँचाई पर पिपिट नामक पक्षी को उड़ते देखा था।[1]

निमाड़ की एक नारी अपने पूर्वजों (स्वर्ग-गत सम्बन्धियों) के पास गिरधरनी (चील) के द्वारा विवाह का निमन्त्रण भेज रही है—

सरग भन्ती हो गिरधरनी,
एक संदेशो लई जाव।
सरग का अमुक दीजो खयो कयजों,
तुम घर अमुक को ब्याव।
जेम सर ओम सारजो हो,
हमारो तो आवणो नी होय।

---

1. पक्षियों के आश्चर्यजनक देशाटन—ले० सालिम अली ('नवनीत' जनवरी 1958।)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जड़ी दिया वज्र किवाड़,
अग्ग जड़ी लुहा थी जी।[1]

—स्वर्ग में उड़नेवाली गीधनी, तुम मेरे पूर्वजों के पास विवाह का निमन्त्रण ले जाओ। कहना कि तुम्हारे अमुक लड़के का विवाह है। गीधनी स्वर्ग से वापिस आकर कहती है कि वे आने से विवश हैं क्योंकि उनके रास्ते में वज्र किवाड़ लगे हुए हैं और उनमें लोहे की अर्गलाएँ पड़ी हैं।

गुजरात की एक वधू विचार-मग्न है, इतने में एक कुंजलड़ी (एक पक्षी विशेष) आती है। वधू उससे कहती है—"मेरी प्यारी सहेली तू मेरा सन्देश मेरे प्यारे के लिए लेजा, वह आजकल परदेश में है—

"कुंजलड़ी रे संदेशो अमारो जई बालम ने के जो जीरे माणस होय तो मुखो मुख बोले
लखो अमारी पंखलड़ी रे।
कुंजलड़ी रे संदेशो अमारो जई वालम ने के जो जीरे···

—हे कुंजलड़ी ! तू हमारा संदेश मेरे प्रियतम से कहना। मैं मनुष्य नहीं हूँ इसलिए मुख से नहीं बोल सकती। मेरे पंखों पर तुम अपना संदेश लिख दो—

इस प्रकार काग, तोता, मैना, चील, मोर, कोयल, हंस, गोरैया, कुरभ, सारस आदि पक्षियों को संदेश-वाहक के रूप में चित्रित किया गया है।

शुक कभी संदेश लाता और ले जाता है तो कभी वर की खोज में भी उधर-उधर भटकता फिरता है। इस पक्षी की चतुरता सर्व विदित है। प्रेम करते इसे देर नहीं लगती और आँखें फेरने में भी वह विलम्ब नहीं करता। इसलिए क्षण में ही सब उपकारों को भूलने वाले मनुष्य को तोताचश्म कहा जाता है। जिस पिंजड़े में दूध-भात खाकर सालें बिताई हों उसे वह (तोता) स्वच्छन्द होकर क्षण भर में भूल जाता है और फिर भी इस नभचर की बुद्धिमत्ता पर सब मुग्ध होते हैं। संस्कृत, हिन्दी, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं के काव्य-ग्रंथ शुक-महिमा से मुखरित हैं। मधुर-वाणि के ही कारण इसे बन्दी होना पड़ता है फिर भी वह वचन-माधुर्य का परित्याग नहीं करता। तोते की बुद्धि-विलक्षणता से प्रभावित होकर विद्वानों ने इसे गुरु के रूप में प्रणाम किया है। यह संत का भी प्रतीक माना जाता है। यदि कबूतर काम का प्रतीक है तो शुक निस्पृही साधु-रूप का द्योतक है !

जागे दिये गए लोक-गीत में एक माता अपनी पुत्री के लिए योग्य वर खोजने के लिए तोते को भेज रही है। वह कहती है कि जो वर सुन्दर हो, सम्पन्न हो और स्वभाव में गंभीर हो वही मेरी पुत्री के लिए योग्य है। सुआ वरान्वेषण में भ्रमण करता हुआ वापिस आता है और सुखद सन्देश सुनाता हुआ कहता है—"सुन्दर लक्षणों से युक्त वर को मैंने तलाश कर लिया है। वह ब्रह्मचर्यवान् है, उसके चेहरे पर आभा है और उसके घर में साठ बैल हैं। मेरी सम्मति में इस घर में विवाह करना उचित है।"

'सावन सुगना मै गुर घिउ पालेउँ,
चैत चना कै दालि।

---

1. निमाड़ी लोक गीत—श्री रामनारायण उपाध्याय, पृष्ठ 20

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अब सुगना तू भयउ सजुगवा,
बेटी क वर हेरइ जाव।
उड़त उड़त तू जायो रे सुगना,
बैठेउ डरिया ओनाय।
डरिया ओनाय बैठ पखना फुलायउ,
चितया नजरिया घुमाय।
जे वर सुगना तु देखउ सुन्दर,
जेकरि चाल गम्हीर।
जेहि घरा सुगना तू सम्पति देखेउ,
वहि घर रचेउ बिआह।
हेरेउं बर मैं सजुग सुलच्छन,
भहर भहर मुँह जोति।
साठि बरद मैं चन्नि मैं देखेउँ,
बोही घर रचहु बिआह।

—हे सुआ ! तुमको मैंने सावन में गुड़-घी और चैत में चने की दाल खिलाकर पाला। अब तुम समझदार हुए। जाओ बेटी के लिए वर ढूंढ आओ।

हे सुआ ! उड़ते-उड़ते जाना और पेड़ की डाल झुकाकर बैठना ! डाल झुकाकर बैठना, पंख फुलाना और इधर-उधर दृष्टि दौड़ा कर देखना। हे सुआ ! जिस वर को तुम सुन्दर देखना जिसकी चाल में गंभीरता देखना और जिस घर में धन देखना वहीं विवाह ठीक करना !

सुआ कहता है—'मैंने अच्छे लक्षणोंवाला और सुन्दर वर ढूंढ लिया है, जिसके मुँह पर ब्रह्मचर्य की आभा दमक रही है। उसके घर में साठ बैल मैंने चन्नि या चरनी (बैल जहाँ पर बाँधकर खिलाये जाते हैं) में देखे हैं। उस घर में विवाह अवश्य करो।"[1]

पशु-संसार में हरिन और हरिनी की अधिक कथाएँ मिलती हैं, जिनमें यह युगल अपनी जीवन-गाथा को कहता फिरता है।

पूरब के एक लोक-गीत में शिकारी द्वारा पकड़े गए अपने बच्चे को हिरनी कौशल्या को आशीर्वाद देकर छुड़ा लेती है और फिर स्वतन्त्र होकर अयोध्या के राज्य में विचरण करती है—

कर जोड़ी हरिनी अरज करे
सुनु कौशल्या रानी हो।

1, कविता कौमदी—ग्राम गीत (तीसरा भाग), पृष्ठ 35

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रानी सीता के होइ हैं नन्दलाल,
हम ही कछु दी आव हो।"
सोनवा मढ़इवों दुहू सिंगवा,
भोजनवा तिल चाउर हो।
हरिनी भुगतहु अयोध्या के राज,
अभं वन विचरहु हो।

—हिरनी हाथ जोड़कर प्रार्थना करती है—हे कौशल्या ? अगर सीता के पुत्र होगा तो हमें क्या निछावार मिलेगी ?

कौशल्या प्रसन्न होकर कहती है—यदि तुम्हारी बात सत्य निकली तो मैं तुम्हारे दोनों सींगों पर सोना मढ़वा दूँगी और तिल तथा चावल का मजेदार भोजन कराऊँगी। यदि तुम्हारा आशीर्वाद सत्य निकलता है तो फिर मैं तुझे निर्भय होकर अयोध्या के राज्य में घूमने की आज्ञा दूँगी।

× × ×

कौआ यद्यपि काले रंग का होता है, फिर भी लोक काव्य में उसका अनेक बार उल्लेख हुआ है। वह प्रिय-आगमन की सूचना देकर दूध-भात के भोजन करता है और सोने से अपनी चोंच मढ़वाता है।

उड़ जा रे कागा काले, मेरा जे वीरा आवे आज।

× × ×

उड़-उड़ काग सुलोचने।
काग भइया। जो वीर आयेंगे आज।
सोने मढ़ाऊँ तेरी चोंचली,
और रुपै मढ़ाऊँ तेरे पंख।
उड़त में चमकै तेरी चोंचली,
और बैठत दोऊ पंख।

भोजपुर की एक युवती काग से कह रही है—

कागा नैन निकाल दूँ, पिया पास ले जाय।
पहिले दरस दिखाय के, पीछे लीजौ खाय।
कागा सब तन खाइयो, चुन चुन खाइयो मास।
दो नयना मत खाइयो, पिया मिलन की आस।

× × ×

एक अवधी लोक-गीत में काग भविष्य वक्ता के रूप में चित्रित किया गया है। वह गर्भवती युवती से कहता है—आज से नौ महीने बाद तुम्हारे पुत्र उत्पन्न होगा। समय आने पर काग की भविष्य-वाणी सत्य निकली और उस की चोंच सोने से मढ़ी गई तथा सोने की कटोरी में उसे दूध-भात खाने को मिला—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मोरे अँगना चन्दन रुखवा तौ लहर लहर करै हो।
मोरी सखी बोलत ओह पर काग तौ बोल सोहावन हो।
की कागा तुम नइहर से आए कि हरिजी पठायेनि हो।
काग काउन संदेस तुम लाए कि बोल सोहा मन हो।
नहिं हम नइहर से आए न हरिजी पठायेनि हो।
आज के नवएँ महिना होरिल तुम्हारे होइ हँय हो।
... ...
अठै नौ मास विताय होरिल तब जनमे हो।
बाजी आनन्द बधाई गवन लगे सोतर हो।
... ...
सोने के मढ़इवे वोह कै चोंच तौ रूपा पंखा हो।
सोने के कटोरिया माँ दूध औ भात खवइवे हो।
× × ×

शकुनापशकुन के रूप में भी पशु-पक्षियों का उल्लेख लोक-गीतों में चिरकाल से होता आ रहा है। ये अपने दर्शन, वाणी, रोदन, चिल्लाहट, मार्गावरोध आदि से आने वाली शुभाशुभ सूचनाओं का संकेत करते हैं—

शृंगाल का रास्ता काटना, रोना, चिल्लाना; उल्लू का कठोर शब्द करना; कुत्ते का रुदन; बिल्ली का रात में रोना आदि अपशकुन माने गए हैं।[1] भगवान राम के वन-गमन के पश्चात् राजा दशरथ की मृत्यु हुई और भरत को अयोध्या बुलवाया गया। अयोध्या की ओर आते हुए भरत ने मार्ग में अनेक अपशकुन देखे थे—

असगुन होंहि नगर पैठारा, रटहिं कुभाँति कुखेत करारा।
खर सियार बोलहिं प्रतिकूला, सुनि-सुनि होइ भरत उर शला।
खग मृग हय गय जाँहि न जोए, राम वियोग कुरोग विगोए।
नगर नारि नर निपट दुखारी, मनहु सबन्ह सब सम्पत्ति हारी।
(रा० च० मानस० अयोध्या कांड)

---

1. फरके बाई बाहु हृदय में कम्पन होवै।
करि मुँह मेरी ओर श्वान निर्भय ह्वै रोवै।
उल्लू और कपोत मृत्यु के दूत कहावें।
कर्कश कठिन कराल शब्द करि हृदय हिलावें।
(भगवती कथा, ततीय खण्ड, पृष्ठ 11)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लोक-कवि 'डाक' के मतानुसार राजहंस कल्हार महुअक और पूर्णकूट पक्षी का यात्रा प्रारम्भ करते समय दर्शन होना शुभ है—

राजहंस कलहार, अरु महुअक पूरन कूट।
कहथि 'डाक' सुनु भड्डरी यात्रा के सुखलूट

यात्रा के समय नेवले का मिलना, नीलकंठ का बाईं तरफ चारा खाना, और कौवे का दाहिनी ओर होना मनोरथ-सिद्धि का सूचक कहा गया है—

चलत समै नेउरा मिलि जाय।
बाम भाग चारा चखु खाय।
काग दाहिने खेत सुहाय।
सफल मनोरथ समुझहु भाय।

यात्रा-काल में लोमड़ी का बार-बार दिखाई पड़ना और हरिन का बायें से दाहिने जाना कार्य-सिद्धि का लक्षण है—

लोमा फिरि फिरि दरस दिखावै।
बायें ते दहिने मृग आवै॥
भड्डर ऋषि यह सगुन बतावै।
सगरे काज सिद्ध होइ जावै॥

× × ×

यात्रा के समय कुत्ते का कान फड़फड़ाना, भूमि पर लोटना और अपने शरीर का हिलाना अलाभ का सूचक है।

गवन समय जो स्वान।
फड़फड़ाय दे कान।
तो भी सगुन अकारथ जान।
स्वान धुनै जो अंग अथवा लौटै भूमि पर।
तौ निज कारज भंग अति ही कुसगुन जानिए।

यात्रा करते समय पाँच भैंसें, छः कुत्ते, एक बैल, एक बकरा, तीन गायें और सात हाथी सामने दीख पड़ें तो कुछ समय के लिए ठहर जाना ही श्रेयस्कर है। अन्यथा यात्रा में विघ्न उपस्थित होंगे।

भैंसि पांच षट स्वान।
एक बैल एक बकरा जान।
तीनि धेनु गज सात प्रमान।
चलत किलैं मति करो पयान।

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यात्रा-करते समय बछड़े को दूध पिलाती हुई गाय का मिलना अत्यन्त शुभ माना गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं की पशु-पक्षियों का महत्त्व लोक-जीवन में अनेक रूपों में आँका गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि ये मानव की अपेक्षा अधिक प्रतिभावान भविष्यद्रष्टा एवं नीति कुशल हैं। श्री रामइकवालसिंह 'राकेश' का कथन इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है। उनका कहना है कि यात्रा-काल में अनिष्ट परिहार और अभीष्ट की सिद्धि के लिए लोक-साहित्य में भिन्न-भिन्न पक्षियों की बोली, प्रणय-केलि और उनके दर्शन के फलाफल का विवेचन किया गया है। मिथिला के लोक-कवि डाक ने तीतर, नील-कंठ, श्यामा दहिपल, खंजन, मोर, कोकिल, मुर्गा, सुग्गा, मैना, गिद्ध, बटेर, पूर्ण कूट, ब्राह्मण-वर्ण काक आदि पक्षियों को शकुन निर्देशक माना है। इन चित्र-विचित्र पक्षियों की कल्पना से लोक-मानस के दृश्य-पट पर एक अभिनव रंग चढ़ गया है। लोक-गीत की दुनिया में पक्षियों के अद्भुत भावोद्रेक के कारण सृष्टि में भयंकर उथल-पुथल और तूफ़ानी परिवर्तन होने की आगम वाणी की गई है। इन पक्षियों की गति-विधि के कारण कार्य सिद्धि हो जाने पर उन्हें पुरस्कार देने की भी चर्चा मिलती है।

लिङ्गक पारावत्त कलविङ्क प्रतुद जाति कादम्व।
कहथि 'डाक' सुनु भड्डरो यात्रा में अवलंब॥

—डाक के मताअनुसार पारावत, लिंगक, कलविक, कादम्ब आदि प्रतुद[1] जातीय पक्षी यात्राके आधार स्तम्भ है।

उड़ली चिरिइया झुरे झाँग बइठलि,
राम नामवा के गोहराई।
निचवा जे घूमत बाटे पापी रे बहलिया,
अपर बाज बा रे मँडराई।

—राम नाम को बोलती हुई एक चिड़िया सूखे अरहर के पेड़ पर बैठी हुई है। उसके नीचे एक पापी बहेलिया धनुष पर वाण रखे हुए घूम रहा है। ऊपर बाज मँडरा रहा है। (भोजपुरी ग्रामगीत)

बाँई तरफ कोतरी (पक्षी-विशेष) का बोलना तथा सिर पर काग का चिल्लाना मृत्यु का द्योतक है—

बायें बोली कोतरी,
सिर पर बोला काग।
क्या माँगै है कोतरी जी ?
क्या माँगै है काग ?
सिर माँगै है कोतरी जी,
धड़ माँगै है काग।.....

बुन्देलखंड में 'धनसिंह का गीत' गाया जाता है। माता और बहन के मना करने पर भी

1. प्रतुद पक्षी ये हैं जो चोंच से तोड़कर अपना भक्ष्य खाते हैं। (देखिए—लोक साहित्य में पक्षी-वर्णन 'विशाल भारत' जून, 1943)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धनसिंह युद्ध-क्षेत्र में गया था। मार्ग में उसके बाँई ओर टिटहरी चिल्लाई थी और दाई ओर गीदड़ रोया था। ये सब मृत्यु की सूचना दे रहे थे। अन्त में हुआ वही जिसकी सबको चिन्ता थी। धनसिंह की मृत्यु हुई और घोड़ा वापिस आया। उसने बिलाप करते हुओं को बताया कि वीर धनसिंह धोखे से मार डाले गए—

तोरि मत कौने हरी धनसिंघ, तोरी मत कौने हरी ?
छींकत बछेरा पलानियो, बरजत भये असवार।
डेरी बोलि टीटही, दाइनी बोली सिहार।
सिर के सामे तीतर बोले, पर भू में मरन काएँ जात।

× × × ×

नीलकंठ का दर्शन लक्ष्मी-प्राप्ति की सूचना देता है। इसलिए हमारे ग्राम निवासी इस पक्षी को नमस्कार करते हैं और कहते हैं—

नीलकंठ तुम नीके रहियो।
दूध भात के भोजन करियो।

... ...

नीलकंठ कर दर्शन होए, मन वाँछित फल पावए सोए,

... ...

नीलकंठ के दरस तें, मिलै धान, धन भोग।
सुख संपति कौ मग बढ़ै, 'सूर' कहैं सब जोग।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने अन्त समय क्षेमकरी के दर्शन करके सुख की साँस ली थी।

एक तरफ पक्षी स्वयं शकुनापशकुन के रूप हैं और दूसरी ओर वे भी इनका (शकुन-अपशकुन) का ध्यान रखते है।

राजस्थानी लोक-गीत में कहा गया है कि पुत्र विहीना अभागिनी को देखकर सरोवर में विहार करते हुए हंस, बगुला, ढेंक आदि पक्षी उड़ गए थे, और बाग में मधुर शब्द करते हुए खग (कोयल काग आदि) मौन होगये थे। क्योंकि उनकी दृष्टि में वंध्या का दर्शन असुभ था।

मा, सहस तलावाँ गई जे।
रीता ए समँद-तलाव, हंसा बगुला उड़ रह्या जे॥
मा, बाग-बगीचाँ मैं गई जे।
मा, काचा ए दाड़म, दाख, कोयल कागा उड़ गया जे।

× × × ×

स्वप्नों के माध्यम से मनुष्य अपने भविष्य का परिचय प्राप्त करता हैं। स्वप्न-दर्शन का इसीलिए मानव जीवन में विशेष महत्त्व है। इस प्रसंग में भी पशु-पक्षी का उल्लेख हुआ है। यदि गर्भवती स्वप्न में सिंह का दर्शन करती है तो कहा जाता है कि उसकी कोख से उत्पन्न होने वाला पुत्र बलवान होगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वप्न में हंस को देखने वाली स्त्री (गर्भवती) ज्ञानवान पुत्र को जन्म देती है।

रामचरितमानस के बालकाण्ड में रामचन्द्र जी की बारात का सुन्दर एवं वैभव-पूर्ण चित्र अंकित किया गया है। इधर बारात प्रस्थान करती है उधर मंगल-शकुन होते हैं—

बनइ न बरनत बनी बराता, होहिं सगुन सुन्दर सुभदाता।
चारा चाषु बाम दिसि लेई, मनहु सकल मंगल कहि देई।
दाहिन काग सुखेत सुहावा, नकुल दरसु सब काहूँ पावा।
सानुकूल वह त्रिविध बयारी, सघट सवाल आव बरनारी।
लोवा फिरि फिर दरसु देखावा सुरभी सनमुख सिसुहि पिआवा !
मृग माला फिरि दाहिनी आई, मंगल गन जनु दीन्हि देखाई।
छेम करी कह कर छेम विसेषी, स्यामा बाम सुतरु पर देखी।
सन्मुख आयउ दधि अरु मीना कर पुस्तक दुइ विप्र प्रवीना।

दोहा— मंगलमय कल्पानमय, अभिमत फल दातार।
जनु सब साँचे होनहित भए सगुन एक बार ॥

लोक-वार्ता में इन पशु-पक्षियों का विशेष स्थान है। आदिम सभ्यता एवं संस्कृति के अविनश्वर प्रतीक ये पक्षधर तथा चतुष्पद क्या कभी भुलाए जा सकते है ? जब-जब मानव ने इनकी उपेक्षा की तब-तब उसे कठोर यातनाओं को झेलना पड़ा।

× × × ×

सूतल सुगवा जगावेल कोइलिया,
चल सुगवा मोर गाँव।
तोहरा देसवा ना आम के अठिलिया,
हमरा देसवा लखराव।

—सोते हुए तोते को कोयल जगाती है और कहती है—"प्यारे तोते ! तू मेरे गाँव को चल। तेरे देश में तो आम की गुठली भी नहीं मिलती। मेरे गाँव में तो आमों के निकुञ्ज हैं।

(भोजपुरी ग्रामगीत)

इन खेचरों (पक्षियों) तथा पशुओं की गति-विधि के द्वारा हमारे ग्राम-निवासियों ने वर्षा-अवर्षा एवं काल-अकाल का भी अध्ययन किया है। यह सत्य है कि जहाँ मानव-मति का प्रवेश नहीं हो पाता वहाँ इन पक्षधरों एवं चतुष्पदों की बुद्धि प्रविष्ट हो जाती है। इस विलक्षणता को देखकर हमें इन पक्षियों की प्रशंसा करनी ही पड़ती है। ढेले पर बैठकर चील का बोलना, शाम के इन्द-धनुष दर्शन के बाद प्रातःकाल में मयूर का ध्वनि करना तथा चिड़ियों का बालू में नहाना अच्छी वर्षा के लक्षण हैं—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ढेले ऊपर चील जो बोलै ।
गली गली में पानी डौलै ।

... ...

साँझे घनुष सकारे मोरा ।
ये दोनों पानी के बौरा ।

... ...

असम का घृत माठ जमावै ।
ईश कीड़ी बाहर लावै ।
नीर बिना चिड़िया रज न्हावै ।
मेह बरसे घर माझ न मावै ।

लोमड़ी का बोलना तथा वनमुर्गी का आकाश में उड़ कर चिल्लाना, बताता है कि वर्षा की आशा करना भूल है ।

बोली लेखरी फूली कास ।
अब नाहीं वर्षा कै आस ।

... ...

ढेकी बोलै जाय अकास ।
अब नाहीं वर्षा कै आस ।

इसी प्रकार रात में कौवे का बोलना तथा दिन में सियार का चिल्लाना, अकाल पड़ने का सूचक है—

रात्याँ बोलै कागलो दिन में बोलै स्याल ।
तो यों भाखै भड्डरी, निहचै परै अकाल !

× × × ×

प्रतीकों के रूप में भी पक्षी-वर्णन हुआ है । निश्चयतः प्रतीक भावाभिव्यक्ति में विशेष सहायक होते हैं । उनके द्वारा कवि अपनी अनुभूतियों के घनत्व को प्रकट करते हैं । जब शब्दों से पूर्ण भाव स्पष्ट नहीं हो पाता तब प्रतीकों का सहारा लेना आवश्यक हो जाता है, प्रतीकों के प्रयोग में पशु-पक्षियों को अधिक ग्रहण किया गया है । हंस आत्मा का, गाय भोलेपन का, पक्षी जीव का और कोकिल मैना प्रियतमा का प्रतीक हैं । कहीं-कहीं पर सन्तों ने तोते का उल्लेख आत्मा के प्रतीक-रूप में किया है । ससुराल को जाती हुई पुत्री स्वयं को चिरैया कहती है—

साडा चिड़िया दा चम्बा वे बावल असीं उड़ जाना ।
साडी लम्बी उडारी वे बावल केहडे देश जाना ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तेरा चौका भांडा वे बावल तेरा कौन करे।
तेरे महलां दे बिच बिच वे बावल मेरी माँ रोवे।

—हे पिता जी, मैं तो एक चिड़िया हूँ, मुझे तो एक दिन उड़ जाना होगा। मेरी उड़ान बड़ी लम्बी है। मुझे किसी अनजान देश में उड़कर जाना होगा। हे पिता, मेरे बिना चौका रसोई कौन करेगा ? तुम्हारे महल के बीच में मेरी अम्मा रो रही है।[1] (पंजाबी लोक-गीत)

'मेरी प्यारी बाघिन ! मुझे खाकर तू अपनी भूख मिटा ले। मैं वन्ध्या हूँ। जीवन से मैं ऊब गई हूँ। मेरा पति मुझ से कभी बोलता ही नहीं है। मेरी माता ने भी मुझे घर से निकाल दिया है।" रोती हुई वन्ध्या ने कहा—

'नहीं नहीं मैं तुझे नहीं खा सकती। तुझे खाकर मैं स्वयं बाँझ हो जाऊँगी। मेरे सामने से हट जा। मैं तुझे देखना भी नहीं चाहती" बाघिन बोली। (बघेली लोक-गीत का अनुवाद)

शरीर एक पिंजड़ा है उसमें आत्मा पक्षी के रूप में रहता है—यह कल्पना एक लोक-कवि की है जो निराकार भगवान का उपासक है।

बड़ोई जतन करि पिंजड़ा बनायो,
तामें घने घने तार लगाए जी,
तुचा के कागद से पिंजरा मढ़ाय दयो,
मेरो पंछी न कहुँ उड़ि जाय जी।
एक दिना सो गाफिल हुइ गई,
तोता निकरि गयो करै हाय जी।
खिरकी न खुली कोई तारु त टूटे,
जाने निकर गयो कौन राह जी।
बाग बगिया बन खंड सब ढूँढे,
कहुँ पंछी न मिले मोरे राम जी।

आग लगी वन जर गये,
जर गये चन्दन रूख।
उड़ जा पंछी डार से,
जिन जरौ हमारे साथ।
पंछी ! फेर जनम होने नइयाँ।

---

1. भोजपुरी लोक-गीत (हिन्दुस्तानी अप्रैल-सितम्बर (1942)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
मालवी लोक-गीत में सारस को सौत का प्रतीक माना गया है—

"ऊँचा हो आलीजा तमारा ओवरा
नीची बँधाव पटसाल।
राजरा मेलां में सारस रमी रया,
हमारी बोलई सारस नी बोले।
आलीजा बुलावे सारस दोड़ी-दोड़ी जाय।
हमारी चुगई सारस नी चुगे,
केसरिया चुगई सारस चुगी चुगी जाय।
सारस घड़ावाँ टोंटी-झूमका,
छोड़ो म्हारा आलीजारो साथ।

—मेरे प्रियतम, तुम्हारा घर ऊँचा है। ज़रा पटसाल नीची बँधाओ। प्रियतम के महल में सारस फिर रही है। हमारे बुलाने से सारस नहीं बोलती, परन्तु प्रियतम के बुलाने पर दौड़ी-दौड़ी आती है। हमारे चुगाने पर सारस नहीं चुगती है, परन्तु साजन के चुगाने पर वह चुग लेती है। सारस, तुझे टोंटी (कान के झल्ले) और झुमके बनवा देती हूँ। तू मेरे प्रियतम का साथ छोड़ दे।[1]

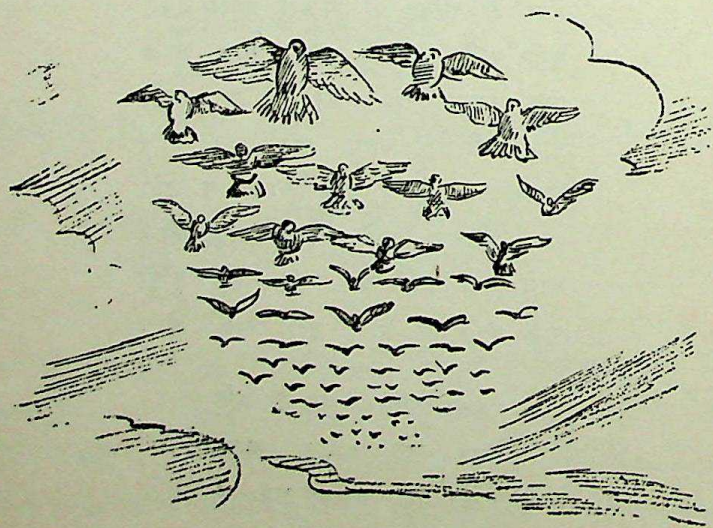

गो खग खे खग बारि खग,
तीनों मांहि बिसेक।

1. मालवी लोक गीत—(डॉ॰ श्याम परमार) पृष्ठ 11

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'तुलसी' पीबैं फिरि चलैं,
रहै फिरैं सँग एक ।

(गो० तुलसीदास)

बघेलखंड की एक माता अपनी पुत्री को सुसराल भेज रही है। विदा का समय कितना हृदय-विदारक होता है। वह अपनी लड़की को सुआ मानकर कह रही है—

ईं सुवनन का अइसन पालेन, जाइसे चना कइदार,
पै ई सुवनन मोरे कान न मानइ, उड़ि जंगल का जाँय
ईं सुवनन का अइसन पालेन, काचेन दूध पिआय ।
ईं सुवनन मोरे कान न मानइ, चढ़ि ससुरीया जाँय ।

यहाँ सुआ कन्या का प्रतीक है।

साहित्य में प्रतीकों का प्रयोग प्राचीन काल से हो रहा है। वेदों, उपनिषदों एवं पुराणों में ये प्रतीक प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं। अध्यात्मावाद के सिद्धान्तों को स्पष्ट करने के लिए कहीं पक्षी को कर्मफल में लिप्त जीवात्मा का प्रतीक माना गया है तो कहीं कर्म से निरत खग परमात्मा का प्रतीक बना है। इसी प्रकार गरुड़ गति का, हंस विशुद्ध विवेक का, नन्दी कृपा का, मृग पावनता का एवं काग दुष्टता का प्रतीक कहा गया है। वैदिक साहित्य में कमल सृष्टि का, शेषनाग काल का, विष्णु व्यापकता का मूषक संकर्त्तन का, अश्व इन्द्रियों का, प्रभात आनन्द का प्रतीक बना है।

बुन्देलखण्ड के रसिक लोक-कवि ईसुरी ने अपनी प्रेयसी के लिए कभी मैना, कभी चिरैया, कभी सोन चिरैया, कभी कोयल और कभी, मुनैया के रूप में याद किया है। ये सब प्रियमा के ही प्रतीक हैं।

मेरे प्यारे पंछी ! तुम दोनों रास्ते की धूल में अपने सुन्दर मुख को क्यों छिपा रहे हो ? बताओ तो क्या बात है ?" युवती ने पूछा।

"क्या कहें, कुछ कहते नहीं बनता। तुमने हमें पाला-पोषा है। हाय राम ! तुम्हारा पति बड़ा दुष्ट है, उसने दूसरी शादी कर ली है। नई बहू को लेकर वह शान से आ रहा है।" इसी दुःख के मारे हम अपना मुँह छिपा रहे हैं।" पंछी बोले— (संथाली लोक गीत का भावानुवाद)

मोरे मन की हरन मुनैयाँ,
आज दिखानी नइयाँ ।
के कऊँ हुयै लाल के संगै,
पकरी पिंजरा मइयाँ ।
पत्तन-पत्तन ढूंढ फिरे हैं,
बैठी कौन उरइयाँ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कात 'ईसुरी' इनके लानें।
टोरी सरग—तरइयाँ।
मोरे मन की हरन मुनैया
आज दिखानी नइयाँ—

—मेरे मन को हरने वाली मेरी प्यारी मुनैयाँ (पक्षी विशेष) मुझे आज नहीं दिखाई दी। या तो वह किसी लाल के साथ है, या पिंजड़े में बन्द हो गई है। मैंने पत्ता-पत्ता देख लिया है, न मालूम वह कौन-सी शाखा पर बैठ गई है। ईसुरी कहते हैं कि उसकी तलाश में मैंने स्वर्ग के भी तारे तोड़े हैं।

× × ×

मन चंचल होता है, और पक्षी को भी अस्थिर रहने के कारण चंचल कहा गया है। नभचरों की एक जाति विशेष को 'चंचला' नाम से संबोधित किया गया है।[1] वे सदैव इधर-उधर फिरते रहते हैं। एक स्थान पर होकर बैठना वे जानते ही नहीं हैं। मन की भी कुछ ऐसी ही गति है। पल-पल में वह आकाश-पाताल की दौड़ लगाता रहता है। इसीलिए ईसुरी ने मन को पंछी बतलाते हुए कहा है—

राखें मन पंछी ना रानें,
इक दिन सब खों जानें।
खा लो, पी लो, लै लो दै लो,
एई लगै ठिकानें।

कर लो धरम कछू वा दिन खाँ,
जा दिन होत रमानें।
ईसुर कही मान लो मोरी,
लगी हाठ उठ जानें।

× × ×

वाहन के रूप में भी कतिपय पशु-पक्षियों का लोक-गीतों में उल्लेख मिलता है। देवी के गीतों में सिंह का, सरस्वती की वन्दना में हंस का, गणेश-वन्दना में चूहे का, शीतला के गुण-गान में गदहे का, भैरव की स्तुति में कुत्ते का, यम की पूजा में भैंसे का, शिव की प्रशस्ति में बैल का, विष्णु की अर्चना में गरूड़ का, इन्दु की स्थापना में हाथी का तथा कार्तिकेय की गुण-गरिमा में मयूर का नाम निश्चित रूप से आना है क्योंकि ये उनके वाहन हैं।

---

1. चंचला Fulvetta (The birds of this genus are restless-चंचल)
—आङ्गल भारतीय पक्षी नामावली xvii

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"बहन यशोदा ! मैं स्वर्ग की सैर करने जा रही हूँ। कुछ काम हो तो बताओ।" उड़ती हुई गृद्धनी ने कहा।

"मेरे पुत्र का विवाह हो रहा है दया करके मेरे लाड़ले के पूर्वजों को शादी में सम्मिलित होने के लिए निमन्त्रण दे आना और तुम भी विवाह में आना।" यशोदा ने गृद्धनी से कहा।

(निमाड़ी लोक-गीत का भावानुवाद)

एक शिव-भक्त कह रहा है—

बैला चढ़े शिव बाबा आवैं
हो हंसा चढ़ी सुरसुती मैया।

भगवती दुर्गा जब शत्रुओं के विनाश के लिए आक्रमण करती है तब वे सिंह-वाहनी कहलाती हैं—

"ऊँचे चढ़ हुँकारी भवानी
दोहरे सिंह बुलायो हो माँ
कौन सिंह पर पाखर डारौं
कौन पै होऊ असवार हो माँ
भूरे सिंह पर पाखर डारी,
नीलै पै भई है सवार हो माँ।

भगवान कृष्ण ने मोर के पंखों को अपने मस्तक पर धारण करके पक्षी का महत्त्व बढ़ाया है। ब्रज की एक गोपिका तो मोर बनने की कामना करती है। उसे यह खटक रहा है कि वह मोर न बन सकी—

"भई न विरज की मोर,
सखी मैं तो भई न विरज की मोर।

उड़के मोर कदम पै बैठत,
हेरत चारों ओर।
सखी मैं तो भई न विरज की मोर।

उड़-उड़ पंख गिरें धरती पै,
बीनै जुगल किसोर।

उन पंखन को मुकुट बनाकें,
पैनत जुगुल किसोर।
सखी मैं तो भई न विरज की मोर।

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उपमानों के रूप में पशु-पक्षियों का सौन्दर्य एवं स्वभाव चिरकाल से कवियों एवं कलाकारों के मानस में बसा हुआ है। हरिन की-सी आँखें आज भी भुलाई नहीं जा सकती हैं। सिंह की-सी पतली कटि, कपोत-सी गर्दन, चक्रवाक से उरोज, खंजन सी चंचल आँखें, कोयल-सी काली, गाय-सी भोली, बैल-से उन्नत स्कंध, मैना-सी सुन्दर, सारस की-सा जोड़ी आदि को जितना हम शिष्ट काव्य में पढ़ते हैं उससे अधिक लोक-काव्य में हम देखते हैं।

गोरी के हुकमते हुए जोवन को देखकर हिरनी के निकलते हुए सींगों की स्मृति लोक-कवि के ही मन में हो सकती है—

गोरी कौ जोवना हुमकन लगे,
जैसे हिरनियाँ को सींग।
मूरख जाने खता फुन गुनँ,
वे तो बांट लगावे नीम।

× × ×

बम्बई की छींट की तुलना रंगदार कुत्ते की पीठ से और मैदा की पूरी को कुत्ते की खुरी से तुलना करना गहरे व्यंग्य की ओर संकेत है।

चतुर समधिन समधी से कह रही है—

कुत्ता पाल लेव हो समधी रंगदार,
कुत्ता पाल लैव।
जैसे कुत्ते की पीठ,
तैसी बम्बई की छींट।
अंगा पैर लेव।

जैसे कुत्ता की खुरी,
तैसी मदा की पूरी।
एक और लेव,
कुत्ता पाल लेव।

× × ×

एक भौजाई अपने अनुभव शून्य देवर को कोल्हू के बैल से उपमा देकर चुप रह जाती है—

ननद मोरी बटुआ सी,
मोरे देवर हैं कोल्हू के बैल।

प्रकृति-चित्रण का लोक-काव्य में विशिष्ट स्थान है। इसमें भी पशु-पक्षियों का अत्यधिक वर्णन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हुआ है। कुछ पक्षी तो ऐसे हैं कि ये स्वयं ऋतु आगमन की सूचना दे देते हैं। शरद ऋतु के प्रारम्भ होते ही खंजन इधर-उधर दिखाई देने लगते हैं। कोयल की कूक वसन्त की परिचायिका है। और मयूर की केका पावस का संकेत है। पावस के रसमय वातावरण में देखिए कितने पक्षी मधुर संगीत सुनाने लगते हैं।

हे गगनवासी काग ! उड़जा, यदि मेरे राजा आज शाम को घर आजाएँ तो मैं तुझे खीर-शक्कर का थाल परोसूँगी। सोने से तेरी चोंच मढ़वा दूँगी। पैरों में छोटे-छोटे घूँघरे बाँध दूँगी। तेरे कंठ में मोतियों का हार पहनाऊँगी। जीवन भर तेरा गुण-गान करूँगी। तेरा उपकार कभी नहीं भूलूँगी।" युवती ने कहा।

"तेरा राजा घोड़े पर बैठकर सौ नौकरों के साथ आ रहा है मैं उसे अभी देखकर आया हूँ। तू शृंगार कर ले। वह तेरा राजा, तुझे रानी कहकर बुलावेगा" कौवा बोला।

(राजस्थानी लोकगीत का अनुवाद)

× × ×

"हे कुंजलड़ी[1] तू मेरा संदेश मेरे प्रियतम से जाकर कहना" विरहिणी ने कहा। "मैं मानव की बोली बोलना भूल गयी हूँ। तू अपना सन्देश मेरे पंखों पर लिख दे। मैं अभी तेरे प्यारे के पास जाती हूँ। अब मैं तेरा दुःख नहीं देख सकती।"कुंजलड़ी (चिड़िया विशेष) ने रोते हुए कहा।

(गुजराती लोक-गीत का अनुवाद)

आषाढ़ मास घन गरजत, रटत पपिहरा नाचत मोर।
आयल हे सखि मास आषाढ़, हरि बिनु मोहि चन्द्रिका भार।

(मैथिली लोकगीत)

× × ×

सावन आयो गोरी का सायवाजी।
... ...
मोर पपइया पी-पी बोल्या जी।
ऐजी कोई तन में लग रही आग।
मूसलधार पानी पड़े जी

(मालवी लोक-गीत)

× × ×

---

1. अम्बर कुरजां कुरलियां, गरजि भरे सब ताल।
जाकै गोविन्द बीछुड़े, तिनको कौण हवाल।
—कबीर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आषाढ़े घम घोरिया ने बादल गाजे घोर।
बापपैया पियु पियु करे, ने मधरा बोले मोर।
(गुजराती लोकगीत)

× × ×

बसन्त के आते ही धरती और आकाश सुरभित हो उठता है। बागों में पक्षियों का संगीत गूंजने लगता है। आम बौरों से लद जाते हैं। कलियाँ खिल-खिला हँसने लगती हैं। पादपों में नयी जवानी आ जाती है। कोयल की कूक से मन पागल बन जाता है। नर-पक्षी अपनी मादा को रिझाने लगता है, कभी उसके सामने नाचता है तो कभी उसके कानों में मनोहर गीत सुनाता है। इसी मधु ऋतु में लोक-साहित्य का नन्दन वन खग के कलरव से संगीतमय हो जाता है। नाना प्रकार के नभचर आकर एकत्रित होते हैं और न जाने कौन-कौन-सी मधुर बोलियों में गाकर मानव-मन को पुलकित करते हैं। सम्भवतः इसी ऋतुराज के आगमन पर किसी मिथिला की सुरभित वाटिका में बैठकर एक भाट ने अनेक पक्षियों के जीवन का अध्ययन किया था।—"निम्नस्थ मिथिला के लोक-गीत में 33-34 पक्षियों का वर्णन एक साथ मिलता है। इनमें कौवा, गिद्ध, गैंरी, चील, मैना, बुलबुल, मुर्गा, नीलकण्ठ, बगुला, गरुड़, सुग्गा, धनसुग्गा, भुँइछपका, मोर, बसन्त, बेटाम, बलुआरा, काग, बत्तख, हाँस, किनकिन, मगचिकनी, केओरेना, करांकुल, हरदा, कुचकुचवा, कोठाडूम्मर, शाही, मुनिया, कोकिल, लाल और शार्दूल नाम के पक्षी हैं। वर्णन के प्रसंग में गीत में उल्लिखित पक्षियों के स्वभाव, आहार-विहार, जाति-वर्ण और ढव-छव की अनोखी बातों का भी जीवन्त चित्रण किया गया है। इससे पता चलता है कि लोक-साहित्य की निर्मातृ-दृष्टि कितनी पैनी और कारगर है। गीत इस प्रकार है—

सब चिड़ियन में लाल बादशाह कहावे।
सिंह शारदूल नाम धरावे।
कौवा चाण्डाल गिद्ध कसाय,
गैंरी मलाहिन चील चमार,
मैनी भटियारिन बुलबुल पैठान।
मुर्गा मोलना नीलकण्ठ ब्राह्मण।
बगला वजीर गरुड़ गोसाँय।
सुग्गा सकलदीपी, धनसुग्गा कहार।
भुँइछपका शेख, मोर नरतनिया।
बसन्त रंगरेज, बेटाम तत्तमा,
बलुआरा सोनार, काक मुसहर।
बत्तक दोनवार हांस व्यास,
किनकिन सूंड़ी मगचिकनी तेली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

केओरेना नट, कंशकुल भाँट,
हरदा कायस्थ, कुचकुचवा कुम्हार।
कोठा डूम्मर वढ़ई, शाही बेलदार।
मुनिया धुनिया, कोकिल गवैया,
सब चिड़ियन में लाल बादशाह कहावे,
सिंह शारदूल नाम धरावे।

—सभी पंछियों में लाल बादशाह और शार्दूल सिंह कहलाता है। कौवा चाण्डाल है, गिद्ध हत्यारा है। गैंरी मलाहिन है, चील चमार है। मैना भठियारिन है, बुलबुल पठान है। मुर्गा मौलवी है, नीलकण्ठ ब्राह्मण है। बगुला वज़ीर है, गरुड़ गोसाईं है। सुग्गा शाक द्वीपी है, धनसुग्गा कहार है। भुंइछपका शेख है, मोर नरतनिया है। वसन्त रंगरेज है, वेटाम ततमा है। बलुआरा सुनार है, काक मुसहर है। बतख दोनवार है, हँस व्यास है। किनकिन सूँड़ी है, मगचिकनी तेली है। कओरेना नट है, कशंकुल भाट है। हरदा कायस्थ है, कुचकुचवा कुम्हार है। कोठा डूमर बढ़ई है, शाही बेलदार है। मुनिया धुनिया है। कोकिल गवैया है। सभी पक्षियों में लाल बादशाह और सिंह शारदूल कहलाता है।[1]

अब की राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यों द्रुम डरिया पारधि साध्यो बान।
याके डर भाजन चाहत, ऊपर ढुकयो सचान।
दुहूँ भाँति दुःख भयो दयानिधि, कौन उबारे प्रान।
सुमिरत ही अहि डस्यो पारधी कर छूट्यो संधान।
'सूरदास' सर लग्यो सचानहिं जय जय कृपानिधान।

(महाकवि सूरदास)

"महाराज ! आप जंगल के राजा हैं। हम सब पशु आपकी प्रजा हैं। यदि आप इस तरह हमारा नाश करते रहोगे तो एक दिन हम सब मर जावेंगे। फिर आप किसपर राज्य करेंगे ? लोमड़ी बोली।"

"ठीक है, अब मैं किसी को भी नहीं सताऊँगा और अब प्रजा को मैं अपनी पुत्री मानकर प्यार करूँगा।" सिंह ने कहा। (एक मराठी लोक गीत का अनुवाद)

मधुर वसन्त में उल्लसित पक्षी भी विवाह रचाने के लिए आतुर हो उठते हैं। मन्मथ-सहचर इस ऋतुराज में कामोदीप्ति होना स्वाभाविक है। इसका प्रभाव सार्वभौमिक है, अतः सबके मानस में

---

1. लोक-साहित्य में पक्षी-वर्णन—श्री राकेश

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वसन्ती पवन के झकोरे एक नया उल्लास भर देते हैं। खगचरों की दुनिया बड़ी भावुक होती है, इसमें सरसता है, उन्माद है और प्रिय-मिलन की आकांक्षा है। निम्नलिखित लोक-गीत में वैवाहिक वातावरण पूर्ण रूप से चित्रित हुआ है। पाणिग्रहण के समस्त रीति-रिवाजों का यहाँ पालन हो रहा है—

रनै चिरैया अवसर करती है,
लीला रैमुनिया के ब्याह होते हैं।
तब कौआ पाती लाता है,
तब चील मसाल दिखाता है।
तब चन्दुल सुदिन विचारते हैं,
तब सोना तिलक चढ़ाते हैं।
तब बकुला नेवता फेरते हैं,
तब हंस बराती होते हैं।
तब डउकी धान दरडती है,
गौरैया चाउर छरती है।
पन गुड्डी पानी लउती हैं,
कठ कोलनी लकड़ी चिरती हैं।
खरखेटवा लकड़ी लाते हैं,
तब पपिहा आग जलाते हैं।
औ दपकै जेवन बनउती है,
गलगलिया बरा सेरउती है।
तब कोरें बूंदी छनती हैं,
खरैचा रोटी बेलते हैं।
पंतेगा पतरी डरते हैं।
दहेगा दही जमाते हैं।
तब लवनी थाल परोसती है।
औ सबका बैठ जेवउती हैं।
कबूतरी गारी गउती हैं।
अब सारस जामा सीता है।
फुदकैली मौर बनउती है।
कबूतर कंकन लाता है।
महौरवा मड़वा डरते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तब मंडप बया सजाता है।
हरदा मगरोहन लाता है।
करचोटिया मंगल गाता है।
तब तोता काज कराता है।
तब बुलबुल पाँव पखारती है।
कोयली जनमासे जाती है।
तब मैना साहब बैठी है।
औ पेंगा पान लगाते हैं।
तब खूसड़ हुक्का लाते हैं।
तब अरुवा गुड़-गुड़ करते हैं।
औ गीदुर झुलना झुलते हैं।
जब बाज मिजाज दिखाता है।
तब तीतुर ढोल बजाता है।
तब लावा दादर गाता है।
तब ढेक तमासा देखत है।

—रनै चिड़िया लीला और रैमुनिया के विवाह का आयोजन करती है। कौआ जन्म पत्रिका ले आता है। चील पक्षी मशाल दिखाकर प्रकाश करता है, तब चन्दुल पक्षी शुभ समय निर्धारित करता है और सोना पक्षी तिलक चढ़ाते हैं। बगुला निमन्त्रण देने का कार्य करता है और हंस बारात सजाकर चलते हैं। उधर लड़की वाले के घर का हाल सुनिये। पोड़की (पक्षी विशेष) धान दरती है। गौरैया चिड़िया चावल कूट रही है। पनडुब्बी पानी भर रही है। कठकोलनी चिड़िया लकड़ी चीरती है। खरखेटवा पक्षी लकड़ी ढोकर लाता है, तब पपीहा आग जलाता है। दपकें (बतखें) पक्षी भोजन बनाता है। गलगलिया बरा सिराती है। कोरैं पक्षी बूंदी छान-छान कर लड्डू बनाती है। खरैचा पक्षी रोटियाँ बेल रहे हैं। पतेंगा पत्तल डाल रहे हैं। दहेंगा दही जमा रहे हैं। लवनी थाल परोस-परोस कर सबको खिला रही हैं। और इसी समय कबूतरी मिलकर गारी-गीत गाती हैं। इधर अब विवाह की तैयारी हो रही है। सारस पक्षी विवाह की पोशाक जामा फेटा आदि तैयार कर रहा है। फुदकैली मालिन का काम करती हुई मौर बनाती है। कबूतर लुहार का काम करता हुआ कंकन बनाकर ला रहा है। महोरवा पक्षी मंडप के खम्भे गाड़ता और बया पक्षी मंडप सजा रहा है। हरदा पक्षी बढ़ई का काम करता हुआ मगरोहन लाता है। करचोटिया पक्षी मंगल गीत गा रहा है। तोता पंडित बना हुआ विवाह संस्कार के कृत्य कराने में लगा है। बुलबुल पाँव पखारती है, कन्यादान देती है। विवाह के बाद शिष्टाचार के लिए कोयल जनवासे जाती है। वहाँ पर मैना साहब बैठी हैं। पेंगा पक्षी इस शिष्टाचार के दरबार में पान खिला रहे हैं। खूसड़ पक्षी एक ओर से हुक्का लिये चला आ रहा है और हुक्का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लाकर अरुआ (उलूक) को देता है, वह हुक्का पीता है, गुड़-गुड़ की आवाज़ आ रही है। दूसरी ओर गीदुर मौज से झूल रहे हैं। इसी समय बाज पक्षी शान के साथ गीत आरम्भ करने की आज्ञा देता है। तब तीतुर (ढोल चढ़ाकर) ढोल बजाता है और लावा दादर गीत गाता है। बेचारे ढेक पक्षी इधर-उधर से जुड़े तमाशा देख रहे हैं।[1]

यह गीत साधारण होते हुए भी असाधारण है। गीत-निर्माता ने इसमें पक्षी विषयक अपना अनुभव रखा है, साथ ही साथ पक्षियों के विषय में एक तात्विक सत्य को प्रकट करते हुए इनके सम्बन्ध में प्रचलित लोक-मान्यताओं को भी स्थान दिया है।

पशुओं का जगत भी अलौकिक है। उनकी कतिपय प्रवृत्तियाँ मौलिक तथा मानवों से अधिक समृद्ध हैं। शिकारियों ने वन्य जीवों का जो समय-समय पर परिचय दिया है वह बड़ा ही रोचक एवं उनके स्वभाव, व्यवहार, आहार आदि का परिचायक है। सिंह का वीरत्व प्रसिद्ध है। लोमड़ी की चतुराई सब जानते हैं। चीता की कुटिलता से सब परिचित हैं। क्रुद्ध रीछ की झपट से पेड़ पर बैठा हुआ भी मनुष्य नहीं बच पाता। बच्चों को फुसलाकर ले भागना भेड़िया ही जानता है। बन्दर-घुड़की तो अब एक मुहावरा ही बन गया है। मृग की सुन्दरता एवं सरलता ने भगवान राम को भी आकर्षित कर लिया था।

खरगोश बोला—"गजराज ! सियार की बातों में आखिर आ ही गए। राजा बनने के लोभ में इतने पागल हो गए कि अपने आप को भी भूल गए। इतने बड़े होने पर भी तुम शत्रु-मित्र की पहिचान न कर सके। अब तुम्हारी मृत्यु देख लो सामने खड़ी है।"

हाथी ने सूंड उठाकर कहा—"मुझसे बड़ी भारी भूल होगई है। कबीरदास जी ने ठीक ही कहा है कि लोभ प्राणी को अन्धा बना देता है।"

(हरियाने के एक लोक-गीत का अनुवाद)

"मेरे प्यारे पुत्र खरगोश ! मैंने मांस का जीवन भर के लिए त्याग कर दिया है। अब मुझसे मत डरो। मैं तुम्हें उपदेश देने आई हूँ।" लोमड़ी धीमे स्वर में बोली।

"क्षमा करो लोमड़ी चाची, पारसाल भी तो तुमने मांस खाना छोड़ा था, और फिर खुदावक्स की सारी मुर्गियों को चट कर गई थीं। तुम्हारे मुँह से अभी बदबू आ रही है। ज़रा दूर हट कर बातें कीजिए। पशु होकर भी मुझे पशु की बातों पर विश्वास नहीं होता।" खरगोश ने कहा।

(संथाली लोक-गीत का अनुवाद)

वसन्त बहार को प्रदर्शित करने वाले विभिन्न प्रदेशीय लोक-गीतों में पक्षियों का उल्लेख होना स्वाभाविक है। ये ही तो वसन्त की सौरभ को मुखरित करते हैं।[2]

---

1. बाघेली-लोक गीत—ले० श्री उरगेश, पृ० 66-68 से साभार।
2. (क) सखि आये वसन्त बहार, पिया नहिं आये।
   कुंजलता में लता लपटानी, भंवर बेइल में छाए।
   चित्र विचित्र सुरंग रंग फूलत, सखी घर घर चूँदरी रंगाए।
   चातक, मोर सोर करैं चहुँदिसी, कोयल शब्द सुनाए। (अवधि)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"मेरे प्यारे लाला ! तुम अकेले रह गए हो। तुम्हारी माता स्वर्ग चली गई है। मत घबड़ो। मैं तुम्हें अपनी पीठ पर बैठाकर स्वर्ग ले जाऊँगी और तुम्हारी माँ से भेंट कराऊँगी।" चील बोली—

"चील चाची ! तेरी जय हो। जल्दी चल, मेरी माता मेरे लिए रोती होगी। मेरे खिलौने के सन्दूक को भी-अपनी चोंच में दबा ले। देख सूर्य छिपनेवाला है। रात में तुझे डर लगेगा।" बच्चे ने कहा। (काँगड़ा के लोकगीत का अनुवाद)

जिस प्रकार वन्य पशुओं से वनों की शोभा है, और वे कानन की समृद्धि माने जाते हैं, उसी प्रकार पालतू पशु हमारे जीवन की एक महान् शक्ति हैं, जिससे हम अपनी जिन्दगी को आगे बढ़ाते चलते हैं। भारत कृषिप्रधान देश है, अतः गाय-बैलों को नहीं भुलाया जा सकता। किसान का घर तभी समृद्ध बनता है, जब उस के आँगन में सुन्दर बैल बँधे हों। कृषक की बैल सम्पत्ति हैं; दुधारु गऊ को पाकर भारतीय फूल उठता है।[1]

आज भी दहेज में सोना चाँदी के साथ-साथ बैल, बछड़े और गायें दहेज में दी जाती हैं। विवाह-आतुरा एक कुमारी अपने पिता से अयोध्या नगरी के चार राजकुमारों का जिक्र करती है। पिता कहता है कि बेटी वे अन्न-धन और सोना माँगते हैं, साथ में बैल-बछड़े और गायें माँगते हैं। दरवाजे के नेग पर हाथी माँगते हैं, जिसके पास गाय-बैल और बछड़े न हों और देने को दहेज न हो उसे अपनी बेटी के लिए हलवाहा वर खोजना चाहिए। इससे स्पष्ट है कि भगवान रामचन्द्र भी गाय-बैलों और बछड़ों के प्रेमी थे—

(ख) दिन ललित वसंती आन लगे, हरे पान पियरान लगे।
घटन लगी दिन पै दिन रजनी, रवि के रथ ठहरान लगे।
उड़न लगे चहुँ ओर पताका, पीरे पट फहरान लगे।
बोलत मोर कोकिला कूकत, अम्मन मौर दिखान लगे।
गंगाधर ऐसे में मोहन किन सौतिन के कान लगे। (बुंदेली)

(ग) अमरइया मां कोइली बोली करै, सुन सुगना रे।
रंग भरी मोरी देहियां गमना मांगै रे। (बाघेली)

(घ) कुइली कुहु तान।
बोछार मुराडी जान।
तौ का—ए लो लो अः (मुंडा लोकगीत)

1. भुइयाँ गवैंडे हर होय चार
घर होय गिहथिन गऊ दुधार
.....
कहैं घाघ तब सबही झूठा।
उहाँ छाँड़ि इहपै बैकुँठा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पाँच परग नग्र अयोध्या,
जहाँ चारों भइया कुंआर।
इतौ माँगैं बेटी अनधन सोनवाँ,
बरधी बरध धेनु गाय।
हथिया त माँगैं दुआर के चारे,
कोहवर मोहरा भजाय।
(अवधी लोकगीत)

"मेरे प्यारे साथियो ! चलो, झूमकर चलो, इठला कर चलो, धीरे-धीरे चलो। घर में तुम्हारी भाभी प्रतीक्षा करती होगी। मीठा मलीदा खाना और थकान मिटाना। गाड़ी में भरे हुए सोने को देखकर तुम्हारी भाभी फूल उठेगी।" किसान ने कहा।

"क्या खिलाओगे ? मलीदा ! अभी तुमने हमारे मुँह को बाँध दिया है तो घर में हम कैसे भाभी से बोल सकेंगे ? मीठी बातों से पेट नहीं भरता एक बैल बोला। (हलवी लोकगीत का अनुवाद)

मारवाड़ की एक बधू अपनी सुसराल के वैभव को बताती हुई कहती है कि दरवाजे पर हाथी झूमते हैं, घोड़ों की कतार लगी है, मतवाली सांडें (ऊँटनियाँ) खड़ी हैं, सुन्दर बैलों की घंटियों से हमेशा मीठी आवाजें आती रहती हैं। और दुधारी गायों के साथ उछलते-कूदते बछड़े आँगन में फिरते हैं।[1] गोधन की महिमा कौन गा सकता है ? गायों की पूजा करने वाला देश कभी भूखा नहीं रह सकता।

इस प्रकार लोक-काव्य का नन्दन वन इन रंग-बिरंगे विविध पक्षियों की मधुर ध्वनियों से अधिक सुहावना बन गया है। इसके प्राँगण में वैर-भाव को भूलकर हजारों पशु विचरते हैं और अपने अस्तित्व द्वारा विश्व की अलौकिक विभूति को प्रकट करते रहते हैं। यदि ये पशु-पक्षी न हों तो लोक-काव्य की भाव-गरिमा एवं सहस अनुभूतियों का न कोई अनुमान कर सकेगा और न भावुक हृदय इनको चित्रित करने में समर्थ ही हो सकेगा।

---

1. राजस्थान के ग्राम गीत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दूसरा भाग

(विभिन्न भाषाओं के काव्य में पशु-पक्षी वर्णन)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लोक-कथाओं में पशु-पक्षी

लोक-कथाएँ इस परम सुन्दर सृष्टि की [illegible] हैं। इनमें जन-जन का सुख-दुख भरा पड़ा है। परमात्मा भी अपने विश्रान्ति के समय इन [illegible] को सुनकर मानसिक क्लान्ति को भूल जाता है। सागर की लहरों के समान ये कथाएँ अनन्त हैं। इन में सत्यं, शिवं, सुन्दरं की जैसी सुन्दर व्याख्या हुई है वैसी अन्यत्र मिलना कठिन है। [illegible]गती का तो स्रष्टा ज्ञात है, लेकिन इन कहानियों का प्रणेता आजतक अज्ञात कहा गया है। लोक-जीवन की प्रदर्शिका ये कथाएँ सदैव निर्मित होती रहती हैं, फिर भी इनमें परम्परागत भावनाओं, मान्यताओं, विश्वासों एवं कर्म-मीमाँसाओं की सरिता चिरकाल से प्रवाहित है। वेदों में इनका आदि रूप सुगमता से मिल जाता है। जैन-बौद्ध-साहित्य की आधार-शिला यही लोक-कथा है।

संस्कृत का प्रथम महाकाव्य लोक-कथा पर ही तो आधारित है। वस्तुतः लोक-जीवन से सम्बन्धित प्रत्येक साहित्य लोक-कहानी से दूर नहीं जा सकता। सार्वभौमिकता का सिद्धान्त लोक-कला एवं लोक कथा में ही प्रतिबिम्बित हुआ है। यहाँ पशु-पक्षी, ईंट-पत्थर, सुर-असुर, मानव-दानव, वृक्ष-लता, आदि सब एक साथ उठते-बैठते और खाते-पीते हैं। नील-गगन की छाया में निवास करने वाले समस्त चराचर लोक-कथाओं में समभाव से रहते आए हैं। न यहाँ ऊँच-नीच हैं, न यहाँ धनी-निर्धन का भेद है और न यहाँ झोंपड़ी-महल में डाह है। लोक-कथा के प्रमुख पात्र सिंह, लोमड़ी, रीछ, बन्दर, कबूतर, मोर, बगुला, गीदड़, खरगोश, हरिण, हंस, कोयल, तोता, कुत्ता, बिल्ली, न्यौला, चूहा, चिड़िया, कौआ, टिटहरी, बकरी, गाय, भैंस, मुरगा, मुरगी, आदि अनंत पशु-पक्षी मानव की बोली बोलते हैं, और समय-समय पर दूत, पण्डित, पाचक, उपदेशक, संहारक, विचारक, धोबी, तेली, रानी, पुजारी, साधु, मन्त्री, वैद्य, आग, आँधी, फूल, कमल, चन्द्रमा, सूर्य, विमान, कुल्हाड़ी, चाकू, लाठी आदि बनकर अपनी अलौकिकता का परिचय देते हैं। लोक-साहित्य में स्थान विशेष की महत्ता के साथ तद्देशीय पशु-पक्षियों का अनेक रूपों में वर्णन हुआ है। इनके अभाव में ये कथाएँ नीरस बन जावेंगी। राजनीति के गूढ़ सिद्धान्त इन विहंगों एवं पशुओं के माध्यम से सरल बनाए गए हैं। हमारे धर्माचार्यों ने धार्मिक तत्त्वों के निरूपण को पशु-पक्षियों के दृष्टान्तों से ही सर्व-ग्राही बनाया है। संस्कृति एवं सभ्यता के अनुशीलन में भी इन कथाओं का विशेष महत्त्व है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कई लोक-कहानियाँ ऐसी हैं जिनमें पक्षियों तथा पशुओं ने धर्मोपदेश देकर मानव को सजग बनाया है और उसे संस्कृति के साथ रहने को प्रेरित किया है। पुराणों में आई हुई ऐसी कथाएँ अधिक संख्या में हैं। जिस प्रकार गृह में खिड़कियों के रहने से स्वच्छ वायु का संचार होता है उसी प्रकार लोक-कहानियों में पशु-पक्षियों के आ जाने से पाठक एवं श्रोता के मानस में नवीन उल्लास का प्रस्फुटन होने लगता है। जिस प्रकार चिकनी मिट्टी के लग जाने से खुरदरी दीवार सलौनी लगने लगती है उसी प्रकार इन कथाओं में पशु-पक्षियों की उछल-कूद से रसीलापन व्याप्त हो जाता है। सच तो यह है कि लोक-जीवन का प्रत्येक पहलू पक्षियों की मधुर ध्वनियों से मुखरित और पशुओं की कर्मशीलता से प्राणवान है। लोक-कथाओं के अध्येताओं ने इस बात को स्वीकार किया है कि भूमण्डल की इन कथाओं में प्रधानरूप से, अप्रधान रूप से, परोक्ष रूप से, अपरोक्ष रूप से, प्रतीक रूप से एवं आलंकारिक रूप से, पशु-पक्षियों का उल्लेख हुआ हो।

लोक-कथाओं का जो वर्गीकरण हुआ है उसमें पशु-पक्षी विषयक कथाओं का भी निर्देश किया गया है। डॉ० सत्येन्द्र ने ब्रज की लोक-कथाओं के आठ रूप स्वीकार किए हैं—1. गाथाएँ; 2. पशु-पक्षी सम्बन्धी कथाएँ; 3. परी की कथाएँ; 4. विक्रम की कथाएँ; 5. बुझौवल सम्बन्धी कहानियाँ; 6. निरीक्षण गर्भित कहानियाँ; 7. साधु-पीरों की कहानियाँ; और 8. कारण-निर्देशक कहानियाँ।

श्री गणेश चौबे ने भोजपुरी लोक-कथाओं को 13 भागों में विभाजित किया है—1. सृष्टि-कथाएँ; 2. देवताओं अतिमानवों, राक्षसों एवं प्रेतों की कथाएँ; 3. चमत्कार की कथाएँ; 4. साहस की कथाएँ; 5. ठगी और धोखे की कथाएँ; 6. जातिविषयक कथाएँ; 7. पशु-पक्षी एवं पौधों की कथाएँ; 8. व्रत-त्यौहार की कथाएँ; 9. हाजिर जवाबी एवं चालाकी की कथाएँ; 10. ऐतिहासिक अनुश्रुतियाँ; 11. कहावतों की उत्पत्ति की कथाएँ; 12. पहेली कथाएँ और 13. यौन सम्बन्धी-कथाएँ।

श्री समीर ने सन्थाली लोक-कथाओं को नौ श्रेणियों में रखा है—1. सृष्टि की कथाएँ जिनमें पृथ्वी, आकाश, मनुष्य, सूर्य, चन्द्रमा, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे आदि की उत्पत्ति, स्थिति आदि से सम्बन्धित कथाएँ हैं; 2. सन्थालों के विभिन्न गोत्रों एवं रीति-रिवाजों की उत्पत्ति एवं मान्यताओं से सम्बन्धित कथाएँ; 3. भूत-प्रेत, देवी-देवता, ओझा-डाइन आदि से सम्बन्धित कथाएँ; 4. राजा-रानी, प्रेमी-प्रेमिका, पति-पत्नी आदि से सम्बन्धित कथाएँ, जिनमें रूप कथाएँ भी हैं; 5. मित्रता-या शत्रुता सम्बन्धी कथाएँ; 6. पिता-पुत्र, भाई-भाई, भाई-बहन, सास-बहू आदि से सम्बन्धित कथाएँ; 7. बाघ-सिंह, भालू, सियार, मुर्गी आदि पशु-पक्षियों से सम्बन्धित कथाएँ; 8. विभिन्न जाति के लोगों से सम्बन्धित कथाएँ तथा; 9. अन्य कथाएँ। इस प्रकार लोक-कथा साहित्य में पशु-पक्षियों ने अपना विशेष महत्त्व प्रदर्शित किया है। पंचतन्त्र तथा हितोपदेश की समस्त कथाओं के मुख्य पात्र तो ये ही नभचर और चतुष्पद हैं। बृहत्कथा श्लोक संग्रह, बृहत्कथा मंजरी, कथा सरित्सागर, वैताल पंचाविंशतिका, सिंहासन द्वात्रिंशिका एवं शुक-सप्तति आदि कथा ग्रन्थों

1. ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन, पृष्ठ 83
2. आजकल (लोक-कथा अंक), पृष्ठ 48

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में वर्णित कहानियों के कतिपय पात्र विहंग तथा पशु हैं।

लोक-कथाओं की विशेषताओं का यदि विश्लेषण किया जाय तो यह स्वीकार करने में किसी को भी हिचकिचाहट न होगी कि प्रेम की परिपूर्णता में मंगल-कामना की भावाभिव्यक्ति में वियोगी के विरह-निवारण तथा रहस्योद्घाटन में इन पशु-पक्षियों ने विशेष सहयोग दिया है। डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय के मतानुसार लोककथाओं की निम्नाँकित विशिष्टताएँ हैं :—

1. प्रेम का अभिन्न पुट।
2. अश्लील शृंगार का अभाव।
3. मनुष्य की मूल प्रवृत्तियों से निरन्तर साहचर्य।
4. मंगल कामना की भावना।
5. संयोग में कथा का अन्त।
6. रहस्य, रोमाञ्च एवं अलौकिकता की प्रधानता।
7. उत्सुकता की भावना।
8. वर्णन की स्वाभाविकता।[1]

कहानी कहनेवाले वृद्ध पुरुष, काकियाँ, नानियाँ एवं दादियाँ कथा के प्रारंभ तथा समाप्ति पर जो कतिपय पंक्तियाँ मंगलाचरण और उपसंहार के रूप में कहती हैं, उनमें अनायास ही पशु-पक्षियों का उल्लेख हो जाता है जिसके द्वारा वे अलौकिकता, उत्सुकता, रोचकता एवं सुन्दर कल्पना को जन्म देती हैं। बुन्देलखण्ड में आज भी लम्बी रातें काटने के लिए अथवा बालकों को प्रमुदित करने के हेतु ग्रामों में जो कथाएँ कही जाती हैं। उनका प्रारम्भ पशु-पक्षियों के नामों से इस प्रकार होता है—

किस्सा-सी झूँठी न बातों-सी मीठी
घड़ी-घड़ी का बिसराम, जाने सीताराम
शक्कर का घोड़ा, सकलपारे की लगाम
छोड़ दो दरियाब बीच
चला जाए छमा छम छमा छम
इस पार घोड़ा उस पार घास
न घोड़ा घास कौं खाय
न घास घोड़ा कौं खाय।
इतने के बीच,
दो लगाई घींच में
तऊ न आए रीति में

1. लोक-साहित्य की भूमिका, पृष्ठ 132

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तब धर कड़ोरे कीच में;
झट आ गए बस रीति में,
हसियाँ-सी सीधी तकुवा-सी टेढ़ी
हाथ भर ककरी, नौ हाथ बीजा
होय होय, खेरे गुन होय,
जरिया को काँटो, अठारह हाथ लाँबो,
आधो छिरिया ने चर लव,
आधे पै बसे तीन गाँव,
एक ऊजर, एक खजूर एक में मानसई नइयाँ।
अजर में बसौं उल्लू।
खजूर बैठौं टिल्लू।
टिल्लू बोलैं चूँ चूँ चूँ
उल्लू बोलैं हूँ हूँ हूँ।
जो इन बातन खों झूँठी मानें
तो राज को दण्ड और जात खों रोटी देय।
कहता तो कहता पर सुनता सावधान चइये।
न कैंबे बारे खौं दोस,
न सुनबे बारे खौं दोस।
दोस तो ऊ खौं,
जा ने किस्सा रचकर खड़ी करीं।

हम देखते हैं कि पशु-पक्षियों की दुनिया ने हमारे कथा-साहित्य को पूर्णरूपेण आच्छादित कर रखा है। एक युग था जब मानव पशु-पक्षियों के साथ रहता था और उनकी चिन्ताओं को अपनी फिक्र समझता था। उस आदिम काल में निर्मित ये कथाएँ फिर पशु-पक्षियों को कैसे भुला सकती थीं। उस युग की परम्परा इतनी दृढ़ थी कि जो आज भी छिन्न-भिन्न न हो सकी। आदि युगीन इन्सान की साँसें जंगलों में बीतीं जो पशु-पक्षियों से घिरे हुए थे। जिधर वह जाता इन्हें देखता था। वह इनके साथ सोता खेलता, और भोजन करता था। परिणामस्वरूप इस इन्सान की भावनाएँ इन प्राणधारियों के ही साथ एकाकार हो गईं। इस एकीकरण में मानव ने पशु-पक्षी का भेद भुलाया और इन्हें अपने ही परिवार का एक अंश समझा। यदि उस काल में यह आत्मीयता न होती तो मनु की सन्तान पृथ्वी-तल में जीवित न रह पाती।

जन-समूह द्वारा प्रणीत ये कथाएँ मानवता की धरोहर हैं। इनमें पशु-पक्षियों के स्वभाव का निरूपण सचाई के साथ हुआ है जो एक मस्तिष्क की व्याख्या न होकर समाज विशेष की अनुभूति का परीक्षित परिणाम है।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सिंह को बलवान् माना गया है। कहा जाता है कि जंगल के सम्पूर्ण जीव इस भयावह वन्य-पशु से सदैव काँपते रहते हैं, लेकिन लोक-कहानियों में इसे दब्बू, मूर्ख और सत्तू चाटने वाला बताया गया है। कभी यह गीदड़ से डर जाता है तो कभी लोमड़ी से छकाया जाता है। कभी वह खरगोश की बातों में आकर तालाब में डूब मरता है तो कभी बैल की डकार से डरकर झाड़ियों में छिप जाता है। कभी वह गधे को अपनी पीठ पर बैठाता है तो कभी नाई के उस्तरे से भयभीत होकर उसे बहुत-सा धन दे देता है। कभी वह खीर खाता है तो कभी किसान के कहने से सत्तू चाटने लगता है। कभी वह हल में जुतकर खेत जोतता है तो कभी कुल्हाड़ी से अपनी पूँछ कटवाकर बँडा बन जाता है। मालूम होता है कि जंगल में रहकर मनुष्य ने अपने बल-पौरुष से मृगराज को भयभीत किया और अपना सेवक स्वीकार करके कानन की जनता को निर्भय बना दिया था। इस प्रकार सिंह की भयंकरता और बलशालिता लोक-कथाओं में हमेशा के लिए नष्ट हो गई।

× × ×

गीदड़ चालाकी में सब से आगे देखा जाता है। ऊँट की पीठ पर वह बैठता है और भैंस का दूध मीठी-मीठी बातें कहकर वह चट कर जाता है। कभी वह सिपाही बनकर मोदी को धमकाता है तो कभी तीस मारखाँ बनकर सिंह की चुल में बैठ जाता है। कभी वह रंग में डूबकर नीला हो जाता है और परमेश्वर का दूत बनकर जंगल का राजा कुछ समय के लिए बन बैठता है। कभी वह घुड़की देकर हाथी से अपना पैर दबवाता है तो कभी मस्तक पर तिलक लगाकर भगवान् के भोग को खा जाता है और पुजारी की आँखों में धूल झोंक देता है। कभी वह सिंह का मंत्री बनकर जंगल के पशुओं से काम लेता है और कभी बुढ़िया के सिर के जूँ निकालकर उसकी सब रोटियों को खा जाता है।

× × ×

लोमड़ी भी चालाकी में गीदड़ से कम नहीं है। कभी वह नाचकर मुर्गी के बच्चों को रिझाती है और मौक़ा पाकर उन्हें ले भागती है। कभी वह हाथी की सूँड पर बैठ कर गंगा स्नान करने जाती है, तो कभी दर्जी को कहानियाँ सुनाकर उससे सुन्दर पोलका बनवा लेती है। कभी वह शेर को छकाती है तो कभी गीदड़ को चकमा देकर उसके पके बेरों को खा जाती है। लोमड़ी बदला लेने में बड़ी चतुर है।

× × ×

कहानियों में बन्दर भी कुछ अंशों तक चतुर चित्रित हुआ है। मगर से दोस्ती करके उसने गंगा की खूब सैर की और गंगा-पार जाकर मीठे-मीठे फल खाये। बीच गंगा में मगर ने उसके दिल को लेना चाहा लेकिन तुरन्त ही बन्दर ने कहा कि मेरा दिल तो पेड़ पर टँगा है। बन्दर की यारी प्रसिद्ध है। मतलब के लिए वह मित्र बन जाता है और काम हो जाने पर अपना घर देखता है। कभी वह भूत को डराने के लिए महाभूत बनता है और दही के मटके को गिराकर कहता है कि यह मेरा थूँक है। कभी वह नाई से बाल बनवाता है और दाम माँगने मर उसके गाल को चांटा मार कर लाल कर देता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बन्दर-घुड़की मशहूर है। खों-खों करके वानर दूसरों के हाथ से मिठाई छीन लेता है।

× × ×

चूहा से सम्बन्धित अनेक लोक-कथाएँ प्रचलित हैं। शेर के पंजे में आकर वह विनय करके छूट जाता है और जाल में फंस जाने पर वह शेर की प्राण-रक्षा करता है। चूहा भी धमकी देना जानता है। वह फटकार कर कपड़े वाले से कपड़ा लेता है; दर्जी से टोपी बनवाता है और टोपी पहनकर राजा के सामने खड़ा होकर कहता है—

मेरा टोपा अच्छा।
जैसा फूल का गुच्छा।
राजा का सिर नंगा।
वह है बड़ा लफंगा।

राजा क्रुद्ध होकर चूहे की टोपी को छीन लेता है। और फिर वापिस कर देता है। इस पर वह कह बैठता है—

राजा जी डर गए।
मोरी टोपी दे गए।

चूहे को चालाक, बहादुर और नीतिज्ञ बताया गया है; लेकिन राजा की आज्ञा से जब उन्होंने स्नान करना शुरू किया तब से बिल्लियों के द्वारा उनका विनाश हो रहा है। पहले ये कभी नहाते नहीं थे, इसीलिए बिल्लियाँ उन्हें खाती भी न थीं।[1]

इस प्रकार अनेक पशुओं के स्वभाव का चित्रण इन कथाओं में हमें मौलिक रूप में प्राप्त होता है।

पक्षियों की भी अनेक विशेषताएँ हैं। कौआ हौआ से भी बढ़कर है। इसने ही सबसे पहले पृथ्वी का पता लगाया था। तोता हजारों मील जाकर अपने स्वामी का काम करता है।

कबूतर ने समय पर संदेश पहुँचाकर अनेक राज्यों को नष्ट होने से बचाया है। हंस परोपकारी विहंग है। दूसरों को सचेत करके इसने अपनी पुनीत भावना का परिचय दिया है। बगुला का ढोंग प्रसिद्ध है। बहकाकर मछलियों को निगलना इसे खूब आता है। मैना रूठकर गालियाँ देने लगती है लेकिन तोता के मनाने पर वह अपना मान छोड़ देती है। मुर्गा अपने कानों में दस मन गेहूँ भरकर बनिये को छका देता है। इन लोक-कथाओं में विहंग प्रश्न करते हैं, चक्की पीसते हैं, हाथी को डराकर भगाते हैं, भविष्य की बातें करते हैं, अपने पेट से हीरे उगलते हैं, राजकुमार और राजकुमारी बनते हैं, धर्मोपदेश देकर साधुओं की आँखें खोलते हैं, राज सभा में खडे होकर फ़ैसला सुनते हैं, और अवसर आने पर दूसरों के हित के लिए आग में कूद जाते हैं।

---

1. घास क्यों बढ़ी? (आदिवासियों की लोक-कथाएँ)—लेखक श्री चन्द्र जैन।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक बुन्देली कहानी में कोयल राजमहल के समीप खड़े हुए पेड़ पर रात में बैठकर पहले पहर में पूछती है—किस मुख दूध पियाऊँ ? दूसरे पहर में चिल्लाती है—ऐसो कहूँ न दीख; तीसरे पहर में रोकर कहती है—सब बम्मन मर जाएँ, सब बम्मन मर जाएँ। अन्त में पुरोहित की स्त्री इन सब प्रश्नों का उत्तर देकर राजा से बीसगाँव पुरस्कार में प्राप्त करती है। कौआ की बात ही निराली है। पक्षियों को वह हमेशा छकाता रहता है। मौके पर वह पशुओं को भी अपने चंगुल में फँसा लेता है। कहा भी तो है :—

मानुष में नौआ।
पंछिन में कौआ।

एक तालाब के किनारे पर बेर के पेड़ थे। वे खूब फल रहे थे। गीदड़ ने एक मिट्टी का चबूतरा बनाया। उस पर वह बैठा। उसके कान में दो मेंढ़क लटक रहे थे। गीदड़ हाथ में एक लम्बा बाँस रखता और किसी को भी बेर न खाने देता था। एक कौआ आया। वह सुन्दर साड़ी पहने हुआ था। उसने गीदड़ के आगे नाचना शुरू किया। नाचते हुए उसने गाया—

सोने कौ चबूतरा।
चन्दन लीपौ रे।
कान में राजा कुण्डल पहरै।
जय महाराजा रे।

गीदड़ कौए के नाच पर प्रसन्न हुआ और उसे अपना दीवान बना लिया। अब क्या था। कौए ने खूब बेर खाए।

× × ×

एक चिड़िया चिरवा से रूठकर बाहर चल देती है। रास्ते में वह कौआ, राजा, हंस, बगुला और चील से मिलती है, लेकिन वह किसी के भी पास नहीं ठहरती। अन्त में एक बूचे कुत्ते पर वह रीझती है। पूछने पर कुत्ता कहता है—बनिया कौ गुर खानें, नरदा कौ पानी पीने और राई घूरे पै सो जानें। चिड़िया कुत्ते के साथ रहकर आनन्द से दिन बिताती है। एक दिन गुड़ की चोरी करता हुआ कुत्ता मार खाता है और मर जाता है। चिरई (चिड़िया) विलाप करती है—

नीम भरे कौआ छोड़े।
ताल भरे बगुला छोड़े।
सेज सपेती राजा छोड़े।
हाय मोरे बूचे कुत्ता।
अब मैं किसै जाऊँ।

इसी प्रकार एक चतुर चिरैया खूंटे की दरार में घुसे हुए चने के दाने को बढ़ई की सहायता से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्राप्त कर लेती है। पहले तो चिरैया की बात न बढ़ई, न राजा, न रानी, न चूहा, न बिल्ली, न कुत्ता, न लाठी, न आगी, न सागर कोई नहीं सुनता। अन्त में चींटी सहायता करने को तैयार हो जाती है। चींटी हाथी की सूंड में घुसना चाहती है। हाथी डरकर कहता है—

हमें न मारियो कोऊ,
मैं सागर सोखँ सोऊ,

फिर सागर चिल्लाता है—

हमें न सोखियो कोऊ,
हम आग बुझावै सोऊ।

आग लाठी को जलाने जाती है। लाठी कुत्ते को पीटना चाहती है। कुत्ता बिल्ली को पकड़ना चाहता है। बिल्ली चूहे के पीछे दौड़ती है। चूहा रानी के कपड़ों को काटना स्वीकार करता है। रानी भयभीत होकर राजा को समझाती है। राजा बढ़ई को हुक्म देता है। वह खूंटे को फाड़ देता है। चिरैया चने के दाने को खाकर प्रसन्न हो जाती है। सब जानते हैं कि शकुन्तला का पालन दयालु मोरों ने किया था। एक बाघेली लोक-कथा में बताया गया है कि कबूतर एक अनाथ बच्चे को अपनी पीठपर बैठाकर भगवान शंकर के पास ले गया था और माता पार्वती से प्रार्थना करके उसने बच्चे के माता-पिता को पुनः जीवित करवाया था। यह सत्य है कि मानव की अपेक्षा इन पशु-पक्षियों में अधिक बुद्धि, प्रेम, कौशल, सहानुभूति, दया, दृढ़ता और विवेक है।

लोक-कथाओं में नायक-नायिकाओं की सुन्दरता के जो सरस वर्णन प्राप्त होते हैं, उनमें भी शिष्ट काव्य की भाँति कुछ पशु-पक्षियों का नामोल्लेख हुआ है। बुन्देली लोक-कहानियों के छैला की खूब-सूरती का चित्र इन पंक्तियों में पढ़िए—

कैसा है वह ? गुलाब कैसो फूल, शेर कैसो बच्चा; सूरज कैसी जोत, बैल कैसो चमकीला, सोने कैसो रंग, सिर पै जरीका मंडील बाँधे, ऊपर से कीमखाब का अँगा और मिशरू का पैजामा पहनें, कमर में रेशमी फेंटा बाँधे, जीमें चाँदी की मूठ कौ नक्काशीदार पेश कब्ज खुसो भओ, कान में मोतियन के बड़े-बड़े बाला, गरे में सूबेदारी कँठा, हाथ की अँगुरियन में जड़ाऊ अँगूठी शोभा दे रई, मुँह में पान को बीड़ा दाबें, पावन से लड़ी को चर्राटेदार जोड़ा पहिने, छैल-छबीला, गबरू ज्वान—देखतें भूख भजे .....

बुन्देलखण्ड की छबीली की भी आकर्षक झाँकी है। जिसकी छवि-वर्णन में लोक-कथाकार ने हाथी और कोयल को याद किया है—कैसी है वह ? बार-बार मोती गुहें, सोलह-सिंगार करै, बारह आभूषण पैनें, सेंदुर सुरमा लगायें, लोंग लायचियन कौ बटुवा कमर में खोसें। कैसो ऊकौ सरूप है ? सोने की सी मूरत, चंपे कैसो रंग, पूने कैसो चंदा, दिवारी कैसो दिया, कनेर कैसी डार कि लफ लफ कर दूसर हो जाए, पान खाय तो गरे में पीक दिखाय, कंकरी मारो तो रकत झलक आय, फूंक मारो तो आकास में उड़ जाय, बीच में उमेठ दो तो गाँठ पर जाय,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लकरिया से घुमादो तो साँप-सी लिपट जाय, पलँग पै हिरा जाय तो बारह बरस ढूँढे न मिले। बढ़ने में दोज कैसो चंदा, सुकुमारता में नैनू कैसो लौंदा, सोने कैसे केस, होली कैसी झाँक, कोयल कैसी बोली, हाथी जैसी चाली, बिजली कैसी चमक, केवरे के फूल जैसी महक, गंगा की धार जैसी पवित्र और अपने निश्चय में ऐसी जैसी पत्थर की चट्टान, ऐसी एक अलबेली नार एक हाथ में सोने की झारी और एक हाथ में थारी लायें, अपने रूप और गुनन को प्रकास फैलाउत छम-छम करत चली आरई·····

समृद्धि के चित्रण में लोक-कथाकार गायों, भैंसों, हाथियों एवं घोड़ों का बात-बात में उल्लेख करता चलता है। किसी राजा के शिकार का ब्योरा देते समय कहानीकार हजारों पशु-पक्षियों की सूची पेश कर देता है। बाग-बगीचों में विविध विहँगों की बोलियों को बिना सुनवाए वह मानता ही नहीं है। जंगलों की भयंकरता बताते समय वह कहानी सुननेवालों को शेर, चीता, रीछ, भेड़िया आदि वन्य जीवों की भयावह बोलियों को सुनाकर भयभीत करके ही अपनी सफलता मानता है। सरोवरों के दृश्यों में वह विशेषरूप से जलचर विहँगों को चिल्लाता हुआ दिखाता है। बुन्देलखण्ड की बरात का चित्र खींचता हुआ एक कथाकार रंग-बिरंगे घोड़ों का विवरण प्रस्तुत कर रहा है—'बरात चल पड़ी। सुन्दर-सुहावने बाजे-सहनाई, बाँसुरी, टिमकी, ढोलक, नगारे, मृदंग, ढपला, रमतूला और तुरही आदि बजने लगे। बराती लोग अपनी-अपनी सवारियों पर—रथ, सेजागड़ी, सुखपाल, तामझाम और बग्घियों में बैठकर चलें। दूल्हा के हमजोली, छैल छबीले, जबान अनोखी पोशाक किये अपने-अपने घोड़ों पर सवार होकर उनको नचाते-कुदाते और कदम, दुलकी, सरपट, रौहाल, कबूतरी सागाम आदि नाना प्रकार की चालें चलाते मजे के साथ कभी बरात के आगे कभी पीछे और कभी बीच में चले जा रहे थे। कहाँ तक गिनायें तरह-तरह के रंग के घोड़े थे—कच्छी, मुश्की, हरियल, श्यामकर्ण, अवलख, पंचकल्याणी, काले, कबत, कुम्मैत, हंसा और सभी अपने कीमती साजबाज लगाम पलेंचा, तंग, जेरबंद, अगेठी, पिछैटी, रूपहली पायरों और कंठा-कलंगी से सुसज्जित थे।[1]

यदि हम ध्यान से लोक-कथाओं का अध्ययन करें तो हमें स्वीकार करना पड़ेगा कि उनमें पशु-पक्षियों का समावेश इतना अधिक है कि इनका अस्तित्व इनके अभाव में सन्देहास्पद हो जावेगा। वन्य जातियों की कहानियों में तो सर्वत्र विहंग और चतुष्पद छाए हुए हैं। समय पड़ने पर ये सब कुछ करने लगते हैं। इन्हें कुछ भी असम्भव नहीं है। बैगा के मकान की दीवाल पर चिन्तित मयूर ताली बजाते ही नाचने लगता है। गोंड का लम्बी दाढ़ी-पूँछ वाला बकरा शेर को देखकर डरता नहीं है, वह अपना परिचय यों देता है—

अर चुन्नी खाई परचुन्नी खाई
सिंह खाये सात।
और जिस दिन दस बाघ न हों,
उस दिन करता हूँ उपास।

---

1 बुन्देलखण्ड की ग्राम कहानियाँ (लेखक का वक्तव्य)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पनिका की बकरी अपने सींगों को लुहार के पास जाकर तेज़ करवाती है और शेर से लड़कर उसे मार डालती है।

खैरवार का पालतू बाज चिड़िया के अंडों को खाना चाहता है लेकिन पहले वह अपना मुँह धोने के लिए आतुर है। वह कुम्हार के पास जाकर कहता है—

कुम्हार कुम्हार तू कुम्भराज
मैं पक्षिराज !
तू मटका दे मैं मुँह धोऊँ।
फिर चिड़िया के अंडा खाऊँ !

मुण्डा की एक लोक-कथा में बताया गया है एक बाघिनी सुन्दर स्त्री बनकर आती है और मुण्डा युवक को फंसाकर जंगल की ओर ले जाती है। मुण्डा का पालतू तीतर भी उसके साथ चलता है। कुछ दूर जाकर वह चिल्लाता है—

चीं चीं चीं चीं मालिक,
यह बाघिन स्त्री है।
हे मालिक ढाल तलवार मत छोड़ना,
आगे चलकर शेर मिलेगा।
वह तुम्हें खा डालेगा।
आगे मत जाओ सरदार।
सामने मौत खड़ी है।

मुण्डा युवक अपने मित्र तीतर की बात को मान लेता है और वापिस घर की ओर मुड़ जाता है। वस्तुतः इन कानन-निवासिनों के कार्य-व्यापार में पशु-पक्षियों की आत्मीय भावना निष्कपट रूप से विद्यमान है। इस प्रकार ये कथाएँ कभी तो हमारा केवल मनोविनोद करती हैं और कभी नीति-विषयक बातों को समझाकर हमारी आँखें खोल देती हैं। बालकों के निमित्त रची हुई कहानियों में विनोद अधिक रहता हैं और ऐसी कथाएँ बहुत छोटी भी होती हैं, लेकिन युवकों को सुनाने योग्य कहानियाँ लम्बी होकर उपदेशात्मक रहती हैं। उनका अभिप्राय तथ्यपूर्ण एवं प्रभावोत्पादक होता है। इनके उद्देश्य में गंभीरता तथा लोक-कल्याण की कामना सदैव परिलक्षित है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संस्कृत-काव्य में पशु-पक्षी वर्णन

संस्कृत-काव्य अपनी सरसता के लिए प्रसिद्ध है। विश्व की समस्त भावनाओं को अपनाते हुए इस काव्य ने अपनी विशालता का सदैव परिचय दिया है। यह सम्पूर्ण जगत इस आदि काव्य की आत्मा में एकाकार हुआ है। संस्कृत भाषा देव-वाणी के रूप में समादृत हुई और आज भी इसका साहित्य जगत और जीवन के विविध रूपों के परिज्ञान के लिए पढ़ा जा रहा है। भारतीयता का जो सुन्दर विवेचन इस काव्य में हुआ है वह निश्चयतः मौलिक तथा अनुभूतिमय है। इसमें आदर्शवाद की प्रमुखता है और एक प्रशस्त लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सतत प्रेरणा है। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के अनुशीलनार्थ संस्कृत का अध्ययन परमावश्यक है।[1] आत्म-शान्ति भी इससे प्राप्त होती है।

संस्कृत भाषा भारत की एक अमूल्य एवं अनुपम निधि है। अनादि काल से हमारे देश के जातीय जीवन पर उसका अपरिमित प्रभाव पड़ा है। भारतीय साहित्य और संस्कृति उससे पूर्णतया अनुप्राणित है। देववाणी पद से विभूषित होकर वह आज भी भारतीय जनता के हृदय में श्रद्धा का संचार करती है। ऐसी देश-प्राण भाषा को 'मृत' कहना उसके प्रति घोर अन्याय करना है। जो लोग संस्कृत को 'पुराने ज़माने की चीज़' कहकर उसे अवहेलना की दृष्टि से देखते हैं वे वास्तव में उसके महत्त्व को नहीं जानते। यह बलपूर्वक कहा जा सकता है कि आज भी संस्कृत ग्रीक और लैटिन की अपेक्षा कहीं अधिक जीवित है। अंग्रेजी की अपेक्षा संस्कृत हम भारतीयों के जीवन को अधिक स्पर्श करती है। हमारा धार्मिक जीवन इसका ज्वलन्त प्रमाण है। वेदों और उपनिषदों, रामायण और महाभारत, गीता तथा भागवत का आज भी देश-व्यापी प्रचार है। हमारे देवालयों तथा तीर्थस्थानों में उसका प्रभाव आज भी अक्षुण्ण है। हमारे उपनयपन, विवाह आदि समस्त संस्कार तथा अन्य अगणित धार्मिक कृत्य संस्कृत में ही सम्पन्न होते हैं। साधारण शिक्षा प्राप्त भारतीय भी संस्कृत के दो-चार श्लोक अवश्य जानता है। भले ही संस्कृत का बाजार में या अदालत में प्रयोग न होता हो, फिर भी वह हमारी साँस्कृतिक भाषा है, हमारा धार्मिक साहित्य उसी में लिखा गया है। जैनों के अधिकाँश ग्रन्थ

---

1. I should advise every young man, who wishes to enjoy his life in India and to spend his years there with profit to himself and to others, to learn Sanskrit and to learn it well. (The Study of Sanskrit Literature by Max Muller)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संस्कृत में ही हैं। बौद्धों ने भी, जब प्राकृत-पाली की नवीनता नीरस हो चली, संस्कृत में ही अपने ग्रन्थ रचे। व्यावहारिक और सामाजिक जीवन पर भी उसका प्रभाव प्रत्यक्ष परिलक्षित होता है। सभी प्रान्तीय भाषाओं की आदि-जननी संस्कृत ही है। तमिल और तैलुगु जैसी द्राविड़ भाषाओं पर भी संस्कृत का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। हिन्दू ला की मूल भित्ति संस्कृत में लिखी स्मृतियाँ हैं। संस्कृत के आयुर्वेद और ज्योतिष-शास्त्र यदि सैंकड़ों के जीविकोपार्जन के मार्ग हैं तो असंख्य दीन-दुखियों के स्वास्थ्य और सुख के साधन भी हैं। संस्कृत साहित्य में बिखरी हुई अनेक सूक्तियाँ व्यवहार में प्रतिदिन प्रयुक्त होती रहती हैं। संस्कृत साहित्य जीवित साहित्य है और दूसरों को जीवन प्रदान करने की क्षमता रखता है। इसी साहित्य की उत्कृष्टता ने जर्मनी, फ्राँस, इंगलैण्ड, अमरीका आदि पाश्चात्य देशों के मनीषियों को अपनी ओर आकृष्ट किया। पिछले सौ वर्षों में इन विदेशी विद्वानों द्वारा संस्कृत वाङ्मय का जो अनुशीलन एवं अनुसंधान हुआ है, उसने संसार के सन्मुख इस साहित्य के महत्त्व को पूर्णतया प्रतिष्ठित कर उसके अध्ययन की अजस्र धारा बहा दी है।[1]

संस्कृत-काव्य के प्रसिद्ध कवियों ने अपनी मौलिक रचनाओं से इस देववाणी को अमर बना दिया है। महाकवि अश्वघोष, कालिदास, भारवि, भट्टि, माघ, श्री हर्ष आदि एवं नाटककार—भास, कालिदास, हर्षवर्धन, भट्टनारायण, विशाखदत्त, भवभूति, मुरारि प्रभृति तथा मुक्तक कवि अमरुक एवं जयदेव संस्कृत कविता के सतत देदीप्यमान रत्न हैं। कालिदास की उपमाएँ, भारवि का अर्थ-गौरव एवं दण्डि का पद-लालित्य विश्व-प्रख्यात है।[2]

संस्कृत-कविता-कामिनी की प्रशंसा में निम्नस्थ श्लोक पर्याप्त है—

यस्याश्चौरश्चिकुर निकरः कर्णपूरो मयूरो,
भासो हासः कविकुल गुरुः कालिदासो विलासः।
हर्षो हर्षो हृदय वसतिः पञ्चवाणस्तु वाणः,
केषाँ नैषा कथय कविता कामिनी कौतुकाय॥

—जिसका चौर कवि केश-पश है, मयूर कवि जिसका कर्णफूल है, भास कवि जिसका मन्द हास्य है, कवि-कुल-गुरु कालिदास जिसका विलास है, हर्ष कवि हर्ष है, वाणभट्ट कवि जिसका हृदयस्थित कामदेव है ऐसी कविता कामिनी किस को प्रमुदित नहीं करेगी ?

अन्य वर्ण्य विषयों की भाँति संस्कृत कवियों ने पशु-पक्षियों के सम्बन्ध में भी पूर्ण तन्मयता के साथ लिखा है। निम्नलिखित छन्द इन प्राणियों की स्वाभाविक प्रवृत्तियों तथा गति-विधि के परिचायक हैं। इन चित्रों के चित्रण में काव्यकारों ने अपनी बाह्य एवं अन्तर्दृष्टि का भावुकता से प्रयोग किया है।

---

1. संस्कृत साहित्य की रूप-रेखा, लेखक पं० चन्द्रशेखर पाण्डेय तथा श्री शान्तिकुमार नानूराम व्यास, पृष्ठ 1-2.
2. उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थ गौरवम्।
दण्डिनः पद-लालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सिंह—

गर्जन्हरिः साम्भसि शैल कुञ्जे
प्रतिध्वनीनात्म कृतान्निशम्य ।
पदं बबन्ध क्रमितुं सरोषः,
प्रतर्कयन्नन्य मृगेन्द्र नादम् ।

—सरोवर युक्त शैल कुञ्ज में गर्जना करता हुआ सिंह अपनी ही प्रतिध्वनि सुनकर अन्य सिंह की कल्पना करता तथा क्रोध के साथ आक्रमण करने के लिए अपने पैरों को उठा रहा है ।

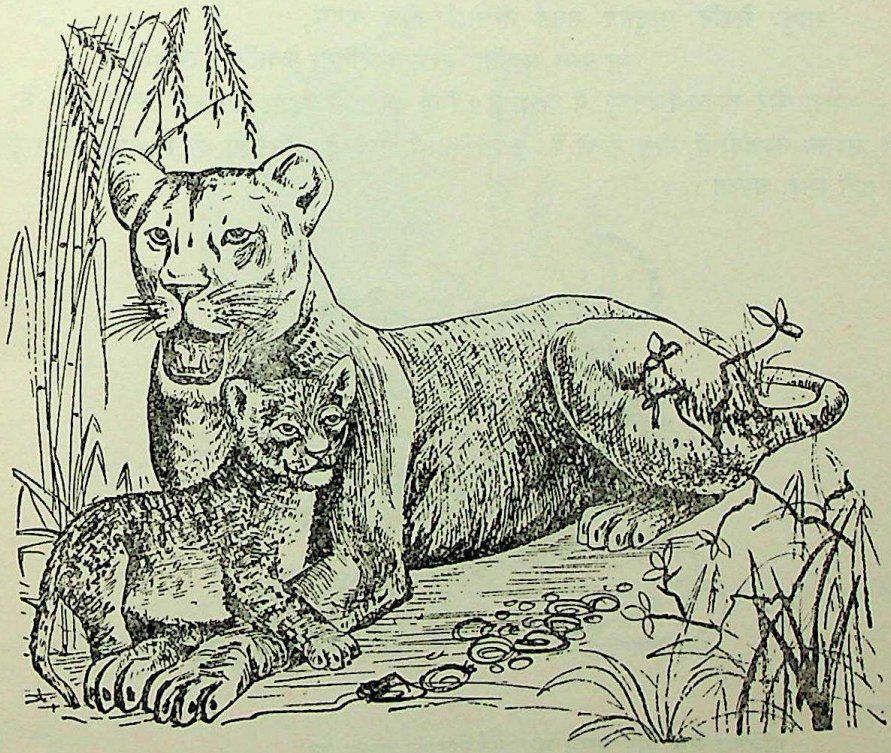

लीढग्रस्त विपाण्डुराग्रनखयोराकर्ण दीर्णं मुखं,
विन्यस्याग्रिमयोर्युगे चरणयोः सद्यो विभिन्नद्विपः ।
एतस्मिन्मद गंध वासित सटः सावज्ञतिर्यक्चलत्,
सृक्वान्ता हति धूत लोल मधुपः कुञ्जेषु शेते हरिः ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

—अभी-अभी मारे गए हाथी के मद-गंध से सुवासित आलवाला तथा टेढ़े एवं चंचल मुख-कोण के प्रहार से लोलुप भ्रमरों को हटाता हुआ यह सिंह भयावह है। इसने चाट-चाटकर अपने पंजों के नाखूनों को श्वेत कर लिया है। कानों तक फैलाए हुए मुँह को इसने अपने आगे के दो पैरों के बीच कर लिया और पर्वत पर स्थित झाड़ियों के मध्य में वह सो रहा है।

× × ×

व्याघ्र—

व्याघ्रः सेवति काननं सुगहनं सिंहो गुहां सेवते,
हंसः सेवति पद्मिनीं कुसुमितां गृध्रः श्मशानस्थलीम्।
साधुः सेवति साधुमेव सततं नीचोऽपि नीचं जनम्,
या यस्य प्रकृतिः स्वभाव जनिता केनापि न त्यज्यते॥

—व्याघ्र घोर कानन (जंगल) में रहता है। सिंह गुफा में रहता है। हंस कमल वन में, गीध मरघट में, सज्जन सज्जनों में, नीच नीचों में सदा निवास करते हैं। जिसका जो स्वभाव होता उसे वह कभी भी नहीं छोड़ सकता।

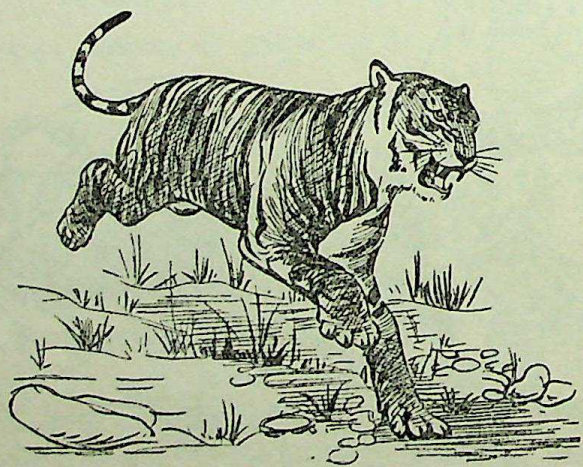

महोक्ष—

गर्जित्वा मेघ धीरं प्रथम मथ शनैर्मण्डली कृत्य देहं,
शृङ्गाभ्यां भीषयन्तावभिमुखमवनीं दारयन्तौ खुराग्रैः।
मन्दं मन्दं समेत्य स्थिर निहित पदं दत्तधातौ सरोषं,
युध्येते चालयन्तौ कुटिलितमसकृत्पुच्छमेतौ महोक्षौ।

—ये दोनों उन्मत्त साँड पहले तो मेघ के समान गम्भीर गर्जना करते हैं। फिर अपने-अपने शरीर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को गोलाकार बनाते हुए सींगों से एक-दूसरे को भयभीत करते हैं। तत्पश्चात् अपने खुरों से जमीन को खोदते हुए एवं पूँछ फटकारते हुए ये धीरे-धीरे एक-दूसरे पर प्रहार करने लगते हैं।

हाथी—

अम्भोमुचां सलिलमुद्वमतां निशीथे,
तालीवनेषु निभृतं स्थिर कर्णतालाः।

आकर्णयन्ति करिणोऽर्धनिमीलिताक्षा,
धारारवान्दशन कोटि निषण्ण हस्ताः।

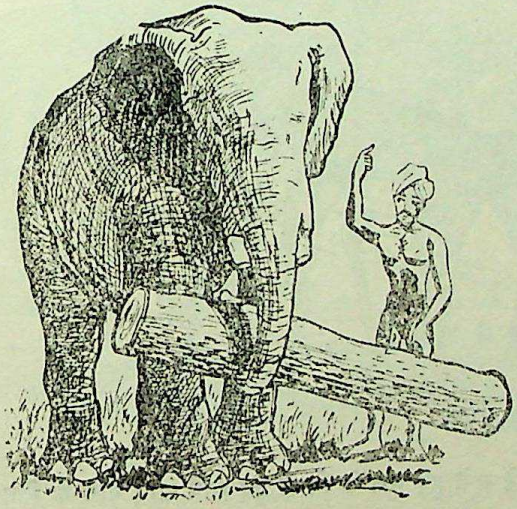

—रात में ताड़ के वृक्षों के मध्य में आँखे मूंदे हुए और दाँतों पर अपनी सूँड को रखे हुए ये हाथी बरसते हुए मेघों की धारा-ध्वनि को चुपचाप सुन रहे हैं।

मृग (हरिण)—

ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्ध दृष्टिः,
पश्चार्धेन प्रविष्टः शरपतन भयाद्भूयसा पूर्व कायम्।

दर्भैरर्धावलीढैः श्रमविवृत मुख भ्रंशिभिः कीर्ण वर्त्मा,
पश्योदग्र प्लुतत्वाद्वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

—पीछे आते हुए रथ की ओर बार-बार गर्दन तिरछी करके देखता हुआ, तथा बाण लगने की आशंका से शरीर के पिछले भाग को आगे के भाग में मिलाता हुआ यह मृग बहुत भयभीत है। इसने

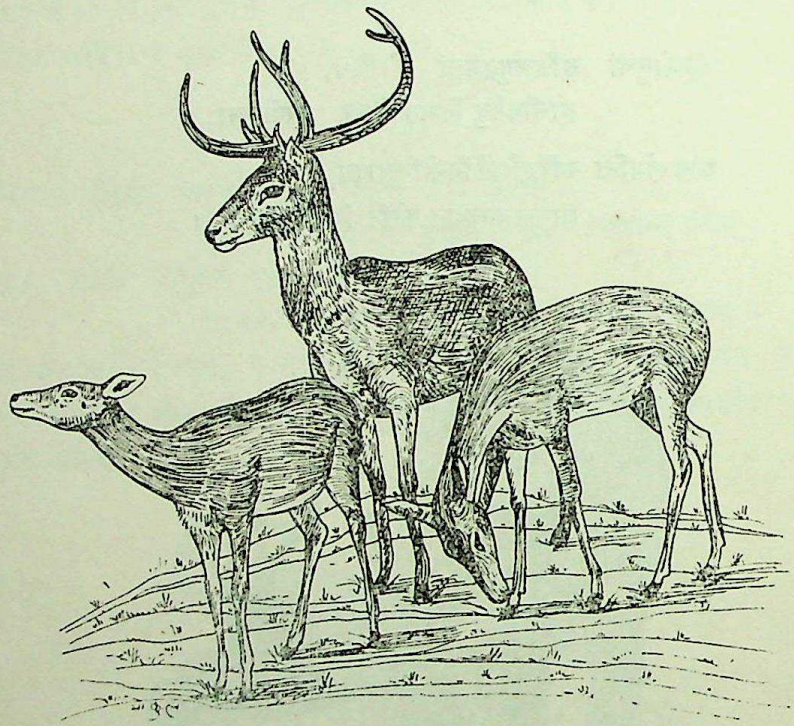

दौड़ से थकित होकर अपने खुले हुए मुख से गिरते हुए आधे खाए घास के तिनकों से मार्ग को भर दिया है। देखो लम्बी और ऊँची छलाँगें मारता हुआ यह हरिण पृथ्वी पर कम तथा हवा में अधिक चलता दिखाई देता है।

× × ×

यस्य त्वया व्रण विरोपणमिङ्गुदीनां,
तैलं न्यषिच्यत मुखे कुश सूचि विद्धे।
श्यामाकमुष्टि परिवर्धित को जहाति,
सोऽयं न पुत्र कृतकः पदवीं मृगस्तेः।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

—जिसके कुश के नोकों से कटे हुए मुख को तुमने इंगुदी का तेल लगाया था, और जिसे तुमने धान खिला-खिलाकर बड़ा किया था वही पुत्र-समान यह मृग तेरे रास्ते को रोक रहा है।

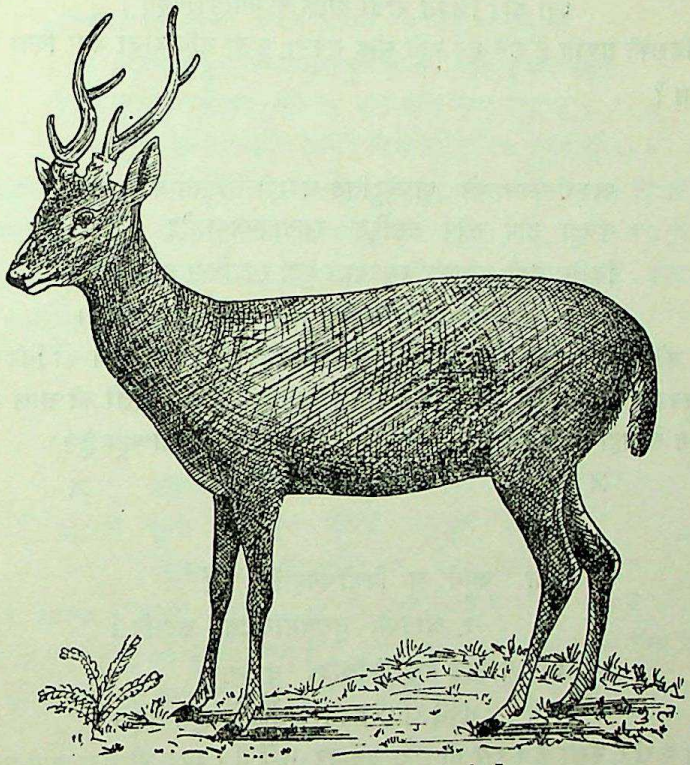

कपि (बन्दर)—

यदर्का शुक्लान्तस्फुरदरुण पुष्पोदरधिया प्रविष्टो,
नासान्तः क्वणितमणि डिम्भः प्रकुरुते।
कपिः स्थित्वा स्थित्वातदिदमनु श्रृण्वन्विचकितो,
धनुत्यास्यं रौति प्रचलति चलत्युच्छलति च।

—सूर्य की किरणों से म्लान और इधर-उधर हिलती हुई बन्दर की नाक को लाल पुष्प समझ कर एक काला भौंरा उसमें घुस गया, जिससे कपि विशेष व्यथित है और उसकी गुंजार से चकित हो रहा है। कभी वह सिर को हिलाता है तो कभी मुख को। कभी वह रोता है तो कभी दौड़ता और चलता है। इस प्रकार बन्दर परेशान है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्वान—

यः स्वभावो हि यस्यास्ते स नित्यं दुरतिक्रमः ।
श्वा यदि क्रियते राजा तत्किं नाश्नात्युपानहम् ।

—जो जिसकी प्रकृति है उसे वह नहीं छोड़ सकता, कुत्ता यदि राजा बना दिया जाए तो क्या वह जूते को न खायेगा ?

मेष—

पार्श्वास्फालावले पाच्चटुलित चरणोल्लेखिता काश देशः
संघट्टा टोप कोप प्रसरित रसनापल्लवालीढ सृक्कः ।
किंचित्साची कृतास्यः स्फुरदधर पुटः स्फारिता ताम्र चक्षु-
र्घोणा घाताभिलाषादपसरति रुषं दर्शयन्नेष मेषः ।

—पीठ को फुलाता हुआ, पैरों को हवा में हिलाता हुआ, क्रोध से जीभ को निकालकर मुख चाटता हुआ, मुँह को झुकाता हुआ, ओठों को चंचल करता हुआ, क्रुद्ध होकर आँखों को लाल बनाता हुआ और नाक के अग्र भाग से प्रहार करता हुआ यह मेष (मेढ़ा) अपना शौर्य बता रहा है ।

× × ×

करभ (ऊँट)—

रूक्षं वपुर्न च विलोचनहारि रूपं
न श्रोतयोः सुखदमारटितं कदापि ।
इत्थं न साधु तव किंचिदिदं च साधु
तुच्छे रतिः करभ कण्टकिनि द्रुमे यत् ।

—तेरा शरीर रूखा है । रूप भी तेरा मनोहर नहीं है । शब्द भी तेरा कर्ण-सुखद नहीं है । इस प्रकार तुझमें कुछ भी सुन्दरता नहीं है । तुम्हारी फिर भी यह विशेषता है कि तुम तुच्छ तथा काँटों से भरे हुए वृक्षों को प्रेम से खाते हो ।

भल्ल (रीछ)—

नयन पथ निरोधाक्रोधनिर्धूत भाल-
भ्रमद विरल रोमस्तोम बद्धान्धकारः ।
कृमि कवल न लोभोत्खात वल्मीकिरन्ध्रो-
त्थित फणिफण घातैरुच्छलत्येष भल्लः ।

—क्रोध से गर्दन हिलाता हुआ एवं मुँह पर उड़ते हुए बालों से अंधकार को बाँधने वाला, यह रीछ दृष्टि-निरोध से व्याकुल है । कीड़े खाने के लोभ से बामी को खोदते हुए रीछ ने सहसा सर्प की फुँकार सुनी और वह भयभीत होकर हाँपने लगा ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

घोड़ा—

पश्चादङ्घ्री प्रसार्य त्रिकनतिविततं द्राघयित्वाङ्गमुच्चै
रासज्याभुग्न कण्ठो मुख मुरसि सटां धूलिधूम्रां विधूय ।
घास ग्रासाभिलाषाद नवरत चलत्प्रोथ तुण्ड स्तुरंगो,
मन्दं शब्दायमानो विलिखति शयनादुत्थितः क्ष्मां खुरेण ।

—(प्रातःकाल में सोकर उठे हुए घोड़े का यह चित्र है) जगकर घोड़ा अपने पिछले पैरों को फैलाता है। पुट्ठों को लम्बा करता है। गर्दन के पास मुँह को ले जाता है। वह धूल से भरे हुए छाती के बालों को हिलाता है। घास खाने की इच्छा से वह बार-बार अपने मुख को घुमाता है और धीरे-धीरे हिन-हिनाता है। वह कभी-कभी अपने खुरों से पृथ्वी को भी खोदता है।

शृगाल—

जलस्योच्चैः पुच्छं शिरसि निहितं जीर्णं जटिलं,
यदृच्छाव्यापन्नद्विपपिशित लेशाः कवलिताः ।
गुहागर्ते शून्ये सुचिर मुषितं जम्बुक सखे,
किमेतस्मिन्कुर्मो यदसि न गतः सिंह समताम् ।

—हे मित्र शृगाल ! अपनी जीर्ण पूँछ को भी तुमने अपने सिर पर रखा है और आकस्मिक मरे हुए हाथी के माँस के टुकड़ों को भी तुमने खाया है। शून्य गुफा में भी तुमने बहुत समय तक निवास किया है, फिर भी यदि तुमने सिंह की समानता नहीं पाई तो इसमें हमारा क्या दोष है।

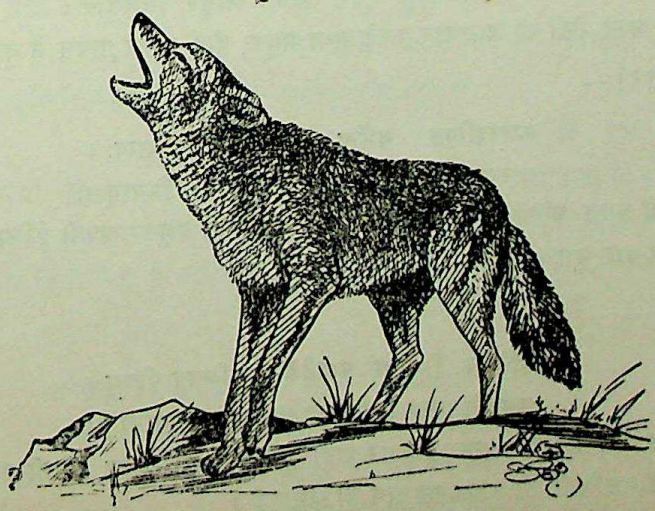

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मार्जार (बिल्ली)—

मार्जारो महिषो मेषः काकः का पुरुषस्तथा ।
विश्वासात्प्रभवत्भ्येते विश्वासस्तत्र नो हितः ।।

—बिल्ली, भेंसा, मेढ़ा, कौआ और डरपोक मनुष्य विश्वासः करने पर सिर पर आकर बैठते हैं। इसलिए इन पर विश्वास करना ठीक नहीं है।

सूकर—

उदरम्भरिता लोके तवैव नान्यस्य दुःशका दृष्टा ।
उत्सृष्ट पुरीषमपि स्वादूकुर्वन्वराह यद्भुङ्क्षे ।।

—संसार में तुम ही ऐसे हो जो केवल पेट भरने के लिए जीवित हो। अपनी ही विष्टा (मल) को तुम बड़े चाव से खाते हो।

गर्दभ—

रे-रे गर्दभ वामः शब्दस्ते सम्मतो मुदे नृणाम् ।
पुनरपि कथमिव निन्द्यो निगद्यसे तन्न जानीमः ।।

—हे गधे ! तुम्हारा सुन्दर शब्द लोगों को बहुत प्रिय है। फिर भी तुम्हें निंद्य कहा जाता है सो क्यों ?

मयूर (मोर)—

मण्डलीकृत्य वर्हाणि कण्ठैर्मधुर गीतिभिः,
कलापिनः प्रनृत्यन्ति काले जीमूत मालिनि ।

—मोर अपने पंखों को चक्राकार करके तथा मधुर, गीत गाकर पावस में नृत्य करते हैं।

पारावत (कबूतर)—

कलक्वणित गर्भेण कण्ठेनाघूर्णितेक्षणः ।
पारावतः परावृत्य रिरंसुश्चुम्बति प्रियाम् ।।

—अपनी प्रमत्त आँखों को घुमाता हुआ यह प्रिय-भाषी कबूतर अपनी प्रेमिका को रमण करने की इच्छा से बार-बार चूम रहा है।

बगुला—

नालेनेव स्थित्वा पादेनैकेन कुञ्चित ग्रीवम् ।
जनयति कुमुद भ्रान्तिं वृद्ध बको बालमत्स्यानाम् ।।

—कमल-नाल के समान एक पैर पर खड़ा हुआ यह वृद्ध बगुला अपनी गर्दन को मोड़े हुए है। इसे देखकर छोटी मछलियों को कमल का भ्रम हो जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तोता—

अखिलेषु विहंगेषु हन्त स्वच्छन्दचारिषु।
शुक ! पञ्जर बन्धस्ते मधुराणां गिरां फलम् ॥

—दुःख है कि स्वच्छन्द विहार करने वाले समस्त पक्षियों में, हे तोते ! तुझे ही पिंजड़े में बन्द होना पड़ा ! यह तेरी मधुर वाणी का फल है।

चक्रवाक—

त्यज चक्रवाकि ! शोकं बधान धैर्यं सहस्व समयममुम्,
अयमेव वासरमणिर्हरिष्यते शाप मूर्छां ते ॥

—हे चकवी ! धैर्य को धारण करके तू शोक को भूल जा और इस समय को भी सहन कर ले। यही सूर्य तेरे शाप-संकट को दूर कर देगा।

उलूक—

यद्यपि तरणेः किरणैः सकलमिदं विश्वमुज्वलं विदधे।
तदपि न पश्यति घूकः पुराकृतं भुज्यते कर्म ॥

—यद्यपि सूर्य की किरणों से समस्त संसार प्रकाशित होता रहता है, फिर भी उल्लू नहीं देख पाता है। यह पूर्व कुकर्म का फल ही है।

चातक—

रे रे चातक सावधान मनसा मित्र क्षणं श्रूयताम्,
अम्भोदा बहवो वसन्ति गगने सर्वेऽपि नैतादृशाः ॥
केचिद्वृष्टिभिरार्द्रयन्ति धरणीं गर्जन्ति केचिद्वृथा,
यं यं पश्यसि तस्य तस्य पुरतो मा ब्रूहि दीनं वचः ॥

—हे प्रिय मित्र चातक ! सावधान होकर मेरी बात सुन लो। आकाश में बहुत-से बादल हैं, लेकिन सब एक-से नहीं हैं। कुछ तो वर्षा करके पृथ्वी को गीली कर देते हैं और कुछ केवल गर्जना करके ही रह जाते हैं। जिस किसी मेघ के सामने तो अपनी दीनता प्रकट मत कर।

गरुड़—

दामोदर मुदराहित भुवनं यो वहति लीलया गरुडः।
कस्य तरोरुपरिष्टात्खिन्नोऽसौ श्रान्तिमपनयतु ॥

—समस्त विश्व को उदर में रखने वाले विष्णु भगवान को गरुड़ क्रीड़ा-रूप में ही अपनी पीठ पर ले जाता है। ऐसा कौन-सा वृक्ष है जिसके ऊपर बैठकर यह पक्षी विश्राम करे ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मराल (हंस)—

नीरक्षीर विवेके हंसालस्यं त्वमेव तनुषे चेत् ।
विश्वस्मिन्नधुनान्यः कुलव्रतं पालयिष्यति कः ॥

—हंस ! यदि तुमने नीर-क्षीर के भेद में आलस्य किया तो इस संसार में अपना कुल-व्रत कौन पालेगा ?

कोकिल—

काकः कृष्णः पिकः कृष्णः को भेदः पिक काकयोः ।
वसन्त समये प्राप्ते काकः काकः पिकः पिकः ॥

—काक भी काला होता है और कोयल भी । वसन्त आने पर कौए और कोयल का भेद मालूम हो जाता है ।

तावच्चकोर चरणायुध चक्रवाक, पारावतादि विहगाः कलमालपन्तु ।
यावद्वसंत रजनी घटिकावसानमासाद्य कोकिल युवा न कुहू करोति ॥

—चकोर, मुर्गा, चकवा, कबूतर आदि विहंग तभी तक बोलते रहते हैं जब तक वसन्त के मंगल प्रभात में कोयल अपना कुहू-कुहू शब्द नहीं सुनाने लगती ।

काक—

वयं काकाः वयं काका जल्पन्तीति प्रगे द्विकाः ।
तिमिरारिस्तमो हन्यादिति शंकित मानसाः ।

—प्रातःकाल में सूर्य उदित होकर अन्धकार को नष्ट करता है । कौए भयभीत होकर चिल्लाते हैं कि हम कौएँ हैं, अन्धकार नहीं हैं, अतः हे सूर्य ! हमारी रक्षा करना, हमें न मारना ।

चकोर—

चुलुकयसि चन्द्र दीधितिमविरलमश्नासि नूनमङ्गारान् ।
अधिकरणमुष्ण मनयोः किमिह चकोरावधारयसि ॥

—हे चकोर ! तू चन्द्रकिरणों को निरन्तर पीता रहता है और अंगारों को भी खा लेता है । ऐसी स्थिति में तू सूर्य को न देखता हुआ चन्द्रमा से ही क्यों प्यार करता है ?

खञ्जन—

चित्रं कनक लतायां शरदिन्दुस्तत्र खञ्जनद्वितयम् ।
तत्र च मनोजधनुषी तदुपरि गाढान्धकाराणि ॥

—कनक लता के ऊपर शरद-चन्द्रमा है और वहाँ दो खञ्जन हैं । कामदेव के दो धनुष भी वहाँ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
सुशोभित है तथा उनके ऊपर गहरा अन्धकार छाया हुआ है। यह आश्चर्य की बात है। (यहाँ सुन्दरी के शरीर, आनन, नेत्र, भ्रकुटि एवं केश-कलाप की ओर संकेत है)

गृद्ध (गीध)—

गृध्राकारोऽपि सेव्यः स्याद्धंसाकारै सभासदैः,
हंसाकारोऽपि संत्याज्यो गृध्रकारैः सभासदैः।

—हंस के समान सज्जनों के लिए गीध-तुल्य मानव भी सेव्य है और हंस-सदृश पुरुष भी गीधों की भाँति सभासदों से त्याज्य है।

यों तो संस्कृत साहित्य में हजारों पशु-पक्षियों का उल्लेख है लेकिन स्थानाभाव के कारण यहाँ कतिपय खेचर और पशुओं का ही परिचय दिया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी-कवि और पशु-पक्षी

अन्य भाषाओं के काव्यकारों के समान ही हिन्दी के कवियों ने प्रगाढ़ स्नेह एवं आत्मानुभूति के साथ इन मूक प्राणियों को अपने सरस काव्य में स्थान दिया है तथा इनके माध्यम से अपने गूढ़तम भावों को भी सुगमता से सर्व सुलभ बनाया है।

काव्य की रस-मयता के साधन ये चतुष्पद एवं पक्षधारी द्विपद हैं। कविता की मधुरिमा, आलंकारिता, प्रतीकात्मकता, भावसुकुमारता, तथा मर्म-स्पर्शी व्यञ्जना का बहुत कुछ चित्रण पशु-पक्षियों को आलंबन अथवा उद्दीपन मानकर किया गया है। कल्पित साधना की सार्थक प्रतीति एवं अन्तर्निहित चिर अतृप्ति की पूर्ति कवि ने नील गगन में उड़ते हुए विहग को देखकर और कानन में विहार करते हुए स्वच्छन्द पशु पर दृष्टि डालकर की है।

कवि की मौन सरस्वती खग के मधुर स्वर को सुनकर मुखरित हो जाती है। वायु के वेग के समान दौड़ते हुए मृगों को देखकर विचार-मग्न कवि की कल्पना सीमित पार्थिव बंधनों को अनेक बार भूल बैठी है। रहस्यवाद, छायावाद, प्रतीकवाद, प्रयोगवाद, आदि विविध वादों की प्रेरणात्मक प्रवृत्तियों में विहंगों की भावनाओं तथा पशुओं की भाव-निष्ठा ने बहु अंशों में सहयोग दिया है। वस्तुतः प्रकृति के सुखद प्रांगण में कर्त्तव्य-रत कवि अपने इन चिरंतन साथियों को कभी भी नहीं भूल सकता। काव्य के शाश्वत तत्व की अनुभूति कराने वाले एवं बौद्धिक तथ्यों में जीवन का भावात्मक सामञ्जस्य स्थापित करनेवाले ये पशु-पक्षी सदैव मानव-समाज के लिए प्रेरणाशील रहेंगे। यहाँ हिन्दी के कतिपय कवियों की कविताओं के कुछ उद्धरण दिए जा रहे हैं जिनमें पशु-पक्षियों के विविध रूप पाठकों के सामने प्रस्तुत हुए हैं।

कुर्कट नकुल करौंच कपि, हिरन हंस सुक मोर।
असन करत नृप रष्षि ढिग, सूचक जहर चकोर॥

× × ×

हंस होत गति भंग, मोर कटु सबद उचारै।
रोवत क्रौंच कुरंग, सुकवि छंडत आहारै॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सूआ वमन करंत, निकुल कुर्कट मित्राई।
ऐसे चरित करंत, जानि आगम दिनाई।
चकोर परस्पर हित रहित, कहत्त चंद पारष्ष लहि।
तिहि काज आनि रष्पत इनहि, भूपत भोजन साल महि।

(चंद वरदायी, पृथ्वीराज रासो)

अम्बर कुरजां कुरलियां, गरजि भरे सब ताल।
जाकै गोविन्द बीछुड़े, तिनकौ कौण हवाल॥
पीर रूप हरि नाँव है, नीर आन व्यौहार।
हंस रूप कोइ साध है, तत का जोनण हार॥
तूं पिंजरू हंउ सूअटा तोर, जमु मंजारू कहा करै मोर।
तूं तरवर हंउ पंखी आहि, मंदभागी तेरो दरसनु नाहिं॥
नर कै साथि सूवा हरि बोलै, हरि परताप न जानै।
जो कबहूँ उड़ि जाय जंगल मैं, बहुरि न सुरतै आनै॥
सरवर तट हंसणी तिसाई।
जुगति बिना हरि जल पिया न जाई।
पीया चाहै तोलै खग सारी;
उड़ि न सकै दोऊ पर भारी।

(संत कबीर)

पिड सौं कहेहु सँदेसड़ा, हे भौंरा ! हे काग
सो धन बिरहै जरि मुई, तेहि क धुवाँ हम्ह लाग॥
पदमिनी गवन हंस गए दूरी।
कुंजर लाज मेल सिर धूरी।
बदन देखि घटि चंद समाना।
दसन देखि कै बीजु लजाना।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खंजन छपे देखि कै नैना।
कोकिल छपी सुनत मधु बैना।
पहुँचहि छपी कँवल पौनारी।
जाँघ छपा कदली होइ बारी।

बसहिं पंखि बोलहि बहु भाखा, करहिं हुलास देखि कै साखा।
भोर होत बोलहिं चुहचूही, बोलहिं पाँडुक एकै तूही।
सारौं सुआ जो रहचह करहीं, कुरहिं परेवा औ कुरवरहीं।
'पीव पीव' कर लाग पपीहा, 'तुही तुही' कर गडुरी जीहा।
'कुहू कुहू' करि कोइल राखा, औ भिंगराज बोल बहु भाखा।
'दही दही' करि महरि पुकारा, हारिल बिनवै आपन हारा।
कुहुकहिं मोर सुहावन लागा, होइ कुराहर बोलहि कागा।

(जायसी)

नकुल सुदरसन दरसनी, छेमकरी चक चाष।
दस दिसि देखत सगुन सुभ, पूजहिं मन अभिलाष।

तनु विचित्र कायर बचन, अहि अहार मन घोर।
'तुलसी' हरि भए पच्छधर, ताते कह सब मोर॥

सोई सेंवर तेइ सुवा, सेवत सदा बसन्त।
'तुलसी' महिमा मोह की, सुनत सराहत सन्त॥

केवट निसिचर बिहग मृग, किए साधु सनमानि।
'तुलसी' रघुवर की कृपा, सकल सुमंगल खानि॥

(तुलसीदास)

सेंवर फल सुरंग सुक निरखत, मुदित भयो खग-भूप।
परसत चोंच तूल उधरत मुख, तृन छादित पसु कूप॥

कागहिं कहा कपूर खवाय, स्वान न्हवाये गंग।
खर को कहा अरगजा लेपन, मरकट भूषण अंग॥

मेरौ मन अनत कहाँ सुख पाव।
ज्यौं जहाज कौ पंछी उड़ि उड़ि फिरि जहाज पै आवै।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अद्भुत एक अनूपम बाग।

जुगल कमल पर गजवर क्रीड़त, ता पर सिंह करत अनुराग।
हरि पर सरवर, सर पर गिरिवर, गिरि पर फूले कंज पराग।
रुचिर कपोत बसत ता ऊपर, ताहू पर अमृत फल लाग।
फल पर पुहुप पुहुप पर पल्लव, तापर सुक पिक मृग मदकाग।
खंजन, धनुष चन्द्रमा ऊपर, ता ऊपर यक मनिधर नाग।
अंग अंग प्रति और और छबि, उपमा ताको करत न त्याग।
'सूरदास' प्रभु पियहुँ सुधारस, मानहुँ अधरन के बड़भाग।

(महात्मा सूरदास)

मंजारी आगे ह्वै आई, पुनि फिरि आंगन आई।
व्याकुल भई निकसि गई बाहिर कहुँधौं गए कन्हाई।
बाएँ काग दाहिने खर-स्वर, व्याकुल घर फिरि आई।

(सूरसागर)

कानन में बसै ऐसो आन न गरीब जीव,
प्रानन सों प्यारे प्रान पूजी जिस यहै है।
कायर सुभाव धरै काहूँ सों न द्रोह करें,
सब ही सों डरे दांत लिये तृन रहै है।
काहू सों न रोष पुनि काहू पै न पोष चहै,
काहू के परोख परदोष नाहिं कहै है।
नेकु स्वाद सारिबे को ऐसो मृग मारिबे को,
हाहा रे कठोर तेरो कैसे कर बहै है।

अब मेरे समकित सवन आयो।
बीति कुरीति-मिथ्यामति ग्रीषम पावस सहज सुहायो।
अनुभव-दामिनि दमकन लागी, सुरति घटा घन छायो।
बोलै विमल विवेक-पपीहा, सुमति-सुहागिन भायो।
गुरु-धुनि गरज सुनत सुख उपजत,
मोर-सुमन विहसायो।
साधक-भाव अँकूर उठे बहु,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जित तित हरष सवायो ।
अब मेरे समकित सावन आयो

(कविवर भूधरदास)

गयंद की चुराई चाल मैंहदी को लंक चोर्‌यो,
मुख तेरे चंद चोर्‌यो नासा चोरी कीर की ।
म्रिगीन के नैंन चोर्‌यो पिकीन के बैन चोर्‌यो,
औंठ तेरे लाल चोर्‌यो दैंत छवि हरी की ।।
कहें कवि गंग बैनी नाग तैं चुराई लाई,
भोंह तो कमान पल अर्जुन के तीर की ।
जेते तुम लूटे ते पुकारत कन्हैया जू पै,
एतीन की चोरी कहा छपेगी अहीर की ।।

(कवि गंग)

चंचल न हूजै नाथ अंचल न खैंचो हाथ,
सोवै नेक सारिका ऊ शुक तो सुवायौ जू ।
मंद करो दीप द्युति चंद-मुख देखियत,
दौर के दुराई आऊँ द्वार तौ दिखयो जू ।।
मृगज मराल बाल बाहिरै विडार देऊँ,
भायो तुम्हें केशव सु मोह मन भायो जू ।।
छक के निवास ऐसे वचन-विलास सुनि,
सौगुनो सुरत हूं तै श्याम सुख पायो जू ।।

(केशव दास)

बाजत नगारे घन, ताल देत नदी नारे,
झींगुरन झाँझ, भेरी भृंगन बजाई है ।
कोकिल अलाप चारी, नीलग्रीव नृत्य कारी ।
पौन बीन-धारी चाटी चातक लगाई है ।।
मनिमाल जुगुनू, मुबारक तिमिर धार,
चौमुख चिराग चारू चपला जराई है ।
बालम विदेस नए दुख कौं जनम भयौ,
पावस हमारे लायो विरह वधाई है ।।

(मुबारक)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जौं ते प्रान प्यारे परदेस को पधारे तौं ते,
विरह तै ऐसी भई ता तिय की गति है।
कटि कर ऊपर कपोलहि कमलनैनी;
सेनापति अनमनी बैठियै रहति है।
कागहिं उड़ावै कौहू कौहू करै सुगनौति,
कौहू बैठि अवधि के बासर गनति है।
पढ़ि पढ़ि पात्ती कौहू फेरि कै पढ़ति कौहू,
प्रीतम को चित्र में सरूप निरखति है।

(सेनापति)

बन बागन पिक बट परत की बिरहन मत मैन।
कुहो कुहो कहि-कहि उठत करि करि राते नैन॥

रनित भृँग-घंटावली झरति दान मधुनीरू।
मंद-मंद आवनु चल्यो, कुंजर कूंज-समीरू॥

अरुन सरोरूह कर-चरन दृग खंजन मुखचन्द।
समै आइ सुन्दरी सरद, काहि न करत अनन्द॥

स्वारथु, सुकृत न, श्रम वृथा, देखि विहंग विचारि।
बाज पराऐं पनि परि, तूं पच्छितु न मारि॥

लाज लगाम न मानहीं, नैना मो बस नाहिं।
ए मुंह जोर तुरंग ज्यों ऐंचता हूँ चलि जाहिं॥

(बिहारी)

कोकिल केकी कपोतन के कुल,
केलि करैं जहाँ आनन्द भारी।
सोच करो जिन होहु दुखी,
'मतिराम' प्रवीन सबै नर-नारी।
मंजुल-बंजुल कुंजन में,
धन पूंज सखी! ससुरारि तिहारी॥

(मतिराम)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बैरिन भई है कारी कोयल निगोड़ी यह,
तैसो ही भँवर कारो बासी बन-बाग को।
'भूषन' भनत कारे कान्ह को वियोग हिये,
सबै दुखदाई जो करैया अनुराग की ।।
कारौ घन घेरि-घेरि मारयो अब चाहत हैं,
एते पर करति भरोसो कारे काग को ।।

(महाकवि भूषण)

लाल बिदेस वियोगनि बाल,
वियोग की आग जई झुरि झूरी।
पान सों पानी सों प्रेम कहानी सौं,
प्रान ज्यौं प्राननि यों मत हूरी।
देवज अजु हि ऐवे की औधि
सुवीनति देखि बिसेखि बिसूरी।
हाथ उठायो उड़ाइबे को,
उड़ि काग गरे परी चारि चूरी।

रोके मृग मारग विलोके मृगराज मृग,
भेद मृग खोजत है वेद मृग नैनीके।

मन मन भावन को मानों किल किला शोभा,
सिंधु में थिरकि चाव चख झख पै झपट पर्‌यो ।।

(देव)

विभाकर कुंवरि तमालन की पाँति बीच,
बीचिनि मरीचै जागि लागीन जगमगी।
भावना भरीने हिय, गहर भँवर पेरे,
एकरस राग धुनि रंगीन रंगमगी।
चातकी भई है चाहि आनंद के अबुंद को,
बन घन ढूंढे रीझि डोलती डगमगी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रेम की पसीजीनि प्रवाह-रूप देखियत,
सदा स्याम के सिंगार-सार सों सगमगी ।।

(घन आनन्द)

याके बल वह लेत है पावक चिनगी खाई,
चंदहि जौ जारन लगौ तौ चकोर कित जाई ।।
जिहि ब्राह्मण पिय-गमन कौ सगुन दियो ठहराई
सजनी ताहि बुलाई दै प्रान-दान ले जाई ।।

(रसनिधि)

आनन हैं अरविंद न फूले,
अलीगन भूले कहाँ मंड़रात हौ ।
कीर तुम्हें कहा बाय लगी,
भ्रम बिम्ब के ओठन को ललचात है ।
'दास जू' ब्याली न बेनी बनावहै,
पापी कलापी कहा इतरात हौ ।
बोलती बाल न बाजती वीत,
कहा सिगरे मृग घेरत जात हौ ।

(कविवर दास)

जाइ तमाल लतानि के अन्तर
पी हित चंचल कै दृग फेरे ।
जैसी भई कहि तोष महा छवि,
तैसी कहा उपमा कवि हेरे ।
खंजन मीन मृगा से कहूँ
कहु कंजन भौंर चकोर संघेरे ।
एक ते होत अनेक भटू
करैं केते सरूप विलोचन तेरे ।

(कविवर तोष)

जब लौ घर को धनी आबै घरै
तब लौं इतनी करि जैबों करौ ।
'पद्माकर' ये बछरा अपने,
बछरान के संग चरैबो करौ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अब औरन के घर सों हम तें,
तुम दूनी दुहाकनी लैबो करौ।
नित साँझ सकारै हमारी ही तो,
हरि गैया भले दुहि जैवो करौ।
तीखे तेगवाही ने सिपाही चढ़ैं घोड़न पै,
स्याही चढैं अमित अरिंदन की एल पै।
कहै 'पदमाकर' निसान चढ़ैं हाथिन पै,
धूरि धार चढ़ैं पाक सासन के सैल पै।
साजि चतुरंग चमू जंग जीतिवे के हेतु,
हिम्मत बहादुर चढ़त फर फैल पै।
लाली चढ़ै मुख पै बहाली चढ़ै बाहन पै,
काली चढ़ै सिंह पै, कलापी चढ़ै बैल पै।
(पद्माकर)

नख शिख रूप की झला झली है सघनाई,
जंघ केल नाभि कूप आवै दरशन मैं।
हाथ मैं न ऊचै कटि केहरी दुबीच तहाँ,
उदर सरोवर अपार है तरन मैं।
'ग्वाल' कवि कुच-कोक दुरे कर बासन तें,
नैन ये न मृग भरैं चौकड़ी चलन मैं।
जो पै तुम्हें सौख है सिकार ही सों प्यारे लाल,
तौ पै क्यों न खेलौं तरुनी के तन-वन मैं।
(ग्वाल)

औरैं भाँति कोकिल, चकोर ठौर ठौर बोले,
औरैं भाँति सबद पपीहन के बै गए।
औरैं भाँति पल्लव लिए हैं बन्द बन्द तरु,
औरैं छवि-पुंज कुंज-कुंजन उनें गए।
औरैं भाँति सीतल सुगन्ध मंद डोलैं पौन,
द्विज देव, देखत न ऐसैं पल द्वै गए।
औरैं रति औरैं रंग औरैं साज औरैं संग,
औरैं बन, औरैं घन, औरैं मन ह्वै गए।
(द्विजदेव)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कूकै लगीं कोइलै कदम्बन पै बैठि बैठि,
धोए धोए पात हिलि-हिलि सरसै लगे।
बोलै लगे दादुर मयूर लगे नाचै फेरि,
देख कै संयोगी जन-हिय हरसै लगे।
हरी भई भूमि सीरी पवन चलन लागी,
लखि हरिचन्द्र फेर प्रान तरसै लगे।
फेरि झूमि-झूमि वरषा की ऋतु आई फेरि,
बादर निगोरे झूकि-झुकि बरसै लगे।
(हरिश्चन्द्र)

धाइ धाइ सिन्धुर मदंध फूले लोधनि सौं,
गन्ध लुब्ध ह्वै कै कन्ध रगरत गात हैं।
कहै, 'रत्नाकर' प्रभात अरुनाई माहिं,
बाघनि के लेरुवा लरत लुरियात हैं।
उठि-उठि धूम बन बासिनि के बासिनि तैं,
त्रासनि तैं सीत के तहांई मंडरात हैं।
पंछीगन सीस काढ़ि विटप बसेरनि तैं,
उमहि कछूक मौन गहि रहि जात हैं।
(कविवर रत्नाकर)

सरस - सुन्दर - सावन - मास था।
घन रहे नभ में घिर-घूमते।
बिलसती बहुधा जिनमें रही।
छविवती - उड़ती बक - मालिका।
... ...
विपुल मोर लिए बहु मोरिनी,
बिहरते सुख से स-विनोद थे।
मरकतोपम पुच्छ प्रभाव से,
मणि - मयी कर कानन कुंज को।
... ...

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्यारे सुचित्रित सितासित रंगवाले,
थे दीखते चपल-खंजन प्रान्तरों में।
बैठी मनोरम सरों पर सोहती थी,
आई समोद ब्रजमध्य मरालमाला।

(कविवर हरिऔध)

निहार सखि, सारिका कुछ कहे बिना शान्त सी।
दिये श्रवण है यहीं, इधर मैं हुई भ्रान्त सी।
इसे पिशुन जान तू, सुन सुभाषिणी है बनी।
'धरो ! खगि किसे धरूँ ? धृति लिए गए हैं धनी।

तुझ पर—मुझ पर हाथ फेरते साथ यहाँ।
शशक, विदित है तुझे आज वे नाथ कहाँ ?
तेरी ही प्रिय जन्मभूमि में, दूर नहीं।
जा तू भी कहना कि उर्मिला क्रूर नहीं।

... ...

लेते गए क्यों न तुम्हें कपोत, वे,
गाते सदा जो गुण थे तुम्हारे ?
लाते तुम्हीं हा ! प्रिय पत्र-पोत वे,
दुःखाब्धि में जो बनते सहारे।

(राष्ट्रकवि गुप्तजी)

भावुक प्राणों के नाजुक सपनों का
तुझ में डेरा।
वृक्षों वल्लरियों फलियों फूलों,
पर पहरा तेरा।
कोयल के पंखों की झंझावात,
नहीं ठहरी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कितनी बार कहा पर नटखट,
रात नहीं ठहरी ।

(पं० माखनलाल चतुर्वेदी)

कभी चौकड़ी भरते मृग-से,
भू पर चरण नहीं धरते ।

मत्त मतङ्गज कभी झूमते,
सजग शशक नभ को चरते ।

कभी कीश-से अनिल डाल में,
नीरवता से मुँह भरते ।

वृहत् गृद्ध से विहग छदों को,
बिखराते नभ में तिरते ।

बाँसों का झुरमुट,
सन्ध्या का झुटपुट ।

हैं चहक रही चिड़ियाँ,
टी-बी-टी-टुट्-टुट् ।

(पंत)

विद्रुम सीपी सम्पुट में,
मोती के दाने कैसे ?

है हंस न, शुक यह फिर क्यों,
चुगने को मुक्ता ऐसे ?

चातक की चकित पुकारें,
श्यामा-ध्वनि सरल रसीली ।
मेरी करुणार्द्र-कथा की,
टुकड़ी आँसू से गीली ।

(कविवर प्रसाद)

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उच्छ्वसित वक्ष पर चंचल है,
बक-पाँतों का अरविन्द-हार ।
तेरी निश्वासें छू भू को,
बन बन जातीं मलयज बयार ।
केकी-रव की नूपुर-ध्वनि सुन,
जगती-जगती की मूक प्यास ।
रूपसि तेरा घन-केश-पास ।

(महादेवी वर्मा)

यह बताया झट सुमन ने,
यह बताया मूक तृण ने ।
यह कहा बेसुध पिकी ने,
चिर पिपासित चातकी ने ।
सत्य जो दिव कह न पाया था अमिट सन्देश में ।
आँसुओं के देश में ?

(महादेवी वर्मा)

मनुहार विहंगम करते हैं ।
तब सूर्य किरण अंगड़ाती है ।
जब क्षितिज उसाँसें भरता है ।
तब चन्द्र किरण मुस्काती है ।

हंस रहा संसार खग पर,
कह रहा जो आह भर-भर,
लुट गए मेरे सलोने नीड़ के तृण पात ।
साथी प्रबल झंझावात ।

(बच्चन)

उन्नत शिर तरु खड़े तपस्वी-से दिखते थे ।
प्रतिपल निर्मल हिम रज से सुस्नात बात से,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तप:पूत वे एक पाद अज्ञात कामना,
शान्त 'अहं' से हीन पीन वक्षस्थल उन्नत
और कहीं मृग झुण्ड विचरते घूम रहे थे—
स्वेच्छा से, आकार निरतिशय अपनी गति से
चमरी मृग भी कभी उधर आकर रुक जाते।
पीकर जल पीयूष बैठते औ' तन्मय हो—
रोमन्थन में प्राणों का उत्सव वे पाकर,
मुक्त विवशता से आनन्दित आते-जाते।

(पं० उदयशंकर भट्ट)

आप ही मिटेगा तप-ताप का कलाप यह,
भीष्म-ग्रीष्म का तुरंत अन्त अब आवेगा।
जितना ही अधिक तपेगा उतना ही शीघ्र
चंडकर का प्रचंड तेज घट जावेगा।
छोड़ रही मेदिनी जो भाफ रूपी दीर्घ श्वास,
वही घन बन नभ-मण्डल में छावेगा।
अब वह पावस का काल नेक दूर नहीं,
जब तू मयूर! भरपूर सुख पावेगा।

(पं० गोपालशरणसिंह)

बोल दाह की कोयल मेरी, बोल दहकती डारों पर।
अर्द्ध दग्ध तरु की फुनगी पर, निर्जल-सरित कंगारो पर॥

आदमी का स्वप्न? है वह बुलबुला जल का
आज बनता और कल फिर फूट जाता है;
किन्तु तो भी धन्य, ठहरा आदमी ही तो!
बुलबुलों से खेलता कविता बनाता है।

(दिनकर)

.....ओ पुलक पंखिनी।
जीवन बसंत के विभव की पिक सारिका,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रेमियों की सिद्धि और रिद्धि की सफल कला
तुम प्रतिनिशि में बनती हो नव वधु,
नित-नित नूतन हो।.....

(अंचल)

नीड़ बना कर बसे मुक्त खग
में नव चहक विराव नए भर !
चंचल चित, नित भाव नए भर।

(जानकीवल्लभ शास्त्री)

खुले हुए पिंजरे में कब तक
बंदी रह सकता है कीर ?
फूटे हुए घड़े में कब तक,
जीवन धन, रह सकता नीर।

(हरिकृष्ण 'प्रेमी')

चातक देता आवाज़ कि बादल घिरते हैं,
हँसती दीपक की ज्योति पतंगे मरते हैं।
नभ में जब जब लेती अंगड़ाई शशि बाला,
सागर की मर्यादा के पाँव सिरहते हैं।

(रामकुमार चतुर्वेदी)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उर्दू-काव्य में पशु-पक्षी

उर्दू शायरी अपने रसमय रूप में परिपूर्ण है। यह तो अन्य काव्यों की भाँति दिली जज़्बात का इज़हार है। भावों की सरसता, कल्पना की उड़ान, शब्दों की चित्रकारी और अनुभूति की गहनता इस काव्य में पर्याप्त मात्रा में मिलती है। समय के परिवर्तन के साथ-साथ उर्दू शायरी में भी इंकिलाब आया, लेकिन अपने नए ढंग के साथ, एक खूबसूरत अन्दाज़ से और जमाल-ओ कमाल के साथ। दुनिया ने देखा कि यह रसात्मक काव्य केवल भौतिक हुस्न के लिबास में नहीं है, इसमें परम अध्यात्मवाद के भी स्वर शब्दायमान हैं। अपने सीने के दर्द के साथ शायर ने खलक की मज़बूरियों को समझा और हुस्नो-इश्क़ एवं साग़रो-मीना की लालसा को दबाकर उसने मानवता को ऊँचा उठाया। जिस काव्य का एक कवि मधुसिक्त जलन के साथ गाता है—

शानों पै ज़ुल्फ़, ज़ुल्फ़ में दिल, दिल में हसरतें।
इतना तो बोझ सर पै, नज़ाकत कहाँ रही॥
शमा बुझ कर रह गई, परवाना जलकर रह गया।
यादगारे-हुस्नो इश्क़, एक दाग़ दिल पर रह गया॥

उसी काव्य का दूसरा कवि पूर्ण निष्ठा से मानव को सजग बनाता हुआ उसकी गरिमा की ओर संकेत करता है और कहता है :—

ख़ुदी को कर बुलंद इतना कि हर तक़दीर से पहले।
ख़ुदा बन्दे से ख़ुद पूछे बता तेरी रज़ा क्या है॥
—इकबाल

यदि एक कवि माशूक़ की अंगड़ाई से दरियाए-हुस्न को दो हाथ बढ़ता देखता है और बोतलों में बंद शराब को यौवन की काली रातें समझता है[1], तो दूसरा शायर देश-भक्ति के राग को शक्तिसम्पन्न बनाता हुआ देशवासियों को सीख देता है :—

1. दरियाए-हुस्न और भी दो हाथ बढ़ गया।
अंगड़ाई उसने नशे में ली जब उठाके हाथ। —नासिख
यह काली-काली बोतलें जो हैं शराब की।
रातें हैं उन में बंद हमारे शबाब की।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वतन की फ़िक्र कर नादां ! मुसीबत आने वाली है।
तेरी बर्बादियों के मश्वरे हैं आसमानों में ॥
न समझोगे तो मिट जाओगे ऐ हिन्दोस्तां वालो !
तुम्हारी दास्तां तक भी न होगी दास्तानों में ॥

—इक़बाल

वस्तुतः उर्दू-काव्य का कला-पक्ष एवं भाव-पक्ष बड़ा ही सुन्दर है। साहित्यकार को उदार बनकर सदैव प्रत्येक काव्य के रस का आस्वादन करना चाहिए। साहित्य में साम्प्रदायिकता विष-तुल्य है।

इस निबंध में मैं उर्दू-काव्य में वर्णित पशु-पक्षियों की ओर ही पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा। इस विशाल सृष्टि को मनोहर बनानेवाले ये चतुष्पद एवं द्विपद हैं। इनका वर्णन सर्वत्र विविध रूपों में मिलता है, प्रकृति-शोभा का चित्रण इनके ही माध्यम से होता है। इन पशु-पक्षियों को सामने रखकर इन कवियों ने न मालूम क्या-क्या कह डाला है। कभी अलंकारों के रूप में, कभी प्रतीकों के रूप में और कभी अन्योक्तियों के रूप में ये वर्णित हुए हैं। इनके सहारे पर दिये गए उपदेश विशेष प्रभावोत्पादक सिद्ध हुए हैं।

अनेक सुप्रसिद्ध शायरों ने तो इन जीवों के स्वभाव, रहन-सहन, व्यवहार, विचार आदि के सम्बन्ध में भी मौलिकता के साथ लिखा है। यह सब इस बात का प्रमाण है कि प्रबुद्ध मानव-हृदय का लगाव इनके साथ चिरकाल से है और इस में कभी भी न्यूनता नहीं आ सकती।

यहाँ कतिपय उर्दू-शायरों की कविताओं के सम्बन्धित अंश उद्धृत किए जा रहे हैं, जो पशु-पक्षियों की काव्योचित मनोरमता सिद्ध करने के लिए काफ़ी हैं।

है सियाह[1] अब्र[2] में उस रूप पै बगुलों की क़तार।
अंजुमे[3] कहेकशाँ[4] की हो लड़ी जैसे बहम[5] ॥

—दाग़

× × ×

अगली सी ताज़गी है, फूलों में और फलों में।
करते है रक्स[6] अबतक, ताऊस[7] जंगलों में।

—चकबस्त

---

1. स्याम 2. बादल 3. सितारा 4. आकाश गंगा 5. एकत्रित 6. नृत्य 7. मोर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भेड़िये हों, रीछ हों, चीते हों, या ख़ूंख्वार शेर।
दस्तेवादी[1] तक बहादुर हैं नशिस्तां[2] तक दिलेर।

—दानिश

गुजर[3] औक़ात कर लेता है, यह कोहोबयावाँ[4] में।
कि शाही[5] के लिए ज़िल्लत[6] है कारे आशियाँबन्दी[7]।

—इक़बाल

अपने सहरा में बहुत आहू[8] अभी पोशीदा हैं।
बिजलियाँ बरसे हुए बादल में भी ख्वाबीदा[9] हैं।

—इक़बाल

उक़ाबी[10] शान से झपटे थे जो बेबालों[11] पर निकले।
सितारे शाम को ख़ूने शफ़क़[12] में डूबकर निकले।

—इक़बाल

क़द्रदानों की तबीयत का अजब रंग है आज।
बुलबुलों को है ये हसरत, कि वे उल्लू न हुए।

—अकबर

गुले तस्वीर किस ख़ूबी से गूलशन में लगाया है।
मेरे सैयाद ने बुलबुल को भी उल्लू बनाया है।

—अकबर

आती है सदाये-जरसे[13], नाक़ये[14] लैला।
सदहैफ़[15] कि मजनूं का क़दम उठ नहीं सकता।

—जौक़

तन सूखा, कुबड़ी पीठ हुई, घोड़े पर ज़ीन धरो बाबा।
अब मौत नक़ारा बाज चुका, चलने की फ़िक्र करो बाबा॥

—नज़ीर

---

1. घाटियों तक 2. अपने स्थानों तक 3. जीवन निर्वाह 4. पर्वतों-जंगलों में 5. बाज़ पक्षी 6. अपमान 7. घोंसला बनाने को चिन्ता 8. हिरन 9. सोई हुई 10. गिद्ध 11. पक्षहीन 12. संध्या की लालिमा 13. घंटी की ध्वनि 14. लैला की ऊँटनी 15. दुख है।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हर आन टूट पड़ता है रोटी के ख्वान[1] पर।
जिस तरह कुत्ते लड़ते हैं इक उस्तरख्वान[2] पर।

—नज़ीर

क्या बधिया, भैंसा, बैल, शुतुर[3], क्या गोनी पल्ला सर भारा।
क्या गेहूँ, चावल, मोठ, मटर, क्या आग, धुआँ और अंगारा।
सब ठाट पड़ा रह जायेगा, जब लाद चलेगा बनजारा।

—नज़ीर

ख़त कबूतर किस तरह ले जाए वामे[4] यार[5] पर।
पर कतरने को लगी हैं कैंचियाँ दीवार पर।

—अज्ञात

जहाँ रक्स[6] करते थे ताऊस[7] बाग़।
लगे बोलने वाँ मुड़ेरों पै काग[8]।

—ज़फ़र

ग़ौर[9] से देखा तो अब यह वह मसल[10] है 'नज़ीर'
बाप ने पिदड़ी न मारी, बेटा तीरन्दाज़ है।

—नज़ीर

बुलबुल ही को मालूम है अन्दाज़[11] चमन[12] के।
क्या आलमे-गुलशन[13] की ख़बर ज़ागो[14] ज़ग़न[15] को॥

—आगाह

कर दिया फ़ाख्ता[16] को इश्क में अंगुस्तनुमा[17]।
सर्व[18] ने अपनी उठाई जो चमन में रंगत॥

—अज्ञात

ज़ब्ते नवा के सदमे कब तक सहे पपीहा।
मैकश चहक रहे हैं क्यों चुप रहे पपीहा।
अब क्यों न दौरे मय की रौ में बहे पपीहा।
अब क्यों न शेख़ जी से पी पी कहे पपीहा।
बरसा रही है साग़र बरसात की घटाएँ।

—जोश

---

1. टुकड़ों पर 2. हड्डियों पर 3. ऊँट 4. कोठा 5. मित्र 6. नृत्य 7. मोर 8. कौआ 9. ध्यान 10. कहावत 11. चिड़िया 12. निशानेबाज़ 13. ढंग 14. बाग़ 15. संसारोद्यान 16. कौआ 17. चील 18. पड़की 19. संकेत 20. एक पेड़

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आदमीयत और शै[1] है, इल्म[2] है कुछ और चीज़।
कितना तोते को पढ़ाया, पर वह हैवाँ[3] ही रहा॥

—ज़ौक़

आईन[4] जवाँमर्दी[5] हक़गोई[6] व बेबाकी[7]।
अल्लाह के शेरों को, आती नहीं रूबाही[8]।

—इक़बाल

हज़रते-आदम[9] बकौले[10] डार्विन थे बूज़ना[11]।
हो यकीं हमको गया, यूरोप के इन्साँ देखकर॥
डार्विन साहब हक़ीक़त[12] से निहायत दूर थे।
मैं न मानूँगा कि मूरिस[13] आपके लंगूर थे।

—अकबर

ऐ तायरे लाहूती[14] उस रिज़्क़[15] से मौत अच्छी।
जिस रिज़्क़ से आती हो, परवाज़[16] में कोताही[17]।

—इक़बाल

रअ्द[18] का कर रही है क्या दम बंद।
बर्क़[19] को दे रहा है क्या इल्ज़ाम[20]।
तेरे फ़ीले[21] गेराँ जसद[22] की सदा।
तेरे रख़्शे-सुबुक[23] अनाँ[24] का ख़राम[25]।

—बिस्मिल

इक सारसों का काफ़िला[26],
शोक़[27] वतन दिल में लिए।
आज़ाद सब अफ़कार[28] से,
अठखेलियाँ करता हुआ।
वापिस था घर को जा रहा,
किस्मत का करना देखना।

---

1. वस्तु 2. विद्या 3. पशु 4. क़ानून 5. वीरता 6. सत्य बोलना 7. निर्भयता 8. लोमड़ीपन 9. आदि पुरुष 10. कथनानुसार 11. बंदर 12. वास्तविकता 13. पूर्वज 14. दिव्य पक्षी 15. आजीविका 16. उड़ान 17. कमी 18. मेघध्वनी 19. बिजली 20. दोष 21. हाथी की चिंघाड़ 22. शरीर 23. मंदनृत्य 24. घोड़ा 25. मंद चाल 26. समूह 27. जन्म-भूमि का स्नेह 28. चिंताएँ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमारे इण्डिया के लोग क्या टमटम के घोड़े हैं।
कि गेसू उस मिसे लंदन के, इन के हक़ में कोड़े हैं।

—बिसमिल

चली अब गुल के हाथों से लुटाकर कारवाँ अपना।
न छोड़ा हाय बुलबुल ने चमन में कुछ निशाँ अपना।

—मज़हर

उड़ा ली तूतियों[1] ने, कुमरियों[2] ने, अंदलीबों[3] ने।
चमन वालों ने मिलकर, लूट ली तर्ज़े-फ़ुग़ाँ[4] मेरी।

—इक़बाल

उनक़ा[5] की तरह ख़ल्क़[6] से ज़लत[7] गज़ीं हूँ मैं।
हूँ इस तरह जहाँ में कि गोया नहीं हूँ मैं।

—जौक़

रुत है बरसात की बहुत प्यारी।
मौज-ज़न झीलें नदियां सारी।
कोकिला, बगले, कोयलें ताऊस,
अपनी तानें सुनाते हैं प्यारी।
क़ाजें, मुरग़ाबियाँ, बतें, सुरख़ाब,
झीलों के साथ करते हैं चारी।

—मुनीर

दहने-शेर[8] में जा बैठिए लेकिन ऐ दिल।
न खड़े होजिए खूबानें-दिल-आजार के पास[9]।

—गालिब

हाय, लाया भी तो क्या, लाया मेरे खत का जवाब।
बालो-पर नुचवा के आ बैठा कबूतर सामने।

—जोश

वहशी को हमने देखा, उस आहू निगाह[10] के।
जंगल में भर रहा था, कुलाचें[11] हिरन के साथ।

—ज़ौफ़

---

1. एक पक्षी विशेष 2. पक्षी विशेष 3. बुलबुलों 4. विनय करने का ढंग 5. एक पक्षी 6. संसार 7. एकान्त प्रेमी 8. शेर के मुँह में 9. दिल दुखाने वाले हसीनों के पास 10 मृग के समान नेत्रवाला 11. छलांग

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तेरा हुस्न इस जहाँ में जो न होता पर तौ अफ़ग़न।
न ये फूल दिल लुभाते, न ये सब्जा[1] ज़ार होता।
न तो रट लगाती कोयल, न पपीहा शोर करता।
न वह मारी-मारी फिरती, न यह बेक़रार[2] होता।

—बेदिल

हुई तकरार ले जाने में, क्या क्या जब लिखा नामा।
सबा[3] से नामाबर[4] बिगड़ा, लड़ा हदहद[5] कबूतर से।

—आसीर

मोर नाचें, कोयलें कूकें पपीहे बोल उठे।
वस्ल[4] के दिन आए, फस्ल आई क्या बरसात की।

—अमीर मीनाई

पपीहे पुकारा किए 'पी' कहाँ, 'पी' कहाँ।
मगर यहाँ प्लीडर से लीडर हो गए।

—अकबर

तेरे क़ामत[7] से जो हो बरपा[8] क़यामत[9] सर्वे[10] पर।
काम ले मिनक़ार[11] से फरियाद[12] क़मरी[13] सूरका[14]।

—ज़ौफ़

शौक़े[15] नज्ज़ारा[16] है जब से इस रूख़[17] पुरनूर का।
है मेरा मुर्ग़ेनज़र[18] परवाना शमए[19] तूर का।

—ज़ौफ़

इश्क़ उस आहू निगाह[20] का है क़बीदस्त[21] इस क़दर।
मारे गर मुंह पर तमाचा झड़पड़ें ज़ैग़म[22] के दाँत।

—ज़फ़र

जो सोती भेड़ अपने शरोशोर[23] से जगाए।
दरवाजा घर का उस सगे[24] दुनियाँ से भेड़ तूँ।

---

1. हरि घास 2. विकल 3. 4. 5. पक्षी विशेष 6. प्रेमी-मिलन 7. क़द, 8. होना 9. प्रलय 10. एक वृक्ष विशेष 11. चोंच 12. प्रार्थना 13. पक्षी विशेष 14. शंख 15. 16. देखने की लालसा 17. कान्तिपूर्ण मुख 18. दृष्टिरूपी मुर्गा 19. एक पहाड़ 20. मृग 21. दृढ़ हाथ 22. शेर 23. हल्ला 24. कुत्ता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देख दुनिया के कितने हैं धन्धे।
सोच क़दर-ए[1] ओ अक़ल के अन्धे।
इसमें रहना है गर तो पैदा कर।
बाज़ की आँख ऊँट के कन्धे।

—अकबर

छोटी सी बिल्ली को मैं करता हूँ प्यार।
साफ़ है सुथरी है बड़ी है खिलाड़॥

× × ×

क्या क्या ख्याल बाँधे हैं, नादां ने अपने दिल में।
पर ऊँट की समाई कब हो चूहे के बिल में॥

× × ×

गाय कौ दी क्या अच्छी सूरत।
खूबी की है गोया मूरत।
गाय हमारे हक़ में है न्यामत[2]।
दूध है देती खा के बनस्पत॥

—स्माइल

फिरते हो बाग़ से तो पुकारे है अन्दलीब[3]।
सुबहे बहार गुल[4] पै, शबे[5] तार कर चले॥

—सौदा

दुनिया की जो उफ़लत का हुआ मुझ को सहारा।
और उसने खुशी को मेरी खातिर में उतारा।
देखी जो यह ग़फ़लत तो मेरा दिल यह पुकारा।
आया था किसी शहर से इक हंस बेचारा।
इक पेड़ पै जंगल के हुआ उसका गुज़ारा।
चंड्ल[5] अगिन[7] अबलके[8] छबजान[9] बने ढेर।
मैना[10] व बए[11] गुलगुले[12] बगुले[13] भी समनबर[14]।
तोते[15] भी कई तौर के, टुंइयाँ[16] कोई लहबर[17]।

---

1. थोड़ा 2. बरदान 3. बुलबुल 4. फूल 5. अंधेरी रात 6—17. ये सब पक्षी हैं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहते थे बहुत जानवर, उस पेड़ के ऊपर।
उसने भी किसी शाख पर घर अपना सँवारा।
बुलबुल ने किया उसकी मुहब्बत में खुश आहंग।
और कोकिला कोयल ने भी, उल्फत को लिया संग।

× × ×

खंजन[1] में कुलंगों[2] में भी चाहत की मची जंग।
देखा जो बयूरों[3] ने उसे हुस्न में खुश रंग॥
वह हंस लगा सबकी निगाहों में प्यारा।
सीमुर्ग[4] भी सौ दिल से हुए मिल के शायक़[5]।
गढ़पंख[6] भी पंखों के हुए झल्ले के लायक़॥
सारस[7] भी हवासिल[8] भी हुए उसके मुआफ़िक।
बाजो[9] लँगड़ों[10] बरहों[11] शाहीं[12] हुए आशिक़।
शिकरों[13] ने भी शक्कर से लिया उसका मदारा[14]।
कुछ सब्ज़क[15] बड़न[16] के व कुछ टनटनों[17] बज्जे[18]।
पंडुरवी[19] से लगा[20] बटेरों[21] कुमरीयों[22] हरियोबे[23] गोग़ाई[24] बगैरें।
लटोरे[25] व पपीहे[26] कुछ लाल[27] चिड़े।
पौंदने[28] पिद्दोही[29] न ग़श[30] थे।

× × ×

पड़री[31] भी समझती थी इसे आँख का तारा।
चाहत के गिरफ्तार बटेरें[32] लवें[33] तीतर[34]।
कबकौं[35] के तदरों[36] के भी चाहत में बँधे पर।
हुदहुद[37] भी हुए हट के बुढ़ैया[38] इधर उधर।
ज़ाग़ो[39] ज़ग़नो[40] तूतियो[41] ताऊस[42] कबूतर।
सब करने लगे उसकी मुहम्मत को इशारा॥

—कुल्लियात नजीर अकबराबादी

1—4. पक्षी विशेष 5. इच्छुक 6—13. पक्षी विशेष 14. आदर 15—29. पक्षी विशेष 30. चेतनाहीन।
31—34. पक्षी विशेष 55 पक्षी विशेष 36. चकोर 37—41. पक्षी विशेष 42. मोर।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राह तो मुझको बता दी खिज्र[1] ने।
ऊँट का लेकिन किराया कौन दे।

—अकबर

मग़रबी[2] ज़ौक़[3] है और वज़ा[4] की पाबन्दी भी।
ऊँट पर चढ़के थ्येटर को चले हैं हज़रत।

—अकबर

वोह फ़क़त[5] वज़ा के कुश्तह[6] हैं।
नहीं कैद कुछ और भैंस को गौन
पिन्हाँ दीजिए आशिक़[7] हो जाएँ।

—अकबर

हैबते[8] अद्ल[9] ये तेरी है कि हर दश्त[10] में शेर।
वास्ते दर्द सर आहू[11] के घिसे है सन्दल।

—सौदा

फ़ारसी में गधे पर लिखे गए ये दो शेर बहुत प्रसिद्ध हैं :—

मिस्कीं ख़र अगर चे बेतमीज़ अस्त।
चूँ बार बरद हमीं अज़ीज़ अस्त॥

—शेख सादी

—बेचारा गधा यद्यपि मूर्ख है और असभ्य है, लेकिन बोझा ले जाने के कारण वह हमें प्रिय है।

ख़रे ईसा गरश बा मक्का रबद।
चूँ बआयद हिनोज़ ख़र बाशद।

—शेख सादी

—हज़रत ईसा का गधा यदि मक्के को भी जाए तो लौटकर आने पर भी गधा ही रहेगा।

कूक कोयल की है या साज़े[12] मुग़न्नी[13] की सदा[14]।
रक्से[15] ताऊस[16] से है वज्द में सारा[17] गुलशन[18]।

—अमीर मीनाई

हुजूमे-कौआ हुआ चमन में।
किया जो भुट्टे ने बाल पैदा।

---

1. पथ दर्शक 2. पश्चिमीय 3. शौक 4. फैशन 5. केवल 6. जान देने वाले 7. आसक्त 8. डर 9. न्याय 10. जंगल 11. मृग 12. बाजा 13. गायक 14. ध्वनि 15. नृत्य 16. मोर 17. झूमना 18. उद्यान

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कमी नहीं कद्रदां की अकबर।
करे तो कोई कमाल पैदा।

—अकबर

कल राह में जाते मिला जो रीछ का बच्चा।
ले आए वहीं हम भी उठा रीछ का बच्चा।
सौ नेमतें खा खा के पला रीछ का बच्चा।
जिस वक्त बढ़ा रीछ हुआ रीछ का बच्चा।
जब हम भी चले साथ चला रीछ का बच्चा।

× × ×

इक दश्त[1] में सुना है कि इक खूब था हिरन।
बच्चा ही था अभी न हुआ था बड़ा हिरन।
फिरता था चौकड़ी का दिखाता मज़ा हिरन।
देखा जो एक कौए ने वह खुशनुमा हिरन।
दिल को निहायत उसके वोह अच्छा लगा हिरन।
इक गीदड़ इस हिरन के कने[2] आके नाबकार[3]।
बोला हज़ार जान से मैं तुम पै हूँ निसार।

—नज़ीर अकबराबादी

अल्लाह रे नज़ाकत फ़रसे[4] गुञ्चा[5] दहन[6] की।
आती हैं नज़र साफ़ रगें गुल से बदन[7] की।
सीरत[8] है अगर शेर की सूरत है हिरन की।
ज़ानों[9] में ठहरता नहीं बू सूंघ के रेन[10] की।
घोड़ा है मगर शेर का बिलकुल है करीना[11]।
टापों से कुचलता है यह अशरार[12] का सीना।

—दबीर

---

1. जंगल 2. पास 3. नीच 4. घोड़ा 5. कली 6. मुँह 7. शरीर 8. स्वभाव 9. जाँघों 10. युद्ध 11. समान 12. दुराचारी।

नोट—इस निबन्ध की सामग्री मुझे पूज्य श्री जयकृष्ण जी चौधरी, आई० ए० एस० भूतपूर्व कमिश्नर, रीवा संभाग से प्राप्त हुई है, अतः मैं आपका आभारी हूँ। आप फारसी एवं उर्दू के लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् और कवि हैं। संस्कृत तथा हिन्दी साहित्य का भी आपने विशेष अध्ययन किया है। उर्दू में लिखी हुई आपकी कतिपय पुस्तकों (कालिदास, तुलसीदास, भर्तृहरि आदि) का हिन्दी में अनुवाद हो गया है, और वे शीघ्र ही साहित्य-संसार के सन्मुख आवेंगी। आपकी साहित्य-आराधना लोकोपकारिणी और अनुकरणीय है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशु-पक्षि-गृहीयण

(Domestication of Animals and Birds)

मानव ने आदि काल से इन पशु-पक्षियों को अपनाया है। वह इनके साथ रहा और इन्हें भी अपने साथ रहने के लिए बाध्य किया। कानन-निवासी इन जीवों ने भी मानव की ममता को पाकर अपना सब कुछ परित्याग किया और इसके वे सहयोगी, सहपाठी, सेवक तथा सहचर बने।

मनुष्य की भावना में सदैव से स्वार्थ-साधना रही है। इसलिए उसके समस्त कृत्य बाह्यतः उदार होते हुए भी स्वार्थ-सिद्धि से परिपूर्ण रहे। उसने बनचारी चतुष्पदों को सभ्य बनाने एवं शिक्षित करने के लिए अपने आवासों में रखा, उन्हें स्वादिष्ट भोजन दिया, सुन्दर आभूषणों से उन्हें सुसज्जित बनाया और विविध बोलियाँ सिखलाकर संसार को बताया है कि ये जीव भी मानव-तुल्य हो सकते हैं। लेकिन इस पालन-पोषण एवं प्रशिक्षण के माध्यम से मनुष्य ने अपना मनोविनोद किया, धन कमाया, यश प्राप्त किया एवं अपनी जीवन-शक्ति को बलवती बनाया। वैज्ञानिक तथा आयुर्वेदिक अनुसंधानों की सफलता के लिए वैज्ञानिकों और आयुर्वेदज्ञों ने इन भोले प्राणियों की साँसों को रोका, रक्त को तपाया, चर्म को गलाया एवं शक्ति सम्पन्न अस्थियों को चूर-चूर किया। विविध प्रयोगशालाएँ आज भी इन जीवधारियों की चीत्कार से व्यथित हैं। अपनी बुद्धि विलक्षणता से मानव ने हिंसक जीवों को भी मृगवत् विनम्र बनाकर अपनी सर्वतोमुखी विजय को विज्ञापित किया। तीव्रगामी स्वच्छन्द पवन से स्पर्धा करने वाले अश्व को मनुष्य ने अपना दास बनाया और उसके मुख को रस्सी जंजीर तथा चमड़े से बाँधकर सदा के लिए अपने सुखोपभोगार्थ स्वीकार किया। अपार-शक्ति के केन्द्र गज को भी तो मानव ने अंकुश के बल पर अपने सम्मुख झुकाया और उसकी पीठ पर बैठकर अपने वैभव को बताया। घोर संग्रामों में एक समय अश्व-गज भयावह आक्रमण करते थे। एक दिन था जब कि शासक की शक्ति का अनुमान उसके घोड़ों एवं हाथियों की संख्या से किया जाता था। मृगेन्द्र, व्याघ्र, चीता, रीछ, मर्कट, आदि को अपने वशीभूत करके इस छोटे से इंसान ने बहुत कुछ कर दिखाया है। संसार के आगे इन जीवों को नचाकर, झुकाकर, पेट के बल लेटाकर तथा भिक्षार्थ विनीत बनाकर मनुष्य ने अपनी दयालुता का परिचय तो नहीं दिया, लेकिन धनोपार्जन का एक नूतन साधन लोक को बताया। किसी ने ठीक ही कहा है कि मनुष्य ने भक्षार्थ और क्रीड़नार्थ ही इन वन्य पशुओं को पाला है। यह कथन अपनी सत्य-सृष्टि को अज्ञात काल से सिद्ध

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करता आ रहा है। हम उस आदि युग को नहीं भूल सकते, जिसमें रहकर मानव ने पशुओं का माँस खाकर अपने को जीवित रखा था। मृगया-प्रिय बनकर आज भी उसने हजारों वन्य जीवों का विनाश किया है। इन भोले पशुओं को कभी उसने माँस के लिए, कभी विषाण के लिए, कभी कस्तूरी के हेतु तो कभी चर्म के लिए निर्मम होकर पाला और अपने परिवार का साथी बनाया। कहा जाता है कि देवी-देवताओं की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए उन जीवों की जो बलि दी जाती है उसमें परोपकार की भावना निहित है। ऐसा करने से वन्य जीव भी मुक्ति पा जाता है और उसे पुनः इस संसार में नहीं आना पड़ता है। लेकिन यह कल्पना भी हास्यास्पद है। अपनी रसना की तृप्ति के लिए देवी-देवताओं को साधन बनाना अनुचित ही है। यज्ञ में भस्म होकर अथवा देवालय की पुनीत धरती को रक्त रंजित करके कोई भी मुक्ति नहीं पा सकता। भगवान महावीर तथा दयामूर्ति बुद्ध ने इस क़लुषित भावना का विरोध करके ही ही तो अहिंसा धर्म को पुनः जीवित किया था।

हाँ, यह सत्य है कि प्राचीन ऋषि आश्रमों में पले हुए ये जीव केवल विरलों की शान्ति के लिए थे। उन्हें देखकर ये तपस्वी परमात्मा की अलौकिक सृष्टि का अनुभव करते और उन्हें अपनाकर अपनी उदारता का परिचय देते थे। वे पावन तपोवन इन पशुओं एवं पक्षियों से सदैव सुशोभित रहते थे। तपोभूमि का महत्त्व इन द्विपदों चतुष्पदों की उपस्थिति से ही आँका जाता था। उनका अभाव इस भूमि के लिए कलंक था। यहाँ आकर ये वैर-भाव को भूल जाते थे। ये मुनि-उपवन वस्तुतः पशुओं के लिए अभयारण्य थे। भगवान राम ने वाल्मीकि जी के आश्रम में पशु-पक्षियों को आनन्द से कोलाहल करते देखा था :—

"देखत बन सर सैल सुहाए।
बाल्मीकि आश्रम प्रभु आए।
रामदीख मुनि बासु सुहावन,
सुन्दर गिरि काननु जलपावन।
सरनि सरोज विटप बन फूले।
गुंजत मंजु मधुप रस भूले।
खग मृग विपुल कोलाहल करहीं।
विरहित बैर मुदित मन चरहीं।

—रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, 405

इन आश्रमों में पशु-पक्षी निर्भय थे। सिंहनी मृगी के साथ खेलती और हरिणी सिंह शावक को दूध पिलाती थी। ध्यानस्थ ऋषियों के शरीर से अपनी देह को रगड़कर मृग अपनी खुजली शान्त करते थे। आश्रम-निवासी ब्रह्मचारी भी इन जीवों को बड़े प्रेम से पालते थे। पहले इन्हें खिलाते फिर स्वयं भोजन करते थे। कण्व ऋषि के आश्रम में पली हुई शकुन्तला मृगों और पक्षियों को स्वयं अपने हाथ से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खिलाती थी। यही कारण था कि विदा के समय रोती हुई शकुन्तला के पास हरिणी आकर विलाप करने लगी थी। मयूर ने तो इस दयामयी आश्रमवासिनी को जाने से रोक भी दिया था। अहिंसा, सत्य और प्रेम के प्रतीक ये आश्रम हमारी संस्कृति और सभ्यता के चिरन्तन प्रतीक हैं। सांदीपनि ऋषि के आश्रम में प्रवेश करके भगवान कृष्ण ने देखा कि सर्वत्र अहिंसा-मैत्री का प्रसार है। ऋषि-बालक तरू में भी घाव नहीं करते हैं। मृगी मुनि की गोद में शिशु का प्रसव करती है और स्वाभाविक वैर का परित्याग करके बनचारी पशु प्रमुदित होकर इधर-उधर फिर रहे हैं :—

आश्रम-रहनि लखी यदुरायी।
सरल, स्वस्थ, तन मन-बलदायी।
... ...
समता, बंधुभाव उर जागत।
आपु समान विश्व सब लागत।
छीलत वसन हेतु तम काया।
करत न पृथुल घाव वश दाया।
जानि सदय वन-जीव अशंका।
प्रसवति शिशुहिं मृगी मुनि अंका।
लखि बन प्लावित करुणावारी।
त्यागत सहज वैर वनचारी।

दोहा—खेलत मातु विहाय निज,
सिंह-शावकन संग।
मुदित सिंहनी पय पियत,
निर्भय शाव कुरंग।

—कृष्णायन, मथुराकाण्ड, पृष्ठ 184

जैसा कि पहले कहा जाचुका है मानव ने अपनी सुख-साधना को ही महत्त्व देकर कतिपय वन्य जीवों को पालतू बनाया है। कुत्ता (श्वान) एक उपयोगी पशु है। कुछ टुकड़ों को खाकर यह रात-दिन अपने स्वामी की सेवा करता है। रात में रक्षक बनकर अपने पालक के घर की रक्षा करता है। कृषक के साथ जंगल में जाकर यह वन्य पशुओं से कृषि का संरक्षण करता हुआ आज भी अपनी उपयोगिता सिद्ध कर रहा है।

गड़रियों के साथ रहकर श्वान भेड़ों और बकरियों को हिंसक पशुओं के पंजों से बचाता है। इस पशु की स्वामी-भक्ति अनुकरणीय है। युधिष्ठिर के साथ एकाकी स्वर्ग तक जाने वाला यह कुत्ता पाश्चात्य देशों में विशेष प्यार से पाला जाता है। शिकारियों की भी तो इसने कम सेवा नहीं की है। संकेत

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पाकर यह हवा-सा दौड़ता है और जंगली जीवों को पकड़ कर अपने संरक्षक के आगे रख देता है।

बिल्ली भी मानव-समाज की अधिक सेवा करती है। चूहों से जो क्षति आज हो रही है, वह किसी से छिपी नहीं है। लाखों मन अन्न इनके द्वारा नष्ट हो रहा है। कृषि-प्रधान देश में चूहों की वृद्धि हमेशा घातक सिद्ध हुई है। अतः इस अनावश्यक बाढ़ को रोकने के लिए बिल्ली एक समर्थ साधन है। बिल्ली को घरेलू बनाकर भारतीयों ने बहुत दूर की सोची है। धार्मिक रूप में बिल्ली का वध महापाप माना गया है। ऐसे अपराधी को सोने की बिल्ली का दान करना आवश्यक है। गाय-बैल, भेड़, बकरी, सुअर आदि जीवों की उपयोगिता स्वयं-सिद्ध है। गायों को पालकर ही तो मनुष्य खेती कर सकता है। बैलों को जन्म देकर ये हमारी कृषि को सम्पन्न बनाती हैं। इनका दूध पीकर आज हम बलशाली हैं। इसी प्रकार भेड़ों का दूध और ऊन एवं बकरियों का दूध तथा केश मानवता को भूख और शीत से बचाते हैं। इसके माँस को खाकर भी इंसानियत की रक्षा की जा रही है। नेवला सर्प-भक्षी है। इसलिए उसे भी पालतू बना लेते हैं। हाथी, अश्व, घोड़े, ऊँट, खच्चर, गधे आदि भार-वहन एवं युद्ध-संचालन तथा यात्रा के हेतु आवश्यक हैं। सर्वत्र इनकी सेवाएँ स्वीकार की गई हैं। कुछ प्रदेशों में कुत्ते तथा बकरे भी छोटी-छोटी गाड़ियों को खींचते देखे गए हैं।

बारहसिंघा (Reindeer) को भी पाश्चात्य देशों में माँस, भार-वहन (बर्फ पर) आदि के लिए पाला जाता है।[1]

शिकार के निमित्त भी चीते को पाला जाता है। मृगया-प्रिय नरेशों के यहाँ इस हिंसक एवं तीव्र-गामी वन्य पशु को शिक्षित करके बहुत-से वनचारी जीवों को (इससे) पकड़वाया जाता है। भूखे चीते की आँखों से जब पट्टी खुलती है तब वह चौकड़ी भरते हुए हरिणों के पीछे तीर के समान जाता है और उन्हें पकड़ कर अपनी भूख मिटा लेता है। लेकिन ऐसा करने के पूर्व पहले उसे शिकार किये हुए पशु को अपने मालिक के सामने लाना पड़ता है। हाँ, अपने परिश्रम के फलस्वरूप उसे कुछ भाग मृत जीव का अवश्य मिल जाता है।

पुरातन साहित्य के अध्ययन से प्रकट है कि गज-युद्ध, मेंढ़ों की भिडन्त, तीतर-द्वन्द्व, बटेर-झपट की लड़ाई मनोरंजन का साधन थी। इसलिए इन पशुओं को पालकर बलिष्ठ बनाया जाता था। प्राचीन

---

1. The reindeer shows interesting grades of domestication. The American Caribon was always hunted and never domesticated, though recent experiments indicates that this was not impracticable. The eastern Sibenian tribes, such as the Chukchi own huge herds of wild deer, used mainly for slaughter and barter, the Tungus, farther west, train the deer for sledge work and do most of the crrying trade of the tundra. The Lopps in north west Europe and to a certain extent the Samoyeds to the east alone have domesticated the reindeer, using of both for transport and for milking.
(Encyclopaedea Britannica Vol. I., p. 968)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारत के नागरिक हंस, कारण्डव, चक्रवाक, मोर, कोमल आदि पक्षी, वानर, हरिन, व्याघ्र, सिंह आदि जन्तु भी पालते थे। और समय-समय पर वह उनसे अपना मनोरंजन भी करते थे।[1]

पशु-संसार की सौन्दर्य-भावना अति मनोहारिणी है। इनके प्रति मानव का सहज आकर्षण भी रहा है। इसलिए कभी उसने अपने भवन की भित्ति पर हरिण का चित्र अंकित किया तो कभी शशक का चित्र टाँगा। कभी उसने बन्दर की पाषाण मूर्ति को अपने शयन-कक्ष में रखा तो कभी गज की पाषाण-प्रतिमा से अपने पूजा स्थान को सुशोभित किया। माँगलिक अवसरों पर हाथी, अश्व, हरिण, गाय, बैल, सिंह आदि के चित्र भित्तियों पर अनेक रंगों में चित्रित किए जाते हैं। ये सब प्रवृत्तियाँ पशु-जगत के प्रति मानव के आकर्षण की धारणा को बताती हैं।

पशुओं को पालतू बनाने में धार्मिक प्रभाव एवं जादू-टौना की आस्था विशेषतः परिलक्षित होती है। गाय के प्रति हिन्दुओं की श्रद्धा कभी भी कम नहीं हो सकती। वेदों में गौ को अवध्य कहा गया है। इसमें देवताओं का निवास है अतः इसे पालना और इसकी सेवा करना प्रत्येक भारतीय का धर्म है। इसे घर में रखकर भारत का मूल निवासी गर्व का अनुभव करता है। बैल भगवान शंकर का वाहन है इसी लिए इसकी उपासना महत्त्व रखती है। गज-अश्व की पूजा शास्त्र-विहित हैं। 'पशु अराधना ने ही कतिपय वन्य जीवों को पालतू बनाने की प्रेरणा दी है। "यदि ऐसा कहा जाय तो कुछ अंशों में सत्य ही हो।

संस्कृति एवं सभ्यता के क्रमिक विकास में इन पालतू पशुओं का विशेष सहयोग रहा है। इन चतुष्पदों को घरेलू बनाकर इन्हें सम्पत्ति मानकर, इनके द्वारा आत्म-संरक्षण करके तथा इनके माध्यम से व्यापारादि करके मानव ने बहुत कुछ स्थायित्व प्राप्त किया था।[2]

× × ×

पशुओं की भाँति पक्षियों को भी मानव ने पालतू बनाया है। ऐसा करके उसने अपने मनोविनोद की सामग्री को सुलभता से प्राप्त किया है और जिह्वा-स्वाद के आनन्द को भी समय-समय पर भोगा है।

महाभारत में एक पक्षी ने एक मनुष्य से कहा था कि मनुष्य और पक्षियों में सम्बन्ध दो ही तरह के

---

1. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, पृष्ठ 34
2. विशेष अध्ययन के लिए निम्नस्थ पुस्तकें पढ़िए :—
   1. The orging of Invention—O. T. Mason.
   2. The Begings of Zoo-Culture. —W. J. McGee.
   3. Animals —N. W. Thomas.
   4. कालिदास का भारत—भगवतशरण उपाध्याय
   5. वैदिक सम्पति—रघुनंदन शर्मा
   6. India as Known to Panini—Dr. Agarwal.
   7. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद—डॉ द्विवेदी
   8. The Baya —Dr. Elvin.
   9. Golden Bough —Sir. James Frezer.

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं—भक्षण का सम्बन्ध और क्रीड़ा का सम्बन्ध। अर्थात् मनुष्य या तो पक्षियों को खाने के काम में लाता है या उन्हें फसाकर उनसे मनोविनोद किया करता है और कोई तीसरा सम्बन्ध इन दोनों में नहीं है। एक वध का सम्बन्ध है और दूसरा बन्ध का।

भक्षार्थं क्रीड़नार्थं वा नरा वांच्छन्ति पक्षिणम्।
तृतीयो नास्ति संयोगो वध बंधादृते क्षमः।

—म० भ० शक्तिपर्व, 139.60

परन्तु समस्त संस्कृत साहित्य और स्वयं महाभारत इस बात का सबूत है कि एक तीसरा सम्बन्ध भी है। यह प्रेम का सम्बन्ध है। अगर ऐसा न होता तो कमल-पत्र पर विराजमान बलाका (वक-पंक्ति) जो मरकत मणि के पात्र में रखी हुई शंख-मुक्ति के समान दीख रही है, अकारण मानव हृदय में आनन्दोद्रेक न कर सकती।[1]

× × × ×

आधुनिक समय में मनुष्य का जीवन अधिक संघर्षमय हो गया है। रोटी की चिन्ता ने उसकी रसिकता को धूमिल बना दिया है। रास-रंग इस भूखे मानव को आकर्षणहीन प्रतीत हो रहे हैं। प्राचीन काल में हमारा भारत समृद्ध था। वैभव चारों ओर फैला हुआ था। मनुष्य की आँखों में सदैव यौवन झूलता था। वैभव शालिता में ही मनोरंजन की ओर मानस दौड़ता है और अनेक साधनों को अपनाकर अपनी रागात्मिका वृत्ति का परिचय देता है। यही कारण है शस्य-श्यामला भारत-धरित्री पर एक समय चारों ओर उल्लास की वर्षा हुई है। इस आनन्द-भूमि पर भारतीय नागरिक का जीवन प्रातःकाल से सूर्यास्त तक सुख से व्यतीत होता था। वह कभी तोता से खेलता तो कभी मयूर को नचाता था। कभी वह सारस की जोड़ी को उद्यान में घूमता देखता तो कभी मैना के मुख से प्रणय रात की बातें सुनता था। राजमहल से लेकर कुटिया तक पक्षियों की मधुर ध्वनियों से मुखरित थी। गृह-पक्षी कभी सुन्दरी की नूपुर ध्वनि पर नाचने लगते तो कभी करधौनी की क्षुद्र घंटिकाओं को बजते सुनकर रसीले गीत सुनाते थे। शापित यक्ष की पत्नी अलकापुरी में अपने पले हुए मयूर को सूर्यास्त के समय हस्त वलय के मधुर झंकार और करतल-वादन की ताल पर नचाती थी।

× × × ×

---

1. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, पृष्ठ 47।

2. तन्मध्ये च स्फटिक फलका काञ्चनी वासयष्टि
मूले बद्धा मणिभिरनति प्रौढ़ वंश प्रकाशैः।
तालैः शिञ्जावलय सुभगै र्नर्तितः कान्तया मे।
या मध्यास्ते दिवस विगमे नीलकण्ठः सुदृढ़ः।

—उस लाल अशोक वृक्ष और मौलसिरी के पेड़ के बीच तरुण बाँस के समान कान्ति वाली मणियों से जड़ी हुई एक चौकी है। उस पर स्फटिक की पीठिका बनी हुई है। उस स्फटिक पीठिका पर स्थित स्वर्ण निर्मित बाँस दण्ड पर तुम्हारा सखा मयूर नित्य साँझ को आकर बैठता है और मेरी पत्नी उसे हस्तवलय के मधुर झंकार और करतल वादन की ताल पर नचाती है। (उत्तर मेघ, 19 श्री लक्ष्मीमल सिंघवी)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कभी यक्ष की प्रियतमा पिंजड़े में बैठी हुई मृदुभाषिनी मैना से पूछती थी— मेरे प्रियतम की प्यारी सुर-सारिका कभी तुम्हें अपने स्वामी की याद सताती है कि नहीं।

× × × × ×

भारत का वह रसीला शासन भी नहीं भुलाया जा सकता, जिसमें इस देश का एक विशाल भाग चण्डूलों एवं बुलबुलों के रागों से दीर्घ काल तक ध्वनित रहा था।

राज-प्रासादों में दर्शकों, सभासदों एवं सेवकों को अनेक पालित पक्षियों की मधुर ध्वनियों के सुनने का अवसर मिलता रहता था।

"अन्तःपुर से बाहर निकलने पर राजकुल के प्रथम प्रकोष्ठ में भी बहुतेरे पक्षियों से भेंट हो जाती थी। इनमें कक्कुट, कुरक, कपिंजल, लावक और वार्तिक नामक पक्षी भी थे जिन की लड़ाई से नागरिकों का मनोविनोद हुआ करता था। इसी प्रकोष्ठ में चकोर कादम्ब, हारीत और कोकिल की भी आवाज सुनाई दे जाती थी और शुक सारिकाओं की मजेदार बातें भी कर्णगोचर हो जाती थीं। वात्सायन कामसूत्र (पृ० 47) में नागरिकों का भोजन के बाद शुक-सारिका का आलाप तथा लाव-कुक्कुट और मेषों के युद्ध के देखने की व्यवस्था की गई है।

× × × ×

सारिकाओं और तोतों को बड़े तथा छोटे सब लोग पाला करते और उन्हें अपने परिवार का अंग मानते थे। रामभक्तों को मालूम ही है कि केवल पिंजड़े में बैठे सुग्गे को राम-नाम सिखाने वाली गणिका को मुक्ति मिली थी। मण्डन मिश्र के घर के द्वार पर पालित शुक-सारिकाएँ श्लोकों का पाठ किया करती थीं।

रसिक लोग शयनागार में शुक सारिकाओं को प्रेम से रखते थे और यथासमय उनसे बातें किया करते थे। वे भी मानव बोली में रति-क्रीड़ा की गोपनीय बातों का उद्घाटन करके श्रोताओं को चकित कर देते थे। केशवदास की एक सुन्दरी अपने आतुर प्रियतम से धैर्य धारण करने के लिए संकेत करती है

---

1. आलोके ते निपतति पुरा सा बलि व्याकुला वा।
मत्सादृश्यं विरहतनुवा भावगम्यं लिखन्ती।
पृच्छन्ती वा मधुर बचना सारिकां पञ्जरस्थां
कच्चिद्भर्तुः स्मरसि रसिके त्वं हि तस्य प्रियेति।

(उत्तर मेघ, 25)

—मेरी प्रियतमा को तुम या तो देवाराधना में पावोगे या वह विरह से कृशगात मेरी प्रतिकृति अंकित करके चित्र के कल्पना-लोक में मेरी आकृति की ओर निहार रही होगी या फिर पिंजड़े में बैठी हुई मृदु भाषी मैना से वह पूछ रही होगी कि मेरे प्रियतम की प्रिय सुर-सारिका कभी तुम्हें अपने स्वामी की याद भी आती है।

(लक्ष्मीमल सिंघवी)

2. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, पृ० 48.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और कहती है कि सारिका और तोते को तो सो जाने दो नहीं तो प्रातःकाल होने पर ये हमारी खिल्लयाँ उड़ाएँगे—

चंचल न हूजै नाथ अंचल न खैंचो हाथ,
सोवे नेक सारिका ऊ शुक तौ सुवायो जू।
मंद करो दीपदुति चंद-मुख देखियत,
दौर के दुराइ आऊँ द्वार तौ दिखायो जू।
मृगज मराल बाल बाहिरै बिडार देउँ,
भायो तुम्हें 'केशव' सु मोहू मनभायो जू।
छन्न के निवास ऐसे वचन बिलास सुनि,
सौ गुनो सुरत हूँ नैं श्याम सुख पायो जू।

उर्मिला के महल में तो शुक, सारिका, कपोत, चकोरी, शशक आदि पले थे। जिससे बातें करके वह अपने अधीर मन को सान्त्वना देती रहती थी :—

सखि, विहग उड़ा दे हों सभी मुक्तिमानी।
सुन शठ शुकवाणी—हाय! रूठो न रानी।
खग जनकपुरी की व्याह दूँ सारिका मैं?
तदपि यह वहीं की त्यक्त हूँ दारिका मैं।
कह विहग कहाँ हैं आज आचार्य तेरे?'
विकच वदन वाले वे कृती कान्त मेरे?
सचमुच मृगया में? तो अहेरी नये वे,
यह हत हरिणी क्यों छोड़ यों ही गये वे?
निहार सखि सारिका कुछ कहे बिना शान्त सी,
दिए श्रवण है यहीं, इधर मैं हुई भ्रान्त सी।
इसे पिशुन जान तू, सुन सुभाषिणी है बनी,
धरो खगि, किसे धरूँ? धृति लिये गए हैं धनी।
तुझ पर मुझ पर हाथ फेरते साथ यहाँ,
शशक विदित है तुझे आज वे नाथ कहाँ?
तेरी ही प्रिय जन्मभूमि में, दूर नहीं,
जा तू भी कहना कि उर्मिला क्रूर नहीं।
लेते गए क्यों न तुम्हें कपोत वे
गाते सदा जो गुण थे तुम्हारे?

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लाते तुम्हीं हा। प्रियपत्र-पोत वें
दुःखाब्धि में जो बनते सहारे।

(साकेत, नवम सर्ग, पृष्ठ 202)

गोस्वामी तुलसीदास जी ने खूसर (उल्लू) के पालने की ओर भी संकेत किया है।[1] तान्त्रिक लोग उलूक को विशेष रूप से पालते हैं। उनके मतानुसार यह पक्षी भविष्यवक्ता है और अपनी बोली के द्वारा आनेवाली विपत्तियों का संकेत करता रहता है। इसकी हड्डी तथा पंजे भी तन्त्र प्रयोग उपयोगी सिद्ध हुए हैं। राजभवन के समीपस्थ कृत्रिम सरोवरों में पाले गए हंस कभी-कभी दूत कर्म भी किया करते थे। कतिपय जलविहगों के पालने का भी उल्लेख राजोद्यान के वर्णन में मिलता है। कपोतों का पालना स्वास्थ्य की दृष्टि से भी हितकर है। इनके पंखों की वायु रोग-विनाशक मानी गई है।

चण्डूल को पालने वाले शौकीन मुगल राज्य में अधिक थे। इस पक्षी की बोली बड़ी ही सुहावनी लगती है। सफाई पसन्द यह चिड़िया जब मस्ती में आकर बोलती है तब शैलाओं की बाँहें मिलने के लिए फड़कने लगती हैं। झाँसी के सेठ पन्नालाल चण्डूल के प्रसिद्ध प्रेमी थे। सुनते हैं कि दतिया नरेश एक बार सेठ जी के चण्डूल से विशेष प्रभावित हुए और उन्हें तीन लाख रुपए मूल्य में लेना चाहा लेकिन सेठ जी ने कह दिया—"महाराज, बेचने का काम तो फ़ंसिया करते हैं। मैं तो चण्डूल का प्रेमी हूँ।"[2]

कविवर बिहारीलाल ने भी अपने समय में पाले जाने वाले कतिपय पक्षियों का भी उल्लेख किया है :—

मरत प्यास पिंजरा परयौ, सुअया समै कै फेर।
आदरु दै दै बोलियत, बाइस बलि की बेर।

× × ×

---

1. राजमराल के बालक पेलि कै,
पालत लालत खूसर को।
रूचि सुन्दर सालि सकेलि सुवारी कै,
बीज बटोरत ऊसर को।
गुन शान गुमान भभोर बड़ो,
कलपद्रुम कारत मूसर को
कलिकाल विचार आचार हरो,
नहिं सूझे वधू धमधूसर को।

(कवितावली) उत्तरकाण्ड 103)

2. चण्डूल—श्री 'हयारण'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ऊँचै चितै सराहियतु गिरह कबूतर लेतु।
झलकति दृग पुलकित बदनु, तनु पुलकित किहिं हेतु।

× × ×

मिलि बिहरत बिछुरत मरत, दम्पति अति रति लीन।
नूतन विधि हेमंत सबु, जगतु जुराफा कीन।
स्वारथ सुकृत न श्रम वृथा देखु विहंग विचारि।
बाज पराये पानि परि, तूं पंच्छीहिं न मारि॥

(बिहारी रत्नाकर)

बाज को शिकार के लिए पाला जाता था। प्रशिक्षण प्राप्त करके यह शक्ति सम्पन्न पक्षी छोटे-छोटे विहंगों को पकड़कर अपने शिक्षक को दे देता है। राजाओं के विनाश के साथ बाज-पालन भी समाप्त हो गया। पाश्चात्य देशों में इस पक्षी को विशेष रूप से लोग पाला करते थे और इसे प्रशिक्षित करने के लिए (Hacking club) की स्थापना सन् 1864 में हुई और सन् 1925 तक यह प्रमोद गृह चलता रहा। कहा जाता है कि मुगल शासन में भी बाज-प्रशिक्षण एक कला मानी जाती थी।

पावस घन अंधियार महि, रह्यौ भेदु नहिं आन।
रात द्यौस जान्यौ मरतु लखि चकई चकवानु।

इस दोहे के अर्थ में कुछ विद्वानों को अस्वाभाविकता ज्ञात हुई है। उनका कहना है कि पावस में चक्रवाक इस देश में रहते ही नहीं हैं। अतः कवि का यह वर्णन असंगत है। कविवर रत्नाकर ने टीका करते हुए लिखा है :—

हमारी समझ में इस दोहे में इन झगड़ों का कोई अवसर नहीं है। धनाढ्यों के उपवनों तथा पाई-बागों में मयूर, सरहंस, चक्रवाक, इत्यादि प्रायः पले रहते हैं और बहुधा उनके पर भी काट दिए जाते हैं। अतएव चाहे जंगली चक्रवाक वर्षा ऋतु में भारतवर्ष में रहते हों वा नहीं पर ये बेचारे पलुवे चक्रवाक तो अवश्य ही उन उपवनों में उपस्थित रहते हैं। जो लोग उपवनों में सारस, चक्रवाक इत्यादि पालते हैं वे उनमें कृत्रिम झील इत्यादि भी बनवा देते हैं। बिहारी का चकई-चकवाओं से तात्पर्य ऐसे ही पलुवे चकई-चकवाओं से हैं।...

(बिहारी रत्नाकर, पष्ठ 201)

इस प्रकार पशु एवं पक्षियों को पालतू बनाकर रखने की अति प्राचीन परम्परा है। मनुष्य ही नहीं देवी देवता तक इनको पालकर अपने पास रखते हैं और उनसे अनेक कार्य लेते रहते हैं। भगवान विष्णु का गरुड़ प्रिय पक्षी है। मयूर एवं हंस सरस्वती द्वारा वाहन-रूप में स्वीकृत है। भगवती की सेवा में सिंह सदैव उपस्थित रहता है। कामदेव ने कबूतर को अंगीकार किया है। सूर्यदेव तथा निशाकर के रथों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को क्रमशः अश्व एवं मृग आज तक खींच रहे हैं। भगवती कमला का वरद हस्त गजराजों को आनन्दित करता रहता है। सुरेन्द्र के 'नन्दननामक उद्यान में विविध पशु-पक्षियों के गृहीयण का उल्लेख हुआ है। वन्य जीवों तथा विहंगों को पालतू बनाने के इच्छुक अनेक उपायों को अपनाते हैं। कतिपय नभचरों के अंडों को घोसलें से उठाकर ये दूसरे पक्षियों के द्वारा सेते हैं और बच्चों को प्राप्त कर बड़ी सतर्कता से पालते हैं। बहुत-से मनुष्य पक्षधरों के अबोध शिशुओं को ही चुपके से नीडों से ले आते हैं और इन्हें खिला-पिलाकर बड़ा कर लेते हैं। कुछ पक्षियों को जाल द्वारा भी पकड़ा जाता है और फिर उन्हें पिंजड़ों में रखकर पालतू कर लेते हैं। खोंचा और लासा से खगों को फंसाना बहेलिया खूब जानते हैं। प्राचीन काल में नकली पेड़ बनाकर और उसमें लासा का प्रयोग करके भूखे खेचरों को चिड़ीमार फांस लेते थे। पद्मावत में जायसी ने इसी का संकेत किया है :—

सुए तहाँ दिन दस कलि काटी।
आय वियाध ढुका लेई टाटी।
पैग पैग भुई चांपत आबा, पंखिन्ह देखि हिए डर खावा।
देखिए कछु अचरजु अनभला, तरिवर एक आवत है चला।
एहि बन रहत गई हम्ह आऊ, तरिवर चलत न देखा काऊ।
आजु जो तरिवर चल, भलनाहीं आबहु यह बन छाँडि पराहीं।
वै तौ उड़े और बन ताका, पंडित सुध्या भूलि मन थाका।
साखा देखि राजु जनु पावा, धैठी निचिंत चला वह आबा।
पाँच बान कर खोंचा, लासा भरे सो पाँच।
पाँच भरे तन अरूझा, कित मारे बिनु पाँच।
बँधिभा सुआ करत सुख केली,
चूरि पाँख मेलेसि धरि डेली।
तहवाँ बहुल पंखि खर भरहीं,
आपु आपु कहँ रोदन करहीं।
बिखदाना कित होत अँगूरा,
जेहि भा मरन डह्न धरि चूरा।

(पद्मावत-सुआ खंड, पृष्ठ 27)

कीर को पकड़ने का एक साधन और भी है। तोते को पकड़ने वाला दो खड़े डण्डों के ऊपर एक तीसरी तिर्छी लकड़ी ऐसी रखता है जिस पर चिपकने वाला पदार्थ लगा रहता है। उसके नीचे चावल के दाने बखेर देता है। सुग्गा चावलों के लालच में आता है तो एकदम नीचे नहीं बैठता, निकटस्थ ऊँचे स्थान पर ही बैठता है। इस अभियान के कारण वह उक्त यन्त्र पर ही जिससे उसके पंख चिपक जाते हैं

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और वह पकड़ लिया जाता है।[1]

गोस्वामी तुलसीदास जी ने इसी का उल्लेख किया है :—

हम, हमार आचार बड़ भूरि धरि सीस।
हठि सठ परबस परत जिमि, कीर, कोस-कृमि, कीस।

(दोहावली, 243)

माया बस सब जीव गुसाईं।
बँधे कीर मरकट की नाई।

(रामचरित्र मानस)

जैन कवि दौलतराम ने भी शुक के इस प्रकार बन्दी बन जाने की चर्चा की है।

अपनी सुधि भूल आप, आप दुख उपायौ।
ज्यों शुक नभ चाल बिसरि नलिनी लटकायौ॥

इस प्रकार विहंगों को पालतू तथा भक्ष्य बनाने के हेतु पकड़ा जाता है। इन बेचारों के अंडों, एवं शिशुओं को पकड़ना सरल है लेकिन कानन-निवासी हिंसक तथा शाकाहारी पशुओं को पालतू रूप देने के लिए कठिन परिश्रम के साथ परीक्षित साधनों का ही उपयोग किया जाता है। इनको पकड़ने वाले कभी-कभी अपने प्राणों को भी खो बैठते हैं।

सिंह, व्याघ्र, तेंदुआ, रीछ, भेड़िया आदि के शिशुओं को उनके जन्मस्थानों से (इनके माता-पिताओं की अनुपस्थिति में) उठा लिया जाता है और फिर पालतू बनाकर घरों में रखा जाता है। कभी-कभी शिकारी कटघरों एवं जालों को भी इनके पकड़ने में साधन बनाते हैं। बन्दी बनकर ये युवक पशु पूर्ण धैर्य और सान्त्वना के साथ मानव परिवार में रहने लगते हैं। कानन-विहारी गज पालतू हाथियों की सहायता से गृह्यक बनाए जाते हैं। मैसूर में जगत-प्रसिद्ध गज-प्रशिक्षण विद्यालय है, जिसमें विविध उपायों से गज-शावकों को शिक्षित किया जाता है। पूर्व काल में कामातुर गज को नकली (घास-लकड़ी से निर्मित) हथिनी के द्वारा भी एक बड़े गड्डे में फँसाया जाकर कई दिनों तक भूखा रखते थे फिर शनैः-शनैः उसे पालतू बनाते थे। संगीत प्रिय होने के कारण मृग को पकड़ने का सुगम उपाय मधुर गायन और वादन है। एक बार बन्दी बनकर यह हरिण अथवा मृगक-शाव मानव का सतत संगी बन जाता है। बन्दर बड़ा चंचल होता है। इसको पकड़ना हँसी-खेल नहीं है। अपने पकड़े गए बच्चे को भी यह वापिस ले जाता है। पकड़ने वाले पर यह क्रुद्ध होकर अन्य हिंसक पशुओं के समान ही आक्रमण करता है। मर्कट को पकड़ने के लिए लोग तंग गर्दन वाले कड़े का प्रयोग करते हैं।

---

1. तुलसी दोहावली (टीकाकार लाला भगवानदीन), पृष्ठ 91.

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वे इसमें कुछ चने रख देते हैं। बन्दर उसमें अपना हाथ डाल देता है। पर मुट्ठी बन्द करने पर हाथ निकल नहीं सकता। लालची मर्कट चनों को छोड़ता नहीं है। फल यह होता है कि वह बन्दी बनता है और उसे गली-गली नाचना भी पड़ता है।

लोहे के पंजों से भी हिंसक पशु पकड़े जाते हैं।

यहाँ पशु-पक्षियों के पकड़ने के कतिपय उपायों का ही उल्लेख हुआ है। बहुज्ञ मानव ने अनेक साधनों को जन्म देकर इन प्राणधारियों को वन्दी बनाया और अपने साथ रखकर इनसे अपना आमोद-प्रमोद भी किया और आज भी कर रहा है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशु-पक्षियों का शिशु-पालन एवं प्रशिक्षण

पशु-पक्षियों में अपने शिशुओं के लिए अत्यधिक ममता होती है। वे इनके पालन-पोषण में अपने सुखों को भूल जाते हैं और भयावह विपत्तियों को हँसते-हँसते झेल लेते हैं। भूखे बच्चों को देखकर उनकी आँखें आँसू बरसाने लगती हैं और इनकी रुग्णावस्था इन्हें (माता-पिताओं को) बेचन कर देती है। स्वयं निराहार रहकर ये प्राणी अपने शिशुओं का पेट भरते हैं और अपनी छाता से चिपकाकर इन्हें घातकों से बचाते रहते हैं। सब जानते हैं कि बन्दर-पत्नी अपने अबोध शिशु को किन-किन कठिनाइयों के साथ पालती है और अपने वक्षस्थल में उसे छिपाकर किसी विद्वेषी को पास नहीं आने देती। कभी-कभी तो मर्कट-भार्या अपने मृत शिशु को कई दिनों तक अपनी छाती से चिपकाए रहती है। उसकी यह सहज शिशु-ममता आदर्श है।

हरिण अपने बच्चे की रक्षा के लिए विकराल मृगेन्द्र के सन्मुख खड़ा हो जाता है।[1]

गाय अपने नव जात बच्चे को जिस मोह से चाहती है और सतर्क रहकर उसकी रक्षा करती है, उसका उल्लेख अनेक कवियों ने ममता की प्रगाढ़ता को दिखाने के लिए बारम्बार किया है।

कुतिया अपने शिशुओं को गुप्त स्थान में रखकर उन्हें अपनी आँखों से लगातार देखती रहती है और अपरिचित व्यक्ति को देखकर सताए हुए साँप की तरह कुपित हो जाती है।

सिंहनी के बच्चों को देखना मानों काल के मुँह में जाना है। वह अपने प्रसूति-गृह में उन्हें पूर्ण रूपेण सुरक्षित रखती है। वह कुछ काल तक तो उनके चारों ओर चक्कर लगाकर स्वयं भूखी रहती है। ये सिंह-शावक जन्म के समय अन्धे रहते हैं। ऐसी असहायवस्था में उनकी जननी ही उनका आधार रहती है। वह उन्हें खिलाती-पिलाती है सुखदायक स्थान में सुलाती है, अपनी जिह्वा से चाटकर उनके शरीर की मलिनता को दूर करती है और चुल के बाहर जाने पर उन्हें कोमलता से अपने मुँह में दबाकर उठा लाती है। ये नव-जात शिशु बिल्ली के बच्चे के समान क्षीण आवाज में चिल्लाते रहते हैं और अपनी भूख की सूचना देकर माता-पिता को अपने पास बुला लेते हैं। यों तो सिंहनी सतत शिशुओं के

---

1. सोऽहं तथापि तव भक्ति वशान्मुनीश।
कर्तुं स्तवम विगत शक्तिरपि प्रवृत्तः।
प्रीत्यात्मवीर्यमपिचार्य मृगो मृगेन्द्रम।
नाभ्येतिकिं निज शिशो परिपालनार्थम।

(भक्तामर स्तोत्र, 5)

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समीप रहती है, लेकिन भोजन की व्यवस्था के लिए उसे कभी बाहर भी जाना पड़ता है। ऐसी अवस्था में सिंह अपने बच्चों का संरक्षण करता हुआ देखा गया है। नियमतः मांसाहरी पशुओं में मादा ही शिशुओं की देखभाल का भार अपने ऊपर लेती है, फिर भी नर भोजन-प्राप्ति शिशु-रक्षण, एवं उनके प्रशिक्षण में अपनी पत्नी के साथ पूर्ण सहायता करता है। चलने-फिरने की शक्ति आ जाने पर सिंह (Lion) तथा तेंदुआ (Panther) अपने बच्चों को शिकार करना, कूदना, हमला करना, छलांग मारना, मृत पशु के माँस को नोचना आदि सिखाते हैं। यह गृह-प्रशिक्षण बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। चीता (Tiger) तो बच्चों के जन्म होने पर अपनी पत्नी का परित्याग कर देता है। और फिर शिशु पालन-पोषण, संरक्षण, प्रशिक्षण आदि का पूरा प्रबन्ध इस एकाकी नारी को ही करना पड़ता है। वह अपने इन लाड़लों को बन-पशु मारन के अनेक उपाय बताती है। कभी वह वन्य-प्राणी के अंगों को तोड़कर अपने बच्चों के आगे रख देती है और उन्हें उसका मारना, रक्त-पान करना एवं माँस-भक्षण की विधि सिखाती है। सिंह, चीता, तेंदुआ आदि कतिपय माँस भक्षी वन्य जीवों के शिशु-लालन-पालन, प्रशिक्षण, एवं संरक्षण के सम्बन्ध में श्री एस० एच० प्रेटर की निम्नस्थ पंक्तियाँ मनन करने योग्य हैं :—

Beasts of prey are usually born blind and helpless. Some baby lions can see at birth. The task of looking after the cubs falls chiefly on the mother. The tiger appears to desert its mate shortly before or after the cubs are born. The male panther and lion, on the other hand, remain with their families and though they take little interst in their offsprping, at least help in defending them, and latter, when they are some what grown up help them to secure food. But it is always, the mother, who keeps the nursery clean, who atteneds to the toilet of the cubs, licking them with her great rough tongue until they can lick themselves or each other clean. When they stray from their lair, she brings them back, carrying them by gripping the lose skin of the neck with her teeth just as a house cat does.....Training in hunting and stalking begins in the nursery. The cubs crouch and leop at each other. What seens pointless play with the mother's tail is gaining of skill in opproach and attack. (The Book of Indian Animals. p. 39)

रीछ भी अपनी पत्नी को बच्चों के जन्म होने के बाद छोड़ देता है अतः माता ही अपने उन छोटे शिशुओं को पालती है और अपने साथ रखकर उन्हें समर्थ बनाती है। बच्चों के साथ घूमती हुई रीछ-पत्नी को परेशान करना घातक सिद्ध होता है। वह अपने शावकों की रक्षार्थ भयंकर आक्रमण करती है और पीड़क को कभी-कभी मृत्यु की गोद में सुलाकर शान्त ही होती है।

बिल्ली तो अब हमारे घरों में निर्भय होकर घूमती रहती है। सतत सान्निध्य के कारण मानव समाज से अब उसे भय नहीं है। उसे हमारे ही गृहों में अब सब प्रकार की सुविधाएँ प्राप्त हो जाती हैं। घर के किसी गुप्त कोने में वह बच्चों को जन्म देकर कई झंझटों से बच जाती है। प्रेम से पालती हुई यह अपने शिशुओं के पास अपरिचित जन को नहीं आने देती है। भय की आशंका होने पर वह अपने बच्चों को

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुँह में दबाकर सुरक्षित स्थान में रख आती है। भोजन-प्राप्ति के साधनों को सिखाती हुई बिल्ली चूहों को मारने की भी शिक्षा अपने शिशुओं को अवस्था प्राप्त होने पर अवश्य दे देती है। अधमरे मूषक को बच्चों के आगे डालकर वह उसे इधर-उधर खींचती है, कड़ोरती है और उसके शरीर को नोच-नोच कर खाती है। बच्चे यह सब चुपचाप खड़े हुए देखते हैं और फिर अनुकरण करके चूहे को मारना सीख जाते हैं।

भेड़िये मनुष्यों के बच्चों को ले जाते हुए देखे गए हैं। वे कभी उन्हें मारकर खा जाते हैं तो कभी बड़े प्रेम से पालते और अपनी बोली सिखाते हैं। इस प्रकार के कई बच्चे भेड़ियों के निवास-स्थानों से प्राप्त किये गए हैं।

वृक (भेड़िया) अपने बच्चों को बड़े स्नेह से पालता है। जब वृक-पत्नी शिशुओं के पास रहती है तब भेड़िया इधर-उधर घूमकर भोजन लाता है और भूखे बच्चों एवं उनकी माता को खिलाकर अपने कर्त्तव्य की कुछ अंशों में पूर्ति मान लेता है। मादा कभी-कभी अपने बच्चों की रक्षार्थ घण्टों असहनीय धूप को सहती हुई खड़ी रहती है और आक्रमण करने वाले को बुरी तरह घायल कर देती है।

हाथी का बच्चा अपनी-माता के द्वारा ही पालित एवं रक्षित होता है हाँ दूसरी हथिनी अवश्य इस कार्य में सहायता करती रहती है।

कंगरू तो अपने पेट की थैली में ही अपने नव-जात शिशु को सुरक्षित रखती है, और जब तक वह

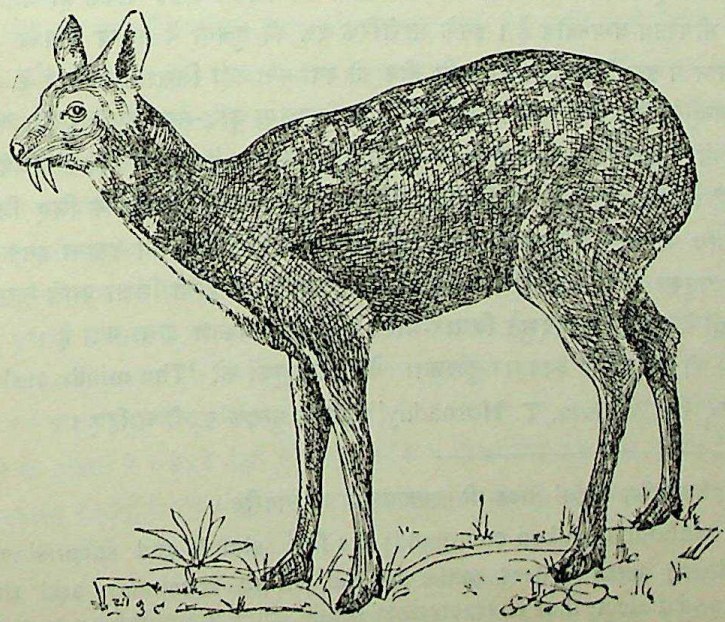

मृग-शावक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चलने-फिरने की शक्ति प्राप्त नहीं कर पाता तब तक यह उदर की थैली ही उसका सुखद गृह रहता है। इन साधनहीन पशु-शावकों के पालन-पोषण एवं सुरक्षण में प्रकृति ने भी विशेष सहायता की है।

मृगी के बच्चे जन्म लेते ही चलने लगते हैं, और अपनी जननी के दुग्ध को पीकर अन्य पशु-शावकों की अपेक्षा शीघ्र बलिष्ठ बन जाते हैं। (चित्र पृष्ठ 177) ये मृग-शिशु जन्म समय अवलोकन-शक्ति से भी हीन नहीं रहते। लोकोक्ति प्रसिद्ध है कि मृग का छौना माता के उदर से निकलते ही चौकड़ी भरने लगता है। वयस्क होने तक ये शावक माता की छाया में रहकर जीवन का सुख भोगते हैं।

मृग की अनेक जातियाँ[1] हैं। ये अपने शत्रुओं को भयभीत करने के लिए भयावह ध्वनि करते हैं और ज़ोर से धरती पर पैर पटकते हैं।

पशुओं को कुछ तो प्रशिक्षण माता-पिता से प्राप्त होता है और बहुत कुछ मानव से। हमारे अनेक घरेलू जानवर भी तो अपने स्वामियों से सदा सीखते रहते हैं। पालतू बनाकर मनुष्य ने इन कानन-चारियों को बहुत अंशों में सुशिक्षित तथा सुसंस्कृत बनाया है।

एप्स (बन्दर विशेष) तो साइकिल चलाता है, और मनुष्य की भाँति अपने शरीर को कभी कोट से तो कभी कुरते से सुशोभित करता है। बन्दर ने भी तो लाठी के बल पर स्वयं को प्रशिक्षित बना लिया है। वन्य-पशुओं में सिंह, चीता, रीछ, हाथी आदि ने मानव-संसर्ग में आकर अपने बुद्धि-कौशल का अच्छा परिचय दिया है। सर्कसों में आज भी उनके कार्यों को देखकर दर्शक चकित हो जाते हैं।

हाथी एक भीमकाय वन्य-जीव है। इसके शारीरिक बल की तुलना में मनुष्य नगण्य है, फिर भी इस छोटे-से इन्सान ने इस विशाल शरीर वाले जीव को क्या-क्या नहीं सिखाया। मैसूर के हस्ति-प्रशिक्षण विद्यालय को जिन्होंने देखा है उनका कथन है कि हाथी विलक्षण बुद्धि-सम्पन्न होता है। श्री एम० डी० चतुर्वेदी ने अपने 'The Elephant and I' नामक निबन्ध में गज के विषय में अपने कुछ अनुभव प्रकाशित किए हैं। आपका कहना है कि हाथी की उपयोगिता मानव-समाज के लिए विशेष महत्त्वपूर्ण है। काष्ठ-व्यवसाय में यह एक सहायक साधन है। भारी-भारी लट्ठों को उठाना इसका ही काम है। गज-प्रशिक्षण में प्रयुक्त भाषा में परिमित शब्द हैं जिनके माध्यम से हाथी शिक्षा प्राप्त करता है।[2]

लोक-कथाओं में हाथी की अद्भुत विचार-शक्ति पर विशेष प्रकाश डाला गया है।

वन्य-पशुओं की बुद्धि एवं व्यवहार-कुशलता के जिज्ञासुओं को 'The minds and manners of wild Animals, by William. T. Hornaday'' नामक पुस्तक पढ़नी चाहिए।

---

1. देखिए 'मध्यप्रदेश के मृग' लेखक श्री कामताप्रसाद जी सागरीय।

2. The Mahout's spoken commands are few, simple and surprisingly uniform. Some two dozen terse orders make up the entire vocabulary and the profusion of languages and dialects that characterizes India, they are common to the whole sub-continent, subject only to minor variation in accent. (The Elephant and I.)

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कृषि के योग्य बनाने के लिए बैलों को, तांगा, बग्घी, टमटम आदि को खींचने के हेतु घोड़ों, खच्चरों को तथा ऊँट, भैंसा, गदर्भ आदि अनेक पशुओं को उपयोग में लाने के पूर्व समुचित प्रशिक्षण देना अनिवार्य हो जाता है। पशुओं के ही समान नभचरों की शिशु-पालन, संरक्षण तथा प्रशिक्षण-पद्धतियाँ मनोरंजक और ज्ञानवर्धक हैं।

'नीड़-निर्माण' नामक निबन्ध में बताया जा चुका है कि ये खेचर अपने बच्चों की सुविधाओं को ही ध्यान में रखकर घोंसलों को बनाते हैं। नव-जात शिशुओं को बैठने में असुविधा न हो, उन्हें पर्याप्त उष्णता मिलती रहे, सूर्य की गर्मी उन्हें कष्टदायक न हो सके, दुष्ट पक्षी उन्हें सता न पावें, एवं ऋतु-परिवर्तन से ये सुरक्षित रहें इन सब बातों पर विचार करके ही ये पक्षधर विविध रूपों में घोंसलों की रचना करके अपने शिशु-प्रेम का प्रदर्शन करते हैं। घनेश नामक पक्षी की सहचरी को कई मास तक कोटर में केवल बच्चों को पालन-पोषणार्थ बन्द रहना पड़ता है। शिकारी नभचरों से अपने बालकों को बचाने के लिए कभी नर और कभी मादा घोंसले में बैठती है। और कभी पंजों में तो कभी तीक्ष्ण चंचु के प्रहार से आक्रमण करने वाले को आहत करती है। लगलग (White necked stork) की पत्नी अपने शिशुओं की रक्षा के लिए कुछ दिवसों के लिए नीड़ से अलग नहीं होती। उसे शंका रहती है कि न मालूम कौन दुष्ट खग—बाज़, बहरी, उलूक, चील, काग आदि—उसके बच्चों को चट कर जाए। कुछ गगन विहारी ऐसे होते हैं जो घोंसलों के ऊपर मंडराते रहते हैं और अपने बालकों की चीत्कार को सुनते ही झपट के साथ नीचे आ जाते हैं। सारस (crane) भयावह कर्ण कटु ध्वनि करके शिकारी खग को अपने घोंसले के पास आने से रोकता है। काग स्वभाव से दुष्ट एवं माँसप्रिय होने के कारण उनके पक्षियों के अंडों तथा अबोध शिशुओं को खाता रहता है। इस कुकृत्य में उसे अपार सुख भी मिलता है। हुदहुद (Hoopoe) की पत्नी तब तक अण्डों पर बैठी रहती है जब तक उनमें से बच्चे नहीं निकल आते।

ऐसा संतान-वात्सल्य अन्य नभचरों में कम देखा जाता है। पति-पत्नी दोनों मिलकर शिशुओं को खलाते-पिलाते हैं। विनाशक को अपने नाश का भी सदैव भय बना रहता है। अतः कौआ अपने अंडों की रक्षा के लिए विशेष सजग देखा गया है। वह कभी भी अपने घोंसले को अकेला नहीं छोड़ता। यदि नर भोजन की तलाश में जाता है तो मादा नीड़ की रक्षिका बनती है। मादा के इधर-उधर चले जाने पर नर घोंसले की रखवाली करता है। वया का नीड़ इतना सुरक्षित होता है कि उसमें अपरिचित विहंग प्रवेश ही नहीं कर पाता। कठफोर (Wood peeker) द्वारा निर्मित दृढ़ नीड़ शिशु-संरक्षण का एक सुन्दर उदाहरण कहा जा सकता है। अपने पंखों से बच्चों को घाम से बचाना सब पक्षी जानते हैं। शिशु-पालन में भोजन व्यवस्था का विशेष स्थान है। कैसा भोजन स्वास्थ्य प्रद है, और कब कितना खिलाना चाहिए ये दो बातें ये विहंग अच्छी तरह से जानते हैं।

लगलग (White necked Storks) अपने कुछ बड़े हुए बच्चों को दो अथवा तीन घण्टों के अन्तराल से भोजन देते हैं। इस भोजन में मेंढक, छोटे सर्प, कीड़े-मकोड़े एवं छोटी मछलियाँ सम्मिलित रहती हैं।

कृष्ण ग्रीवा लगलग (Black necked Storks) अपने शिशुओं को प्रायः सर्योदय तथा सूर्यास्त के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समय खिलाते हैं। पति-पत्नी दोनों मिलकर यह काम करते हैं।

दाबिल (Spoonbill) एक साथ बच्चों के मुँह में खाना नहीं डालता है। वह धीरे-धीरे भोज्य को सुपाच्य एवं ग्राह्य बनाकर अपने शिशुओं को खिलाता है। कभी-कभी वह चोंच में भरे हुए भोजन को घोंसले में डाल देता है और बच्चों को स्वयं खाने के लिए प्रेरित करता है।

बगुला (Heron) छोटी-छोटी मछलियों को चोंच में भर कर अपने बच्चों के आगे डाल देता है और कभी उनके छोटे-छोटे टुकड़े करके बच्चों को स्वयं उठाकर खाने को कहता है।[1] अपने माता-पिता का अनुकरण करते हुए ये छोटे बच्चे शनैः-शनैः मछली को चोंच से काटना, मेंढ़क के पेट को चीरना, माँस के टुकड़े को उठाना एवं कीटों को पकड़ना सीख जाते हैं। इस विषय में उनकी सहज प्रवृत्तियाँ अधिक सहायता देती हैं। भोजन-विषयक शिक्षा प्राप्त करके ये विहंग-शिशु उड़ने की, पानी में डूबने की, मछली पकड़ने की तथा शरीर-शुद्धि की अपनी जननी अथवा जनक से शिक्षा लेते हैं। जलचर पक्षी अपने बच्चों को पीठ पर बैठाकर जल में तैरते हैं। कभी-कभी ये उनको (बच्चों को) पानी में धकेल देते हैं और फिर डूबते हुए को अपनी चोंच से पकड़ कर बाहर निकालते हैं। ऐसा करके वे उन्हें तैरना सिखा लेते हैं। Grebe (डुबडुबी) तथा Dabchick (डुबडुबी की अन्य किस्म) इसी प्रकार अपने बालकों को जल की धारा में तैरने की शिक्षा देती है।

पनडुब्बी (Crested grebe) अपने बच्चे को साथ लेकर तैरती है और सहसा मछली को पकड़ने के लिए जल में डूब जाती है। इस विधि से वह मछली पकड़ना भी अपने बच्चे को सिखा लेती है।

यों तो पक्षी-शावकों को उड़ना स्वतः आता ही है। वे चलने-फिरने की शक्ति पाते ही उड़ने का प्रयास करने लगते हैं, फिर भी कुछ विहंग अपने बच्चों को उड़ने की भी शिक्षा दे दिया करते हैं।

एक जल पक्षी (Guillemot) किसी ऊँचे स्थान पर बैठकर अपने बच्चों के पंख को पकड़ती है और उसे नीचे पटक देती है। इस प्रकार नीचे गिरते-गिरते उसके पंख पूरे खुल जाते हैं और वह (बच्चा) सुविधा के साथ उड़ना सीख जाता है। कभी-कभी ये पक्षी अपने शिशुओं को विभिन्न प्रकार की बोलियाँ बोलने, कीटों को पहचानने तथा ऋतु-परिवर्तन के चिह्नों को समझने का भी प्रशिक्षण देते हुए देखे गए हैं। यह सब गृह-शिक्षा है। मनुष्य भी तो अपने विनोदार्थ अथवा धनोपार्जनार्थ इन खेचरों को विविध प्रकार का प्रशिक्षण देता है। ये प्रबुद्ध नभचर अपनी कुशाग्र बुद्धि से कभी मानव बोली का अनुकरण करते हैं, तो कभी नाचते-गाते हैं। कभी पत्र लेकर निर्दिष्ट स्थान पर जाते हैं तो कभी मंत्रोच्चारण से भक्तों को प्रमुदित कर देते हैं। तोते का बन्दूक चलाना, सिगरेट जलाना, घंटी बजाना तथा रामचरितमानस की चौपाइयों का पाठ करना तो आज भी देखा सुना जाता है। शुक[2] सारिका[3] तो मनुष्य की बोली को इतने शुद्ध

1. 'Notes on some Indian Birds', by E. H. N. Lowther, The Journal of the Bombay Natural History Society. April 1944, p. 355.

2. तोते की जातियाँ ये हैं—(1) करन तोता, (2) लालकंठी सुग्गा, (3) टुइयाँ

3. मैना की सात उपजातियाँ प्रसिद्ध हैं—(1) पहाड़ी मैना, (2) गुलाबी मैना, (3) भूरी मैना, (4) पबई मैना (5) देशी मैना, (6) गंगा मैना, (7) अबलखा (मैना)।

 Digitized by Panjab Digital Library | Presevation Foundation, Chandigarh

रूप में बोलती है कि श्रोता बहुधा अचम्भे में पड़ जाता है। सुना जाता है कि उलूक भी कभी-कभी बच्चों का अनुकरण करता है। सितोदर भुजंगा (Whitebellied Drongo) की अनुकरणप्रियता प्रसिद्ध है। पक्षी-विशेषज्ञों के अनुसार काग भी यदा-कदा मानव की बोली की नकल कर लेता है। कतिपय पशु-पक्षियों के प्रशिक्षण का उल्लेख अन्य निबन्धों में प्रसंग वश कर ही दिया गया है।

तीतर, बटेर, मुर्गा आदि पक्षियों को युद्ध कला में प्रवीण करने के लिए बहुत धन व्यय किया जाता है। आज भी लखनऊ में बटेर की लड़ाई पर बरबाद हो जाने वाले अनेक रईस मिल सकते हैं।

हमारा प्राचीन साहित्य पशु-पक्षियों के सामंजस्यपूर्ण सम्बन्धों से परिपूर्ण है। इन प्राणियों की विचार-धारा से मानव-समाज सदा से प्रभावित रहा है। मानसिक उद्वेलन को शान्त करने के लिए प्रासादों एवं भवनों में रहने वाली सुन्दरियाँ कभी पक्षियों से और कभी पशुओं से अपना सम्पर्क स्थापित करती थीं और उन्हें नृत्य-संगीत सिखाकर अपने शुष्क हृदय को सरस बना लेती थीं। भक्त समाज में भी तो पक्षी कभी निरादृत नहीं हुआ। राम-भक्त कवियों ने यदि शुक को राम-नाम कीर्तन सिखाया है तो कृष्ण-सेवकों ने इससे 'राधिका वन्दना' को उच्चरित कराकर अनेकों की बाधा शान्त की है। उद्धव-शतक (रत्नाकर-कृत) में बताया गया है कि यमुना के पुलिन पर मूर्छित मुरलीधर को ऊधव ने कीर से राधा-नाम सुनवाकर ही सचेत किया था :—

"न्हात जमुना मैं जलजात एक देख्यौ जात
जाकौ अध-उरध अधिक मुरझायौ है
कहै रतनाकर उमहि गहि स्याम ताहि,
बास बासना सौं नैकुं नासिका लगायौ है।
त्यौंहीं कछु घूमि घूमि घूमि बेसुध भए कै हाय,
पाय परे उखरि अभाय मुख छायौ है,
पाए घरी द्वैक मैं जगाइ ल्याइ ऊधौ तीर
राधा नाम कीर जब औचक सुनाओ है॥

ब्रज में योग विद्या सिखाने के लिए गए हुए ज्ञानी उद्धव को कोक-शास्त्र की कारिकाओं (सूत्रों की श्लोक-बद्ध व्याख्याओं) को पढ़-पढ़कर शुक-सारिकाओं को पढ़ाने वाली ब्रज की गोरियों ने कुटिल-कटाच्छों से व्यथित कर दिया था। इससे प्रकट होता है कि ये दो विहंग विविध ग्रन्थों को कंठस्थ कर लिया करते थे—

ब्रज की कुमारिका बै लीने सुक-सारिका,
पढ़ावैं कोक-कारिकान केसव सबै निबाहि।
गोरी गोरी भोरी भोरी थोरी थोरी बैस फिर
देवता सी दौरि दौरि आई चोरा चोरी चाहि।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बिन गुन तरी आन भृकुटी कमान तानि,
कुटिल कटाच्छ-बान यह अचरज आहि ।
एते मान ढीठ, ईठ मेरे को अदीठ मन,
पीठ दै दै मारतीं पै चुकती न कोऊ ताहि ।

(कवि-प्रिया)

इस विषय में अभी बहुत कुछ शोध आवश्यक है । यदि साहित्यकार वैज्ञानिक आधारों को अंगीकार करते हुए इस सम्बन्ध में लिखें तो निश्चयतः उनकी कृतियाँ अधिक मूल्यवान् होंगी ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशु-पक्षी-परिचय

मानव का अनादि काल से पशु-पशियों से सम्बन्ध स्थापित है। ये उसके जीवन के आवश्यक अंग हैं। पशु-पक्षी मानव के अभाव में भी रह सकते हैं, लेकिन मानव का अस्तित्व इन मूक प्राणियों के न रहने पर असंभव प्रायः हो जावेगा। वह युग कितना सुहावना था जब मानव इन चिरंतन अपने साथियों को परिवार का ही अंग मानता था। उस काल में इन जीवों ने अपना सब कुछ अर्पित करके मानव की रक्षा की थी। इस विराट् विश्व का कोई ऐसा स्थल नहीं है जहाँ ये पशु-पक्षी न पाये जाते हों। जिन स्थानों पर मानव ने पहुँचने की कल्पना तक भी न की थी, वहाँ इन चतुष्पदों एवं द्विपदों ने जाकर अपनी सत्ता को प्रमाणित किया। अतः यह कहना कि कोई स्थान पशु-पक्षी-हीन है सर्वथा असत्य है।

यह सत्य है कि निरन्तर सम्पर्क में रहकर मानव ने बहुत कुछ इन प्राणियों से सीखा और अपने अनुभूत सिद्धान्तों को बहुत अंशों में उन पर आधारित किया। इनके स्वभाव, गुणावगुण, आदर्श, आकृति, रहन-सहन, भाव-भंगिमा, प्रवृत्तियाँ आदि को गहरी दृष्टि से देखा और अनेक तथ्यों का उद्घाटन किया जो आज लोकोक्ति-शास्त्र के रूप में प्रसिद्ध है। ये लोकोक्तियाँ सूर्य की रश्मियों के समान पथ-प्रदर्शिका हैं। उनके माध्यम से मनुष्य भौतिक संसार में सफल होता हुआ पारमार्थिक जगत का भी चिंतन सुगमता से कर सकता है। इन मूक-जीवों की प्रवृत्तियों पर निर्मित ये कहावतें बड़ी ही भाव-पूर्ण और सरस हैं। हिन्दी में ही नहीं अपितु संसार के समस्त साहित्य में इन जीवधारियों का उल्लेख हुआ है और इनकी गति-विधि का सुचारू रूप से अध्ययन भी किया गया है। हिन्दी की लोकोक्तियाँ पशु-पक्षियों के अध्ययन के लिए एक प्रशस्त साधन उपस्थित करती हैं।*

---

*1. कीड़ी संचै तीतर खाय, पापी को धन पर ले जाय।
2. हंसा रहे सो मरि गए, कौवा भए दिवान।
3. बंदर की आसनाई, घर में आग लगाई।
4. बगुला मारे पखना हाथ।
5. चिरई में कौआ, मनई में नौवा।
6. सीधे का मुँह कुत्ता चाटै।
7. राम राम सूआ पढ़ै, अंत बिलैया खाय।
8. हाथी फिरै बजार, भूंकै कुकुर हजार।
9. कै हंसा मोती चुगैं, कै भूखन मरि जायँ।
10. बेस्या सती न गदहा जती।
11. सिंह मार कर ही खाता है।
12. हाथी के पैर में सबका पैर।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशु-पक्षियों से सम्बन्धित अंग्रेजी लैटिन, ग्रीक, अरबी आदि भाषाओं में भी बहुत कहावतें हैं।†

ऐसे उपयोगी पशु-पक्षियों का परिचय हम जलाशयों के समीप तथा वनों के मध्य में प्राप्त कर सकते हैं। प्रातःकाल खगों के मधुर संगीत सुनने का समय है। सूर्यास्त के समय आकाश में उड़ते हुए पक्षियों को देखिए वे कितने आतुर रहते हैं अपने बच्चों से मिलने के लिए। वसन्त में किसी वाटिका में बैठ जाइए और फिर इन पक्षवरों का नृत्य देखिए। यदि आप भावुक हैं तो अवश्य इसमें रम जावेंगे। पावस की रसीली बूंदो के पड़ते ही आपको विविध पक्षी कूजते हुए सुनाई पड़ेंगे। कानन में शाम के समय किसी ऊँचे पेड़ पर बैठकर भोजन के लिए इधर-उधर फिरते हुए अनेक पशुओं को आप निहार सकते हैं। भक्षक बनकर किसी का परिचय प्राप्त करना अपराध है। न मालूम कितने पशु-पक्षियों की जीवित कब्रें मनुष्य के ये उदर हैं। मानव ने अपनी जिह्वा की लालसा को पूर्ण करने के लिए बहुत से पशु-पक्षियों के गले पर छुरी चलाई है और आज भी कठोर बनकर उनके माँस को खा रहा है।

---

13. कौवा श्वेत नहीं हो सकता।
14. कोयल अपनी मीठी बोली से सबको मोहित कर लेती है।
15. कागा चले हंस की चाल।
16. घोड़ों को घर कितनी दूर ?
17. चील के घोंसले में माँस कहाँ।

†1. Birds in their little nests agree.
2. Birds of the same feather flock together.
3. Each bird loves to hear himself sing.
4. Old birds are not caught with chaff.
5. The early bird catches the worm.
6. Birds of prey do not sing.
7. A bird in the hand is worth two in the bush (Greek).
8. Such bird such song (Latin)
9. The camel carries sugar but eats thorns.
10. A mangy camel bears the load of money camels.
11. Eagles catch no flies (Latin)
12. The elephant is not won with anger.
13. Owl to owl, crow to crow.
14. It is not good to wake a sleeping lion.
15. Kill not the goose that lays the golden egg. (Latin)
16. Barking dogs seldom bite.
17. The fox changes her fur but not his habits.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अन्य देशों की अपेक्षा भारत का पशु-पक्षी-संसार अधिक सुरक्षित है। मानव को अपने इन पुरातन साथियों के साथ प्रेम और सहानुभूति के साथ ही रहना होगा। धन्य है उस दयालु नेमि राजकुमार को, जिसने चीत्कार करते हुए पक्षियों को देखकर वैराग्य धारण किया और समस्त जीवन को अहिंसा-प्रचार में लगाया[1]।

यहाँ कुछ पशु-पक्षियों का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

सिंह

इसे मृगराज कहते हैं। इसकी लम्बाई 9 फुट और कुछ इंचों तक होती है। आज तक 9 फीट, 7

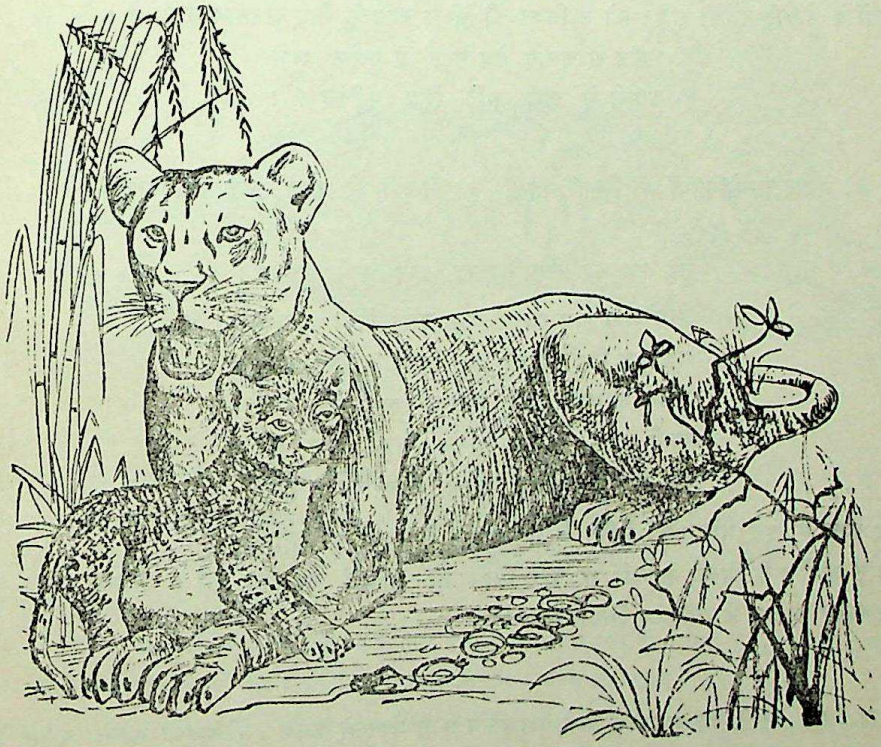

सिंह

1. महाराजकुमार नेमि का राजकुमारी राजल के साथ विवाह सम्पन्न होने वाला था। नेमि की बरात पूर्ण वैभव से जा रही थी। जूनागढ़ राज्य की सीमा में बरात प्रविष्ट हुई और बरातियों का स्वागत होने लगा। सहसा महाराजकुमार की दृष्टि बँधे हुए पशुओं की ओर गई। पूछने पर उन्हें मालूम हुआ कि ये सब मांस भक्षी बरातियों के लिए काटे जावेंगे। महाराजकुमार का दयालु हृदय विकल हो उठा और वे रथ से नीचे उतरे। उन्होंने विवाह के विचार को छोड़ा और घोर तप करके अपनी आत्मा की शुद्धि की तथा केवल-ज्ञान प्राप्त किया। महाराजकुमार नेमि भगवान नेमि नाथ के रूप में जैनों द्वारा पूजित हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इंच तक की लम्बाई वाले सिंह प्राप्त हो सके हैं। यह खुले घास वाले जंगलों का वासी है। वन्य पशु तथा पालतू जानवरों को खाकर सिंह अपनी भूख शान्त करता है। भारतवर्ष में सिंह जूनागढ़ राज्य के गिर वन में ही पाए जाते हैं। 5000 वर्गमीलों में फैला हुआ यह वन आज सिंहों की गर्जना से गूँजता रहता है। अनुमानतः 250 सिंह इस समय इन कानन में जीवित हैं। नर-सिंह की गर्दन पर आयाल होती है, जो इसकी विशेष शोभा है। कोई विशेष ऋतु इसके संभोग के लिए निश्चित नहीं है।

सिंह की गर्जना बड़ी भयावह और वन्य-पशुओं के लिए काल-समान होती है, जिससे सारा जंगल काँप उठता है।

कवियों ने उसकी पतली कमर को नायिका की क्षीण कटि के लिए उपमान माना है।

"कंज से चरण देव गढ़ी से गुलफ शुभ
कदली से जंघ कटि सिंह पहुँवत है।

× × × ×

सिंह को लेकर अन्योक्तियाँ भी लिखी गई हैं, वृद्ध केहरी को लक्ष्य करके दीनदयाल गिरी ने लिखा है—

टूटे नख रद केहरी, वह बल गयो थकाय।
हाय जरा अब आइकै यह दुख दियो बढ़ाय।
यह दुख दियो बढ़ाय, चहूँ दिसी जंबुक गाजैं।
ससक लोमड़ी आदि, स्वतन्त्र करैं सब राजैं।
बरनै दीन दयाल हरिन विहरैं सुख लूटे।
पंगु भयो मृगराज, आज नख रद के टूटे।"

चिर काल से, इस मृगेन्द्र को शक्ति के प्रतीक रूप में माना जा रहा है।

सम्राट् अशोक के विजय स्तम्भों पर चार सिंहों की मूर्तियाँ स्थापित थीं। स्वतन्त्र भारत ने इसे अपनी राजमुद्रा के रूप में स्वीकार किया है।

व्याघ्र

व्याघ्र (बाघ, शेर) उन भयानक वन्य पशुओं में से है जिनको देखकर ही मनुष्य सहसा काँप उठता है। बाघ की चमकती हुई आँखें, वन को प्रकम्पित करने वाली गर्जना, द्रुतगति एवं क्रोध परिपूर्ण भृकुटि सदैव मृत्यु की सूचना देती है। इसकी पीत देह पर लम्बी-लम्बी काली धारियाँ रहती हैं। इसके शरीर की लम्बाई साधारणतः 9 फीट 6 इंच होती है।

हिमालय के समीपस्थ वनों के व्याघ्रों की लम्बाई कुछ अधिक पाई जाती है। 11 फीट 4 इंच लम्बा एक व्याघ्र मारा जा चुका है।

हिमालय से कन्याकुमारी तक इस मांसाहारी भयावह वन्य पशु को देखा जा सकता है। राजपूताने के

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मरुस्थल, पंजाब तथा कच्छ के वनों में इस पशु का अभाव है। घास से परिपूर्ण वनों एवं दलदली स्थानों में व्याघ्र को अत्यधिक आनन्द प्राप्त होता है। (जैसे बंगाल के सुन्दर वन) सिंह की अपेक्षा यह कहीं अधिक बलिष्ठ तथा सजग होता है। चुपचाप रहकर ही यह अपने भक्ष्य पशु को पकड़ पाता है। सामान्यतः

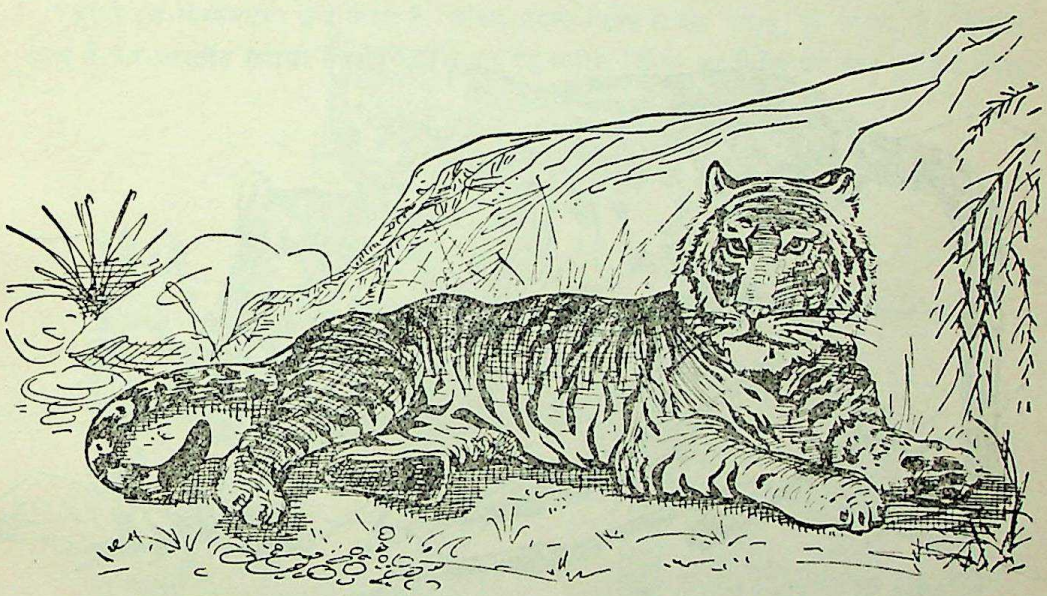

व्याघ्र

यह वृक्ष पर नहीं चढ़ सकता, लेकिन आवश्यकता होने पर यह 14 फीट ऊँचे मचानों पर भी धावा बोल देता है। कुछ शिकारियों के मतानुसार 45 फीट ऊँचे पेड़ पर भी यह पशु चढ़ सकता है। अपने शिशुओं सहित बाघिन अधिक भयंकर होती है। वह मनुष्य को देखते ही झपटती है। कभी-कभी व्याघ्र वृद्ध अथवा आहत होने पर नर भक्षी हो जाता है।

साधारणतः यह प्राणी एक निश्चित वन भाग में ही घूमता रहता है। अतः इसे देखना सुगम है। दूर-दूर तक भ्रमण करके भी वह अपने परिचित स्थान पर अवश्य ही आता है।

पथिकों के वन-मार्गों, नालों, झीलों तथा बैलगाड़ी के रास्तों के समीप यह एक बार चक्कर काट ही लेता है। श्याम व्याघ्र तो अप्राप्य-सा है, लेकिन रीवा के समीपस्थ गोविन्दगढ़ में एक सफेद शेर बन्दी के रूप में देखा जा सकता है। इसका शरीर मटमैला सफेद है और उस पर काले पट्टे हैं। इसे देखकर सहसा अफ्रीका के ज़ीब्रा की याद आ जाती है।

शेर का शिकार या तो पड़ा बाँध कर गारा हो जाने पर उस पर बैठकर किया जाता है अथवा मचान पर बैठकर हाँका द्वारा भी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तदुआ या चीता

यह भी एक भयंकर वन्य-प्राणी है। इसकी लम्बाई 7 फीट तक होती है। भारत के समस्त वनों एवं बर्मा-लंका के जंगलों में यह प्राणी पाया जाता है। स्थल-विशेषता के कारण इसके रंग में परिवर्तन

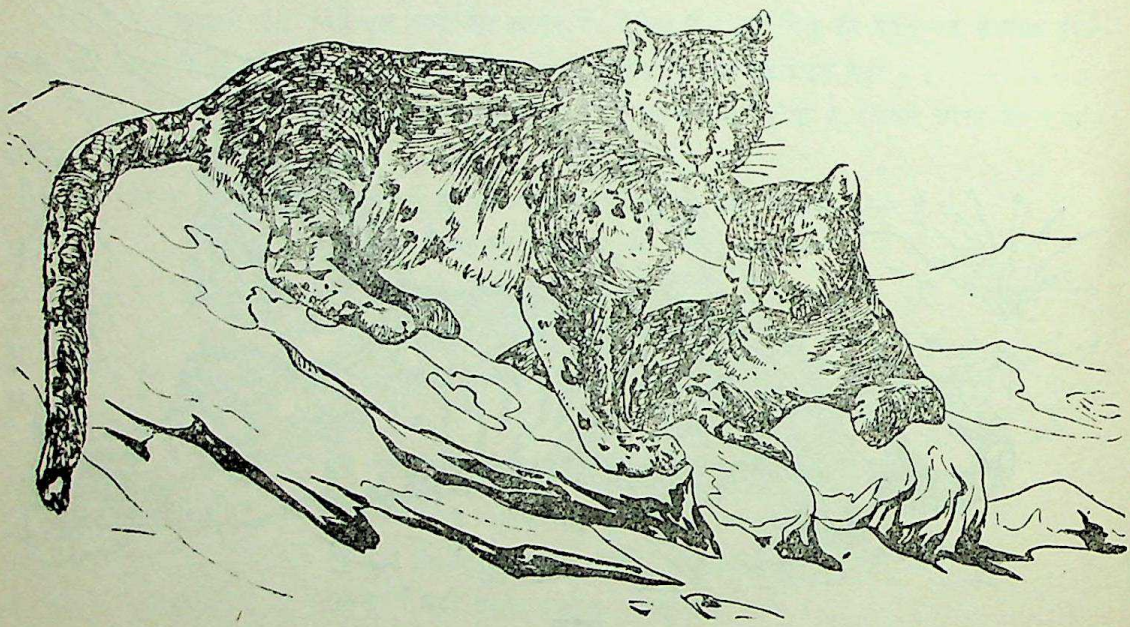

तेंदुआ या खीता

हुआ है। मरुस्थल के तेंदुए अधिक पीतवर्ण के होते हैं। परन्तु काश्मीर के काननों में निवास करने वालों का रंग भूरा तथा केश अधिक कोमल देखे गए हैं। तेंदुआ दूर से पहचाना जा सकता है। इसके शरीर पर काले-काले धब्बे हैं और छोटे-छोटे बाल होते हैं। यह बहुत तेज दौड़ता है और अपने भक्ष्य को इतनी शीघ्रता से पकड़ लेता है कि दर्शक को आश्चर्य-चकित हो जाना पड़ता है। चीता इसी की एक जाति विशेष है। उसका सिर छोटा तथा पैर कुछ लम्बे और चट्टे भरे हुए होते हैं। 80 मील प्रति घण्टे की गति से दौड़ता हुआ यह वन-जीव छलांग मारते हुए हरिणों को बात की बात में पकड़ लेता है। इसी कारण यह उनका शिकार करने के लिए पाला भी जाता था। अब तो चीता वनों से लुप्त-प्राय हो गया है। तेंदुआ बिल्ली के समान सरलता से पेड़ पर चढ़ सकता है। उसे बन्दर, कुत्ते या मोर का मांस अधिक प्रिय होता है। छोटे तेंदुए गाँवों से मुर्गी भी चुरा कर ले जाते हैं। बुड्ढे तथा घायल तेंदुए नर-भक्षी भी हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में इनका नष्ट करना आवश्यक हो जाता है। कभी-कभी नर-भक्षी तेंदुओं को मारने पर पर्याप्त पुरस्कार भी दिया जाता है।

इसका सन्तानोत्पति-काल निश्चित नहीं है। चमकते हुए सूर्य में यह शिकार करता है और मारे हुए

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशु के खून को पीता तथा माँस को खाता है। कभी-कभी व्याघ्र के मारे हुए पशु को भक्षण करके भूख शान्त कर लेता है। अवसर मिलने पर तेंदुआ मनुष्य के माँस को भी स्वाद से खाता है।

हाथी

हाथी एक विशालकाय वन्य प्राणी है, लेकिन प्रयास विशेष से यह पालतू हो जाता है। प्राचीन काल में जब भारतीय सेनाओं में घोड़े नहीं थे तब यह अनीक (फौज) का विशेष अंग था। इसकी सहायता

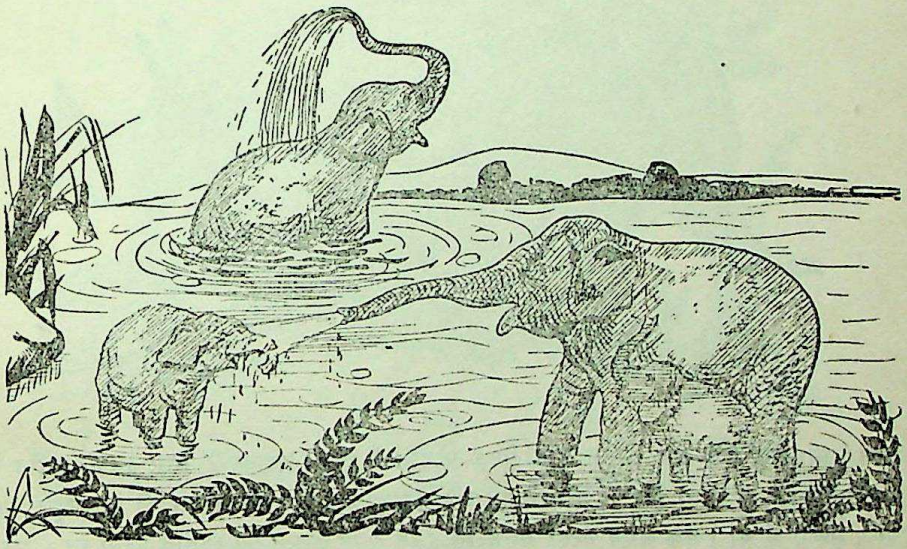

हाथी

से ही भयंकर युद्धों में विजय प्राप्त की जाती थी इसके लम्बे दाँत बहु प्रशंसित, विशेष मूल्यवान एवं उपयोगी होते हैं। रथों में भी इन्हें एक समय जोता जाता था। इसकी ऊँचाई लगभग 10 फीट 6 इंच (कन्धों तक) होती है। भारत, लंका, आसाम, बर्मा, स्याम, आदि के जंगलों में हाथी पाए जाते हैं। इसकी एक जाति विशेष अफ्रीका में भी उपलब्ध है, जिसके कान बहुत बड़े होते हैं। बाँस वाला वन इसे सबसे अधिक प्रिय है। मध्यप्रदेश के काननों में अब जंगली हाथी नहीं मिलते हैं, परन्तु उड़ीसा, बिहार, और मैसूर के वनों में ये अभी तक प्राप्त हो रहे हैं। वैभव के चिन्ह ये गज अब अधिक संख्या में पालित नहीं हैं। कुछ भू-भागों में इससे लकड़ी-ढुलाई एवं खेत जुताई का भी काम लिया जाता है। लम्बी सूंड ही इसका हाथ है। इसकी छोटी-छोटी आँखें विशाल शरीर के अनुरूप न होने से आकर्षक नहीं लगतीं। इस पशु की घ्राण और श्रवण इन्द्रियाँ अधिक सजग रहती हैं। हाथी की गम्भीर तथा मस्त गति कवियों को विशेष प्रिय है। सुन्दरी की अल्हड़पन से परिपूर्ण मन्द गति की तुलना गज-चाल से दी जाती है। कुंजर की स्मरण-शक्ति तथा मेधा-शक्ति बहुत ही विकसित होती है। हाथियों से विशेष काम उन्हें मुँह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से आदेश देकर ही कराए जाते हैं, न कि संकेतों से। सम्पूर्ण देश में हाथियों का प्रशिक्षण कुछ शब्द विशेषों से ही होता है (जैसे मल=चलो, मलमल=दौड़ो, धत्=बैठ जाओ, इत्यादि)।

गेंडा

यह एक विशाल-काय वन-प्राणी है, जिसका चमड़ा बहुत ही मोटा और मजबूत होता है। प्राचीन काल में इसे ढालें बनाने के काम में लाया जाता था। इसकी नाक पर जो सींग होता है वह विशेष

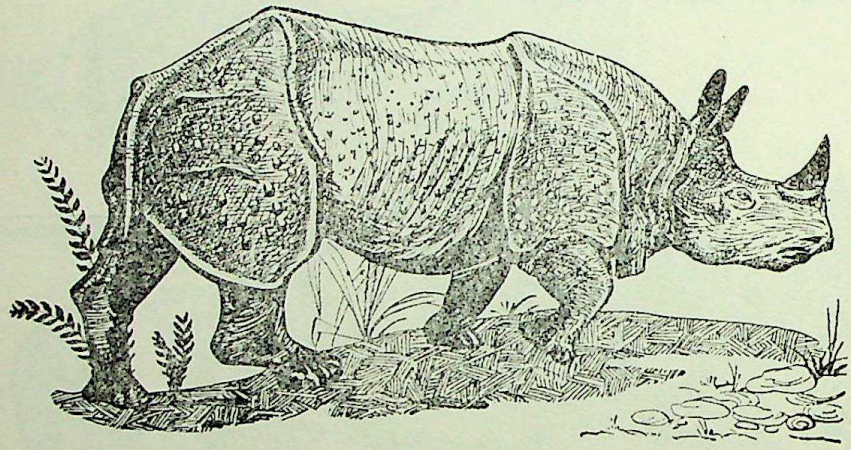

गेंडा

मूल्यवान माना गया है। एक प्रसिद्ध कामोद्दीपक औषधि में इसकी गणना है अतः इसकी प्राप्ति के लिए गेंडे का शिकार किया जाता है। 1850 तक यह पशु पंजाब के वनों तथा बंगाल की राजमहल पहाड़ियों में पर्याप्त संख्या में था। एक समय सुन्दर वनमें भी इसने अपने जीवन को व्यतीत किया था। अब बंगाल तथा आसाम के गहन काननों में गेंडा नहीं है फिर भी कभी-कभी दलदली भागों में यह अवश्य दिखाई पड़ जाता है। घास से आच्छादित सघन वनों में यह पशु सुख से विचरता है। लम्बी नौका के समान इसके शरीर का आकार होता है। लम्बा सिर छोटी एवं मोटी टाँगें तथा मोटा चर्म इसकी विशेषताएँ हैं। इसके शरीर का चमड़ा लघु ढालों के रूप में विभाजित-सा दिखाई पड़ता है। सूअर के समान इसकी छोटी आँखें बड़ी तेज होती हैं। भारतीय गेंडे का 9 इंच लम्बा एक सींग होता है। परन्तु अफ्रीकीय गेंडे के दो सींग होते हैं। कीचड़ में स्नान करना इसे विशेष प्रिय है। हाथी के समान यह दीर्घ-जीवी है और लगभग 100 वर्ष की आयु पाकर यह अन्तिम साँस लेता है। क्रुद्ध गडा भयानक सिद्ध होता है। कभी-कभी वह हाथी पर आक्रमण करके उसके पैरों को जख्मी कर देता है। इस समय यह पशु नेपाल की तराई में गण्डक नदी के पूर्वीय भाग में पाया जाता है। आसाम के प्रसिद्ध वनोद्यान काजीरंगा में गेंडे आसानी से देखे जा सकते हैं। यहाँ 15-20 फीट ऊँची घास होती है, जिसमें ये स्वच्छन्द विचरा करते हैं। यहीं शेर, हाथी, वन-भैंसे, और बारहसिंघे भी पाए जाते हैं। गेंडों की जाति लुप्त न होने पावे इसी उद्देश्य से शासन ने इनका आखेट वर्जित कर दिया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गौर

शिकारियों की दृष्टि में यह एक सुन्दर वन-पशु है, जो भारत के सघन वनों में पाया जाता है। यह प्राणी विशाल तथा परिपुष्ट काय के कारण आकर्षक एवं शक्ति सम्पन्न माना जाता है। यह गो

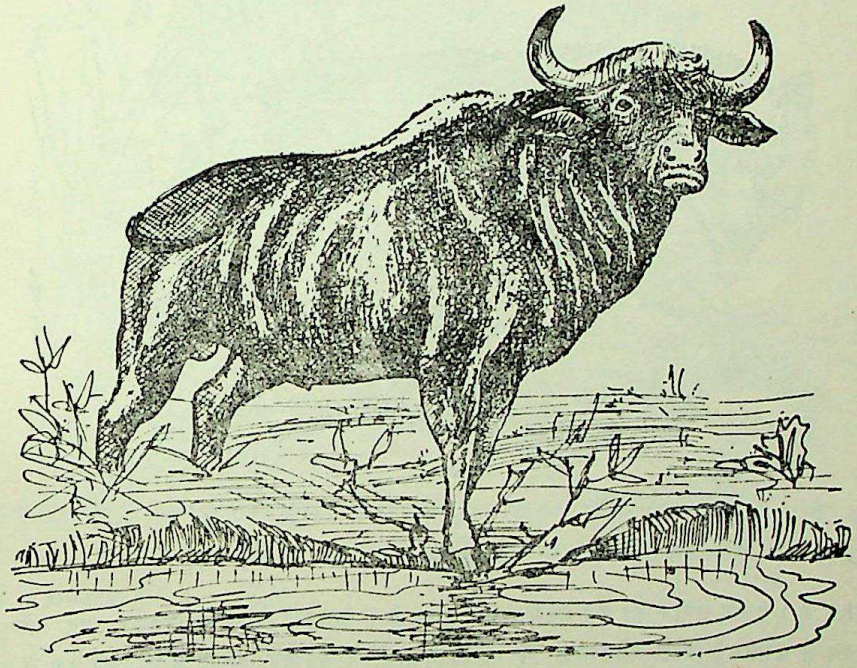

गौर

जाति का (महिष जाति का नहीं) ही एक पशु है। इसके पाँव सफेद होते हैं और मस्तक पर भी एक सफेद चट्टा रहता है। शेष समस्त शरीर काली गाय के समान होता है। इसके सींग बहुत ही चिकने और सुन्दर होते हैं जो शोभार्थ मढ़कर बैठकखानों में लगाए जाते हैं। 6 फीट और 4-5 इंच ऊँची देहवाला गौर वन में स्वच्छन्द होकर घूमता है। हरी घास वाले कानन ही इस प्राणी को प्रिय हैं, जहाँ यह सुख से चरता हुआ अपना जीवन बिताता है। मध्य प्रदेश के जंगलों में घूमते हुए ये गौर कभी-कभी शिकारियों की बन्दूकों के लक्ष्य बनते हैं। इसके सींग 27-30 इंच लम्बे देखे गए हैं। भीरु-स्वभाव होने के कारण मानव से दूर रहना ही यह पसन्द करता है। समूह में रहकर यह वन-पशु चरता और विश्राम करता है। इसके बल का अनुमान यों लगाया जा सकता है कि वह दो फीट गोलाई के पेड़ों को अपनी छाती से टहनी की भाँति झुका देता है जिससे कि उसके बच्चे पत्तों को खा सकें। अभी तक इसे पालतू बनाने के सभी प्रयत्न निष्फल हुए हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भेड़िया

2 फीट एवं 6 इंच ऊँचा, और 3 फीट 3 इंच लम्बा यह वन-प्राणी अपनी भूख शान्त करने के लिए गाँवों के समीप चक्कर काटता रहता है। भारतीय एवं पाश्चात्य वनों में यह प्राणी अधिक संख्या

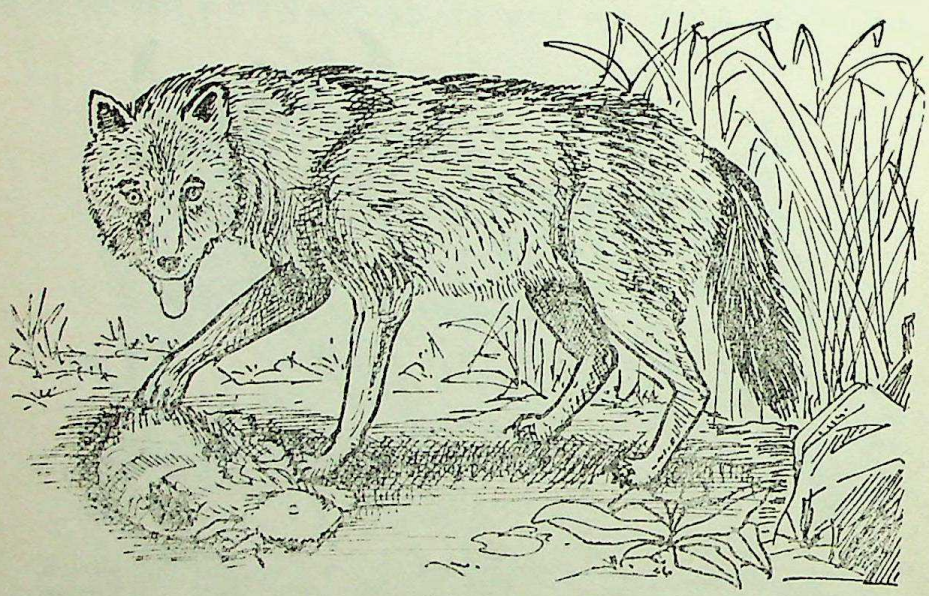

भेड़िया

में पाया जाता है। इसके शरीर का रंग मटमैला-सा होता है। चट्टानों के नीचे रहकर यह ग्रीष्मकाल के सूर्य आतप से बचता है और शीतकाल में छोटी गुफाओं में घुसकर अपने शरीर को ठंड से बचाता रहता है। रात-दिन शिकार करना इसका कार्य है। भूखा भेड़िया बहुत भयानक होता है। वह पालतू पशुओं के न मिलने पर मनुष्य के बच्चों को खाने लगता है। खरगोश, लोमड़ी, मोर, मुर्गी, बकरी, बछड़ा आदि सब इसके भोज्य हैं। अनेक कथाओं से ज्ञात होता है कि भेड़िया बड़े प्रेम से मानव शिशुओं को पालता है और उन्हें सब प्रकार से सुख देकर अपनी बोली सिखा लेता है।

सोनकुत्ता (जंगलीकुत्ता)

समूह में बड़ी शक्ति होती है, इस तथ्य को समझने के लिए इन सोन कुत्तों की शिकार पद्धति का अध्ययन आवश्यक है। झुण्ड में ही रहकर ये शिकार करते हैं और शेर, नील गाय, बारहसिंगा आदि बड़े जानवरों के पीछे पड़कर मार ही डालते हैं। कभी लम्बा घेरा डालकर तो कभी चारों तरफ से हमला करके ये अपने भक्ष्य को अपने चंगुल में फँसा करके ही शान्त होते हैं। कभी-कभी तो ये इतने उपद्रवी हो जाते हैं कि इनके विनाश के लिए विशेष प्रबन्ध करना पड़ता है। अपने से कई गुणा बड़े और शक्तिसम्पन्न वन्य जीवों को ये भूखे और दुष्ट कुत्ते भगा-भगाकर थका डालते हैं और अन्त में उसे खाकर ही मानते हैं।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोनकुत्ता तीन फीट से कुछ अधिक लम्बा होता है। उसकी बालों वाली (झबरी) पूँछ भी लगभग एक फुट लम्बी होती है। लम्बे पैर तथा लम्बे कानवाला जंगली कुत्ता लकड़-बग्घा सा लगता है। इसकी देह

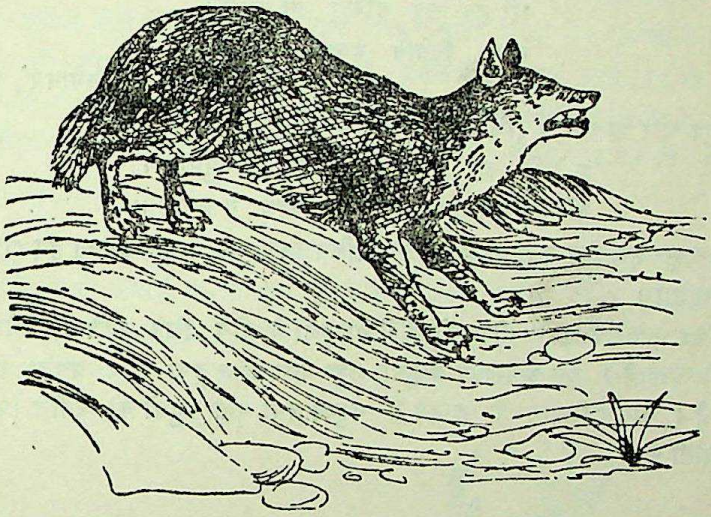

सोनकुत्ता

का ऊपरी भाग कुछ लालिमा लिए हल्का पीला होता है। ऋतु-परिवर्तन के साथ-साथ इनके शरीर का रंग भी कुछ बदल जाता है। विभिन्न भू-खंडों के जंगली कुत्ते स्वभाव में समान होने पर भी शरीर की लम्बाई में असमान हैं।

शृगाल —

यह वन-प्राणी भारत-निवासियों से विशेष परिचित है। यह पशुओं में अधिक चतुर और वाचाल माना जाता है। अनेक लोक-कथाओं में सिंह को धोखा देकर उसने वन के शासन को अपने हाथ में लिया था। रात होते ही सब सियार एक साथ चिल्लाने लगते हैं। इनकी ध्वनि बड़ी ही कर्णकटु होती है। सियारों की साधारणतः 15-17 इंच ऊँचाई होती है और शरीर का वज़न 17-25 पौंड तक पाया गया है। भारत के समस्त वनों तथा गाँवों में यह प्राणी देखा जाता है। हर प्रकार की परिस्थितियों में शृगाल अपने आप को सँभाल लेता है। हिमालय की 12000 फीट ऊँचाई पर इसे देखकर हमें आश्चर्य होता है। सागर सतह से 4000–7000 फीट ऊँचे स्थलों पर भी यह प्राणी घूमता रहता है।

पशुओं के मृत-शरीर को भक्षण करके यह गंदगी दूर करता है और अवसर मिलने पर बकरा-बकरियों, भेड़ों आदि को मारकर बड़ी प्रसन्नता के साथ खाता है। जंगली फलों को खाने के लिए यह हमेशा लालायित रहता है। इसका जीवन-काल 12 वर्षों से अधिक नहीं होता। शकुन-विशारदों के मतानुसार सियार (शृगाल) का बोलना अपशकुन है :—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खर सिआर बोलहिं प्रतिकूला।
सुनि सुनि होइ भरत मन सूला।
श्री हत सर सरिता बन बागा।
नगरु विसेषि भयावहु लागा॥

('रामचरितमानस', अयोध्या कांड)

सिंहनी ने एक बार शृगाल से (जिसे उसने स्वयं पाला था) कहा था :—

शूरोऽसि कृत विद्योसि, दर्शनीयोसिपुत्रकः।
यस्मिन् कुले त्वमुत्पन्नः, गजस्तत्र न हन्यते॥

हे पुत्र ! तुम शूर हो, विद्वान् हो, दर्शनीय हो, लेकिन जिस कुल में तुम उत्पन्न हुए हो, उसमें हाथियों का शिकार नहीं होता।

गीदड़ विशेषतः गाँवों के समीप ही झाड़ियों में या पुलों के नीचे छिपे रहते हैं, और रात होने पर इधर-उधर घूमने लगते हैं। इस भ्रमण में वे मुर्गी, सड़ा-गला फेंका हुआ माँस अथवा खेतों की फसल को खा डालते हैं। पागल सियार के काटने से मनुष्य तथा गृह्य पशुओं को रेवीज (पागल कुत्तों की बीमारी) आ दबाती है।

लोमड़ी—

यह छोटा-सा वन-पशु भारत में सर्वत्र दिखाई पड़ता है। बिल्ली के बराबर होती है पर इसकी पूंछ लम्बी और झब्बेदार होती है जो सर्दी से बचने के लिए गला बन्द के समान उपयुक्त होती है। यह गाँव के समीप रहती है और मुर्गी, चूहे-फल आदि पर अपनी गुजर करती है। यह 1 फुट 6 इंच लम्बी होती है और इसके शरीर का भार 4-7 पौंड तक माना गया है। लोमड़ी कोमल, सुन्दर और लचकीली देह वाली होती है। इसकी पूंछ पर कुछ कालिमा रहती है। अपने शत्रुओं से यह बड़ी कुशलता से अपनी देह रक्षा करती है। दाँत दिखाकर, पूंछ फिरा कर, सहसा पीछे मुड़कर और देह मोड़कर पीछा करने

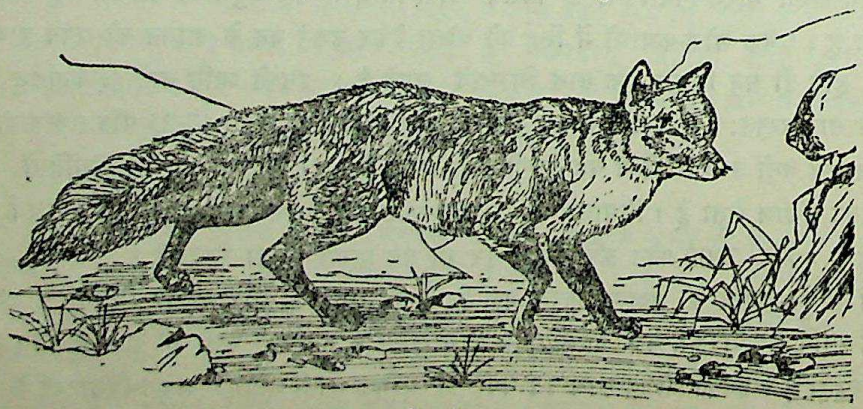

लोमड़ी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाले दुश्मन को परेशान कर देती है। चूहोंको उदरस्थ करके यह कृषि की रक्षा करती है। फलों के स्वाद को यह कभी नहीं भूलती। उगते हुए कतिपय पौधों के अंकुरों को भी यह बड़े प्रेम से खाती है। तरबूजों और खरबूजों के खेतों के पास लोमड़ी प्राय: चक्कर काटा करती है। सूर्यास्त के समय गाँवों के आस-पास भोजन को खोजती हुई लोमड़ियों को सब देखते हैं। पीछा करने पर भी कुत्ते इन्हें नहीं पकड़ पाते हैं। कीड़े-मकोड़े भी इसके भक्ष्य हैं। शीत-काल इसकी सन्तानोत्पत्ति का समय है। उत्तरीय प्रदेशों में रहने वाली लोमड़ियों के रुएंदार चमड़े का सुन्दर कोट बनता है। इसके रोम बड़े ही कोमल होते हैं।

बारहसिंहा (बारहसींगा)

यह वन्य पशु एक प्रकार का हरिण है जिसके झुंड के झुंड मध्य प्रदेश कान्हा वनोद्यान में देखे जा सकते हैं। बारहसिंहा की ऊँचाई 48-50 इंच होती है। इसका शरीर सुन्दर एवं आकर्षक होता है। मृगया-प्रिय मनुष्य उसके सींगों के लिए इसका अधिक शिकार करते हैं, इसी कारण वनोद्यान के बाहर यह हरिण लुप्त-प्रायः हो गया है। काश्मीर के सुरम्य वनों तथा हिमालय की तराई में भी बारहसिंहे

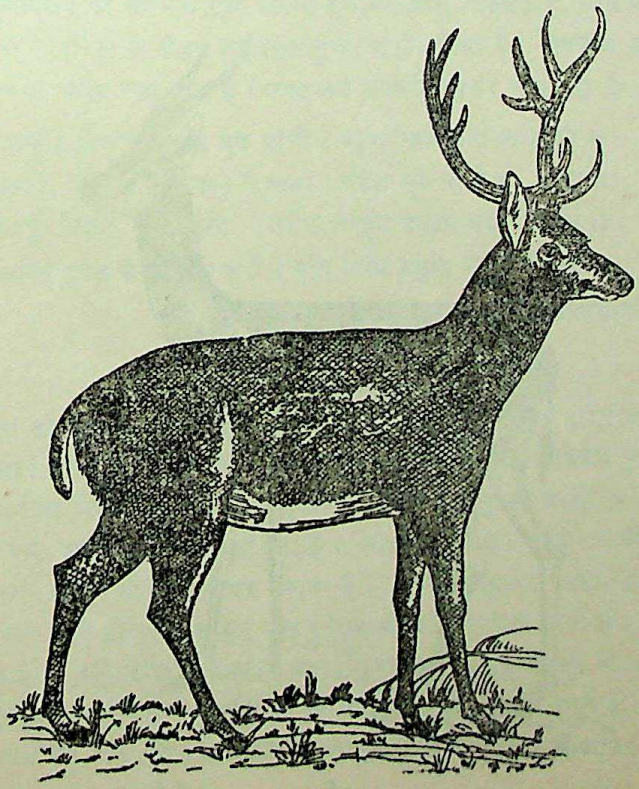

बारहसिंहा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पाये जाते है। इस कानन वासी पशु का शरीर साँभर से कुछ छोटा होता है, लेकिन मोटी टाँगें और लघु पुच्छ मनमोहक प्रतीत होती है। एक स्थल पर यह जीव बहुत कम ठहरता है। भ्रमण-शील होने से यह इधर-उधर परिभ्रमण करता हुआ प्रकृति-सुषमा के विविध-दृश्यों को देखता है और अपनी आँखों की प्यास बुझाता है। बारहसिंगा के मस्तक पर फैले हुए सुदृढ़ सींग उसे शत्रु प्रहार से बचाते हैं।

हरिण—

मध्य प्रदेश में नौ प्रकार के मृग या हरिण पाए जाते हैं। ये सुन्दर वन-जीव हैं। घास एवं वृक्ष-पल्लवों को खाकर ये अपने मनोहर शरीर को पुष्ट बनाते हैं। हरिण के सींग होते हैं और हरिणी का मस्तक विषाणहीन रहता है। शेर और चीते का यह प्रिय भोज्य है। शिकारी इसके मांस को विशेष रूप से खाते हैं। मृग-चर्म पर बैठकर साधु ईश्वर-चिन्तन और आराधन करते हैं। हरिण द्रुत गति से भागता है और छलाँगें मारता हुआ विशेष मनोरम लगता है। इसके नेत्र बहुत ही आकर्षक तथा बड़े होते हैं इसीलिए काव्यकारों ने सुन्दर आँखों की मृग-नेत्रों से तुलना की है :—

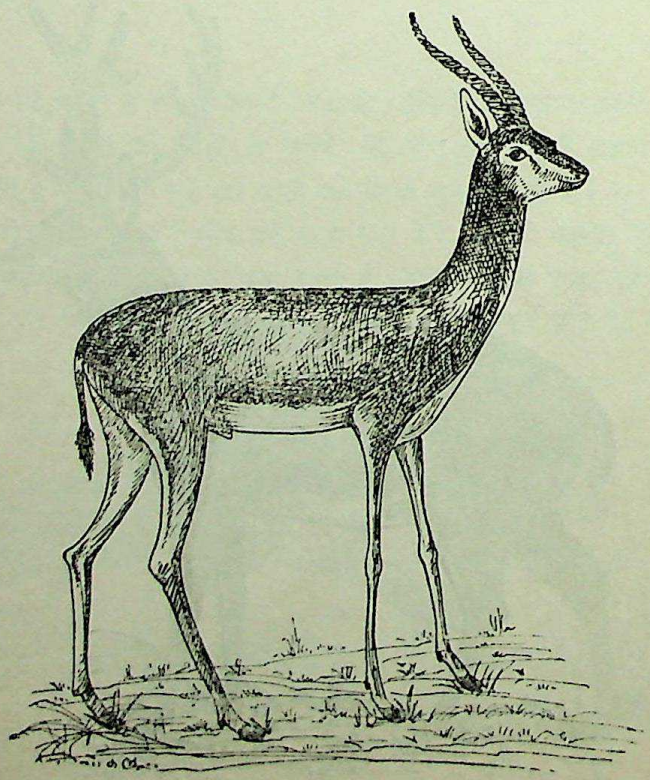

हरिण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डरपहिं धीर गहन सुधि आए।
मृग-लोचनि तुम्ह भीरु सुभाए।

('रामचरितमानस', अयोध्याकांड)

हरिण-संगीत प्रिय होता है। मधुर संगीत को सुनाकर व्याघ्र मृग को पकड़ लेता है या उसका पास से शिकार करता है।

ऊधौ ! प्रीति न मरन विचारै।
प्रीति पतंग जरै पावक परि, जरत अंग नहिं टारै।
प्रीति परेवा उड़त गगन चढ़ि गिरत न आप सम्हारै।
प्रीति कुरंग नादरस, लुब्धक तानि तानि सर मारै।

(भ्रमरगीत-सार)

× × × ×

कश्मीर के एक मृगविशेष की नाभि में एक अत्यन्त सुगंधित वस्तु निकलती है, जिसे कस्तूरी कहते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने हरिण के दौड़ने का बहुत सुन्दर वर्णन किया है। भगवान राम माया-मृग के पीछे जा रहे हैं। धनुष पर बाण रखा हुआ है। कपट मृग भयभीत होकर भाग रहा है—

"प्रभुहि बिलोकि चला मृग भाजी। धारा राम सरासन साजी॥
निगम नेति सिव ध्यान न पावा। माया मृग पाछें सो धावा॥
कबहुँ निकट पुनि दूरि पराई। कबहुँक प्रगटइ कबहू छपाई॥
प्रगटत दुरत करत छल भूरी। एहि विधि प्रभुहि गयउ लै दूरी॥

('रामचरितमानस', अरण्यकाण्ड)

चीतल—

प्रकृति की सुन्दरता को अधिक मनमोहक बनाने वाला यह काननचारी मृग भारत और लंका के वनों में अधिक संख्या में पाया जाता है। कल-कल शब्द करते हुए जल-प्रपात, इठलाती हुई सरिताएँ, एवं दौड़ती हुई झीलें इसके लिए विशेष आकर्षक हैं। इनके ही समीप यह सुरम्य प्राणी 5 से लेकर 50 तक के समूह में हरी-हरी घास चरता हुआ दिखाई देता है। बादामी रंग के चमड़े पर सफेद बिन्दुओं का चमकता हुआ जाल इसके शरीर को बहुत सुन्दर बनाता है। सुगठित देह पर लम्बा सिर किसको अच्छा नहीं लगता ? इसके कान छोटे होते हैं, लेकिन पूंछ कुछ लम्बी और नुकीली होती है। हरिण जाति में यह अधिक सुन्दर मृग है। मध्य प्रदेश के राष्ट्रीय वनोद्यान कान्हा में यह सैकड़ों की संख्या में देखे जा सकते हैं। भोली प्रकृति के ये पशु वनों में गाय-भैंसों के साथ चरते हुए भी देखे जाते हैं। जंगली फलों को चीतल प्रसन्न होकर खाते हैं। एक परिपुष्ट चीतल का वजन 200 पौंड से भी अधिक पाया गया है। इसकी ऊँचाई 36 इंच के लगभग होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

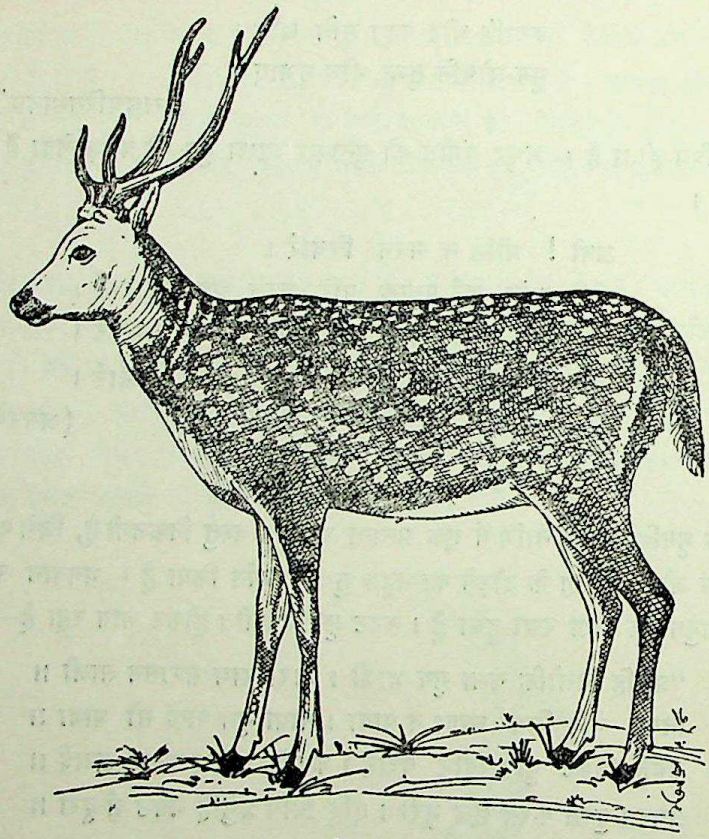

चीतल

इसका चर्म जिस पर सफेद चिट्टे होते हैं बड़ा ही सुंदर होता है और सूटकेस आदि बनाने के काम आता है।

खरगोश—

यह छोटा-सा प्राणी भारतवर्ष के प्रायः सभी भागों में पाया जाता है। झाड़ियों में छिपकर यह शत्रुओं से अपनी रक्षा करता है। इसका रंग मटमैला होता है और कभी-कभी स्थान विशेष के कारण इनके शरीर-रंग में भी विभिन्नता आ जाती है। पालतू खरगोश दूध जैसे सफेद भी होते हैं। खेतों के समीप रहकर ये खरगोश बीज तथा उगते हुए पौधों को खाकर अपना पेट भरते हैं। हरी घास और पत्तियाँ इन्हें विशेष रुचिकर हैं। जमीन में छोटे-छोटे बिल बनाकर रहने वाले ये शाकाहारी लघुकाय जीव कभी-कभी मनुष्यों की कृपा पाकर घरों में रहते हैं। कुछ दयालु मनुष्य खरगोशों को पालते भी हैं। किसी का बुरा न करने पर भी इन बेचारों के अनेक शत्रु हैं। लोमड़ी, कुत्ता, शृगाल, भेड़िया आदि इनके विनाश के लिए सदा तत्पर रहते हैं। मांस-प्रिय मनुष्य भी इसका मांस चाव से खाते हैं।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रीछ—

लम्बे काले बालों से अपने समस्त शरीर को ढके हुए रीछ को जंगलों में देखना बड़ा ही भयावह है। यह अपने भोज्य का अन्वेषण अपनी घ्राणेन्द्रिय से करता है। इसकी नासिका अन्य पशुओं की अपेक्षा अधिक सजग रहती है। गन्ध की पहचान रीछ में उल्लेखनीय है। पालतू बनकर यह भालू अपनी बुद्धि का अच्छा परिचय देता हैं। भालू-नृत्य बच्चों को विशेष प्रिय है। अब तो इस नृत्य की गणना भारतीय

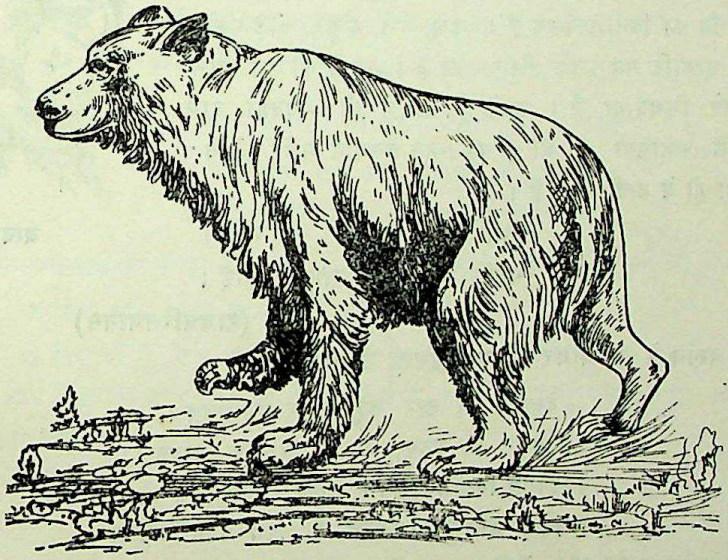

रीछ

नृत्यों में होने लगी है। वनों में रहने वाले आदिवासी भालु-नृत्य को आकर्षक रूप में नाचते हैं। अपने तेज पंजों की सहायता से यह वन-पशु वृक्षों पर शीघ्रता से चढ़ जाता है। लम्बा सिर, छोटी आँखें, भारी शरीर, छोटी पूंछ, और गद्देदार पैर (पंजे) रीछ के शरीर-चिन्ह हैं। मानव-पदों के समान अपने पैरों से भालू भोजन की तलाश में मीलों दौड़ता फिरता है।

बन्दर

बन्दर एक चंचल प्रकृति का प्राणी है, जो शान्त रहना जानता ही नहीं, मध्यप्रदेश में केवल दो प्रकार के बन्दर पाए जाते हैं एक लाल मुंह और छोटी पूंछ वाले, दूसरा, काला मुंह और लम्बी पूंछ वाले। पेड़ों पर बैठना, कूदना, इधर-उधर झपटना, फलों को तोड़ना एवं नष्ट करना इसकी प्रकृति जन्य प्रवृत्तियाँ हैं। शाखाओं से लटककर झूलना और अपने बच्चों का झुलाना यह खूब जानता है। बन्दर-घुड़की प्रसिद्ध है। पशु होता हुआ भी यह पृथ्वी पर बहुत कम रहता है। वृक्षों पर निवास करने से उसे

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शाखा-मृग कहते हैं। पशु-रूप में मानव-व्यवहार यदि किसी को देखना है तो उसे बन्दर के स्वभाव का अध्ययन करना चाहिए। इसके समस्त शरीर पर छोटे-छोटे बाल होते हैं। मदारी इसे पालकर नचाते और अनेक खेल करवाते हैं। पालतू होने पर भा यह अपनी चंचलता का परित्याग नहीं करता। वनों, पर्वतों एवं जनावासों में यह स्वतन्त्र होकर घूमता रहता है। फल-प्रिय होने से ये फलदार वृक्षों पर विशेष निवास करते हैं। समूह में रहकर ये मर्कट खेती, बाग आदि का विनाश करते हैं। फल, पत्ते, अंकुर, कीड़े-मकोड़े, अन्न, मिठाई, इत्यादि सब इनके लिए भक्ष्य हैं। बन्दरों को तंग करना मानों शरीर को चिथवाना है। इनके पूर्वजों ने ही भगवान राम की लंका-युद्ध में सहायता की थी। पवन-सुत हनुमान मर्कट ही थे। लोभ के कारण ही ये बन्दी बनते हैं।

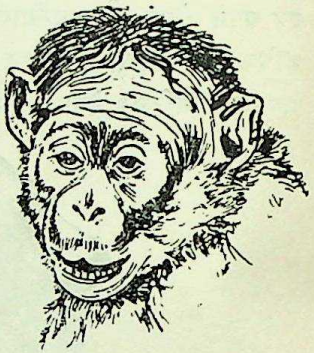

बन्दर

बँध्यो करि मर्कट की नाईं।
सबहि नचावत राम गुसाईं।

(रामचरितमानस)

हिमालय वर्णन में श्री श्रीधर पाठक ने इनका उल्लेख किया है—

देवदारू की डार कहुँ लंगूर हिलावत।
कहुँ मर्कट को कटक, वेग सों तरु-तरु धावत।
विकसित नित नव कुसुम, तरुन तरु मुकुलित बौरत।
अलबेले अलिवृन्द कलिन के ढिग ढिग झौंरत।

इनका जीवन-काल 25-30 वर्षों में समाप्त हो जाता है।

आजकल लाल मुँह के बन्दरों की पाश्चात्य देशों में नवाविष्कृत औषधियों के प्रयाग तथा उनकी ग्रंथिविशेष से नवजीवन संचार की औषधियाँ बनाने के लिए बड़ी माँग है और उनका निर्यात किया जा रहा है।

कुत्ता—

यह प्राणी मानव-जाति की सेवा चिरकाल से करता आ रहा है। रोटी के कुछ टुकड़े खाकर यह गृह-रक्षक के रूप में रात भर घर की रखवाली करता है। इसकी अनेक जातियाँ हैं। पाश्चात्य देशों में कुत्तों को बड़े प्रेम से पाला जाता है। शिकारी लोग इनसे शिकार करवाते हैं और किसान इन्हें पास रखकर जंगली जानवरों से अपनी तथा अपने पालतू पशुओं की रक्षा करते हैं। गुप्तचर विभाग ने इन कुत्तों से बहुत-सा काम लिया है क्योंकि इनकी प्राणशक्ति बड़ी ही तीव्र होती है, गड़रियों के साथ रहकर कुत्ता उनकी भेड़ों एवं बकरियों को मांसाहारी पशुओं के आक्रमणों से बचाता है और उन्हें तितर-बितर होने से रोकता है। यह रोटी भी खाता है और मांस भी। जंगल में जाकर यह कुत्ता हिरण, चीतल,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खरगोश, सुअर, बारहसिंगा आदि के पीछे दौड़ता है और उनको मार डालने का पूरा प्रयत्न करता है। कुछ जाति के कुत्ते बड़े भयावह होते हैं। शिकारी कुत्ते पतले, लम्बे और शीघ्र दौड़ने वाले होते हैं कि कुछ कुत्ते इनसे छोटे होते हैं उनको छोटे से झाले में सुगमता से रखा जा सकता है। भारतवर्ष में कुत्ते को अपावन मानकर ठुकराया जाता है। कवियों ने इसके स्वभाव को भी निन्दनाय बताया है। कविवर रहीम ने एक स्थान पर कहा था—

'रहिमन जगत बड़ाइ की, कूकुर की पहिचानि।
प्रीति करै मुख चाटई, वैर करै तन हानि :।

महासंत कबीर ने तो अपने आप को राम का कुत्ता बताया है। वे कहते हैं :—

कबिरा कुता राम का, मुनिया मेरा नामुँ।
गल में रस्सी राम की, जित खेचैं तित जाउँ॥

एक समय था जब श्वान का अच्छे रूप में देखा जाता था। ऋग्वेद में कुत्ते से सम्बन्धित एक भाव-पूर्ण मन्त्र है। यमराज और श्वान का सम्बन्ध सर्वविदित है।

श्वान-निद्रा विद्यार्थी के लिए परमावश्यक है। जरा-सा आहट मिलने पर कुत्ता नींद को छोड़ देता है। इसी प्रकार विद्याध्ययनशील को भी प्रगाढ़ निद्रा में लीन होकर भी साधारण व्याघात होने पर सजग हो जाना चाहिए :—

काक-चेष्टा बकोध्यानं श्वान निद्रा तथैव च।
अल्पहारी च गृहत्यागी विद्यार्थी पंच लक्षणम्॥

विद्यार्थी को कौए की भाँति सजग, बगले की तरह ध्यानमग्न, कुत्ते के समान थोड़ी नींद लेने वाला थोड़ा भोजन करने वाला एवं घर से निर्मोही रहना चाहिए।

घोड़ा—

वाहन के रूप में घोड़े का अनादि काल से उपयोग हो रहा है। एक युग था जब सेना में अश्व की अधिक आवश्यकता थी। अश्वारोही एक प्रमुख सैनिक माना जाता था। स्थान-विशेष के कारण घोड़ों के आकार-प्रकार एवं रूप-रंग में विभिन्नता पाई जाती है। अश्व के शुभाशुभ चिन्हों पर एक पृथक् शास्त्र की रचना की गई थी—जिसे शालिहोत्र कहते थे। आज भी ग्रामों में घोड़ों का उपयोग भार-वाही के रूप में हो रहा है। मोटर, ट्रक, साइकिल, रिक्शा आदि वाहनों के आविष्कृत हो जाने से घोड़े के प्रति कुछ उदासीनता अवश्य आगई है। प्राचीन समय में वीरों का चिरंतन साथी अश्व ही था। भगवान् राम को घोड़ों के प्रति अगाध स्नेह था। अश्वों के विभिन्न आकार-प्रकार होते हैं तथा छोटे-बड़े अश्वों की गति में भी अन्तर रहता है। इनके गर्दन के बड़े-बडे बाल बड़े आकर्षक लगते हैं। पूंछ के लम्बे बालों का अनेक रूपों में उपयोग किया जाता है। एक युग में अश्वों का भी यज्ञ होता था जिसे अश्वमेध-यज्ञ

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहते हैं। कविवर जायसी ने 'पद्मावत' के बादशाह चढ़ाई-खण्ड में घोड़ों का वर्णन इस प्रकार किया है—

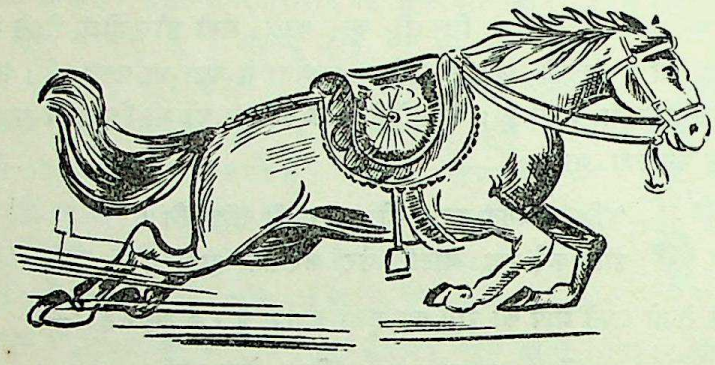

घोड़ा

चली पंथ पैगह सुलतानी।
तीख तुरंग बाँक कैकानी।
पखरै चली सो पाँतिन्ह पाँती।
बरन बरन औ भाँतिन्ह भाँती।
काले कुमँइत लील सनेबी।
खंग कुरंग बोर दुर केबी।
अवलक अवसर अगज सिराजी।
चौघर चाल समुँद सब ताजी।
खुरूभुज नोकिरा जरदा भले।
औ अगरान बोलसिर चले।
पंच कल्यान संजाब बखाने।
महि सायर सब चुनि चुनि आने।
मुसुकी औ हिर मिजी इराकी।
तुरकी कहे भोथार बुलाकी।
सिर औ पोंछि उठाए चहुँदिस साँस ओनाहिं।
रोस भरे जस बाउर पवन तरास उड़ाहिं।

—सुलतान की घुड़सवार सेना मार्ग में चली। उसमें तेज और बाँके केकाण देश के घोड़े थे। लोहे की झूलें (कवच) पहने हुए कतार पर कतार बाँधकर अनेक रंगों के और अनेक भाँति के घोड़ों से युक्त होकर वह सेना चली। और भी काले, कुमैंत, लीले, सनेवी, खङ्ग, कुरंग, बोर दुर, केबी घोड़े उसमें चले। उनमें अवलक, अबरस, अगज, रंग के शीराजी घोड़े थे। चौघर चाल, औ० समंद रंग के अनेक ताजी घोड़े उस

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सेना में थे। खुरमुज़ से आने वाले नुकरा और जरदा रंग के घोड़े भद्र जाति के थे। उनके साथ अगरान और बोलसिर घोड़े भी चल रहे थे। कुछ उनमें पंचकल्यान और संजाष थे जो पृथ्वी के अनेक भागों और समुद्र पार के देशों से चुन-चुन कर लाए गए थे। मुश्की, हुरमुजी और इराक देश के घोड़े थे। भोथार या सलोतरी लोगों के अनुसार वहाँ तुर्की घोड़ों में बुलाकी (काले-सफेद) श्रेष्ठ घोड़े थे। वे सिर और पूँछ उठाए हुए चारों दिशाओं में साँस छोड़ रहे थे और उन्मत की तरह क्रोध से भरे हुए पवन के समान उड़े जाते थे।[1]

घोड़ा एक खुरदार पशु है, जिसकी गर्दन पर लम्बे-लम्बे बाल होते हैं और इसकी लम्बी बालदार पूँछ शोभावर्धक मानी जाती है।

× × × ×

उरग, तुरँग नारी, नृपति, नीच जाति, हथियार।
रहिमन इन्हें सँभारिए, पलटत लगै न बार॥

पाश्चात्य देशों में घोड़ों से हल चलाये जाते हैं जैसे भारत में बैलों से और, अरब में ऊँटों से।

गाय—

हिन्दुओं के लिए गाय एक पूज्य पशु है। भारत में इसकी पूजा होती है और इसे मारना पाप माना जाता है। इसके बछड़े कृषि के प्रमुख साधन हैं। गाय का रखना प्रत्येक हिन्दू के लिए आवश्यक बताया गया है। इसका गोबर घर की शुद्धि के लिए व्यवहृत होता है तथा इसका मूत्र बहुरोग विनाशक माना गया है। गाय का दूध बलवर्धक और बुद्धि-उत्तेजक है। विभिन्न प्रदेशों में गाय के विविध रूप तथा आकार उपलब्ध होते हैं, इसीलिए इसकी अनेक उपजातियाँ रूप-रंगादि पर आधारित होकर प्रचलित हैं। यह एक विशेष उपयोगी तथा शान्त प्रकृति का पशु है। जो भारतीय संस्कृति और सभ्यता का पुनीत प्रतीक है।

स्थान-विशेष से इसकी ऊँचाई में भी असमानता आ गई है। कुछ प्रान्तों की गायें छोटी और कुछ प्रदेशों की पर्याप्त रूप में ऊँची होती हैं। इसी प्रकार कुछ गायें कम दूध देती हैं तो कुछ बहुत अधिक। एक युग था जब एक गाँवपति दो-तीन हज़ार तक गायें रखता था। कहा जाता है कि भारत में दूध की नदियाँ बहा करती थीं। हिन्दुओं के पुराणों के अनुसार गाय के पुनीत शरीर में देवताओं का निवास है। भगवान् कृष्ण ने स्वयं ग्वाला बनकर गौ-सेवा का उच्च आदर्श उपस्थित किया था। गाय की सेवा कभी व्यर्थ नहीं जाती। कहावत प्रसिद्ध है कि दूध देने वाली गाय की लातें भी सही जाती हैं। यह विश्वास है कि जिस घर में गाय की पूजा होती है इसमें लक्ष्मी सदा निवास करती है।

गायों के सिरों पर छोटे-बड़े, सीधे-टेढ़े, मोटे-पतले, सब प्रकार के सींग होते हैं। इसकी लम्बी पतली पूँछ भी कम आकर्षक नहीं होती। भारत में गाय पूज्य मानी जाने का एक मात्र कारण उसकी उपयोगिता ही है। गाय से दूध मिलता है, बैल भार-वहन करते हैं। उनका चमड़ा बहुत ही अच्छा माना जाता है।

1. 'पद्मावत' मूल और संजीवनी व्याख्या—डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल, पृष्ठ 517

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गोबर तथा मूत्र उत्तम खाद है और सींगो से सरेस बनता है।

गाय की कुछ मुख्य जातियों का सामान्य परिचय इस प्रकार है :—

(1) **थारपारकर**—पश्चिमी-दक्षिणी सिन्ध में यह पाई जाती है। इसका आकार मध्यम तथा शरीर गठीला होता है। मुँह कुछ लम्बा, माथा किञ्चित् उभरा हुआ एवं ककुद पर्याप्त मात्रा में उठा हुआ रहता है। साधारण भोजन पर अवलंबित रहती हुई इस जाति की गाय लगभग 17 सेर दूध प्रतिदिन देती है। सींग कई आकार-प्रकार के होते हैं।

(2) **नीमाड़ी**—नर्वदा नदी के क्षेत्र में (घाटी में) पाई जाने वाली यह गाय कम दूध देती है। इसका शरीर लम्बा, सिर सामान्यत: लम्बा, माथा कुछ उभरा हुआ तथा कान कुछ लम्बाई लिए हुए चौड़े रहते हैं। इसकी टाँगें सीधी एवं साफ होती हैं। लाल रंग के शरीर पर बड़े-बड़े श्वेत धब्बे रहते हैं। सींग कई आकार-प्रकार के रहते हैं।

(3) **गिरि (गीर)**—काठियावाड़ में पाई जाने वाली इस गाय के कान लम्बे एवं लटके हुए होते हैं। इसके गाल भारी और चौड़े रहते हैं एक ब्यात में यह 3500 से लेकर 4000 पौण्ड तक दूध देती है। 14 से 16 माह बाद यह ब्याती है। इसके सींग अनेक प्रकार के होते हैं।

(4) **साहीवाल**—भारतीय दुधारी गायों में इसका नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। पंजाब में पाई जाने वाली यह गौ एक ब्यात में लगभग 6000 पौंड दूध देती है। इसकी त्वचा पतली तथा ढीली रहती है। लेकिन शरीर लम्बा एवं मांसल होता है। चौड़ा ललाट छोटे और हिलते हुए सींग, लटकता हुआ गल कम्बल एवं ढीली मुतान इसकी विशेषताएँ हैं। अच्छा दूध देनेवाली यह गौ महुआ लाल रंग की होती है।

(5) **हरियाना**—रोहतक, दिल्ली, गुड़गावाँ आदि स्थानों में पाई जाने वाली इस गाय की गणना सर्वोत्तम गायों में की जाती है। इस चुस्त तथा मांसल शरीर वाली गौ का ककुद बहुत छोटा होता है। लंबा गला और लम्बी मुतान इस जाति की गायों की विशेषताएँ हैं। अधिक दूध देने के कारण भारत के बड़े-बड़े शहरों में भी यह पाली जाने लगी है।

(6) **देवनी**—उत्तरी पश्चिमी हैदराबाद में पाई जाने वाली इस जाति की गाय का सीना गहरा, पसलियाँ चौड़ी, कमर सीधी एवं शक्ति सम्पन्न रहती है। देवनी गाय की मुतान लटकी हुई होती है। इसके थन अच्छे आकार के रहते हैं। हैदराबाद की यह उल्लेखनीय दुधारू गाय है।

(7) **कनकथा**—बाँदा जिले एवं मध्यभारत के कुछ स्थानों में पाई जाने वाली इस गाय का शरीर छोटा तथा गला ठोस रहता है। माथा छोटा एवं चौड़ा तथा सींग दृढ़ और नुकीले होते हैं। इसका पेट भूरा तथा शरीर का शेष भाग गहरा भूरा रहता है। यह गाय कम दूध देती है। सींग अनेक आकार-प्रकार के होते हैं।

(8) **लाल सिन्धी**—मुख्य रूप से यह सिन्ध और बिलोचिस्तान में पाई जाती है लेकिन भारत के कुछ बड़े-बड़े शहरों में भी इसे अब पाला जाता है। शरीर छोटा, गठीला, सीना चौड़ा और गले की झालर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एवं मुतान लटकती हुई बस यही इसके परिचायक हैं। यह अच्छी मात्रा में दूध देती है। सींग अनेक आकार-प्रकार के पाये जाते हैं।

श्री प्रतापनारायण मिश्र की गैया माता के विषय में निम्नस्थ पंक्तियाँ स्मरणीय हैं—

गैया माता तुमका सुमिरो,
कीरति सबते बड़ी तुमारि।
करौ पालना तुम लरिकन कै,
पुरिखन वैतरनी देउ तारि।
तुम्हरे दूध दही की महिमा,
जानै देव पितर सब कोय।
को अस तुम बिन दूसर जेहिका,
गोबर लगै पवित्तर होय।

× × × ×

गाय के सम्बन्ध में अनेक कहावतें प्रचलित हैं। कुछ यहाँ उद्धृत की जाती हैं :—

(1) दुधार गाय को पालने वाला किसान सदैव सुखी रहता है।
(2) दूध देनेवाली गाय की लातें भी अच्छी लगती हैं।
(3) यात्रा के समय गाय का दर्शन शुभ होता है।
(4) गाय के दूध के लिए देवता भी तरसते हैं।
(5) गाय की सेवा करनेवाला कभी दुःखी नहीं रहता।
(6) गाय का गोबर सब दोषों को दूर कर देता है।
(7) गाय के रूप को न देखकर उसके दूध को देखना चाहिए।
(8) कम दूध देने वाली गाय अपने बछड़े को अधिक चाहती है।
(9) मातृ-विहीन शिशु को गाय का ही दूध पालता है।
(10) गाय की बछिया भी भली और बछड़ा भी भला।
(11) गाय को भूखा रखनेवाला हमेशा भूखा मरता है।
(12) ठाड़ी खेती गाभिन गाय। तब जानों जब मुँह में जाय॥
(13) नित्तै खेती दुसरे गाय। नाहीं देखै तेकर जाय॥

भैंस—

प्राचीन काल से भैंस पालतू बनकर मानव-समाज को दूध-दही-घी आदि दे रही है और अपनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उपयोगिता सिद्ध कर रही है। भारत के अतिरिक्त विदेशों में भी यह पाली जाती है। अनेक आकार-प्रकारों एवं रूप-रंगों में पाई जाने वाली भैंस का दूध अन्य दूध देने वाले पशुओं के दुग्ध की तुलना में अधिक पौष्टिक होता है।

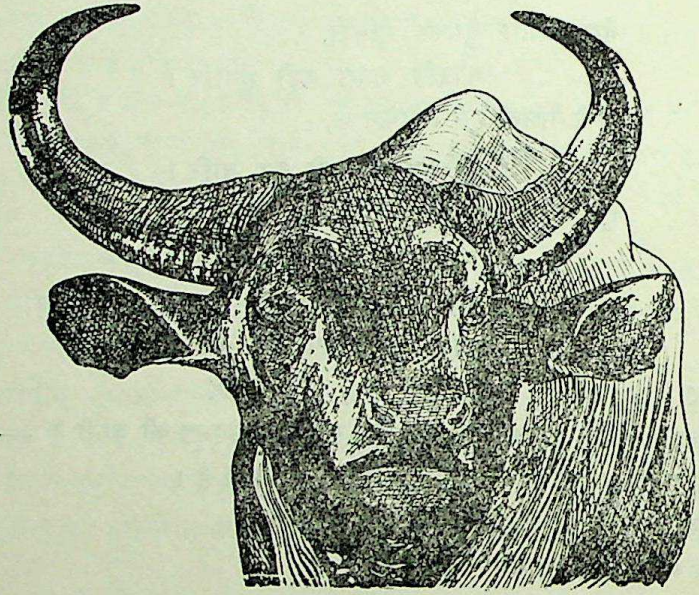

भैंस

भैंस की अनेक उपजातियाँ हैं जिनमें से केवल आठ का संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जा रहा है :—

(1) **जफ़रावादी**—यह काठियावाड़ के दक्षिण भाग और गिरि के जंगलों में पाई जाती है। इसके आकर्षक माथे पर भारी सींग बड़े सुन्दर लगते हैं। इसका रंग विशेषतः श्याम होता है। प्रतिदिन यह 15 से 20 सेर तक दूध देती है। जफरावादी भैंस के दूध का घी बहुत श्रेष्ठ माना गया है।

(2) **मेहसाना**—बड़ौदा (राज्य) में पाई जाने वाली इस उपजाति की भैंस का रंग काला या भूरा होता है, इसके मुँह पर एक श्वेत चिन्ह भी रहता है। शरीर लम्बा, सिर भारी तथा आकार मध्यम होता है। इसके पालने में अधिक व्यय नहीं करना पड़ता है। मण्डियों में इसका घी अधिक बिकता है।

(3) **रावी**—यह पंजाब में रावी नदी के क्षेत्र में पाई जाती है और इसीलिए इस उपजाति को यह नाम मिला है। इसका शरीर मांसल, माथा चौड़ा, सींग मोटे, और गर्दन लम्बी, मोटी एवं चौड़ी होती है। प्रतिदिन यह 8-10 सेर तक दूध देती है।

(4) **कुघी**—यह सिन्ध के उत्तरी भाग में पाई जाती है। इसका शरीर भारी तथा साधारणतः काला और हल्का भूरा होता है। आँखें छोटी होती हैं तथा मोटे सींग पीछे की तरफ झुके रहते हैं। स्वस्थ भैंस प्रतिदिन 20 सेर तक दूध दे देती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(5) **मुर्रा**—यह पंजाब के अनेक जिलों तथा दिल्ली प्रान्त में पायी जाती है। इसका शरीर भारी, गर्दन एवं सिर हल्का, बल खाए हुए सींग तथा लम्बी पूंछ इस भैंस की विशेषताएँ हैं।

(6) **भाद्वारी**—आगरा जिला तथा ग्वालियर (राज्य) के क्षेत्र में यह पायी जाती है। इसका सिर छोटा तथा हल्का, सींग चौड़े, आकार मध्यम, एवं माथा चौड़ा रहता है। इसके माथे और नाक पर कुछ धब्बे रहते हैं। प्रतिदिन यह 4-6 सेर तक दूध देती है। दूध की मात्रा अवश्य कम रहती है लेकिन इस दुग्ध में घी अधिक निकलता है।

(7) **नागपुरी**—नागपुर, वर्धा तथा वरार (जिलों) में यह पाई जाती है। इसके सींग लम्बे-चौड़े तथा रंग काला रहता है।

उत्तारी भैंसों की अपेक्षा इसका शरीर अधिक भारी होता है। प्रतिदिन यह 6-8 सेर तक दूध देती है।

मध्यप्रदेश तथा हैदराबाद में भी यह भैंस पाली जाने लगी है।

(8) **निली**—पंजाब के फिरोजपुर जिले में यह पाई जाती है, इसका आकार मध्यम, सींग छोटे, गर्दन पतली तथा लम्बी होती है। रंग साधारणतः श्याम होता है। यह प्रतिदिन 7-8 सेर दूध देती है।

× × × ×

भैंस से सम्बन्धित कुछ कहावतें यहाँ उद्धृत की जा रही हैं, जिनसे इस पशु के स्वभाव, जाति, प्रवृति, आदि का परिचय प्राप्त हो सकता है।

(1) मेंढ़क, भैंस, किसान, मोर, पपीहा, धान, मछली और लता पानी बरसने से सुखी होते हैं।

(2) खेत न जोतै राड़ी, न भैंस बेसाहै पाड़ी।

(3) भैंस जो जन्मे पड़वा, बहू जो जन्मे धी।
सगै कुलच्छन जानिये, कातिक बरसे मीं।

(4) भैंस की पूंछ को पकड़कर किसने नदी पार की है ?

(5) भैंस कँदेलिया पिय लाये।
माँगे दूध कहाँ से आये।
(कँदेलिया नस्ल की भैंस बहुत कम दूध देती है)

(6) भैंस सुखी जब मण्ड़िया परै।
राँड सुखी जब सबका मरै।
(भैंस गँदले पानी में बैठने पर बहुत सुखी होती है।)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(7) सावन घोड़ी, भादों गाय।
माघ मास जो भैंस विग्राय।
कहै घाघ यह साँची बात।
अप मरे या मलिकै खाय।

(8) तपे मृगसिरा बिलखें चार।
बन बालक औ भैंस उखार।

(9) भैंस के आगे बाँसुरी बजाना व्यर्थ है।

(10) भैंस अपना काला रंग देखती नहीं है, लेकिन छतरी को देखकर चौंकती और भागती है।

(11) दूध पीने के लिए तो भैंस ही रखना चाहिए भले वह एक सेर ही दूध क्यों न दे।

(12) चाँदी वाली (जिसके माथे पर सफेद धब्बा हो) भैंस मालिक के घर को सोने और चाँदी से भर देती है।

× × × ×

पड़ा (भैंस का बच्चा) भी अनुपयोगी नहीं है। गाड़ी खींचने, जमीन जोतने, बोझा ढोने, आदि में यह लाभदायक सिद्ध हुआ है।

स्वर्गीय श्री गुप्त की निम्नस्थ कविता भैंस की प्रवृत्ति पर अच्छा प्रकाश डालती है :—

भैंस के आगे बीन बजाई, भैंस खड़ी पगुराती है।
कुछ कुछ पूंछ उठाती है और कुछ कुछ कान हिलाती है।
कभी कहीं कुछ चरती है और कभी कहीं कुछ खाती है।
कभी सरपतों के झुण्डों में, जाकर सींग लगाती है।
कभी मस्त होकर लोटे है, तालाबों के बीच।
देह डबोये थूथन काढ़े तन लपटाये कीच।
पीठ के ऊपर झाँपल बैठी चुन चुन चिचड़ी खाती खाती है।
मेरी प्यारी महिषी उससे और मुदित हो जाती है।
अपने को समझे है वह सब भैंसों की सरदार।
आगे पीछे चलती हैं जिस दम पड़ियाँ दो-चार।
डाबर की गहरी दलदल में घुटनों तक है दूब खड़ी।
वहाँ रौंध करती फिरती है लिये सहेली बड़ी बड़ी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पूँछ हिलाती है प्रसन्न मन, मनो चँवर अभिराम।
मक्खी मच्छर आदि शत्रु की शंका का नहिं काम।

(भैंस का स्वर्ग, स्वर्गीय बालमुकुन्द गुप्त)

सारस

15 फीट लम्बे इस पक्षी को पहचानना कठिन नहीं है। जलाशयों तथा दलदल के समीप यह प्रेमी विहंग सदैव अपने जोड़े के साथ रहता हुआ मौन रूप में कीड़े-मकोड़ों, मेंढ़क-मछलियों तथा वनस्पति आदि को खाता है। यदि इसे सर्वभक्षी कहा जाय तो अनुचित नहीं है।

इसका दाम्पत्य प्रेम अनुकरणीय है। चिरन्तन साथ रहने वाले स्नेही दम्पति की सराहना साहित्यकार सारस-सी जोड़ी कहकर करता है। यह सत्य है कि जीवन में एक ही बार यह विहंग अपने साथी को चुनता है। यह जोड़ा एक दूसरे के वियोग को पलभर के लिए भी नहीं सह सकता। एक की मृत्यु हुई कि दूसरा विकल होकर अपने प्रिय प्राणों का शीघ्र ही परित्याग कर देता है। यदि मानव इस प्रेमी सारस के व्रत को स्वीकार कर ले तो यह निश्चित है कि उसका विवाहित जीवन स्वर्गीय सुख से भरपूर हो सकता है। पावन भारत की धरती पर रहकर यह पावस के आनन्द को भोगता है। इसकी बहुत लम्बी ग्रीवा तथा टाँगें दूर तक देखने और चलने में विशेष सहायक मानी गई हैं।

नर-मादा रूप-रंग आदि में समान रहते हैं। स्लेटी रंग वाले इस पक्षी की नुकीली चोंच हरापन लिए हुए धूमिल श्वेत अथवा सींग-सी सफेद होती है तथा इसके अग्रिम भाग पर कुछ कालिमा रहती है। भूरे डैनों से यह उड़ता अवश्य है, लेकिन भारी शरीर इसे अधिक ऊँचाई तक नहीं उड़ने देता है। इसके मस्तक तथा गर्दन का ऊपरी भाग विशेष लाल रहता है और इसकी टाँगें चर्म-सी लाल होती हैं।

कहा जाता है कि इस पक्षी के मारने वाले को अनेक विपत्तियों से पीड़ित होना पड़ता है इसलिए उसे बहुत कम लोग मारते हैं।

अपनी सहचरी को मोहित करने के लिए जब सारस लम्बी गर्दन को फिराता हुआ नाचता है तब बड़ा ही सुहावना लगता है।

मादा एक बार में दो-तीन अंडे देती है। प्रजनन-काल जुलाई से सितम्बर तक माना गया है। जड़ों, घास, पत्तों आदि से बनाया गया सारस का घोंसला दलदल के बीच अथवा धान के खेत के मध्यस्थ में सुगमता से देखा जा सकता है।

इस विहंग की भी अनेक उपजातियाँ हैं। जिस सारस का यहाँ परिचय दिया गया है उसे अंग्रेजी में Sarus Crane कहते हैं। जल में विहार करना और नहाना इसे विशेष प्रिय है :—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहु बाबरी सर कूप राजत,
बद्धमनि सोपान है।
जहँ हंस सारस चक्रवाक,
बिहार करत सनान है।
(भूषण)

बया—

कभी-कभी हमें पक्षियों के कला-कौशल को देखकर आश्चर्य-चकित हो जाना पड़ता है। 9 इंच लम्बी 'बया' नामक चिड़िया के घोंसले में कला का सौन्दर्य सहज रूप से चित्रित हुआ है। कई चतुर तथा नीड़-निर्माण-पटु विहंग भी इस प्रकार के मनोरम और सुदृढ़ घोंसले को नहीं बना पाते। ऊँचे ताड़ के पत्तों एवं बबूल की नाजुक टहनियों में लटकते हुए बया के अनेक घोंसले जब हवा में हिलते हैं तब ऐसा मालूम होता है कि ये अब गिरने ही वाले हैं लेकिन हल्के होने पर भी ये पवन के कठोर थपेड़ों को दृढ़ता से सह लेते हैं। घास, केले के पत्तों के टुकड़ों, ज्वार की पत्तियों, नारियल की जटाओं आदि से नर और मादा दोनों ही मिलकर अपने नीड़ को बनाते हैं। छोटी-सी सुरंग की भाँति निर्मित यह घोंसला नीचे से गोल रहता है तथा मध्य में विस्तृत होकर ऊपरी भाग में बहुत पतला हो जाता है। मध्य भाग में ही मादा अंडे देती है। यह भाग इस प्रकार बनाया जाता है कि न अंडे नीचे गिर पाते हैं और न मादा को बैठने में किसी प्रकार की असुविधा होती है।

इसी मनोरम एवं विचित्र नीड़ के सम्बन्ध में कई कवियों ने इस प्रकार लिखा है :—

अचरज बंगला एक बनाया,
ऊपर नींव तले पर छाया।
बाँस न बल्ली बाँध घने,
कह खुसरो घर कैसे बने॥
(खुसरो)

अजब तेरी लीला,
अजब तेरी शान।
बया को दिया है,
अनोखा मकान॥
(अज्ञात)

जिसकी नींव गगन में छाई,
जिसका द्वार अधर में।
ऐसा घर हम देख न पाये,
धरती में भूधर में॥
(किशोर)

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारत, लंका, बर्मा, जावा, सुमित्रा आदि में रहने वाला यह पक्षी गौरैया के समान ही लघु शरीर वाला है। इसके शरीर का रंग भूरा कत्थई होता है जिस पर श्वेत एवं श्याम धारियाँ बड़ी आकर्षक लगती हैं। आँखों पर एक धूसर वर्ण की भूरी रेखा रहती है। चोंच पीलापन लिए हुए सींग-वर्ण की होती है जो नुकीली न होकर मोटी एवं कठोर रहती है। पावस में कामातुर बया का रंग परिवर्तित हो जाता है और इसकी छाती, ग्रीवा, ठोड़ी, मस्तक में अधिक गहरे भूरे पन के साथ-साथ श्यामता विशेष झलकने लगती है। इसीलिए किसी कवि ने लिखा है कि—

जिसका रंग बदल देती हैं,
कामुकता की घड़ियाँ।
मुग्ध नहीं जिसको कर पाईं,
कभी दमकती मणियाँ॥

यह उल्लेखनीय है कि यह परिवर्तित रंग क्षणिक ही रहता है। सहवास कामना की पूर्ति के पश्चात् पक्षी का शरीर अपने स्वाभाविक रंग-रूप में आ जाता है। मादा में यह रंग-परिवर्तन नहीं होता है।

बया अनेक सहचरियों के बनाने में बड़ा चतुर होता है। प्रमाभिनय की इसे अनेक विधियाँ ज्ञात हैं। यह ठीक है कि यह विहंग कृषि-नाशक है फिर भी अनेक कृषि-विनाशक कीड़ों को खाकर यह किसी न किसी रूप में कृषक-समाज का हितैषी भी सिद्ध हुआ है। समूह में रहने वाला बया कलह-प्रियता के लिए प्रसिद्ध है। प्रजनन काल (अप्रैल से नवम्बर) में मादा एक बार में दो से लेकर चार तक अंडे देती है।

बया की भी अनेक उपजातियाँ होता हैं।

गोलसिंगा बकरा—

इस जंगली बकरे के वर्तुलाकार सींग इसके सौन्दर्य के प्रमुख अंग हैं। पीछे की ओर झुकने वाले इसके गाँठदार लम्बे सींग शनैः शनैः चक्राकार हो जाते हैं। इस बकरे की ऊँचाई लगभग चालीस इंच होती है तथा सींग पाँच फीट तक लम्बे देखे गये हैं। घास-पत्तियों तथा छोटी-छोटी झाड़ियों को खाकर यह अपनी भूख मिटाता है और ये ही इसके खाद्य हैं। गोलसिंगा बकरे (Himalayan ibex) की श्याम दाढ़ी लम्बी तथा घनी होती है। इसके गले के आस-पास अयाल की भाँति लम्बे-लम्बे बाल भी होते हैं। इसका माँसल और सुगठित शरीर इसकी शक्ति सम्पन्नता का परिचायक है।

हिमालय के उच्च शिखरों पर अधिक रहने के कारण प्राणि-विद्या-विशारदों ने इसे 'हिमालय का बकरा' कह कर पुकारा है। दुर्गम पर्वत-शिखरों पर भी सुगमता से चढ़ने वाला यह वन्य पशु झुण्ड में रहता है और चरते समय चौकन्ना रह कर कई बार इधर-उधर देख लेता है। सुरक्षा के लिए ऊँची चट्टानों पर खड़े हुए दो-चार बकरे विपत्ति की सूचना एक विलक्षण ध्वनि से देते हैं और सब साथी सजग होकर रक्षार्थ प्रयत्नशील हो जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसके घने बाल शरीर को शीत से बचाते हैं लेकिन शिकारा को अवश्य आकर्षित करते रहते हैं जो माँस के साथ-साथ इसके कोमल केशों को भी उपयोगी समझते हैं। बकरे का रंग पीलेपन से मिश्रित भूरा होता है।

अन्य बनवासी बकरों की भाँति इसके रंग में भी ऋतु परिवर्तन के कारण कुछ रूपान्तर आ जाता है। ग्रीष्म में इसका रंग भूरा रहता है और शीत में यही रंग (भूरा) श्वेत एवं पीत रंगों से मिश्रित हो जाता हैं। इस बकरे की भी अनेक उपजातियाँ हैं।

भरल—

ऊँचे-ऊँचे पर्वतों में रहने वाला यह पशु स्वभाव से बड़ा डरपोक होता है और इसीलिए चट्टानों पर बैठकर यह चारों ओर सजग आँखों से देखता रहता है, आहट मिलते ही वह दौड़ता है और किसी गुप्त स्थान में छिपकर अपने बचाव के लिए प्रयास करने लगता है। कभी-कभी कल्पित भय भी इसे विशेष व्याकुल कर देता है। न इसे हम बकरों की उपजातियों में रख सकते हैं और न पूर्णरूप से हम इसे

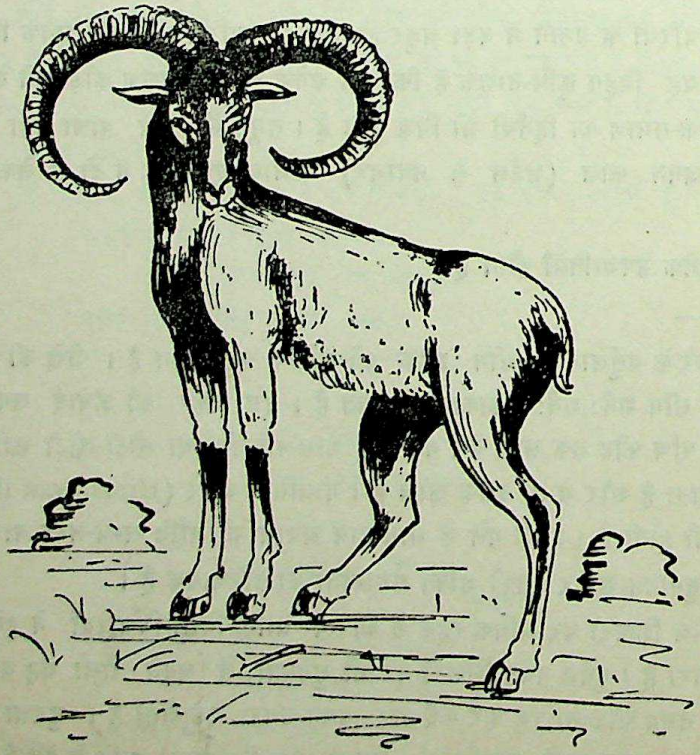

भरल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
भेड़ ही कह सकते है। दोनों का एक मिश्रित स्वरूप इस नीले पशु में अवश्य मिलता है। दाढ़ी के अभाव में यह बकरे के समान नहीं कहा जा सकता है। और न बकरे वाली गंध भी इस में विद्यमान है। शरीर के नीले रंग के कारण कुछ लोग इसे तिब्बत की नीली भेड़ भी कहते हैं। लेकिन शरीर का यह रंग ऋतु-परिवर्त्तन से प्रभावित होकर परिवर्तित होता रहता है।

इसके शरीर की ऊँचाई लगभग तीन फीट होती है तथा इसके घुमावदार मुड़े हुए लंबे सींग बड़े आकर्षक लगते हैं। बकरे की भाँति इस में चट्टानों पर चढ़ने की पूर्ण क्षमता रहती है और 10 हजार से 16 हजार फीट की ऊँचाई पर इसे सुगमता से देखा जा सकता। घास एवं झाड़ियों को खाकर यह अपनी भूख मिटाता है। ऐसे भोले पशु के संरक्षण के लिए प्रकृति ने भी इसे पर्याप्त बुद्धि और रंग दिया है। यह पत्थरों में बैठकर विश्राम करता है जो इसके शरीर के रंग से मिलते-जुलते हैं। ऐसी स्थिति में इसे पहचानना कठिन हो जाता है। इसकी प्रकृत्ति भेड़ के समान अधिक है अतः जीव-शास्त्र के विशेषज्ञों ने इसे भेड़ के नाम से ही सम्बोधित करना उचित समझा है। यह केवल सुबह और शाम को चरता है और दिन के शेष भाग में आराम करके स्वयं को स्वस्थ रखता है।

इस पशु की सामाजिक भावना अनुकरणीय है। झुण्डों में रहकर यह अपने साथियों के सुख-दुख में भाग लेता है और आपति आने पर सामूहिक शक्ति से उसका निराकरण करता है। बहुत दूर एकान्त स्थलों में रहने पर भी यह सुखी नहीं रह पाता और मांस-लोलुपी शिकारी उसके सुख में अनेक बाधाएं उपस्थित कर देते हैं। हिमवाघ तो इस बेचारे भरल का भयानक शत्रु है। अपने पति से कुछ छोटी मादा भरल बड़ी स्वामि-भक्ता होती है।

आज के स्वार्थी मानव ने कोमल ऊन और मधुर मांस की प्राप्ति के लिए हजारों भरल के झुण्डों को अपनी निर्दय बन्दूकों का शिकार बनाया है और निष्ठुर होकर वह इस प्रकार के संहार में निरन्तर संलग्न है। गड़वाल और लद्दाख के वनों में तथा उच्च पर्वत शिखरों पर यह बरड़ (भरल) घूमता फिरता है।

सेही—

अपने शरीर को तेज कांटों से सजाये हुए यह वन-पशु जब खरखराहट की ध्वनि के साथ चलती है तब अनेक वन्य जीव चौकन्ने हो जाते हैं। अनेक शक्तिशाली एवं भयानक जंगल के प्राणी इस तीस-बत्तीस इंच लम्बे क्रोधी पशु से हार मान चुके हैं। आक्रमण के समय यह अपने कांटों को खड़ाकर के हमला करने वाले के शरीर में इन्हें चुभा देती है जो देह में घुसकर असहनीय पीड़ा उत्पन्न करते हैं।

काले-भूरे रंग वाली सेही की गर्दन पर श्वेत बाल भी रहते हैं।

झुण्ड में न रहकर यह एकाकी रहना पसन्द करती है। दिन में तो यह किसी एकान्त स्थल (बिल) में सोती रहती है लेकिन शाम होते ही भोजन की खोज में इधर-उधर घूमने लगती है। फल, बल्कल, रसदार पौधे, जड़ें आदि इसके प्रिय भोज्य हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मादा एक बार में दो बच्चों को जन्म देती है जिन्हें वह बड़े लाड़ प्यार से पालती है। संसार के विभिन्न भागों में पायी जाने वाली सेही की कई उपजातियाँ हैं। लम्बी पूँछ वाली वृक्ष-सेही वृक्षों पर चढ़कर आत्म-रक्षा करती है। लम्बे बालों वाली एक दूसरी भी विटप-सेही (वृक्ष-सेही) होती है जिसके शरीर पर लम्बे मुलायम केश रहते है जिनमें काँटे छिपे रहते हैं। वृक्षों के ऊपर चढ़कर यह फल खाती है और सुख की नींद भी सोती है। छोटे बालों वाली भी एक सेही होती है। इन सब जातियों की सेहियों के शरीर में काँटे अवश्य रहते हैं जो आत्म-रक्षा के प्रधान साधन हैं। वृक्षों पर रहने वाली सेहियाँ कोटर में शिशुओं को जन्म देती हैं और वहीं रखकर कुछ काल तक इनका लालन-पालन करती हैं।

श्री श्रीरामजी शर्मा का कथन है कि एक सेही के शरीर पर सोलह सौ तक काँटे रहते हैं।[1] इन पन्द्रह इंच तक लम्बे काँटों में छोटे-छोटे श्वेत एवं कृष्ण घेरे (अंगूठी के समान) होते हैं। अन्य शरीर में घुसकर ये काँटे गलते नहीं है। इन विषैले काँटों से भयभीत होकर शेर भी इस लघुकाय वन्य पशु पर सहसा आक्रमण नहीं करता।

बिल्ली—

वनवासिनी बिल्ली को मानव ने अपनी सुख-सुविधा के लिए पालतू बनाया और आज वह चूहों को खाकर मानव-जाति का विशेष कल्याण कर रही है। चूहे इसकी पकड़ में आकर जीवित नहीं रह सकते। एक युग था जब बिल्ली को मारना अपराध समझा जाता था और अपराधी को कठोर दंड देना आवश्यक था लेकिन आज बिल्ली का इतना अधिक महत्त्व नहीं है। हिन्दू-समाज में बिल्ली के मारने वाले को सोने की बिल्ली का दान करना पड़ता था। यह तो स्पष्ट है कि चूहों का नाश करके यह अन्न का संरक्षण करती है और इसीलिए इसे कृषि-संरक्षिका भी कहा जाता है।

बिल्ली स्वभाव से ढ़ीठ, कुटिल और चालाक होती है। इसकी चमकीली आँखें ही इसकी चंचल प्रवृत्ति का परिचय देती हैं। चुपके से आना और प्रिय खाद्य पदार्थों को चट करके भाग जाना इसकी विशेषता है। बिल्ली को गुलाम बनाना कठिन है। परवश होकर भी यह स्वतन्त्र है मित्र बनकर भी यह अमित्रता का व्यवहार कर सकती है और विश्वास पात्र होकर भी कभी भी धोखा दे सकती है। विभिन्न देशों की बिल्लियाँ रंग-रूप तथा शरीराकार में भिन्न होती हैं। कुछ ऐसी भी जिनके शरीर पर लम्बे कोमल बाल होते हैं, और कुछ ऐसी भी हैं जिनकी देह पर छोटे-छोटे बाल रहते हैं। सफेद बिल्ली अधिक सुन्दर लगती है। लम्बी पूंछ और छोटी पूँछ वाली बिल्लियों की भी अच्छी संख्या है। लेकिन Manx cat नामक बिल्ली पूंछ-हीन रहती है। कुछ जंगली बिल्लियों के भी पूंछ नहीं होती है। कई बिल्लियाँ ऐसी होती हैं जिनके शरीर पर अनेक रंगों का संमिश्रण रहता है। ऊपरी भाग एक रंग का होता है और नीचे का भाग अन्य रंग का रहता है। जिन बिल्लियों के शरीर पर हल्की-हल्की धारियाँ रहती हैं वे भी बड़ी सुहावनी लगती हैं। अंधेरी रात में चमचमाती हुई बिल्ली की आँखें बच्चों को बड़ी डरावनी प्रतीत होती हैं।

---

1. 'भारत के जंगली जीव', पृष्ठ 89.

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपने बच्चों को प्राणों से भी अधिक चाहने वाली बिल्ली बड़े प्यार से पालती है और साधारण भय की आशंका होने पर उन्हें अपनी पीठ पर बैठा कर सुरक्षित स्थान में रख देती है। इसके पंजों के तेज नाखून शत्रु पर प्रहार करने में सदैव सहायता देते हैं। छोटे-छोटे पशु-पक्षियों को पकड़ना, दूध से भरे डिब्बों को खोलना, धीमी और मीठी ध्वनि से बच्चों को लुभाना आदि बिल्ली की सहज प्रवृत्ति है। इसकी चालाकी की अनेक कथाएँ प्रचलित हैं। पेड़ों पर चढ़ कर पक्षियों के बच्चों को खाना, एवं अंडों को चट करना बिल्ली को अच्छा लगता है। इसका वंश भी विस्तृत है। सिंह, शेर, चीता आदि भयानक वन्य पशु इसके ही सम्बन्धी कहे जाते हैं।

हमें यह याद रखना चाहिए कि मिश्र वाले किसी समय बिल्ली देवी (Pashta) की पूजा किया करते थे। और इसे सोने के सुन्दर आभूषण से सजाते थे।

बिल्ली से सम्बन्धित निम्नस्थ कहावतें विशेष प्रचलित हैं, उन से हम उसके स्वभाव का ज्ञान कर सकते हैं :—

(1) बिल्ली और कुत्ते एक दूसरे को बार-बार चूम कर भी मित्र नहीं बन सकते।
(2) नदी से मछली पकड़ कर भी बिल्ली अपने पैरों को नहीं भिगोती।
(3) बिल्ली के नौ जीवन होते हैं।
(4) कभी-कभी बिल्ली राजा के भी सिर पर बैठ जाती है।
(5) थोड़ी दूर जाकर लौट आना, बिल्ली को ही आता है।
(6) बिल्ली के चले जाने पर ही चूहे आनन्द मनाते हैं।
(7) अन्धकार में सब रंगों की बिल्लयाँ खाकी (grey) दिखती है।
(8) बूढ़ी बिल्ली भी छलाँग मारने में अपने बच्चे से कम नहीं होती है।
(9) बिल्ली कभी पानी में नहीं डूबती।

बिल्ली के सम्बन्ध में अनेक लोक-विश्वास भी हैं। यथा—

(1) बिल्ली का रास्ता काट जाना अशुभ-माना जाता है।
(2) मल्लाहों की दृष्टि में बिल्ली का अनेक बार म्याऊँ-म्याऊँ करना तूफान के आगमन की सूचना है।
(3) चुड़ैलें प्रायः बिल्ली के रूप में आती हैं।
(4) रात में बिल्ली को मारना मानो चुड़ैल को बुलाना है।
(5) बिल्ली की आँतों से जादू जगता है।
(6) बिल्ली का रात में रोना आपत्तिजनक माना गया है।

बिल्ली की अनेक उपजातियाँ होती हैं। यथा—

(1) बाघ बिल्ली (Leopow cat), (2) मछली बिल्ली (मछुआ बिल्ली), (3) जंगली बिल्ली,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(4) वृक्ष बिल्ली (Tree cat)[1], (5) लघु पैर वाली बिल्ली (Short leged) आदि ।

ऊँट

मरुभूमि (रेगिस्तान) में रहने वालों के लिए ऊँट सचमुच परमात्मा का एक विशेष वरदान है। इसके बिना इन लोगों का जीवन कष्टमय हो जाता है। इसकी पीठ पर बैठकर मरुभूमि के निवासी हजारों मीलों की यात्राएँ करते हैं और भारी बोझ लादकर अनेक पदार्थों को इसके ही माध्यम से एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजते रहते हैं। इसके पैरों में मुलायम गद्दियाँ होती हैं जो चलते समय कुछ फैल जाती हैं और इसीलिए इसके पैर रेत में नहीं घुसते हैं। ऊँट की दो जातियाँ हैं। एक जाति के ऊँट के दो कूबड़ होते हैं और दूसरी जाति के एक ही कूबड़ होता है। ये कूबड़ पशु के स्वास्थ्य पर निर्भर हैं। पूर्ण स्वस्थ ऊँट का कूबड़ बड़ा रहता है लेकिन वही (कूबड़) पर्याप्त भोजन न मिलने के कारण छोटा हो जाता है। ऊँट की लम्बी गर्दन दूर तक देखने में अधिक सहायक बनती है। रेगिस्तान की असहनीय सूर्य की गर्मी में ऊँट बिना किसी प्रकार की विकलता के चलता जाता है और लटकते हुए पलकों से अपनी आँखों को ढक लेता है। इसी प्रकार तूफानों के आने पर जब बालू चारों ओर उड़ने लगती है तब वह अपने बड़े-बड़े नथनों (Larg nostrids) को सुगमता से बन्द कर लेता है जिससे कि बालू उसकी नाक में नहीं घुस पाती।

यह सत्य है कि ऊँट कई दिनों तक बिना पानी पिये रह सकता है। इसके पेट में कई थैलियाँ रहती हैं जिन्हें वह पानी पीते समय भर लेता है तथा आवश्यकता पड़ने पर यही पानी काम देता है और ऊँट मरुभूमि के जलाभाव से पीड़ित नहीं हो पाता। इसी प्रकार भोजन न मिलने पर कूबड़ की चर्बी ही ऊँट की भूख को मिटाती है और चलने-फिरने के लिए पर्याप्त शक्ति प्रदान करती है।

कंटीली झाड़ियों-बबूल की कोमल डालियों आदि को खाने वाले ऊँट के कान भले ही छोटे हैं लेकिन श्रवण-शक्ति इसकी कम नहीं होती।

लम्बी टाँगों वाला एवं लम्बी गर्दन वाला यह पशु देखने में असुन्दर लगता अवश्य है फिर भी मरु-भूमि के निवासियों ने इसे 'रेगिस्तान का जहाज' कहकर सम्मानित किया है। साधारणतः ऊँट की आयु 40-50 वर्ष की होती है।

मरे हुए ऊँट का मांस, हड्डियाँ तथा चमड़ा भी उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसके बालों से सुन्दर कपड़े तथा रस्सी बनाई जाती है।

क्रुद्ध ऊँट जब बदला लेने के लिए दृढ़-प्रतिज्ञ होता है तब वह अपने शत्रु की खोपड़ी को नारियल की भाँति फोड़ डालता है।

सीधी राह को पकड़ कर चलने वाला यह पशु यदि किसी कारणवश अपने मार्ग से दूर हो जाय

---

1. वृक्ष बिल्ली को ताड़ी बिल्ली (Toddy cat) भी कहते हैं।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तो फिर उसके लिए पूर्व पथ का अन्वेषण कठिन हो जाता है। प्रवीण पशुओं में इसकी गणना भी नहीं है।

अरब का निवासी ऊँट को पाकर स्वयं को भाग्यशाली मानता है।

कृषि कर्म में भी इसकी उपयोगिता स्वीकृत की जा चुकी है।

× × ×

ऊँट के सम्बन्ध में कुछ कहावतें प्रचलित हैं जो उसके स्वभाव तथा आहार पर प्रकाश डालती हैं :—

1. ऊँट फिटकरी देने पर चिल्लाता है और गुड़ खिलाने पर भी अर्राता है।
2. ऊँट सामान लादने पर भी चिल्लाता है और सवारी करने पर भी अर्राता है।
3. काँटेदार झाड़ियों तथा घास को खाने वाले ऊँट बहुत हैं परन्तु नागर बेल के पत्तों को चरने वाला उत्तम जाति का ऊँट बड़ी कठिनाई से मिलता है।
4. भूखा ऊँट सूखे चमड़े को भी चबा जाता है।
5. मरुभूमि के निवासियों के लिए ऊँट, घोड़ा, गाय और भेड़ के समान उपयोगी है।
6. ऊँट जब मरता है तब लंका की ओर मुँह करता है।
7. मरता हुआ ऊँट मारवाड़ की ओर कई बार देखता है।
8. ऊँट कटीले वृक्ष को बड़े चाव से खाता है।
9. ऊँटनी का दूध अतिथि के लिए अमृत है।
11. ऊँट पर बैठने वाले को मलकना अपने आप ही आ जाता है।
12. चढ़ते ही ऊँट को तेजी से नहीं भगाना चाहिए।
13. ऊँट को नीम मीठा लगता है।

हुदहुद—

सिर पर आकर्षक कलगी के साथ जब यह पक्षी धीरे-धीरे इधर-उधर चलता है तो ऐसा प्रतीत होता है कि कोई सरदार मंद गति से आगे बढ़ रहा है। हूट-हूट करता हुआ यह विहग कीड़े-मकोड़ों को खाने के लिए निरन्तर धरती को कुरेदता हुआ मकानों के सामने अथवा उद्यानों में देखा जा सकता है। इसकी लम्बी तथा कुछ झुकी हुई चोंच जमीन को कुरेदने के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध हुई है। जमीन के नीचे छिपे हुए अथवा पत्तों में छिपे हुए कीड़े इस पक्षी की दृष्टि से नहीं बच पाते हैं।

बारह इंच लम्बे हुदहुद के मस्तक पर जो लम्बी कलगी रहती है उसके सिरे श्याम एवं श्वेत होते हैं। इसके काले और सफेद धारियों से युक्त शरीर के परों ने इसे जेबरा विहंग (Zebra Bird) नाम दिलवाया है। कुछ ग्रमीण इसे नाइन चिड़िया भी कहते हैं। इस नामकरण का आधार इसकी नहरनी की भांति लम्बी तथा किञ्चित् झुकी हुई चोंच ही है। इसका शरीर हल्के पीले रंग का होता है।

मादा के सिर पर भी नर के समान कलगी रहती है जो एक बार में तीन से लेकर दस तक अंडे

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देती हैं। इसका प्रसव-काल फरवरी से जुलाई तक माना गया है। दीवाल के छेद अथवा वृक्ष के कोटर में घास, बाल, पत्तियों, पंखों आदि से बनाया गया इसका साधारण घोंसला अत्यधिक गंदा रहता है और इसी कारण इसमें से असहनीय दुर्गंध निकलती रहती है। इसका मुख्य हेतु यही है कि घोंसले को न मादा साफ करती है और न नर।

घने वनों में रहना हुदहुद को अच्छा नहीं लगता और इसीलिए यह खुले मैदानों में घूम-घूम कर अपने भोजन की खोज करता रहता है।

कहा जाता है कि हुदहुद के शरीर का उपयोग जादू-टोने तथा कई औषधियों के निर्माण में होता है।

इसकी मनोरम कलगी के सम्बन्ध में एक कथा प्रचलित है जिसमें बताया गया है कि एक बार बादशाह सुलेमान अपने उड़ने वाले राज्य-सिंहासन पर बैठकर आकाश में जा रहा था। सूर्य की किरणें तेज हो चली थीं और छाया करने के लिए बादशाह के पास कोई साधन नहीं था। इसलिए उसने गृद्धों को पंख फैलाकर उसके ऊपर से उड़ने के लिए कहा लेकिन इन दुष्ट पक्षियों ने सुलेमान के कहने को न माना और इधर-उधर उड़ने लगे। इतने में हुदहुद पक्षी आये और उन्होंने परों को फैला कर बादशाह के ऊपर छाया की जिससे उसकी यात्रा सुखद रही। प्रसन्न होकर सुलेमान ने हुदहुदों के सरदार से वरदान माँगने के लिए कहा। उसने सिर झुकाकर प्रार्थना की कि हमारे परिवार के समस्त सदस्यों के सिर पर सोने की कलगी लगा दी जाय। सरदार की प्रार्थना स्वीकार हुई और सब हुदहुदों के सिरों पर स्वर्ण की कलगियाँ चमकने लगीं। कुछ समय के पश्चात् मनुष्यों को सोने की कलगी का पता लगा और इन्होंने लोभ के वश होकर हुदहुदों को मारना प्रारंभ कर दिया। अपने परिवारों को नष्ट होते देखकर सरदार बादशाह के दरबार म गया और हाथ जोड़कर बोला—"महाराज, सोने को लेने के लिए मनुष्य हमें निर्दय होकर मार रहे हैं अतः हमें सोने की कलगी की अब आवश्यकता नहीं है। दूसरे प्रकार की कलगी देकर हमें अनुगृहीत बनावें। बादशाह ने विचार किया और सुन्दर परों की कलगी देकर सरदार को लौटाया।

आज के हुदहुदों के सिरों पर केवल परों की कलगियाँ हैं जो कभी-कभी शिकारियों को लुभा लेती हैं।

यह पक्षी कृषिनाशक कीटों को खाकर किसानों का सचमुच बड़ा हित करता है। इसकी अनेक उप जातियाँ हैं।

घर गौरैया—

भारत वर्ष की पावन भूमि के समस्त भागों में निर्भय होकर घूमने वाली गौरैया प्रायः सब से परिचित है। छोटी होने पर भी यह बड़ी खोटी है। इधर-उधर फुदकते हुए सब कुछ खा लेना और मानवों से भरे हुए घरों में जा घुसना इसके ढीठ स्वभाव की की सहज प्रवृत्तियाँ हैं। अनादर से तो कभी यह दुःखी होती ही नहीं है।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किसान अपनी पकी फसल के कणों को पीछे खाता है लेकिन उन्हें पहले खाने वाली गौरैया ही है। छः इंच लम्बी यह चिरैया भारत के अतिरिक्त यूरोप, उत्तर अफ्रीका, आस्ट्रेलिया आदि अनेक देशों में अपने परिवारों को फैला चुकी है।

इसकी चञ्च छोटी एवं दृढ़ होती है। मादा न वृक्षों में, न झाड़ियों में और न गड्डों में घोंसला बनाती है, वह तो किसी भी घर में सुरक्षित स्थान देख लेती है और वहीं पर घास तिनकों, चिथड़ों आदि से साधारण घोंसला बनाकर राख जैसे रंग वाले एवं चित्तियोंदार 5-7 अंडे दे देती है।

शरीर-रंग से नर-मादा में भेद रहता है, नर के सिर का ऊपरी हिस्सा स्लेटी, और बाल श्वेत होते हैं। छाती से ठोढ़ी तक एक काली धारी होती है। इनके पर कुछ सफेद, कुछ बादामी तथा कुछ भूरे होते हैं। पीठ तक डैने कत्थई भूरे रंग के होते हैं। दुम गहरी भूरी। गाल राख के हलके रंग का होता है। पेट पर सफेदी होती है। मादा भूरे अथवा मटमैले रंग की होती है। दोनों की चोंच मोटी तथा भूरे रंग की होती है। आँख की पुतली और पैर भी भूरे होते हैं। मादा की आँख के ऊपर एक हलकी बादामी रेखा रहती है। गर्मियों में नर की भूरी चोंच काली लगने लगती है।[1]

गौरैया की भी अनेक उपजातियाँ है।

इन पंक्तियों में जिस गौरैया का संक्षिप्त परिचय दिया गया है उसे अंग्रेजी में House Sparrow कहते हैं।

सतबहिनी—

छोटे से जीवन में यदि मानव सुख-शान्ति से रहना चाहता है तो उसे इस पक्षी से प्रेम और बन्धुत्व की भावना ग्रहण करनी चाहिए। समूह में रहकर यह विहग भोजन की खोज करता है, एक-दूसरे के सुख-दुख में साथी बनता है तथा शत्रु के आक्रमण को अपनी सामूहिक शक्ति के द्वारा निष्फल बनाता है। अपने एक मित्र की पराधीनता को देखकर इसे अपनी स्वाधीनता पर दुःख होता है और उसे बन्धनों से मुक्त करने के लिए यह सबकुछ करने को तैयार हो उठता है।

भारत एवं अन्य कई देशों में पाया जाने वाला यह खेचर (पक्षी) कभी 6-7 तो कभी 10-15 के समूह में रहता है। अपने जातीय भाइयों अथवा बहनों के साथ ही रहकर यह अपना जीवन समाप्त करता है। कभी यह बहनों के साथ घूमता है तो कभी भाइयों के साथ भ्रमण करता है। कभी इसके समूह में 2-4 नर होते है और 3-4 मादाएं रहती हैं। ऐसी स्थिति में 'सत भाई' अथवा 'सतबहिनी' नाम से इस नभचर को पुकारना पूर्णरूपेण उचित नहीं है फिर भी जो नाम जिसे एक बार मिल जाता है वह फिर चला ही करता है।

कानन सतबहिनी के शरीर की लंबाई लगभग 10 इंच होती है। कुछ लम्बी पूंछ वाली एवं धूसर (भूरा मटमैला) रंग वाली सतबहिनी के शरीर का निचला भाग पीलापन लिए हुए राख जैसा रहता है।

---

1. भारत के पक्षी—श्री राजेश्वर प्रसाद नारायणसिंह, पृष्ठ 124 से साभार।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चोंच तथा पैर चर्म जैसे रंगवाले होते हैं। कीड़े-मकोड़ों अन्न, तथा फल-फूलों को खाने वाली यह चिड़िया इधर-उधर फुदकती हुई कभी झाड़ियों में घुस जाती है तो कभी घने पेड़ों में छिप जाती है।

नर और मादा समान ही होते हैं। छोटे पेड़ में अथवा झाड़ियों में घोंसला बनाकर मादा एक बार में तीन अथवा चार नीले अंडे देती है जिनका संरक्षण दम्पति बड़ी लगन से करता है।

मैदानों तथा पहाड़ों में रहने वाली चिड़िया शान्त रहना कम पसन्द करती है। चंचल पैरों ने इसकी ज़बान को भी चंचल बना दिया है। आपस में लड़ना और फिर एक हो जाना इसका स्वभाव ही है। इन सात बहनों का यह क्षणिक मनमुटाव कभी भी घातक सिद्ध नहीं हुआ है। इस पक्षी की अनेक उपजातियाँ है। यहाँ केवल बनवाटी सतबहनी (Jungle Babler) का सक्षिप्त परिचय दिया गया है।

चातकी के भी अंडे गहरे नीले होते हैं और इसीलिए यह सतबहनी के घोंसलें में इन्हें रखकर निश्चिन्त दो जाती है। रंग की समानता सतबहनी को भ्रमित कर देती है और वह इन्हें अपना ही समझकर बड़ी ममता से सेती है।

ताहर (थार)—

सामान्य व्यक्ति को यह जानकर आश्चर्य हो सकता है कि हिमालय के उच्च शिखरों पर बकरा जैसा भोला प्राणी निर्भर होकर घूम-फिर सकता है। लेकिन यह सत्य है कि हिम से ढके हुए नगपति की ऊँची-ऊँची चोटियों पर रहने वाले अनेक जातियों के वन-बकरे एव भेड़े हैं जो समूहों में रहकर जीवन बिताती हैं।

ताहर हिमालय की गोद में रहने वाला एक सुन्दर बकरा है जिसका गठीला, भारी एवं बलिष्ठ शरीर बड़ा आकर्षक लगता है। शीत इसे विकल न कर सके अतः प्रकृति ने इसके शरीर को गहरे बादामी रंग वाले बालों से इस प्रकार ढक दिया है कि तीर के समान चुभने वाली अत्यन्त ठंडी हवा इसकी देह को छू भी नहीं सकती है। ऋतु परिवर्तन के साथ इसके बालों का रंग परिवर्तित होकर कभी-कभी पीलापन लिए हुए सिलेटी भूरा (Slate Grey) हो जाता है। नर के शरीर के अग्र भाग में सुन्दर बालों की एक लम्बी अयाल रहती है। भारी शरीर होने पर भी यह शीघ्रता से उछलता हुआ एक चट्टान से दूसरी चट्टान पर जाकर खड़ा हो जाता है। कंधे तक उसकी ऊँचाई तीन फीट और तीन इंच रहती है। लेकिन मादा की ऊँचाई कुछ कम होती है।

इस जंगली बकरे के दाढ़ी नहीं होती है। पीछे को झुके हुए इसके श्याम सींगों की लम्बाई 12-15 इंचों तक बताई जाती है। परन्तु मादा के सींग नर से छोटे होते हैं।

बसन्त के सुहावने दिनों में मादा एक अथवा दो बच्चों को जन्म देकर अपने मातृत्व को सफल बनाती है।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस बनवासी बकरे की प्रमुख तीन जातियाँ मानी गई हैं, जो रंग रूपादि में कुछ विभिन्न हैं। ये इस प्रकार हैं—

(1) हिमालय में रहने वाले ताहर, (2) नीलगिरी में निवास करने वाले ताहर तथा (3) अरब के वासी ताहर।

ताहर कभी नहीं चूका है,
चट्टानों पर चढ़ने में।
इसका साहस बल देता है,
निर्भय होकर बढ़ने में।

—चन्द्र

मारखोर

यह भी एक बलिष्ठ पहाड़ी बकरा है। इसके सीधे लम्बे घुमावदार सींग और लम्बी श्याम दाढ़ी बड़ी आकर्षक लगती है। काश्मीर, अफगानिस्तान एवं बलोचिस्तान के पर्वतों में रहने वाला यह पशु ऊँची चट्टानों पर चढ़ने में विशेष निपुण है। इसके सींगों की लम्बाई 39 से 53 इंच तक बताई जाती है। यह उल्लेखनीय है कि मारखोर के बाल अन्य जंगली बकरों की तुलना में अधिक लम्बे होते हैं।

इसके नाम के सम्बन्ध में अनेक मत हैं। साधारणतः 'मार' शब्द का अर्थ साँप है अतः कुछ लोगों का कथन है कि यह बकरा सर्प-भक्षी है इसीलिए इसे यह नाम दिया गया है। लेकिन पशु-शास्त्र विशारदों का मत है कि यह घास, पत्ते, छोटी झाड़ियों आदि को खाता है तथा साँप खाते हुए इसे कभी नहीं देखा गया है। ऐसी स्थिति में इसके सर्प-भक्षण के सम्बन्ध जो कुछ भी कहा जाता है वह केवल अंध-विश्वास पर आधारित है। हो सकता है कि इस बलशाली बकरे ने कभी आतंकित होकर किसी नाग को पैरों की चोटों से मार डाला हो।

मार का अर्थ विष भी है। विषैली जड़ी-बूटियों को खाने के कारण भी इसे यह नाम दिया गया हो। यह तो स्पष्ट है कि यह शौर्य-प्रदर्शन के लिए अधिक उत्सुक रहता है और इसी कारण लड़ना इसे अधिक प्रिय है। आक्रमणकारी को कभी-कभी शारीरिक क्षति उठानी पड़ती है। आक्रमण का उत्तर यह अपने दृढ़ सींगों से देता है। अतः कहा जा सकता है कि मारने वाले को (अथवा आक्रमण करने वाले को) नष्ट करने में यह दृढ़ संकल्प रहता है बस इसीलिए इसे यह अनोखा नाम दिया गया है।

कंधे तक इसकी ऊँचाई लगभग 3 फीट और 8 इंच तक कही जाती है। 241 पौंड तक इसके शरीर का भार बताया गया है।

मादा के सींग छोटे और कम घुमावदार रहते हैं।

ऋतु-परिवर्तन से इसके रंग में कुछ अन्तर आ जाता है। ग्रीष्म में इसका रंग भूरा तथा शीत ऋतु में धूमिल श्वेत हो जाता है।

इस पशु की भी अनेक उपजातियाँ बताई गई हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गधा

गधा अपनी मूर्खता के लिए प्रसिद्ध है। संसार में अनेक ऐसी लोक-कथाएँ प्रचलित हैं जिनमें गधे की मूढ़ता का रोचक विवरण मिलता है। पालतू बनकर यह बहुत प्राचीन समय से मानव-समाज की सेवा कर रहा है फिर भी मनुष्य की दृष्टि में यह कृतघ्न एवं मूढ़ ही बना हुआ है।

इसके साथ काम करने वालों का कथन है कि लंबे मुँह वाला यह पशु बोझ ढोने तथा पहाड़ों पर चढ़ने में बहुत सबल और चतुर है। फिर भी अडना तथा ढिठाई इसके स्वभाव के अभिन्न अंग बन गए हैं। इसी कारण इसे अपने मालिक के हाथों प्रायः रोज पिटना पड़ता है। घोड़े का सम्बन्धी होने पर भी इसमें उससे भिन्नता है। इसका छोटा कद, लम्बे कान, मूढ़ता, पूँछ आदि इसे अश्व से असमान बना देती हैं। विशेष रूप से मैदानों में रहने वाले वनवासी गधों की अनेक उपजातियाँ हैं। क्याँग (Kiang) नामक गधा तिब्बत के पहाड़ी स्थानों में रहता है। कंधे तक इसकी ऊँचाई लगभग तीन फीट और आठ इंच होती है। घास, पौधे, छोटी झाड़ियों आदि को चरने वाला यह गधा बड़ा निर्भय होता है। शीत स्थानों में यह सुख से रह सके अतः करुणामयी प्रकृति ने इसके शरीर पर घने बाल भी उगा दिए हैं साधारणतः इसके शरीर का ऊपरी भाग-अखरोट के फल के समान भूरा (Chestnut brown) होता है, लेकिन उदर श्वेत रहता है। 12000 से 18,000 फीट की ऊँचाई तक इसे देखा जा सकता है। एकाकी रहना इसे अच्छा नहीं लगता, इसीलिए यह 40-50 के झुण्ड में रहकर जंगलों में इधर-उधर घूमता रहता है। एक वृद्धा गधी के नियंत्रण में रहना इस जाति के गधों को अच्छा लगता है। स्वभाव से स्वतंत्रता-प्रिय होने के कारण इसे पालतू बनाना अति कठिन है।

जंगली गधे की दूसरी प्रसिद्ध उपजाति आंजर (Onager) है। भारत के पश्चिम भागों तथा बलोचिस्तान में रहने वाला यह गर्दभ क्यांग (Kiang) से कुछ छोटा होता है तथा तुलना में इसके शरीर का रंग भी बहुत हल्का रहता है। छोटे-छोटे झुण्डों में रहकर यह घास चरता है तथा गीष्मकाल में यह पर्वतों में रहकर अपने जीवन को बिताता है। यह बहुत तेज भागता है।

कतिपय जातियों के गधों का रंग नीला धूसर अथवा लाल धूसर होता है। पीले और पीले-भूरे रंग के गधों की भी कमी नहीं है।

प्रायः देखा जाता है कि झुण्डों में रहकर चरने वाले ये जंगली गधे बड़े सतर्क रहते हैं तथा इनके दो-चार मित्र (सजातीय) इधर-उधर देखते रहते हैं और साधारण भय अथवा आपत्ति की शंका होने पर ये सबको सचेत कर देते हैं। आवश्यकता पड़ने पर ये बर्फ के शीत जल में घुसकर भी अपनी तैरने की दक्षता का परिचय देने में नहीं हिचकते।

मूर्खता के प्रतीक इस गधे को अनेक भू-भागों में देखा जा सकता है। मूढ़ मानव की तुलना गधे से ही की जाती है। साहित्यकारों को भी यह पशु प्रिय है। इसके माध्यम से इन्होंने बड़े चुभते हुए व्यंग्य कसे हैं। आज के प्रसिद्ध लेखक श्री कृष्णचन्दर की लिखी हुई 'एक गधे की आत्म कथा' तथा 'गधे की वापिसी' नामक व्यंग्यात्मक पुस्तकों के अध्ययन से गधे की प्रवृत्तियों का भी अच्छा ज्ञान हो सकता है।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कविवर श्री अज्ञेय की निम्नस्थ पंक्तियाँ गर्दभ के विषय में कितनी तथ्यपूर्ण हैं :—

निकटतर धँसती हुई छत,
आड़ में निर्वेद।
मूत्र सिंचित मृत्तिका के वृत्त में।
तीन टाँगों पर खड़ा,
नत ग्रीव धैर्य धन गदहा।

कुछ लोगों की दृष्टि में यह पशु धैर्यवान् निस्पृही, कठोरव्रती एवं साहसी है। रजक-प्रिय यह गधा शीतला माता का वाहन भी है। कोशकारों ने इसके स्वभाव, आकार आदि को ध्यान में रखकर निम्नस्थ पर्यायवाची शब्दों को निर्मित किया है :—

(1) क्रूर (2) खर (3) खोता (4) गदहा (5) गर्दभ (6) ग्राम्याश्व (7) धूसर (०) चक्रीवान (9) चारट (10) चारपुख (11) चीरमेही (12) बालेय (13) भूरिगम (14) मारग (15) राशभ (16) रासभ (17) वेशव (18) वैशाखनंदन (19) शंखकर्ण (20) शीतला वाहन (21) लम्बकर्ण[1]।

गदहे की दुलत्ती से आहत होने वाले कई महीनों तक कराहते रहते हैं इसीलिए भुक्तभोगियों अथवा कहिए अनुभवियों का कथन है कि गधे के पीछे लगना ठीक नहीं है न मालूम यह सीधा-सादा जानवर कब दुलत्ती झाड़ने लगे।

यह पशु बहुत प्राचीन है। भगवान् शंकर की बारात में आने वाले बहुत से गण खरों पर बैठे थे—

मुदित सकल सिवदूत,
भूत गन गाजहिं।
सूकर महिष स्वान,
खर वाहन साजहिं॥
—पार्वती मंगल, पृष्ठ 103

अंग्रेजी के एक प्रसिद्ध लेखक ने इसी गधे को पशुओं में बुलबुल के नाम से सम्बोधित किया है। (Nightingle of the Brutes) उसका कथन है कि इसके मधुरतम स्वर सदैव हृदय से निकलते हैं। इसके स्वरों की मधुरिमा को परखने वालों की न मालूम क्यों इतनी अधिक कमी है।

गर्दभ के सम्बन्ध में कही जाने वाली कुछ कहावतों का यहाँ उल्लेख किया जाता है। जो इस जड़ पशु के वास्तविक परिचय देने में विशेष सहायक हैं :—

1. सन्तोष गधे का विशेष गुण है।
2. जेठ के महीने में गधे को मस्ती चढ़ती है।

---

1. देखिए, पर्यायवाची शब्दकोश—डा० भोलानाथ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3. कूड़े के ढेर पर लेटना गधे को अच्छा लगता है।
4. गधा क्या जाने गुलकंद का स्वाद।
5. गंगा में नहाने पर भी गधा गधा ही रहता है।
6. गधे को अपना रेंकना अधिक सुहाता है।
7. बहुत रेंकने वाला गधा बहुत कम खाता है।
8. ढीठ गधा डंडों की मार से ही ठीक होता है।
9. गधा किसी का मीत नहीं है।
10. मार खाकर भी गधा अपनी चाल नहीं बदलता।
11. पेट भर जाने पर गधा अवश्य रेंकता है।

× × × ×

जंगली गधों में से कुछ तो ऐसे हैं जो सुगमता से पाले जाते हैं, कुछ ऐसे हैं जिन्हें पालतू बनाने में विशेष श्रम करना पड़ता है और कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें पालतू बनाना असंभव-सा है।

उतुँग कुंजर घटा सुख सों अन्हाई,
कीन्हें जहाँ जल बिहार सदैव आई।
हा हन्त ! बाहि सरयू-तट पै घनेरे,
बूढ़े बराह खर आदि घिरे सबेरे।

—आचार्य द्विवेदी

कौआ (काग)

कौआ सबसे परिचित है और सब उसे खूब जानते हैं। शहर एवं ग्राम दोनों में यह काला पक्षी निर्भय होकर उड़ता फिरता है। इसकी भद्दी एवं कर्ण-कटु ध्वनि सबको अप्रिय लगती है, फिर भी श्राद्ध के समय धार्मिक मनुष्य अपने पूर्वजों को सन्तुष्ट करने के लिए इसी पक्षी को प्रेम से बुलाते हैं। सर्व भक्षी होने के कारण कुछ भी इससे नहीं बचता। सदैव इसे सब देखते हैं और घर की दीवालों पर बैठकर यह बच्चों के हाथ से रोटी छीनकर अपना पेट भरता है। पाकशाला में भी यह निर्भय होकर घुस जाता है और मना करने पर भी नहीं मानता। इसके काले पंख चमकीले और आर्षक होते हैं। नर-मादा में रंग की समानता होने से विभेद करना कुछ कठिन है।

पक्षियों में इसे चाण्डाल कहा जाता है। इसकी धूर्तता से तंग आकर ग्राम-निवासियों ने इसे 'महा-धूर्त' कहकर पुकारा है। इस पक्षी की दो जातियाँ देखने को मिलती है, (1) छोटा कौवा और (2) बड़ा कौआ। इसके शरीर की लम्बाई क्रमशः 17 इंच तथा 24 इंच तक होती है। बड़ा काग विशेष रूप से श्याम ही होता है तथा छोटा, काला होने पर भी एक सिलेटी रंग की पट्टी से (ग्रीवा से वक्ष-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

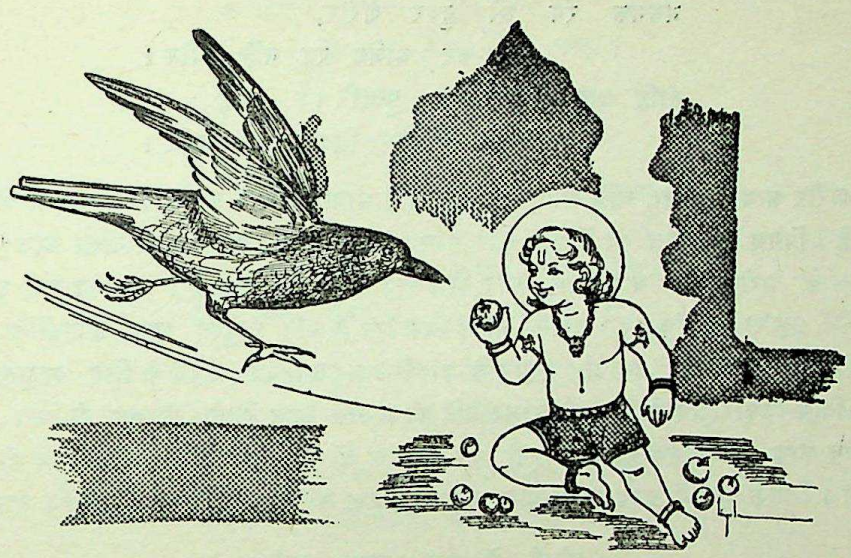

काग के भाग कहा कहिए

स्थल तक) युक्त देखा गया है। कौआ अन्य पक्षियों के अंडों को निर्दयता से फोड़ता और चुराता है। इस तस्कर वृत्ति ने इसे इतना शंकित बना दिया है कि यह अपनी मादा के अंडों को कभी भी अकेला नहीं छोड़ता और रात-दिन अपनी सहचरी के साथ इनकी रक्षा करता है। फिर भी इसे अपने दुष्कृत्य का कुफल भोगना ही पड़ता है।

कोयल अपने अंडों को इसके घोंसले में चतुराई से रख आती है और कतिपय काग अंडों का विध्वंस भी कर देती है। विभेद-पटु न होने से कौआ कोयल के अंडों की रक्षा करता है और उन्हें से कर बच्चों के रूप में परिणत कर देता है। लोक-कवियों ने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र एवं अन्त्यज इस प्रकार काग के पाँच भेद किए हैं—

"तनु अति कारी बड़का तोल,
पैक काक अति ऊंचे बोल।
ताहि काक कें बाभन जान,
कहथि डाक जे आन नहिं मान।
पिंगल आँखि नीलरंग ठोर,
सब देह कारी क्षत्री सोर।
पाण्डु नीलरंग चोंचो देह,
कहथि डाक तो वैश्य कहिलेई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भसमक रंग ओ दुबर शरीर,
कर-कर बाजय रह नहिं धीर।
ताहि डाक कह शूद्र पुकारि।
एहि से आन थिक अन्त्यज धारि।

—शरीर अत्यन्त काला, चोंच लंबी, क़द बड़ा और आवाज़ तेज ये लक्षण जिस काग में दीख पड़े वह ब्राह्मण है। पिंगल नेत्र, नील रंग के होंठ और समस्त शरीर काला, इन लक्षणों वाला काक क्षत्रिय है। जिस काक के शरीर और चोंच पाण्डु और नील वर्ण के हों वह वैश्य है। राख का रंग, क्षीण शरीर कर्कश स्वर, प्रकृत्ति का चंचल इन लक्षणों वाला काक शूद्र है और उपयुक्त चार प्रकारों के अतिरिक्त अन्य सभी काक अन्त्यज हैं। इन पाँच प्रकार के काकों में शकुन-निर्देश करने के लिए ब्राह्मण-वर्ण काक की गति-विधि-विचारणीय है। सामने आकर यदि काक मांस उगल दे तो निश्चय ही धन की प्रप्ति हो। यदि काक के सामने आकर मिट्टी का ढेल रख दो तो भूमि और रत्न रख दे तो राज्य की प्राप्ति हो। जिसके द्वार में काक आया-जाया करे तो समझ लो कि बाहर से कोई अतिथि आयगा।

पाँचों में मुख बाभन जान।
असगुन सगुन त करे मान।
जो माँस बोकरय आगाँ आबि।
कहथि 'डाक' निश्चय धन पावि।
आगाँ लावय माटिक ढेप।
भूमि लाभ हो ताही खेप।
रतन आनि जे राखय अग्र।
कहथि डाक जे राज हो सग्र।
काक द्वार में आवय जाय।
कहथि 'डाक' जे पाहुन लाय।

(लोक-साहित्य में पक्षी वर्णन—श्री राकेश)

लोक-एवं शिष्ट साहित्य में इस कृष्ण वर्ण पक्षी का विशेष रूप से उल्लेख हुआ है।

× × × ×

घूर भरे अति शोभित स्यामजू
तैसी बनी सिर सुंदर चोटी।
खेलत खात फिरैं अंगना,
पग पैंजनी बाजती पीरी कछोटी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बा छबि को रसखानि बिलोकत,
वारत काम कला निज कोटी।
काग के भाग बड़े सजनी,
हरि हाथ सों लै गयो माखन रोटी।

(रसखान)

कागा काको लेत है, कोयल काको देत।
मीठे वचन सुनायके, जग अपनो कर लेत।

दिन दस आदर पायकै, करिलै आपु वखान।
जोलौं काग सराध-पख, तौलौ तो सनमान।

मरत प्यास पिंजरा परो, सुवा दिनन के फेर।
आदर दै दै बोलियत, बायस बलि की बेर।

अरे हंस या नगर में, जैयौ आप विचारि।
कागनि सों जिन प्रीति करि, कोकिल दई बिड़ारि।

(बिहारी)

कौआ कहत मराल सों, कौन जाति को गोत।
तोसों बदरूपी महा, कोउ न जग में होत।
कोउ न जग में होत, कुटिल मैले मलखाने।
ऊपर बैठि अचार सबै, मरजाद नसाने।
कह गिरधर कविराय, कहाँ ते आयो हौआ।
धन्य हमारा देस, जहाँ सज्जन जन कौआ।

(गिरिधर)

तोता—

इस लाल चोंच वाले तथा हरे पंख वाले पक्षी को अपनी मधुर बोली के ही कारण पिंजड़े में बन्दी बनना पड़ता है। मानव-भाषा के अनुकरण में यह बहुत दक्ष माना गया है। श्लोकों एवं हिन्दी-छन्दों को यह कण्ठस्थ करके प्रायः अपने सहृदय संरक्षकों को सुनाया करता है। यह पक्षी अपने साथियों के समूह के साथ उड़ता फिरता है। मधुर फल-प्रिय होने के कारण उद्यानों में इसे सदा देखा जा सकता है। यह तीव्र गति से आकाश में उड़ता है और बड़ी कठिनता से दूसरों के चंगुल में फँसता है। पके गेहूँ, धान एवं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बाजरे की बालों की स्मृति इसे हमेशा सताती रहती है। समय आते ही यह इनकी ओर ललचायी आँखों से देखता है इन्हें अपनी तेज चोंच से काट-काट कर ले जाता है। टुइयाँ तोते की ही एक उपजाति है, जो

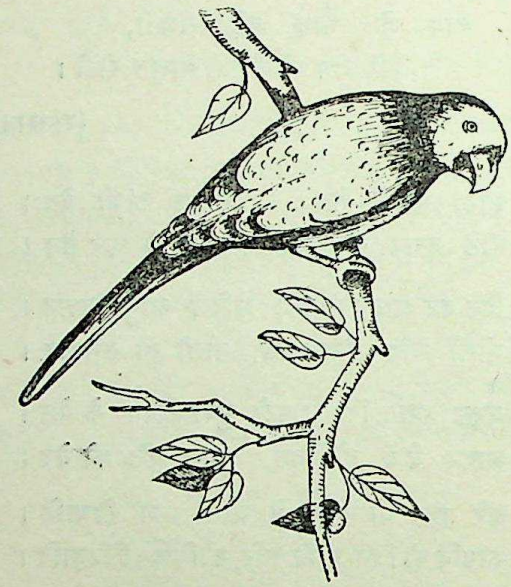

तोता

सामान्य शुक से आकार में छोटी तथा रंग में भी कुछ विभिन्नता लिए रहता है। नर टुइयाँ के सिरका रंग अधपकी जामुन के समान होता है। भारत में हरा तोता और टुइयाँ विशेष संख्या में पाए जाते हैं। पक्षी-विशारदों ने इस खग की अनेक जातियाँ बतलाई हैं। तोते की आँख की पुतली हल्की बादामी रंग की होती है जिसमें कृतघ्नता के चिन्ह दिखाई पड़ते हैं। एक बार पिंजड़े से बाहर हो जाने पर वह अपने उस मित्र की तरफ कभी भी नहीं देखता जिसने वर्षों तक दूध-भात खिलाया है। यह बारहमासी पक्षधर है जो भारत के समस्त भू-भाग में उपलब्ध है। शुक-नारी दो-चार तक सफेद अंडे देती है। गुलाबी और काली कण्ठी शुकी में नहीं होती है। यही स्त्री-पुरुष का विभेद है। सुन्दरी की सलौनी नासिका की तुलना शुक नासिका से की जाती है। पके अनार को तोता ललचाई आँखों से देखता है।

घोखे दाड़िम के सुआ गयो नारियर खान।
खम खाई पाई सजा फिरि लाग्यो पछतान।
फिरि लाग्यो पछतान बुद्धि अपनी को रोवो।
निरगुनियन के पास बैठि गुन अपने खोवो।
कह गिरधर कविराय, कहूँ जैये नहिं ओखे।
तोरयो चोंच खटाक, सुआ दाड़िम के घोखे।

× × × ×

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तोतों से भी धान्य तथा फलों की फसल को बड़ा नुकसान होता है ।

कोयल—

यह कृष्ण-वर्ण का खग अपनी मीठी ध्वनि से सबको आकर्षित कर लेता है । वसन्त-ऋतु का आगमन कोयल की मधुर बोली से जाना जाता है। आम्र के निकुंजों में चहकने वाली कोयल को कौन नहीं जानता? सदैव बोलती हुई कोयल शीतकाल में मौन रहती है । इसकी कू कू की ध्वनि विरहिणियों के मानस को विकल कर देती है । यह भारतीय बारहमासी चिड़िया 17 इंच लम्बी होती है, जिसकी चोंच धूमिल एवं पीलापन लिए हुए हरी होने के कारण सुन्दर लगती है । पिकी का वर्ण भूरा होता है और इसके शरीर पर श्वेत धब्बे भी होते हैं । कभी-कभी पिकी को पपीहा मानकर हम लोग भ्रमित भी हो जाते हैं ।

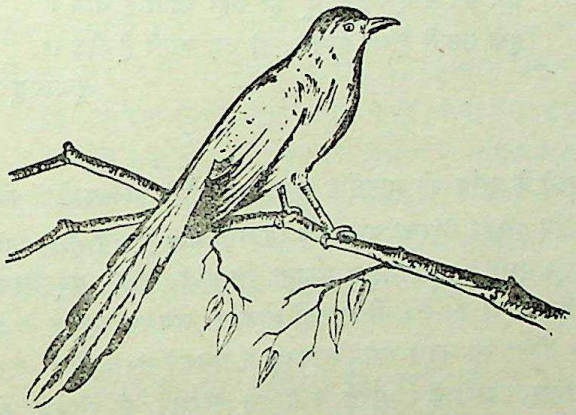

कोयल

मानव-मन को प्रमुदित करने वाली यह कोयल भोली होते हुए भी काग जैसे धूर्त पक्षी को धोखा देती है और स्वयं घोंसला न बनाकर अपने अंडों को काक के घोंसले में रख आती है । कौआ भी उन्हें अपनी सहचरी के ही मानकर नहीं फोड़ता है और काग-पत्नी उन्हें सेने लगती है । ध्वनि को पहचान कर वह अपनी भूल समझती है फिर भी इस भूल को वह शीघ्र ही भूल जाती है । प्रिय भाषिणी सुन्दरी को पिकबैनी कहते हैं ।

कागा काको लेत है, कोयल काको देत ।
मीठे वचन सुनायके, जग अपनो कर लेत ।।

रहीम ने कोयल पर अन्योक्ति घटा कर वाचाल मूर्खों पर कितना अच्छा कटाक्ष किया है ।

पावस देख रहीम कहि भई कोकिला मौन ।
अब दादुर बकता भये, वाको पूंछे कौन ।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ज्यों कोयल सुत काग जिआवत, भाव भगत भोजनहिं खबाय ।
कुहकुहाय आये बसन्त ऋतु, अंत मिलै कुल अपने जाय ।
(सूरदास)

तजि-तजि कुंज-पुंज ऊपर मधुप गुंज,
गुंजरत मंजु रव बोले बाल पिक सी ।
(देव)

भोरहि बोलि कोइलिया बढ़वति ताप ।
घरी एक घटि ऊलवा रह चुपचाप ।।
(रहीम)

सूने घर में एक तो यूं हो कहीं आती है नींद ।
कूक उठती है जो कोयल, तो उड़ जाती है नींद ।।
(आरजू लखनवी)

नीलकंठ—

प्रातःकाल में इस पक्षी के दर्शन को भारतीय शुभ मानते हैं । कीड़े-मकोड़ों को भी खाकर यह पवित्र माना गया है और इसीलिए इसको मारना भारत के निवासी पाप मानते हैं । 'नीलकंठ' के शब्दार्थ पर विचार करने वालों को इस पक्षी का कंठ नीला मानना पड़ता है, लेकिन यह केवल भ्रम है, इसके पंख नीले अवश्य होते हैं, लेकिन ग्रीवा का रंग नीला नहीं होता । लगभग कबूतर के ही समान इसकी ऊँचाई होती है । इसके पंखों का नीला रंग उड़ते समय आकाश में चमकने लगता है । नर-मादा समान रूप-रंग के होने से कठिनता से पहिचाने जाते हैं । भारत के समस्त भूखण्डों में निर्भय होकर उड़ने वाला यह नीलकण्ठ मैदानों में, बिजली के तारों पर एवं उद्यानों में सुगमता से देखा जा सकता है । 'इसके सर के बीच में एक आसमानी चित्री होती है; इसके बाद पीठ तक भूरा रंग चल जाता है फिर हरी और आसमानी हल्की और गहरी नीली लकीरें रहती हैं । डैने और दुम की भी यही हालत है । दुम के बीच के दो पंख गन्दे हरे रंग के होते हैं और सीना ललछौंह कत्थई रंग का होता है जिसमें छोटी-छोटी खड़ी धारियाँ पड़ी रहती हैं । पेट का रंग बादामी और दुम के नीचे फिर आसमानी रंग आ जाता है ।"[1]

नीलकंठ कीड़ा भखै, मुखे विराजे राम ।
जात पाँत से क्या पड़ी, दरसन ही सों काम ।

× × × ×

नीलकंठ के दर्शन होय ।
मन चीता फल पावै सोह ।
(लोकोक्ति)

---

1. हमारी चिड़ियाँ—ले० श्री सुरेशसिंह, पृष्ठ 22

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कबूतर—

निरामिष भोजी होने के कारण यह पक्षी विप्र कहलाता है। यह कौए से कुछ छोटा होता है। घरों, मन्दिरों, मीनारों, प्रासादों एवं उच्च-अट्टालिकाओं में यह खग मधुर बोलता हुआ दिखाई देता है। ये अनेक रंगों के होते हैं। एक समय था जब इन्हें पालकर मानव आपना मनोविनोद किया करता था। आज भी इन्हें पाला जाता है, लेकिन ऐसे पालकों की संख्या बहुत कम है। श्वेत-वर्ण के कबूतर बड़े प्यारे लगते हैं। यह बारहमासी पक्षी हमारे देश में सर्वत्र पाया जाता है। सिलेटी रंग का यह शाकाहारी नभचर घोंसला बनाने की कला से अपरिचित सा है इसीलिए इसकी सहचरी मकानों में, दीवारों पर तथा छिद्रों में अण्डे देकर अपनी प्रसव पीड़ा को भूल जाती है।

समूह में रहकर कबूतर अपना जीवन बिताते हैं और इधर-उधर पड़े हुए दानों को चुगकर अपनी भूख शान्त करते हैं, फिर भी शिकारी इन्हें निर्दय बनकर मारते हैं। गल्ला मण्डियों में कबूतरों के झुण्ड के झुण्ड घूमते रहते हैं और आदमियों से हिलमिल कर उनका ही अन्न भक्षण करते हैं। इस पक्षधर के गले पर चमकीले पंखों की एक सुन्दर कंठी सी सुशोभित होती है, जो अपने रूप में बड़ी आकर्षक लगती है। अपनी सहचरी को प्रसन्न करने के लिए कबूतर प्रायः नृत्य करता हुआ गुट्रगू-गुट्रगू की मधुर ध्वनि से उसे मुग्ध कर लेता है। द्रुतगति वाले होने से ये गुप्तचर विभाग के सन्देश वाहक के रूप में काम करते हैं। इसकी आँख की पुतली नारंगी रंग की होती है। नर-मादा में रूप-रंग की समानता रहती है। हमारे देश के अहिंसावादी शासकों ने एक समय इस पक्षी को अधिक अपनाया था और अपने-अपने राज्य की सीमाओं में कबूतर एवं मयूर का बध बन्द कर दिया था। शान्ति-प्रतीक यह विहंग अपने भोलेपन के लिए प्रसिद्ध है।

पट पाँखे भखु काँकरे, सदा परेई संग।
सुखी परेबा जगत में, एकै तु ही विहंग।
(बिहारी)

लेते गए क्यों न तुम्हें कपोत ! वे,
गाते सदा जो गुण थे तुम्हारे।
लाते तुम्हीं हा ! प्रिय पत्र पोत वे,
दुःखाब्धि में जो बनते सहारे।
(साकेत)

चातक

यह कबूतर के समान ही एक लघुकाय पक्षी है। पावस में इसकी निरन्तर ध्वनि सुनाई पड़ती है। अपनी लम्बी पूंछ के साथ यह इधर-उधर उड़ता फिरता है। पी कहाँ (मेरा प्यारा कहाँ है) पी कहाँ चिल्लाता हुआ यह वियोगिनियों को विह्वल करता है। इसकी पुकार मानस को विकल कर देती है इसीलिए इसे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

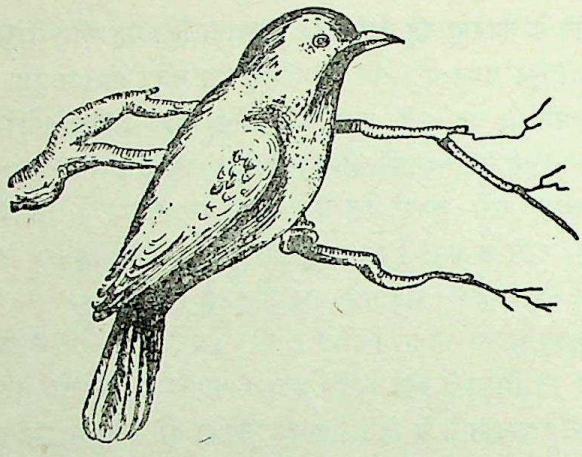

चातक

मस्तिष्क ज्वर के नाम से भी पुकारा जाता जाता है। इसके शरीर की लम्बाई 15-16 इंच होती है। नर-मादा समान रूप-रंग के होने से सामान्य मानव की दृष्टि से नहीं पहिचाने जा सकते। यह कोमल काय कीटों, पतंगों एवं कतिपय जंगली फलों को खाकर अपनी भूख मिटाता है। अधिक ऊँचा न उड़कर भी यह अपनी खेचर-वृत्ति को शान्त कर लेता है। इस के पंखों का रंग सिलेटी भूरा (Ashy grey) होता है। इसकी सतत ध्वनि (पी कहाँ, पी कहा,) श्रोता के मस्तिष्क को क्षुब्ध कर देती है, इसलिए अंग्रेजी में इसे मस्तिष्क ज्वर-पक्षी कहते हैं। इसकी पूंछ में दो-चार श्याम-श्वेत धारियाँ रहती हैं। कोयल की भाँति चातक-सहचरी भी अपने अंडों का पालन-पोषण चारावी नामक पक्षी से करवाती है। इसके अंडे नीले होते हैं।

जिअत न नाई नारि, चातक घन तजि दूसरहि।
सुर सरि हू को बारि, मरत न माँगेहु अरघजल।
तुलसी चातक देत, सिख सुतहि बारहीं बार।
तात न तर्पन कीजिए, बिना वारिधर-धार।
(गो० तुलसीदास)

सारस

यह खग जलाशयों एवं खेतों के समीप रहता है। सारस गृद्ध से कुछ अधिक बड़ा पक्षी है। खड़ा होने पर यह मानव की ऊँचाई की समानता करता है। इसकी लाल रंग की लम्बी टाँगें तथा रक्तवर्ण इसकी ग्रीवा एवं मस्तक सबको इस जलाशय-जीवी का परिचय देते हैं। नर-मादा की समान-आकृति

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

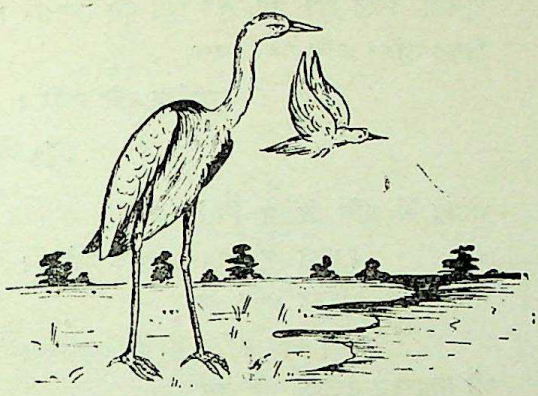

सारस

तथा रूप-रंग होता है। सदैव अपनी सहचरी के साथ रहने वाला यह रसिक पक्षी अपनी प्रियतमा के वियोग को नहीं सह सकता। जोड़े में एक का अभाव दूसरे की मृत्यु का कारण बन जाता है। मादा के मर जाने पर नर और नर की मृत्यु होने पर मादा कुछ समय तक क्रन्दन करके अपने जीवन को समाप्त कर देती है। इतना सच्चा-प्रेम मानव समाज में भी नहीं है। धरातल से ऊपर उठने में इसे प्रथम तो कष्ट होता है लेकिन एक बार उड़ जाने पर यह आकाश में अच्छी उड़ान ले लेता है। पृथ्वी से विशेष मोह के कारण यह नभ में अधिक समय तक नहीं रहता। इसकी आवाज कर्कश होती है। अपनी सहचरी को प्रसन्न करने के लिए सारस नाचता भी है। अंकुरों, कीड़ों एवं जल जीवों को खाकर यह पक्षी अपना जीवन बिताता है।

सारस की जोरी सदा, रहत एक ही साथ।
दूर एक सें होत जब, रोवत ठोकत माथ।

हंस—

ज्ञानवान समीक्षक के रूप में यह पक्षी साहित्य में सदैव समादृत हुआ है। इसका श्वेत वर्ण, श्वेत सिर, गम्भीर गति एवं मिष्ठ ध्वनि सबको प्रिय लगती है। सरिताओं, सरोवरों एवं झीलों के समीप यह पक्षी रहता है और शीतकाल में ही भारतीय प्रदेशों में आकर कुछ काल व्यतीत कर वापिस लौट जाता है। जल की लहरों के साथ तैरते हुए हंस बड़े ही सुहावने लगते हैं। कवि प्रसिद्धि के अनुसार मराल मोती चुगते हैं और मानसरोवर में ही निवास करते हैं। कमल-नाल-तन्तु इसे अधिक प्रिय हैं। यह समूह वासी जलचर खग है जो अपने सैकड़ों साथियों के साथ रहता है। सूर्यास्त के समय यह खेचर संगीतात्मक ध्वनि करता हुआ उड़ता है और अपने निवासस्थल की ओर आतुर होकर भगता है। हँसिनी तीन-चार श्वेत अंडे देती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'तुलसी' तोरत तीर तरु, बक हित हंस बिडारि।
बिगत नलिन अलि मलिन जल,
सुरसरिहू बढ़ि आरि।
(तु० दोहावली)

घोंघन में बसि के न मिलै,
रस जे मुकतान पै चोंच चलैया।
मालती की लतिका तजि कै,
केहि काम करील की कोटि कनैया।
श्री महाराज सरोवर हौ हम,
हंस हमेस यहाँ के बसैया।
कोटिन काल कराल परै पै,
मराल न ताकि हैं तुच्छ तलैया।
(अज्ञात)

हंस-क्षीर न्याय प्रसिद्ध है। कहते हैं कि यदि हंस के सामने पानी मिला दूध रख दिया जावे तो विवेकी हंस दूध पी लेता है और पानी छोड़ देता है। वास्तव में यह केवल कवि कल्पना है।

जड़ चेतन गुन दोसमय विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि बारि बिकार।
(गो० तुलसीदास)

बगुला—

किसी भी जलाशय में आप इस श्वेत पंख वाले पक्षी को मछली पकड़ने की ताक में एक पर पर खड़ा हुआ देख सकते हैं। इसके लम्बे पैरों और लम्बी गर्दन को देखकर सब इसे पहचान लेते हैं। इसके नर और मादा समान होते हैं। जल पर धीरे-धीरे चलते हुए अथवा जलाशय के ही समीप किसी पेड़ पर मौन बैठे हुए बगुला को देखकर सब उसे भक्त मान लेते हैं, लेकिन उसे धार्मिक मानना अथवा उसके ध्यान को ईश्वर-चिन्तन समझना उचित नहीं है। उसका यह सब काम केवल मछली पकड़ने के ही लिए होता है। इसीलिए ढोंगी साधु को "बगुला भगत" कहा जाता है। इस पक्षी की छः जातियाँ होती हैं। तीन का रंग सिलेटी होता है और तीन का सफेद। ऑजन बगुला, वाक् बगुला, छोटी बगुली, मलंग बगुला, करंघिया बगला एवं गाय बगला (देखिए हमारी चिड़ियाँ, पृष्ठ 136)। भगवान राम ने भी पंपासर के समीप खड़े होकर एक बगुले के प्रति कहा था—

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

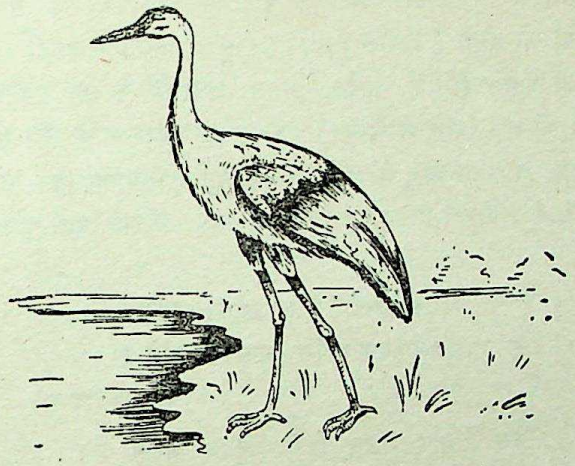

बगुला

"पश्य, लक्ष्मण ! पंपायां, बको परम धार्मिकः।
शनैः शनैः पदं धत्ते, जीवानां बध शंकया।"

—लक्ष्मण ! देखो पंपा तालाब में यह बगुला महान् धार्मिक है। जीवों के वध के डर से वह धीरे-धीरे पैर रखता है।

यह पक्षी 20-22 इंच से अधिक ऊँचा नहीं होता। इन छः प्रकार के बगुलों के पैर, चोंच, पंख आदि के रंग में सामान्यतः विभिन्नता पाई जाती है।

चरन चोंच लोचन रंगौ, चलौ मराली चाल।
छीर नीर बिवरन समय, बक उघरत तेहि काल।
(गोस्वामी तुलसीदास)

सूखती तलैया के चारों ओर चिपकी हुई,
लाल काइयों की भूमि पार करते।
गहरे पड़े गोपद के चिन्हों से अंकित जो,
श्वेत बक जहाँ हरी दूब में विचरते।
(काव्यांग कौमुदी)

खंजन—

कवियों को यह छोटा-सा पक्षी बहुत प्रिय है। इसकी चंचलता प्रसिद्ध है। खंजन के शरीर का आकार भी इतना सुन्दर होता है कि काव्यकार सुन्दरी के नेत्रों की तुलना इससे करते हैं। शरद ऋतु के आगमन पर यह पक्षी इधर-उधर फुदकता हुआ दिखाई देने लगता है। श्री सुरेशसिंह ने इसकी मुख्य चार जातियाँ बताई हैं—सफेद, चित कबरी, भूरी और पीली। सर्वदा रंग-परिवर्तित होने के कारण इस खग का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कोई निश्चित रंग नहीं बताया जा सकता। शीतकाल में खंजन अपने पंखों को भी बदलता हुआ देखा गया है। इसकी पूँछ कृष्ण वर्ण की होती है जिसके किनारे पर कुछ श्वेतता झलकती रहती है।

जल-कीटों का विशेष भक्षक होने के कारण खंजन जलाशयों के तट पर भ्रमण करता रहता है। इसके अण्डे बादामी रंग की लघु बिन्दियों से युक्त होने से बड़े सुन्दर लगते हैं। यह पक्षी 4000 मील की दूरी पार कर कामश्चाटका से शरत ऋतु में (जब वहाँ की भूमि हिमाच्छादित हो जाती है) भोजन की खोज में भारत वर्ष आता है। गोस्वामी तुलसीदास की यह चौपाई इसी पक्षि-प्रवजन के आधार पर लिखी गई है :—

जानि सरद रितु खंजन आये।
पाय समय जिमि सुकृत सुहाये।
(गो० तुलीदास)

रस सिंगार मंजन किये, कंजन भंजन दैव।
अंजन रंजन हू बिना, खंजन गंजन नैन।
(बिहारी सतसई)

हारिल—

यह एक कबूतर की जाति का पक्षी है, जिसका शरीर कुछ पीलापन, हरापन एवं भूरापन लिए हुए होता है। नर-मादा समान आकृति और रूप-रंग के होते हैं। इसके पैर पीले और पुष्ट होते हैं।

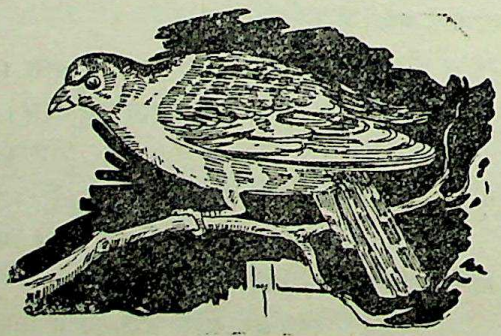

हारिल

स्वजातीय पक्षियों के समूह में रहकर यह पक्षी पीपल तथा वट के पके फलों को बड़े स्वाद से खाता है। भारतवर्ष में यह खग सर्वत्र उपलब्ध है। फलदार शाखाओं एवं टहनियों से यह हारिल चिपक जाता है और सहसा उसे पहचानना कठिन हो जाता है। अंकुर, कली, पके फल आदि इसके भक्ष्य हैं। एक साथ तीव्र शब्द करते हुए ये इधर-उधर भागते रहते हैं। अंडो के पालन-पोषण में नर-मादा—दोनों सतर्क रहते हैं। हारिल एक भोला एवं सुन्दर पक्षी है। महात्मा सूरदास जी ने कहा है कि जिस प्रकार हारिल सदैव

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लकड़ी को अपने पंजों में दबाए रखता है, उसी प्रकार सच्चे भक्त को भी भगवान कृष्ण का सदैव अवलम्बन लिए रहना चाहिए ।

हारिल की सीटी बड़ी ही श्रुति-मधुर होती है । कीट-भक्षक पक्षी होने से यह पक्षी कृषि-रक्षक माना गया है । माँस-भक्षियों के मतानुसार इसका माँस स्वादिष्ट होता है ।

हमारे हरि हारिल की लकरी ।
मन वच क्रम नंद नंदन सों उर यह दृढ़करि पकरी ।
जागत सोवत, सपने सौंतुख, कान्ह कान्ह जकरी ।
सुनतहि जोग लगत ऐसो अलि; ज्यों करुई ककरी ।
सोई ब्याधि हमैं लै आए, देखी सुनी न करी ।
यह तौ सूर तिन्हैं लै दीजै, जिनके मन चकरी ।
(भ्रमरगीत-सार, पृष्ठ 23)

मैना—

यह एक सर्व भक्षी भारतीय पक्षी है, जिसे सर्वत्र देखा जा सकता है । ग्रामों में, शहरों में, खेतों में, वृक्षों पर, उद्यानों में एवं निकुंजों में इस छोटे पक्षधर की मधुर चहक सुनी जा सकती है । इसकी ऊँचाई 9 इंच होती है । कीड़े-मकोड़ों से अपना पेट-भर कर भी यह मधुर स्वर अलापती है । कृष्ण-वर्ण होकर भी यह रसिकों को प्रिय है । आज भी भावुक मानव इस पक्षी को बड़े प्रेम से पालते हैं । प्राचीन काल में मैना (सारिका) राजप्रासादों में रहकर काम सूत्रों का मधुर ध्वनि से पाठ करती थी । सुनते हैं कि शुक की अपेक्षा मानव-वाणी का अनुकरण सारिका शीघ्रता तथा पूर्णता से कर लेती है । समूह में रहना इसे अधिक प्रिय है । सूर्योदय होते ही यह खग अपनी सहचरी के साथ सूर्यास्त तक इधर-उधर फिरता रहता है ।

पीपल और वट के पके हुए फलों को पाकर मैना प्रसन्नता से झूम उठती है। इसकी पूँछ का कुछ भाग श्वेत रहता है और पीले पैर आकर्षक प्रतीत होते हैं । चक्षुओं के समीप पीलापन स्पष्ट दिखाई देता है । इसकी पीत चञ्चु बड़ी सुहावनी लगती है, नर-मादा की आकृति एवं वर्ण समान होते हैं । यह खेचर शुक के साथ भी रहकर अपना समय व्यतीत करता है । मैना की ध्वनि कुछ तीव्र होती है । रेडियो, रेडियो, अथवा कीक कीक, कोक-कोक, चर-चर की ध्वनि इस पक्षी के मुख से प्रायः निकलती रहती है । खेतों में चलते हुए हलों के पीछे, अथवा बैलों के खुरों के पास शीघ्रता से जा-जा कर यह खग टिड्डों को पकड़ता है ।

काव्यकारों ने इस लघुकाय पक्षी को अपनी प्रेयसी अथवा प्रियतमा के प्रतीक के रूप में चित्रित किया है । देसी मैना (गलगल), गंगा मैना अवलखा मैना—तथा पवई मैना इस प्रकार मैना की चार जातियाँ है, जिन में रूप-रंग का सामान्य भेद रहता ही है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रज की कुमारिका वै लीने सुक-सारिका,
पढ़ावै कोक कारिकान केसब सबै निबाहि।
गोरी-गोरी भोरी-भोरी, थोरी-थोरी वैस फिर,
देवता सी दौरि-दौरि आई चोरा-चोरी चाहि।
बिन गुन, तेरी आन भृकुटी कमान तानि,
कुटिल कटाच्छ-बान, यह अचरज आहि।
एते मान दीठ ईठ मेरे को अदीठ मन,
पीठ दै दै मारती, पै चुकती न कोऊ ताहि।

(कवि प्रिया)

आठ पहर मेरे ढिग रहे।
मीठी प्यारी बातें कहे।
स्याम वरन औ राते नैना।
ऐ सखि साजन ? ना सखि मैना।

(अमीर खुसरो)

भारत में इसकी कई जातियाँ पाई जाती हैं। जिनमें बस्तर की काली मैना सबसे अधिक प्रसिद्ध है। सामान्य मैना को लोकभाषा में गलगल भी कहते हैं।

चकोर—

प्रेम तो ऐसा चाहिए जैसे चन्द-चकोर।
धींच टूट भुइँ माँ गिरै, चिनवै वाही ओर।

(अज्ञात)

यह तीतर की ही एक जाति विशेष है, इस की लम्बाई लगभग 15 इंच होती है। चकोर की आँख की पुतली भूरी पीली अथवा नारंगी के रंग के समान देखी जाती है। इसकी चोंच तथा पैर लाल एवं पंजे भूरे होते हैं। नर-मादा आकृति एवं रंगादि में समान होते हैं लेकिन पुरुष के पिछले पंजे के ऊपर एक लघु काँटा रहता है। इस पक्षी के शरीर का ऊपरी भाग भूरा और अधोभाग हलका बादामी होता है तथा इसकी पूंछ भूरे सिलेटी रंग की होती है।

चकोर का सीना सिलेटी रंग का होता है लेकिन इस रंग में निश्चित भूरापन भी रहता है। भारत के उत्तरी-पश्चिमी पहाड़ी भाग एवं खुले मैदानों में यह पक्षी आनन्दपूर्वक भ्रमण करता रहता है। हिमालय

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की घाटियों में भी इसे देखा गया है। सीमा प्रान्त के पथरीले भागों में चकोर को देखकर प्रायः कहा जाता है कि यह कंकड़ खाता है। इसकी 'चक-चकोर' की ध्वनि कर्कश एवं तीव्र होती है। कतिपय मनुष्य इसे पालकर मनोविनोद करते हैं। अन्न, बीजांकुर, हरी पत्तियाँ जड़ एवं कीट आदि इसके प्रिय भोज्य हैं। स्त्री चकोर आठ-बारह तक अंडे देती है। प्रसवकाल अप्रैल से अगस्त तक माना गया है।

है चन्द्र हृदय में बैठा, उस शीतल किरण सहारे।
सौंदर्य सुधा बलिहारी चुगता चकोर अंगारे।
प्रसाद (आँसू)

क्षेमकरी—

क्षेमकरी चील नामक पक्षी की ही एक जाति है। इसे खेमकरी, चिल्होर, खैरी चील, शंकर चील, धोबिया चील, और शाह मुबारक आदि अनेक नामों से पुकारते हैं। कई स्थानों में इसे गरुड़ कहते हैं।

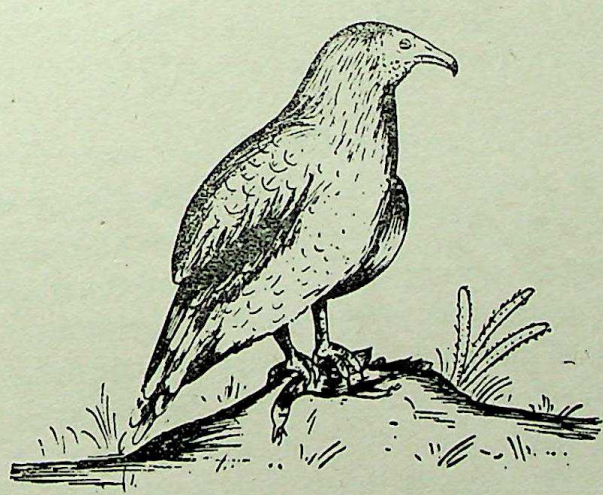

क्षेमकरी

यह भारतीय बारहमासी पक्षधर है। इसका भोज्य मेंढ़क और मछली है अतः जलाशयों के समीप क्षेमकरी को सुगमता से देखा जा सकता है। स्त्री-पुरुष की आकृति में समानता रहती है। इसका सर, गर्दन, सीना तो सफेद रहता है पर बाकी सारा बदन खैरा होता है। इसके डैने का कुछ हिस्सा काला और दुम का सिरा सफेद रहता है। इसकी आँख की पुतली भूरी, चोंच पीलापन लिए सींग के रंग की और पैर हरापन लिए पीले होते हैं। इसकी चोंच शिकारी चिड़ियों की तरह टेढ़ी रहती है।[1]

1. हमारी चिड़ियाँ, पृष्ठ 71

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यात्रा के समय गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी इसके दर्शन को मंगलकारी बताया है।[1] भारतीय लोक विश्वास के अनुसार चील को भोजन कराना पुण्य दायक है।

चील

एक मोटी डाल पर है
एक भारी चील बैठी।
एक छोटी चिड़ी पंजों से दबाए,
जो कि रह रह पंख,
घबराहट भरी असमर्थता से
फड़फड़ाती,
छुट न पाती।

चील कटिया सी नुकीली चोंच से,
है बार-बार प्रहार करती,
नोच कर पर डाल से नीची गिराती
मास खाती
मोड़ गर्दन,
इस तरफ को उस तरफ को
देख लेती। (बच्चन)

---

1. कुंकुम रंग सुअंग जितो,
मुख चंद सों चंद सो होड़ परी है।
बोलत बोल समृद्धि चुवै,
अवलोकत सोच विषाद हरी है।
गौरी कि गंग विहंगिनि वेष,
कि मंजुल मूरति मोद भरी है।
पेखि सप्रेम पयान समै,
सब सोच-विमोचन छेमकरी है।
(कवितावली-उत्तरकाण्ड)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चकवा—

बत्तख की एक विशेष जाति को ही चकवा या चक्रवाक कहते हैं। इसका चमकता हुआ सुनहरी अथवा नारंगी-रंग बड़ा ही सुन्दर लगता है। पीत (बादामी रंग) सिर एवं ग्रीवा वाला यह पक्षी सरिताओं के बालुका-पूर्ण तटों पर युगल रूप में क्रीड़ा करता हुआ सुगमता से देखा जा सकता है। इसकी आँख की पुतली गहरी-भूरी और चञ्चु श्याम होती है। चकवे के गले में श्यामकण्ठी रहती है। चकवी का रंग कुछ हल्का होता है। इसका मस्तक एवं ग्रीवा कुछ अधिक श्वेत रहती है। चकवी का गला कृष्ण-कण्ठी से रहित होता है। इसकी आकृति चकवा के ही तुल्य है। यह पक्षी हंस से आकार में बहुत छोटा होता है, लेकिन बत्तख के समान इसकी चञ्चु (चोंच) फैली हुई होती है।

चकवा की पीठ का पृष्ठ भाग एवं पूंछ कृष्ण होती है। डैने का अग्रिम भाग सफेदी लिए हुए काला देखा गया है। इसका उदर भाग अखरोट के (रंग-सा) होता है जिस पर श्वेत धाराएँ भी होती हैं। दक्षिण रूस में उत्पन्न होने वाला यह मनोहर पक्षी लम्बी यात्राएँ करता हुआ पृथ्वी के अनेक भागों में भ्रमण किया करता है। शीतकाल में यह अफ्रीका, भारत, लंका एवं बर्मा के कुछ भागों में आकर अपनी मनोहरता से दर्शकों को विमुग्ध कर देता है। इस विहंग का मनमोहक श्वेत रंग सामान्य बत्तखों से अपनी विभिन्नता सिद्ध करता है।

भारत में इस पक्षी को 'ब्राह्मणी बत्तख' के नाम से सम्बोधित करते हैं। यह स्वच्छता प्रिय विहग है अतः निर्मल जल की तरंगें ही इसे विमोहित कर सकती हैं। मस्तक को उन्नत करके जब यह जल में तैरता है तब बहुत ही सुन्दर प्रतीत होता है। बालुका पर यह खेचर अपनी प्रेयसी के साथ आन्तरिक आनन्द का अनुभव करता हुआ शनैः-शनः चलता है। दिवस में चकवा-चकवी एकान्त स्थल में बैठकर विश्राम करते हैं और रात में उदर-पूर्ति के लिए विलग होकर इधर-उधर फिरने लगते हैं। इस पृथक् हो जाने की प्रवृत्ति के आधार एक दन्त कथा प्रचलित है जिसमें कहा जाता है कि ब्राह्मणी बत्तखों के युगल में अपराधी एवं शापित प्रेमी-प्रेमिकाओं की आत्माएँ निवास करती हैं, जो आपस में एक-दूसरे को देखती हुई भी नहीं मिल सकती हैं।

उनका विछोह बहती हुई नदी ही कर देती है। चकवा सरिता के इस तट पर रहता है और चकवी दूसरे किनारे पर रहकर अपनी विरह कथा को व्यक्त करती रहती है। इन पक्षियों की मधुर वाणी में भी दन्त-कथा के प्रणेता ने विरहानुभूति का अनुभव किया है। चकवी कहती है—चकवा क्या मैं आऊँ? शापित चकवा विकल मन से कह उठता है—चकवी न।

सरिताओं की अप्राप्ति में चकवा विशाल झीलों का आश्रय लेता है।

प्रसव काल मई-जून है। चकवी 6-10 चिकने एवं हल्के सफेद अण्डे देती है।

बुलबुल—

बुलबुल का मधुर राग भावुक हृदय को बरबस आकर्षित कर लेता है। उर्दू काव्य तो इस छोटी चिड़िया की मधुर वाणी से जीवित हो गया है। मैना से कुछ छोटी यह बुलबुल अपना महत्त्व स्वयं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्थापित कर चुका है। वनों, उपवनों एवं सुरभित वाटिकाओं में इस पक्षी की चहक सब कोई सुन सकता है। नर-मादा समान रूप के होते हैं और कभी अकेले तो कभी साथ-साथ विहार करते हैं। इसकी पूंछ का सिरा सफेद और नीचे का भाग रक्त के समान लाल होता है। सिर पर छोटी-सी काली कलगी बड़ी सुहावनी लगती है। लाल-गाल बुलबुल के कपोलों पर कुछ लालिमा रहती है। रसिक लोग इसे पालकर अपने दिल के अरमानों को जगाते रहते हैं।

यह पक्षी समूह में रहकर फल-फूलों को खाता है और मधुर वाणी को सुनाकर सुरभित कुञ्ज को वाचाल कर देता है। लाल पूंछ बुलबुल, सित कपोली बुलबुल लाल गाल बुलबुल, एवं सफेद भौंह बुलबुल इस प्रकार इस सुन्दर पक्षी की कई जातियाँ हैं। नामानुसार प्रत्येक जाति में कुछ न कुछ विशेषता रहती ही है।

उर्दू शायरों ने बुलबुल पर बहुत कुछ लिखा है। कतिपय अन्योक्तियाँ भावपूर्ण हैं—

फट पड़ा एक आस्माँ बुलबुल के दिल पर रात को।
रख दिया फूलों पै मुँह शबनम ने जिस दम प्यार से।
(साकिब लखनवी)

चमन सयाद ने सींचा, यहाँ तक खूने बुलबुल से।
कि आखिर रंग बनकर फूट निकला आरिजे गुल से।
(अज्ञात)

कभी अपना भी नज्जारा[1], किया है तूने ऐ बुलबुल।
कि लैला की तरह तू खुद भी है, महमिल[2]-नशीनों में।
(इकबाल)

जैसा मौसम हो मुताबिक उसके मैं दीवाना हूँ।
मार्च में बुलबुल हूँ और जौलाई में परवाना हूँ।
(अकबर)

जब ज़मज़मा[3] करती है सदा चुभती है दिल में।
बुलबुल से कोई सीख ले, अन्दाज़[4] सखुन[5] के।
(मीर)

बुलबुल ही को मालूम है अन्दाज़ चमन[6] के।
क्या आलमे-गुलशन[7] की खबर जागो[8]-जगन को।
(आगाह)

किसी का रंज देखूं यह नहीं होगा मेरे दिल से।
नज़र सैयाद[9] की झपके तो कुछ कह दूं अनादिल[10] से।
(अज्ञात)

---

1. दर्शन 2. बैठनेवालों 3. संगीत 4. ढंग 5. कथन 6. बाग 7. संसारोद्यान 8. काग और चील 9. शिकारी 10. बुलबुल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मयूर

मयूर अपने नृत्य के कारण अधिक प्रसिद्ध है। पावस में काले जलधरों को देखकर यह पक्षी 'मे आओ' 'मे आओ' की टर लगाने लगता है संस्कृत में इस ध्वनी को 'केका' तथा मराठी में 'टाहो' कहते हैं। इसका चमकती हुई लम्बी पूंछ बड़ी आकर्षक होती है। पेड़ पर बैठकर मयूर अपने सुन्दर रूप से सबको मुग्ध कर लेता है। जंगलों में रहकर भी यह मनोहर पक्षी अपनी सुन्दरता नगरों एवं ग्रामों के समीप आकर मानव-समाज को दिखा जाता है। इसके मस्तक पर सुशोभित कलगी मनोहारिणी होती है। यह पक्षी पालतू हो जाने पर मनुष्यों के समीप रहता है और ऊँचे प्रासादों की भित्ति पर बैठकर कभी नाचता और कभी बोलता है। पंखों के भार से यह अधिक ऊँचा नहीं उड़ सकता।

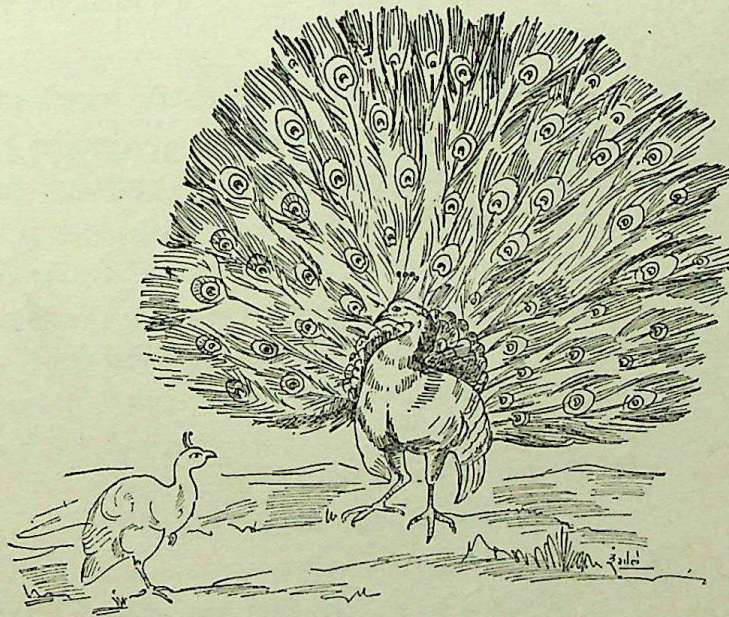

मयूर

क्षुपवन ही इसका प्रकृतावास है। ग्वालियर राज्य में सरस्वती का वाहन होने के कारण मयूर पूज्य माना जाता है और इसको मारना सर्वथा वर्जित है। इस आज्ञा के उल्लंघक को 6 मास तक की सजा (कारावास) दी जा सकती है। इसीलिए मोर ग्वालियर राज्य के प्रत्येक गाँव में स्वच्छंदता से विचरते देखे जा सकते हैं।

हृदयँ कपट बरवेषधरि, वचन कहहिं गढ़ि छोलि।
अब के लोग मयूर ज्यों, क्यों मिलिए मन खोलि।

(दोहावली)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दीरघ दरीन बसैं केसोदास, केसरी ज्यों,
केसरी के देखे बन करी ज्यों कँपत हैं।
बासर की सम्पदा चकोर ज्यों न चितवत,
चकवा ज्यों चन्द्र चितै चौगुनो चँपत हैं।
केका सुनि ब्याल ज्यों बिलात जात घनस्याम,
घननि को घोरनि जवासों ज्यों तपत हैं।
भौंर ज्यों भँवत बन जोगी ज्यों जगत निसि,
चातक ज्यों राम नाम तेरोई जपत है।

(रसिक प्रिया—केशवदास)

गरुड़

सर्पों का स्वाभाविक शत्रु गरुड़ मृगया-प्रिय पक्षी है। जिसकी द्रुत-गति, चमकती आँखें, तेज पंजों एवं झुकी हुई चञ्चु भयावह लगती है। यह चील (Pariah kite) से कुछ बड़ा होता है। इसके सिर के पृष्ठ भाग पर खड़ी हुई श्याम-श्वेत कलगी इसकी गरुता को बढ़ाती है। इसका बाह्य रंग अधिक भूरा (dark brown) होता है। चोंच कुछ हलकी श्यामता लिए हुए प्रतीत होती है। इसके पैर पीले होते हैं। सीने का अधोभाग श्वेत धब्बों से युक्त रहता है। गगन में तीव्र गति से उड़ता हुआ यह पक्षी एक कर्कश एवं तेज ध्वनि करता है। मेंढक छिपकली, चूहा, एवं सर्प इसके प्रिय भक्ष्य हैं। कभी-कभी यह छोटे पक्षियों को भी मारकर खा जाता है। नर-मादा की आकृति एवं रंग समान होता है।

जलाशयों से परिपूर्ण देश एवं कानन इस पक्षी को विशेष अमोद-प्रद हैं।

× × ×

गरुड़ को दावा जैसे नाग के समूह पर
दावा नाग जूह पर सिंह सिर ताज को।
दावा पुरुहूत को पहारन के कूल पर,
पच्छिन के गन पर दावा जिमि बाज को।
'भूषन' अखंड नवखंड महिमंडल में,
तम पर दावा रवि किरन समाज को।
पूरब पछाँह देस उत्तर ते दच्छिन लौं।
जहाँ बादसाही तहाँ दावा सिवराज को।

बाज़

यह एक निर्दय पक्षी होता है, जिसके पंजे कठोर और चोंच तेज एवं कुछ झुकी हुई होती है। यह पक्षियों को मारकर अपना पेट भरता है, अतः कतिपय छोटे एवं बड़े पक्षी इससे दूर रहने का ही प्रयत्न

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

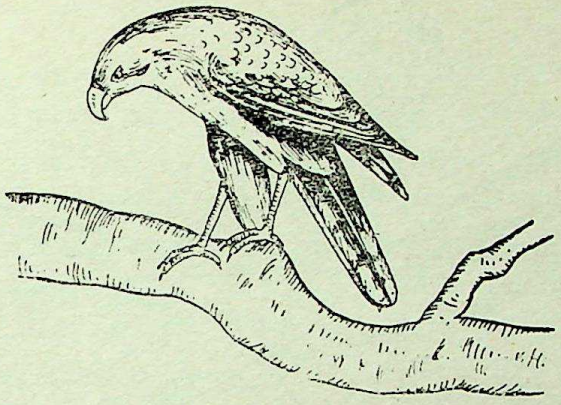

बाज

करते हैं। शिकारी पक्षी होने के कारण बाज़ को क्रूर कहा गया है। यह प्रायः ऊँचे स्थान पर बैठता है और शीघ्रता से उड़ता हुआ एक तेज़ झपट के साथ भक्ष्य पक्षियों को अपने पंजों में दबा लेता है। हिमालय-प्रदेश में यह सुगमता से देखा जा सकता है। इसके शरीर का ऊपरी भाग भूरा होता है और निचला किञ्चित् श्याम तथा सफेद। जंगलों में रहना ही इसे अच्छा लगता है। प्राचीन काल में यह पक्षी शिकारियों द्वारा पाला जाता था और छोटे पक्षियों का इसके माध्यम से शिकार होता था। अपने पालक के संकेत पर बाज़ तीव्र गति से उड़कर लघुकाय खगों को पकड़ लेता था और मालिक उससे छुड़ाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करता था। अपने परिश्रम के उपलक्ष्य में यह पक्षी मांस मिश्रित कुछ हड्डियाँ ही पाता था। इसी पर महाकवि बिहारी ने कहा है :—

स्वारथ सुकृत न श्रम वृथा,
देखु विहंग बिचारि।
बाज पराये पानि परि,
तू पंछीहि न मारि॥

× × × ×

काम न काहू आवई, मोल रहीम न लेइ।
बाजू टूटे बाज को, साहब चारा देइ॥
(रहीम)

उल्लू

सूर्य सबका आनन्द-दाता है, लेकिन कुछ मानव और पक्षी ऐसे हैं जिन्हें दिनकर की किरणें अप्रिय लगती हैं। उल्लू भी एक ऐसा खग है जो दिनेश के भव्य प्रकाश को देखकर अपनी आँखें मूँद लेता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

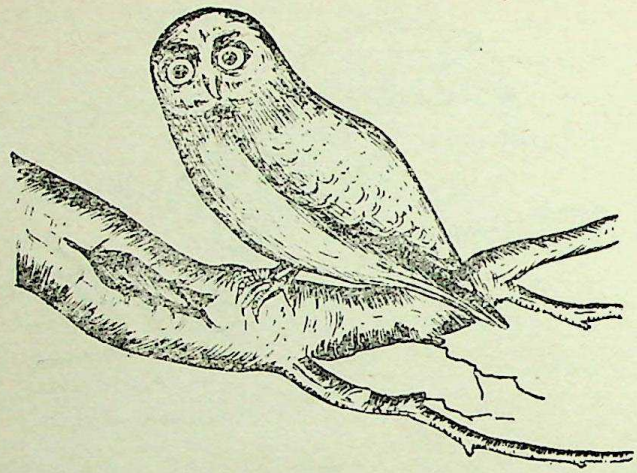

उल्लू

उलूक को देखना कोई भी पसन्द नहीं करता, इसीलिए मानो यह दिन में छिपा रहता है और रात में इधर-उधर घूम कर अपना पेट भरता है। किसी के शुभ कार्य में स्वयं को अपशकुन न बनाकर विश्व-कल्याण की भावना को अपनाना यदि उलूक की प्रवृत्ति मान ली जाय तो कुछ बुरा नहीं है। उल्लू की सबने निन्दा की है लेकिन महालक्ष्मी ने इसे अपनी वाहन के रूप में स्वीकार करके इसके महत्त्व को अवश्य समझा है। कुछ देशों में उलूक को भविष्य वक्ता के रूप में पूजा भी जाता है। रात में जब सब पक्षी विश्राम करते हैं, तब यह निराला खेचर अपनी जीवन-यात्रा की गति को शनैः शनैः बढ़ाता है। उल्लू सर्वत्र पाया जाता है। ऐसा कोई देश नहीं है, जहाँ उलूक न पाया जाता हो। इसके चक्षु मानव की तरह आनन के मध्य में होते हैं। उड़ते समय यह इतना शान्त रहता है कि इसकी गति का परिज्ञान भी नहीं हो पाता। इसकी आकृति अजीब होती है। यह बारहमासी पक्षी है, जिसका क़द 22 इंच से अधिक नहीं होता। स्त्री-पुरुष की आकृति एवं वर्ण समान होते हैं। घुघ्घू उलूक की ही एक जाति विशेष है, जिसके शरीर के आकार-रंग में कुछ अन्तर रहता है। उल्लू को उजड़े हुए घर तथा जीर्ण आवास ही विशेष प्रिय हैं। इसका गोल चेहरा, बानर के समान मुखाकृति, टेढ़ी चोंच, चमकीली पीली आँख की पुतली, भूरी (गहरी) पूंछ एवं सफेद बिन्दुओं से युक्त डैने निराले होते हैं।

इसकी ध्वनि कर्कश और तेज होती है। कीटों को खाकर उल्लू अपने पेट की ज्वाला को शान्त करता है। मंत्र-तंत्रादि की सिद्धि में एवं कतिपय औषधियों के निर्माण में उल्लू की हड्डियाँ तथा मांस प्रयुक्त होता है।

माखी काक उलूक बक, दादुर से भए लोग।
भले ते सुक पिक मोर से, कोउ न प्रेम पथ जोग॥

(गोस्वामी तुलसीदास)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नकटा

नकटा जल-पक्षी है। जल से परिपूर्ण सरोवरों तथा झीलों में रहकर यह अपने जीवन को सानन्द बिताता है। इसकी चोंच पर एक श्याम मांसल गाँठ रहती है जो बाद में अधिक बढ़ जाती है लेकिन मादा की चोंच इस गाँठ से विहीन रहती है। कुछ लोग इसे कंघा बतख भी कहते हैं। नर के शरीर की लम्बाई 30 इंच होती है लेकिन मादा की देह 26 इंच लम्बी रहती है। इसका (मादा) सिर तथा ग्रीवा नर की अपेक्षा अधिक श्याम रहती है। इस जल-विहग का मस्तक एवं गर्दन श्वेत होती है और इन पर चमकीले काले धब्बे बने रहते हैं। नकटे के नीचे के पर शुद्ध श्वेत होते हैं जबकि ऊपर के पर, डैने एवं पूँछ काली होकर भी हरे, नीले तथा बैंगनी रंगों के सम्मिश्रण से अधिक चमकती रहती है। मादा, नर की तुलना में कम आकर्षक देखी गई है।

भारत, लंका, बर्मा आदि में पाया जाने वाला नकटा अपनी सहचरी के साथ तेजी से उड़ता है। इसकी ध्वनि हंस के समान लगती है।

जड़ों, बीजों, अंकुरों, जल-पौधों, कीड़े-मकोड़ों आदि को खानेवाला यह विहंग आक्रमणकारी पक्षी का सामना पूरी दृढ़ता से करता है। इसकी लम्बी टाँगे तथा गर्दन कम आकर्षक नहीं होती है।

प्रजनन-काल (जून से सितम्बर) में मादा एक बार में 7 से 12 तक अंडे देती है। वृक्ष पर बनाया गया इस पक्षी का घोंसला साधारण ही होता है। आम्रवृक्ष पर नीड़ बनाना इसे अधिक सुविधा जनक लगता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आयुर्वेद में पशु-पक्षी

कुछ ऋषियों ने परोपकार के लिए एक समय अपने शरीर को अर्पित किया था। उन के इस त्याग की गाथाओं को आज भी हम श्रद्धा के साथ कहते और सुनते हैं। लेकिन जो पशु-पक्षी कई युगों से अपना सब कुछ देकर जग-जीवन-संरक्षण कर रहे हैं उनकी हम याद भी नहीं करते। पशुओं का त्याग महान् है। पक्षियों का आत्म-समर्पण स्मरणीय है। इंसान ने देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए इन मूक प्राणियों की हत्या की और अपने स्वार्थ की सिद्धि में उसने इनको निर्दय होकर सताया। यह सब कुछ होने पर भी इन बेचारों ने कभी भी मनुष्य का अहित नहीं किया। आज का इंसान तो इन जीवों के प्रति अधिक कठोर है।

आयुर्वेद की शक्ति इन पशु पक्षियों के रक्त, मांस, दूध, दही, घी, मज्जा, चर्बी, चर्म, सींग, पंख, दन्त, अस्थि आदि पर बहुत अंशों में जीवित है। कई जीवन दायिनी औषधियों का निर्माण इन जीवों के रक्त-मांस हड्डी से ही होता है। आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रन्थों में इन प्राण धारियों के अंग-प्रत्यंगों की महिमा गाई गई है। भावप्रकाश एवं चरक संहिता के प्रणेता विद्वान आचार्यों ने वैज्ञानिक अध्ययन के आधार पर पशु-पक्षी-मांस की रोग विनाशक अद्भुत शक्ति की प्रशंसा की है।

शरीर वंहणे नान्यद् दाढर्यं मांसाद्विशिष्यते।
इति वर्गस्तृतीयोऽयं, मांसानां परिकीर्तितः।

(चरक संहिता, पृष्ठ 329)

अनेन विधिना सिद्धं शुद्ध मांसमिति स्मृतम्।
शुद्ध मांसं वरं वृष्यं बल्यं रुच्यञ्च वृंहणम्।
त्रिदोषशमकं श्रेष्ठं दीपनं धातु वर्द्धनम्॥

(भावप्रकाशस्य पूर्व खण्डे पृ० 538)

रक्त-मांस के अतिरिक्त इन का मल-मूत्र भी भयंकर रोगों के विनाश के लिये उपयोगी सिद्ध हुआ है। गौ मूत्र की रोग विनाशक शक्ति को भी आज आयुर्वेद-संसार स्वीकार कर रहा है।

"गौ मूत्रं कटु तीक्ष्णोष्णं क्षारं तिक्त कषायकम्।
लघ्वाग्नि दीपनं मेध्यं पित्त कृत्कफ वात हृत्॥1॥

---

1. पूर्वोक्त विधि से सिद्ध किया हुआ मांस शुद्ध मांस कहलाता है। यह अत्यन्त वीर्यवर्धक, रोचक, वृंहण (रस रक्तादि वर्धक), त्रिदोष को शमन करने वाला, अत्यन्त अग्निदीपक तथा धातु-वर्धक होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शूल गुल्मोदरानाहकण्ड्वक्षि मुखरोगजित् ।
किलास गदवातामवस्ति रुक्कुष्ठ नाशनम् ।
कासश्वास पहं शोथ कामला पाण्डुरोग हृत् ।।2।।

कण्डूकिलासगद शूलमुखाक्षि रोगान्गुल्मातिसारमरुदामय मूत्ररोधान् ।
कासं सकुष्ठ जठर क्रिमि पाण्डु रोगान्गोमूत्रमेकमपि पतिमपाकरोति ।।3।।

सर्वेष्वपि च मूत्रेषु गोमूत्रं गुणतोऽधिकम् ।
अतो ऽविशेषात्कथने मूत्रं गोमूत्रमुच्यते ।।4।।

× × ×

गोमूत्र के गुण—गोमूत्र कटु, तिक्त तथा कषाय रस युक्त, तीक्ष्ण, उष्ण, क्षार (खारा), लघु, अग्निदीपक, मेधा के लिए हितकर, पित्तकारक, कफ तथा वात नाशक, एवम् शूलम, गुल्म, उदररोग, आनाह (अफारा) खुजली, नेत्र तथा मुख सम्बन्धी रोग, किलास रोग, (कुष्ठभेद) वात, आम, वस्ति सम्बन्धी रोग, कुष्ठ, कास श्वास, शोथ, कामला तथा पण्डु रोग को नष्ट करने वाला होता है। और केवल एक गोमूत्र पान करने से खुजली, किलास रोग, शूल, मुख तथा नेत्र सम्बन्धी रोग, गुल्म, अतिसार, वातरोग, मूत्ररोग, कास कुष्ठ, उदररोग, क्रिमि तथा पण्डु रोग, ये सब दूर होते हैं। सम्पूर्ण मूत्रों में गोमूत्र ही सब से अधिक गुणकारी होता है।

इसी प्रकार गो-दुग्ध वृद्धावस्था तथा समस्त रोगों को शान्त करने वाला होता है—जरा समस्त रोगाणां शान्ति कृत् सेविना सदा। (भावप्रकाश)

महर्षि चरक ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'चरक संहिता' के मांसवर्ग अध्याय में विविध पशु-पक्षियों के मांस द्वारा अनेक रोगों का शमन व नाश बताया है।

गीदड़ का मांस त्रिदोष को शान्त करता है।

संक्षेप में जंगल जाति के प्राणियों के मांस के सम्बन्ध में कहा गया है कि यह मधुर, रूक्ष, कसैला, शीघ्र पचने वाला, बलदायक, धातुवर्धक, पौष्टिक, अग्निदीपक, दोषनाशक तथा गंगापन, मिनमिनापन, तुतलापन, अर्दित (मुख की मांस पेशी का आघात) बहिरापन, अरुचि, वमन, प्रमेह, मुखरोग, श्लीपद, गलगण्ड, एवं वात सम्बन्धी रोगों को नष्ट करता है। (भाव प्रकाश निघण्टु, पृष्ठ 465)

गुहाशय-प्राणियों का मांस वातनाशक तथा नेत्ररोग वा गुदा के रोगों में विशेष लाभदायक बताया गया है।

कौवा, गीध, उल्लू, चील, बाज, नीलकंठ, कुरर आदि पक्षियों के मांस भक्षण का निषेध करते हुए आयुर्वेद-विशारदों ने कहा है कि जो मनुष्य इन पक्षियों के आमिष को खाता है वह क्षय, भस्मक तथा उन्माद रोगों से पीड़ित होकर शीघ्र ही अपने जीवन को समाप्त करता है—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काको गृध्र उलूकश्च चिल्लश्च शश घातकः।
चाषो भासश्च कुरर इत्याद्याः प्रसहाः स्मृताः।
प्रसहाः कीर्तिता एते प्रसह्याच्छिद्य भक्षणात्।
प्रसहाः खलु वीर्योष्णस्तन्मांसं भक्षयन्ति ये।
ते शोष भस्मकोन्माद शुक्र क्षीणा भवन्ति हि।

(भाव प्रकाश निघण्टौ—मांसवर्गः)

कूलेचर प्राणियों का मांस वीर्यवर्धक होता हुआ भी मूत्रवर्धक एवं कफवर्धक है:—

लुलाय गण्ड वाराह चमरी वाणादयः।
एते कूलेचराः प्रोक्ता यतः कूले चरन्त्यपाम्।
कूलेचरा मरुत्पित्त हरा, वृस्या बलावहाः।
मधुराः शीतलाः स्निग्धामूत्रलाः श्लेष्म वर्धनाः॥

(भाव प्रकाश)

जल में तैरने वाले अनेक पक्षी हैं। इन के मांस को भी रसना-लोलुपी खाते है। वैद्यों का कहना है कि हंस, सारस, चकवा, बगुला, क्रौंच, शरारी (बगुला की उपजाति), बलाका आदि का मांस बलदायक होता हुआ भी वात-कफ को उत्पन्न करने वाला एवं दस्तावर होता है।[1]

आयुर्वेदाचार्यों के मतानुसार गजमद और गैंडे के सींग से बहुमूल्य औषधियों का निर्माण होता है जो क्षीण शक्ति वालों के लिए अधिक उपयोगी हैं।

मांस के गुणावगुण का उल्लेख करते हुए चिकित्सा-शास्त्रियों ने पशु-पक्षियों का भी विभाजन किया है। इस वर्गीकरण के आधार हैं—धावन प्रवृत्ति, निवास-प्रकार, भोजन-प्राप्ति-उपाय, संरक्षण विधि आदि। उपलब्ध समस्त मांस को 'जांगल और आनूप' भेदों से दो रूपों में स्वीकार कर लिया गया है।[2]

जांगल के अन्तर्गत जंघाल, विलस्थ, गुहाशय, पर्णमृग, विष्किर, प्रतुद, प्रसह और ग्राम्य पशु-पक्षी आते हैं।

---

1. हंस सारस कारण्डवक क्रौंच शरारिकाः।
नन्दी मुखी सकादम्बा बलाकाद्याः प्लवाः स्मृताः।
प्लवन्ति सलिलेयस्मादेते तस्मात्प्लवाः स्मृताः।
स्थूला कठोरा वृत्ता च यस्याश्चञ्चु परिस्थिताः
गुटिका जम्बुसदृशी प्रोक्ता नन्दी मुखीतिसा।
प्लवाः पित्तहराः स्निग्धाः मधुरा गुरवो हिमाः।
वातश्लेष्म प्रदाश्चापि बल शुक्रकराः सराः।

(भाव प्रकाश)

2. मांस वर्गा द्विधा ज्ञेयो जांगलानूपभेदतः। (भावप्रकाश)

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बलिष्ठ जंघा से शीघ्र दौड़ने वाले पशु जंघाल कहलाते हैं। हरिण, ऐण, कुरंग शम्बर, राजीव आदि जंघाल श्रेणी में परिगणित हैं।

बिल में रहने वाले खरगोश, साही (शल्लकी) चूहा आदि विलस्थ हैं।

सिंह, व्याघ्र, भेड़िया रीछ, शृगाल, बिलाव आदि गुहाशयों के अन्तर्गत माने जाते हैं।

वृक्षों पर रहने वाले तथा वनस्पतियों को खाकर जीवन बिताने वाले, वानर आदि पर्णमृग हैं।

पैरों से फैला-फैलाकर और कुरेद कर खाने वाले लवा, बटेर, तीतर, मुर्गा आदि विष्किर माने गए हैं।

चञ्चु द्वारा भक्ष्य पदार्थ को फोड़कर खाने वाले विहंग (कबूतर, खंजन, कोयल आदि) प्रतुद कहलाते हैं।

प्रसह-वर्ग में वे पक्षी (गीध, चील, बाज, उल्लू आदि) आते हैं जो दूसरों से छीन-झपट कर अपना पेट भरते हैं।

गाँवों में पलने वाले पशु (गाय, बैल, घोड़ा, बकरी आदि) 'ग्राम्य' नाम से प्रसिद्ध हैं।

आनूप के अन्तर्गत कूलेचर, प्लव, कोशस्थ, पादी और मत्स्य कहे गए हैं।

जलाशयों के समीप रहने वाले (सुअर, गैंडा, हाथी आदि) पशु कूलेचर हैं।

जल में तैरने वाले (सारस, चकवा बगुला, क्रौंच आदि) पक्षी प्लव कहे गए हैं।

शंख, सीप, केकड़ा आदि कोशस्थ[1] माने गए हैं।

सूँस, कच्छप, मगर, घड़ियाल नाका आदि पादी[2] प्राणियों की गणना में आते हैं। जल के सतत निवासी होने पर भी इन्हें पाँव प्राप्त हैं।

रोहित, तिमि मत्स्य आदि जल-जीव-मत्स्य वर्ग में गिने जाते हैं।

पशु-पक्षियों का यह वर्गीकरण अपने रूप में पूर्ण कहा गया है।

× × × ×

मोर, हंस, मुर्ग, लवा एवं कबूतर का मांस चरक संहिता के अनुसार क्रमशः वीर्य जनक, वातनाशक, बलवर्धक, सन्निपात विनाशक और रक्तपित्त नाशक कहा गया है।

कस्तूरी मृग विशेष की नाभि से प्राप्त होती है, जो वीर्यवर्धक, नेत्रों के लिए हितकर, छेदक और कफ, प्यास, वस्ति तथा मुख सम्बन्धी रोग को दूर करती है।[3]

गदहे के दान्त भी आँख की फूली को नष्ट करता है। गर्दभ-दन्त को घिसकर लगाने से चक्षु में पड़ी हुई फूली अवश्य कट जाती है।

बाघ की चर्बी भी अनेक रोगों का शमन करती है। हड्डी तक पहुँचे हुए घाव पर दो-तीन दिन तक

---

1. अपने शरीर को एक कोश में रखकर चलने वाले।
2. पैर युक्त प्राणी।
3. लता कस्तूरिका तिक्ता स्वादी वृष्या हिमा लघुः।
   चक्षुष्या छेदिनी श्लेष्म तृष्णा वस्त्यास्य रोग हृत्॥
   (भाव प्रकाश, पूर्वखण्ड, पृ० 271)

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसे (बाघ की चर्बी) मलने से विशेष लाभ होता। सन्धि वायु पर रात को सोते समय दर्द के स्थान में बाघ की चर्बी मलने से आराम मिलता है। सांवर एवं हरिण श्रृंग का भी औषधि-रूप में प्रयोग होता है।

सूजन, जख्म और वायु से उत्पन्न वेदना को शान्त करने में सांवर के सींग को घिसकर लगाना चाहिए। सांवर श्रृंग को दूध में घिसकर लेप करने से सिर का दर्द दूर होता है। रक्तातिसार और आँव पड़ने में सांवर के सींग को घी में घिसकर पीना लाभदायक है। खांसी, दमा, ग्रंथि, अपच, और अण्ड वृद्धि रोगों में सांवर श्रृंग की भस्म को शहद के साथ खाना हितकर है। इसके प्रयोग से ये रोग शीघ्र ही नष्ट होते हैं।

हरिण के सींग की भस्म हृदय रोग, कटि-ग्रह, सन्धि-शूल और हृदय-शूल में गाय के घी के साथ दी जाती है। हाथी का दाँत भी कई रोगों को दूर करता है।[1]

उलूक का मांस उन्माद (पागलपन) रोग में लाभदायक कहा गया है।

'Indigenous Drugs of India' नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ के 'Animal Products' नामक अध्याय में विद्वान् लेखकों ने पशु-पक्षियों के मांस को कई रोगों में लाभप्रद बताया है। जिज्ञासु पाठकों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए।

कतिपय पशुओं के दूध से प्राप्त घी भी तो मानव-जाति के लिए गुणकारी है। आयुर्वेद ने इस सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा है।

गाय का घी अमृत तुल्य है। यह वात, पित्त तथा कफ को नष्ट करता है तथा अग्निवर्धक है। गौ-घृत से अनेक औषधियाँ बनाई जाती हैं।

गव्यं घृतं विशेषेण चक्षुष्यं वृष्यमग्नि कृत्।
स्वादुपाककरं शीतं वातपित्त कफापहम्॥

—गाय का घी विशेषतः नेत्रों के लिए हितकर, वीर्यवर्धक, अग्निवर्धक, विपाक में मधुररस युक्त, शीतल, वात, पित्त तथा कफ को नष्ट करने वाला है। (भावप्रकाश)

× × × ×

ऊँटनी का घी कफ-वात नाशक होता हुआ क्रिमि, विष, कुष्ठ, गुल्म तथा उदर रोग को नष्ट करता है।

औष्ट्रं कटु घृतं पाके, शोषक्रिमि विषापहम्।
दीपनं कफ वातघ्नं कुष्ठ गुल्मोदरापहम्॥

(भावप्रकाश)

बकरी का घी जठराग्नि कारक है और कास, श्वास, तथा क्षय रोग में हितकर है :—

---

1. विशेष अध्ययन के लिए देखिए—'प्राणिज औषधि' लेखक आयुर्वेद महोपाध्याय पं० शंकरदाजी शास्त्री पदे, सम्पादक श्री जगन्नाथ शुक्ल, वैद्य।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आज माज्यं करोत्यग्नि चक्षुष्यं बलवर्द्धनम ।
कासे श्वासे क्षये चापि हितं पाके भवेत् कटु ।।
(भावप्रकाश)

भैंस का घी स्वादिष्ट कफजनक, वीर्यवर्धक एवं विपाक में मधुर रस युक्त होता है। यह पित्त-विकार तथा वात को नष्ट करता है :—

माहिषन्तु घृतं स्वादु पित्त रक्तानिलापहम् ।
शीतलं श्लेष्मलं वृष्यं गुरु स्वादु विपच्यते ।।
(भावप्रकाश)

पित्त पंचक[1] की भी रस-निर्माण में उपयोगिता है। रस राजेन्द्र रस के बनाने में मछली, सूअर, मोर, बकरी और भैंस के पित्तोंमें भावना देने का उल्लेख है। यह रस सम्पूर्ण ज्वरों को नष्ट करता है। रस कपूर में भेड़ की ऊन भी सुहागा, मधु, लाख, सफेद घुघुची और पारा के साथ भांगरे के रस में खरल की जाती है। यह रस उपदंशादि में गुणकारी सिद्ध हुआ है। मृग-चर्म अनेक शारारिक रोगों को नष्ट करती है। इसके चमड़े पर बैठना और सोना भी लाभदायक बताया गया है। ऋषि-मुनियों ने इसकी विशेषताओं को समझकर ही अपनाया है। प्लीहारि रस, तथा अपर प्लीहारि रस में मृग-चर्म भस्म अन्य औषधियों के साथ मिलाई जाती है।

गज, चीता और शेर के चर्मों में श्वित्र रोग को नाश करने की शक्ति विद्यमान है। भैषज्यरत्नावली में बताया गया है कि हस्ति, चित्र और व्याघ्र के चर्मों को एक साथ जलाकर भस्म तैयार की जावे और इसे अथवा पूति कीट को सरसों के तैल के साथ पीस कर प्रतिदिन लेप करने से श्वित्र नष्ट हो जाता है।

गधे के रक्त में पकाये हुए केचुओं का चूर्ण बनाकर लेप करने से अथवा कुत्ते की अस्थि को त्रिफला क्वाथ में पीसकर लेप करने से भगन्दर नष्ट हो जाता है।

खरास्रपक्व भूनाग चूर्ण लेपो भगन्दरम् ।
हन्ति दन्त्यग्न्यति विषालेपस्तद्वच्छ्वोऽस्थिवा ।।
(भैषज्यरत्नावली, पृष्ठ 607)

ज्वरों के विनाश में माहेश्वर धूप की अधिक प्रशंसा की जाती है। इसके निर्माण में अन्य वस्तुओं के साथ गाय की हड्डी, मयूर पंख की चन्द्रिका, बिल्ली की विष्ठा, गाय के सींग का छिलका, बकरी की मींगनी, शृगाल की लेड़ी और हाथी के दाँत को भी मिलाया जाता है। बताया गया है कि जिस मकान

---

1. पित्तं पंचविधं मत्स्य गवाश्वरुरुवर्हि जम ।
मछली, गौ, घोड़ा, हिरन और मोर इनके पित को पित पंचक कहते हैं। (रसेन्द्र सार संग्रह)

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में इस धूप की धूनी दी जाती है उसमें सर्प, पिशाच और राक्षस कभी भी घुसने का साहस नहीं करते हैं। यह माहेश्वर धूप सर्व प्रकार के ज्वरों को नष्ट करता है किन्तु विशेषकर ऐकाहिक, द्वयाहिक, त्र्याहिक और चतुर्थक आदि विषम ज्वरों को अवश्य ही नष्ट कर देता है। (देखिए भैषज्यरत्नावली, विद्योतिनी टीका सहित, पृष्ठ 78)

कतिपय आयुर्वेदिक घृत और तेल इन्हीं पशु-पक्षियों के माँस रस से अधिक प्रभावशाली बनते हैं।

नकुलाद्य घृत में नेवले का माँस, हंसाद्य घृत में हंस का आमिष और शिवातेल में शृगाल का माँस डालकर पकाया जाता है। (भैषज्यरत्नावली)

केवल संकेत के रूप में मैंने आयुर्वेद में पशु पक्षियों के महत्त्व को बताया है। आज इन मूक जीवों की रक्षा की विशेष आवश्यकता है अतः इन का वध किसी भी रूप में हमारे कल्याण के लिए सहायक नहीं हो सकता। रोगों के निवारणार्थ अधिक से अधिक काष्ठ-औषधियों का निर्माण ही इन प्राणियों के संरक्षण में सहकारी होगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तांत्रिक साधना में पशु-पक्षी

भारतीय दर्शनों में तांत्रिक साधना को भी स्थान दिया गया है। इसमें शक्ति पूजा पद्धति को विशेष रूप में अपनाया जाता है कर्मकाण्डियों का मत है कि कलियुग में तंत्र तथा तांत्रिकी उपासना की अधिक गरिमा है। महानिर्वाण तंत्र के अनुसार कलि में मेध्यामेध्य के विचार से हीन मानवजनों के कल्याणार्थ शंकर ने तंत्रों का उपदेश पार्वती को स्वयं दिया है। अतः कलियुग में इन्हीं आगमों के अनुसार पूजा-विधान से मानवों को सिद्ध प्राप्त होती है—(बिना ह्यागम मार्गेण कलौ नास्ति गतिः प्रिये—महानिर्वाण) तंत्रों का स्वरूप भली भाँति पहचाना जा सकता है। देवता के स्वरूप, गुण, कर्म आदि का जिनमें चिन्तन किया हो, तद्विषयक मंत्रों का उद्धार किया गया हो, उन मंत्रों को यंत्र में संयोजित कर देवता का ध्यान तथा उपासना के पाँचों अंग—पटल पद्धति कवच नाम सहस्र और स्तोत्र—व्यवस्थित रूप से दिखलाए गए हों, उन ग्रन्थों को तंत्र कहते हैं। वारीह तंत्र के अनुसार सृष्टि, प्रलय, देवतार्चन सर्व साधन, पुरश्चरण षट्कर्म (शान्ति, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन तथा मारण) साधन तथा ध्यान योग इन सात लक्षणों से युक्त ग्रन्थों को आगम कहते है।[1]

तंत्रों के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा गया है और इनके प्रति मानव-समाज की गहरी श्रद्धा है। प्राचीन काल से तंत्रों की साधना हो रही है तथा आज भी विद्वानों ने इनके विषय में उपेक्षा नहीं दिखाई है। कहा जाता है कि अशिक्षितों एवं काननवासियों में तंत्रों का अधिक प्रचार है और ये अंध विश्वासों के कारण इनको ही सर्वसिद्धि का सुगम उपाय मानते हैं। बहुत अंशों में यह कथन सत्य है, लेकिन शिक्षित और संस्कृत मानव भी इनके प्रति (तंत्रों के) आकर्षित देखे जाते हैं। शक्ति के उपासकों में तंत्रों का असाधारण रूप में प्रचलन है। काश्मीर, काञ्ची और कामाख्या तंत्र-साधना के प्रमुख केन्द्र माने जाते हैं। वाम-मार्ग में भी तंत्रसाधना होती है और भगवती काली की आराधना में ये वाममार्गी अपना सब कुछ अर्पित कर देते हैं। इस रहस्यात्मक तांत्रिक-सिद्धि में मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन का निरन्तर प्रयोग होता है। इनको मुक्ति दायक मानकर पञ्चतत्व-साधन के रूप में तांत्रिकों ने स्वीकार किया है। ये पदार्थ कहाँ तक उपादेय हो सकते हैं—यह एक विवादास्पद विषय है, फिर भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि वाममार्ग अथवा शाक्तसम्प्रदाय के अनुयायी इन वस्तुओं को पावन ही मानकर ग्रहण करते हैं। साधनों की अपावनता साध्य को भी कलुषित कर देती है। इस सिद्धान्त के अनुसार तंत्रों के विषय में एक वीभत्सात्मक धारणा को भी मानव-समाज ने जन्म दे दिया है।

---

1. भारतीय दर्शन (ले० श्री बलदेव उपाध्याय, एम० ए०), पृष्ठ 512.

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तंत्र शब्द की व्युत्पत्ति 'काशिकावृत्ति' में विस्तारार्थक तन् धातु से औणादिक ष्ट्रन् (सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्, उणादि सूत्र 608) के योग से बतलाई गई है। अतः तंत्र का अर्थ वह शास्त्र है जिसके द्वारा ज्ञान का विस्तार किया जाता है (तन्यते विस्तार्यते ज्ञानमनेन इति तंत्रम्) और जो साधकों का त्राण है (रक्षा करता है) इसीलिए शैव सिद्धान्त के 'कामिक-आगम' में तन्त्र की व्युत्पत्ति इस प्रकार दी गई है—

तनोति विपुलानर्थान् तत्त्व मंत्र समन्वितान्।
त्राणं च कुरुते यस्मात् तन्त्रमित्यभिधीयते ॥

अतः 'तंत्र' का व्यापक अर्थ शास्त्र, सिद्धान्त, अनुष्ठान, विज्ञान, विज्ञान विषयक ग्रन्थ आदि है। इस शब्द का प्रयोग इस व्यापक अर्थ में बहुशः उपलब्ध होता है। शंकराचार्य ने सांख्य को तंत्र नाम से अभिहित किया है (स्मृतिश्च तन्त्राख्या परमर्षि प्रणीता—2।1।1 शां० भा०)। महाभारत में न्याय, धर्मशास्त्र, योग शास्त्र आदि के लिए तंत्र के प्रयोग उपलब्ध होते हैं। परन्तु यहाँ तंत्रों से अभिप्राय उन धार्मिक ग्रन्थों से है जो यंत्र मंत्रादि समन्वित एक विशिष्ट साधन मार्ग का उपदेश देते हैं।[1]

यह विषय अत्यन्त गूढ़ है और इसकी सफलता गूढ़त्व में ही बनाई जाती है अतः इसकी विवेचना वे ही कर सकते हैं जो इस मार्ग के असली पथिक हों। यहाँ मैं केवल यह बताने का प्रयत्न करूँगा कि इस साधना विशेष में पशु-पक्षियों का कहाँ तक उल्लेख हुआ है। प्राप्त ग्रन्थों के अध्ययन से स्पष्ट है कि तान्त्रिक साधना पशु-पक्षियों के मांस, चर्बी, हड्डी, पंख, आँतें, पित्त, केश, दूध, घृत, दंत, चर्म, आदि पर अधिक अवलम्बित है। इससे सिद्ध होता है कि साधना-क्षेत्र में भी इन बेचारे द्विपदों एवं चतुष्पदों ने बहुत कुछ योग दिया है।

काक और उलूक दोनों ही अप्रिय पक्षी हैं, लेकिन सैन्य विमुखी करण तंत्र में उन दोनों विहंगों की प्रधानता बताई गई है:—

"ॐ नमो भयङ्कराय खड्गधारिणे मम शत्रु सैन्य पलायनं कुरु कुरु स्वाहा" अष्टोत्तर शत जपेन सिद्धिः।

भौमवारे गृहीत्वा तु का कोलू को तु पक्षिणौ।
भूर्ज पत्रे लिखेन्मंत्रं तस्य नाम समन्वितम्।
गोरोचने गले बद्धा काकोलूकस्य पक्षिणः,
सेनानी सम्मुखं गच्छेन्नान्यथा शङ्करोदितम्।
शब्द मात्रे सैन्य मध्ये पलायन्तेऽतिनिश्चितम्।
राजा प्रजा गजादिश्च नान्यथा शंकरोदितम्।

ॐ नमो भयङ्कराय—मंत्र का 108 बार जाप करके मंगलवार को काक और उल्लू के गले में भोजपत्र को (शत्रु का गोरोचन से नाम लिखकर) बाँध देना चाहिए। ज्यों ही ये खग शत्रु-सेना के सामने जावेंगे वह विकल होकर भागेगी और शत्रु पराजित होगा।

---

1. भारतीय दर्शन (वैष्णव तंत्र), पृष्ठ 511.

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बैगा, आदिवासियों की एक प्रमुख जाति है। ये मंत्र-तंत्र विशेषज्ञ माने जाते हैं। हिंसक पशुओं को भगाने के लिए, रोगों की शन्ति के लिए, युवतियों को मोहित करने के लिए, तथा शत्रुओं को मारने के लिए ये (बैगा) अनेक तंत्रों की सिद्धि करते रहते हैं। डॉ० एलविन ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ "दी बैगा" में इस सम्बन्ध में व्यापक रूप से विचार किया है और और कई मोहन-मंत्रों को उद्धृत करके बैगाओं की तांत्रिक शक्ति को (घटनाओं का उल्लेख करते हुए) विशेषज्ञों के सन्मुख रखा है।

सारस की हड्डी को जलाकर गाय के घी में मलना चाहिए। इसके पश्चात् वाञ्छित युवती के दाहिने पैर की धूलि को भी इसमें मिला लेना चाहिए। इस घी को इच्छित कामिनी के सिर के बालों में तथा कंधों पर मलने से वह प्रयत्नशील प्रेमी की ओर आकर्षित हो जाती है। यह लेप बनाते समय निर्धारित मंत्र का जपना आवश्यक है। तंत्रों का प्रयोग वशीकरण, आकर्षण, उच्चाटन, विशेषण, मारण आदि के लिए किया जाता है। तांत्रिकों ने लक्ष्यानुसार विभिन्न पशुओं के चर्म को आसन रूप में अपनाने के लिए लिखा है।

वश्ये मेषासनं प्रोक्तमाकृष्टौ व्याघ्र चर्म च।
उष्ट्रासनं तथोच्चाटे विद्वेषे तुरगासनम् ॥1॥
मारणे माहिषं चर्म मोक्षे गजाजिनं भवेत्।
अथवा कम्बलं रक्तं सर्व कर्मसु कारयेत् ॥2॥

—मेष के चर्म पर बैठकर वशीकरण कर्म करना चाहिए। व्याघ्र-चर्म का आसन आकर्षण कर्म के लिए उपयुक्त है। ऊँट के चमड़े पर आसन लगाकर उच्चाटन कर्म करना उचित है और घोड़े के चर्म पर बैठकर विद्वेषण कर्म किया जाता है।

महिष के चमड़े का आसन 'मारण' में और गज चर्म का मोक्ष-साधन में उपयोगी बताया गया है। लाल कम्बल पर बैठकर सब काम किए जा सकते हैं।

आकर्षण, विद्वेषण तथा मारण मंत्रों के जाप के लिए क्रमशः मदमाते हाथी के दांत की, घोड़े के दांतों की एवं गधे के दांतों की माला का सहारा लेना आवश्यक है।

विद्वेषण-मंत्र का प्रभाव काक-पक्ष और उलूक-पक्ष से प्रकट किया जाता है। इसी प्रकार उच्चाटन में भी इन्हीं पक्षियों के पंखों से हवन होता है :—

काकोलूकस्य पक्षं तु हुत्वा चाष्टाधिकं शतम्।
यन्नाम्ना मंत्रयोगेन तदास्योच्चाटनं भवेत्।

ॐ नमो नारायणाय अमुकस्य अमुकेन सह विद्वेषं कुरु कुरु स्वाहा। इस मंत्र का जप करके 108 बार काक-उलूक-पक्षों से हवन करने से जिस व्यक्ति का मन्त्र में नाम लिया जाता है उसके मन का उच्चाटन हो जाता है।

निश्चित मन्त्र (विद्वेषण-मन्त्र) की जाप के बाद सम्बन्धित व्यक्तियों के मस्तक पर हाथी-सिंह के दांतों को मक्खन के साथ पीसकर लगाने से वे एक दूसरे के शत्रु बन जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गृहीत्वा गजदन्तं च गृहीत्वा सिंह दन्तकम् ।
पेषयेन्नवनीतेन तिलकं द्वेषकारकम् ॥

× × ×

गौ-महिषी आदि का स्तंभन करने में ऊँट की हड्डी तथा बालों का प्रयोग किया जाता है—

ॐ नमो भगवते रुद्राय गो महिष्यादीन् । स्तंभय-स्तंभय ठः ठः ठः ॥ अष्टोत्तरशत जपेन सिद्धिः ।

उष्ट्रस्यास्थि चतुर्दिक्षु निखनेद् भूतले ध्रुवम् । गो महिष्यादिकस्तंभः सिद्धि योग उदाहृतः ।

सम्बन्धित मंत्र का जाप करके गोशाला के चारों ओर ऊँट की हड्डी गाड़ने से गाय, भैंस आदि का स्तंभन हो जाता है ।

प्राचीन कथाओं में सुनने को मिलता है कि तंत्रों को सिद्ध करके मनुष्य पल भर में संसार की सम्पूर्ण सम्पत्ति को प्राप्त कर लेता था और पृथ्वी की परिक्रमा क्षण मात्र में करके वह कभी-कभी आकाश में भी उड़ने लगता था । पादुका-साधन-मन्त्र की यही शक्ति है । इसको विधिपूर्वक तीन लाख बार जपने से तथा निम्नस्थ लेप को पैरों में लगाने से मानव एक लाख योजन की यात्रा को पल में समाप्त करके नभ में भी विहंग की भांति विचरण कर सकता है ।

"ॐ नमश्चन्द्रमसे चन्द्र शेखर नमो भगवते तिष्ठ नमो भगवते नमः शिखरे नमः शूलिने नमः पाद-प्रचारिणे वेगिने हुंफट् स्वाहा" त्रिलक्ष जपेन सिद्धिः ।

सारिकाया वसां नेत्र मंत्राणि रुधिरं तथा,
काकपित्तं तथा नेत्रं हरिचन्दन वेतसम्,
शुनो मज्जां वसां तुल्यमुष्ट्री क्षीरेण भावयेत्,
पादलेपः प्रकर्त्तव्यो नमस्कृत्य शिवे तथा,
योजनं लक्षमेकं तु निमिषार्द्धेन गच्छति,
गगना शेष चारी च क्रीडत्येव यथा शिवः ।

—मैना पक्षी की चर्बी, नेत्र, आंतें और रुधिर, काक का पित्त-नेत्र, केशर, वेतसलता, कुत्ते की मज्जा, एवं चर्बी, इन सबका समान भाग में लेकर ऊँटनी के दूध में पीसकर भगवान शंकर को तीन बार प्रणाम करे और उक्त मन्त्र को जपते हुए इस लेप को पैरों में लगाना चाहिए । ऐसा करने से मनुष्य में एक अद्भुत शक्ति आ जाती है और वह आधे पल में लाख योजन जा सकता है तथा भगवान शिव के समान अम्बर में विहार कर सकता है ।

जादू-टोना तन्त्रों के ही अंग हैं । अथर्ववेद में ऐसे बहुत तरह के लोक-प्रचलित टोटकों का संग्रह है

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जो आश्चर्यजनक रूप में जर्मनी और पोलैण्ड में प्रचलित प्राचीन युग के टोटकों से मिल जाते हैं।[1] म० म० पं० हरप्रसाद शास्त्री का विश्वास है कि तन्त्र सातवीं शताब्दी में भारत में आए। उसी समय नाथ-सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव हुआ था और इनके प्रधान आचार्य मीनानाथ और गोरखनाथ ने इसके सम्बन्ध में अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। किन्तु ऐसे अनेक पंडित हैं जो इस मत में सन्देह करते हैं और विश्वास करते हैं कि अज्ञात काल से यह मत इस देश में वर्तमान है। हाल ही में स्वर्गीय श्री वुडरफ के तत्वावधान में इंग्लैण्ड में तन्त्र सोसायटी स्थापित हुई है जिसने तन्त्र के अनेक प्राचीन ग्रंथों को प्रकाशित किया है। तन्त्रों के सम्बन्ध में अभी विशेष कार्य नहीं हुआ है। लेकिन तंत्र की सैकड़ों पुस्तकें विभिन्न पुस्तकालयों में सुरक्षित हैं। तंत्रों का बनना उन्नीसवीं सदी तक जारी रहा है।

पुराणों के अध्ययन से पता चलता है कि तन्त्रों का प्रयोग वैष्णव मत में बहुत काल तक रहा। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने लिखा है कि पौराणिक युग की विशेष साधना तन्त्रोपचार की पद्धति थी, यह तन्त्र मूलक साधना बहुत प्राचीन समझी जाती है और कुछ लोगों के मतानुसार तन्त्र की चर्चा वेदों व उपनिषदों में भी की गई मिलती है। फिर भी इतना निश्चित है कि तांत्रिक साधना को जितना पौराणिक युग ने अपनाया, तथा इसके अंगों का जितना विस्तार इस काल में किया गया उतना पहले कभी नहीं हुआ था। इस समय तन्त्र वा आगम के बौद्ध तन्त्र, शक्ति तन्त्र, शैव आगम, वैष्णव आगम आदि अनेक विभाग हो गए और सबने अपने-अपने मूल सम्प्रदायों के अनुसार भिन्न-भिन्न साधनाएँ प्रचलित कर दीं। इनके मंत्र पृथक्-पृथक् बनाए गए, उनके लिए विविध प्रकार के यन्त्रों का आयोजन किया गया तथा इनके भिन्न-भिन्न देवताओं के ध्यान एवं उपासना के प्रधान पाँच अंगों अर्थात् पटल, पद्धति, कवच, सहस्रनाम और स्रोत को भी स्पष्ट व सुव्यवस्थित रूप दे दिया गया। इस कारण तन्त्रोपचार की प्रणाली में जहाँ एक ओर मूर्तिपूजा के लिए षोडश वा उससे भी अधिक प्रकार के उपचारों का विधान बना, वहाँ दूसरी ओर एक नवीन गुप्त साधना की भी पद्धति चल निकली, तथा साधकों की योग्यता व प्रवृत्ति के अनुसार वेदाचार, वैष्णवाचार, शैवाचार, दक्षिणाचार, वामाचार सिद्धान्ताचार, व कौलाचार बनकर प्रसिद्ध हो गए। बौद्ध धर्म के महायान सम्प्रदाय में भी इसी प्रकार बौद्ध तन्त्रों से प्रभावित अवधूती मार्ग, राग-मार्ग, डोंबी मार्ग, चाँडाली मार्ग आदि की पद्धतियाँ हो गईं और इनकी रहस्यमय साधनाओं की आड़ में कभी-कभी महान् अनर्थ भी होने लगे।[3]

हर्ष है कि मानव की कर्मशीलता ने तंत्रों के प्रति विरक्ति उत्पन्न कर दी है और आज का मनुष्य अपने बाहु-बल पर ही जीवित रहना चाहता है लेकिन इन निरीह प्राणियों के विनाश के कई नए द्वार खुल गए हैं जिनका बंद होना आवश्यक है।

---

1. हि० सा० की भूमिका, पृष्ठ 158.
2. हि० सा० की भूमिका, पृष्ठ 171.
3. उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृष्ठ 27-28.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशु-पक्षि-नामावली

पशु

हिन्दी	लेटिन	अंग्रेजी
सिंह	Panthera Leopersica	Lion
बाघ	Panthera Pardus	Tiger
तेंदुआ	Panthera Pardus	Panther or leopard
चीता	Acinonyx jubatus	Hunting leopard
हिरन	Antelope cervicapra	Black buck
बारह सिंघा	Rucervus duvaucelli	Swamp deer
चीतल	Axis Axis	Spotted deer
गीदड़	Canis aureus	Jackal
भेड़िया	Canis lupus	Wolf
खरगोश	Lepus ruficandatus	Common hare
लोमड़ी	Vulpes Bergalensis	Indian fox
कुत्ता	Canis Familiaris	Dog
बन्दर	Macaca mulatta	Rhesus macaque
लंगूर	Semnopithecus entellus	Common langur
गाय	Bos Taurus	Cow
बैल		Bull
भैंस	Bubalis Buffelus	Buffalo
बकरी	Capra	(She) Goat
रीछ	Melursus ursinus	Sloth bear
बनभैंसा	Bubalus Bubalis	Wild buffalo
नील गाय	Boselaphus tragocamelus	Blue bull
सूअर	Sus Cristatus	Indian wild boar
सेही	Hystrix Leucura	Indian porcupine
घोड़ा	Equus Caballus	Horse

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी	लेटिन	अंग्रेजी
हाथी	Elephas maxmimus	Indian elephant
गदहा	Equus onager indicus	Indian wild ass
ऊँट	Camelus Dromidarius	Camel
गेंडा	Rhinoceros Unicornis	The great one-horned Rhinoceros.
		The smaller one-horned Rhinoceros.
सोन कुत्ता	Cuon dukhensis	Red dog
चूहा	Rattus rattus	Common house rat
वन-विलाव	Prionailurus Bengalensis	Leopard cat
खच्चर	Cross between horse & donkey	Mule
नेवला	Herpestes Edwardsii	Common mungoose
लकड़बग्घा	Hyaena hyaena	Striped hyaena
बिज्जू	Melivora Capnsis	Ratel or honey bodger
साँभर	Rusa Unicolor	Sambar
गौर	Bibas gaurus	Gaur or Indian bison

क्षी

कौवा	Corvus Splendens	Common house crow
नीलकंठ	Coracias Benghalensis	Roller
डोम काग	Corvus macrorhynchos	Indian jungle crow
सुभागी	Aegithina tiphia	Common iora
लाल गाल बुलबुल	Otocompsa jocosa	Red whiskered bulbul
तेलिन (काला थिरथिरा)	Phoenicurus ochruros	Redstart
कलचिड़ि (दामा)	Saxicoloides Fulicata	Indian robin
दहियल (ग्वालिन)	Copsychus Saularis	Magpie-robin
शामा	Kittacincla Malabarica	Shama
सहेली	Pericrocotus Speciosus	Scarlet-Minivet
भुजंगा	Dicrurus macrocerus	King crow

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी	लेटिन	अंग्रेजी
फुदकी (दर्जिन)	Orthotomus Sutorius	Tailor bird
पीलक	oriolus Oriolus	Golden oriole
सारिका (मैना)	Gracula religiosa	Grackle
गंगा (मैना)	Acridotheres ginginiinus	Bank myna
बया	Ploceus philippinus	Common weaver-bird
गौरैया	Passer domesticus	House-sparrow
धोबिन	Motacilla alba	White wagtail
भरद्वाज	Alauda glugula	Small skylark
चंडूल	Galerida cristata	Crested lark
फुल सुंघनी	Dicaeum crythrorhynchos	Tickell's flower pecker
कठकोला	Dryobates mahraltensis	Mahratta wood pecker
पपीहा	Hierococcyx varius	Brain fever bird
कोयल	Eudynamis Scolopaceus	Koel
करन तोता	Psittacula eupatria	Large indian parakeet
लाल कंठी सुग्गा	Psittacula Krameri	Rose ringed parakeet
किलकिला	Alcedo atthis	King fisher
धनेस	Tockus birostris	Common grey hornbill
हुदहुद	Upupa epops	Hoopoe
बबीला	Micropus affinis	House-swift
चिपक	Coprimulgus asiaticus	Common Indian nightjar
करैल उल्लू	Tyto alba	Screech owl
खूसट (चुगद)	Athene brama	Spotted owlet
राजगिद्ध	Sarcogyps calvus	King vulture
गिद्ध	Pseudogyps bengalensis	Bengal vulture
सफेद गिद्ध	Neophron percnopterus	White scavenger vulture
बाज	Falco jugger	Laggar falcon
गरुड़	Haematornis cheela	Crested serpent eagle
शंकर चील	Haliastur indus	Brahminy kite

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिन्दी	लेटिन	अंग्रेजी
शिकरा	Astur badius	Shikra
हारिल	Crocopus phoenicopterus	Common green pigeon
पहाड़ी कबूतर	Columba livia	Blue rock-pigeon
भट तीतर	Pterocles exustus	Common sand grouse
मोर	Pavo cristatus	Common peafowl
तीतर	Francolinus francolinus	Black patridge
चाहा	Rostratula benghalensis	Painted snipe
सारस	Antigone antigone	Sarus crane
सतबहनी	Argya caudata	Common babbler
उल्लू	Bubo bubo bengalensis	Owl
सुरखाव	Casarca ferruginea	Brahminy duck
खंजन	Motacilla alba dukhanensis	Wagtail
नकटा	Sarkidiornis melanotos	Comb duck
कुरही	Sterna aurantia	River tern
(जर्द फुली) टिटहरी	Lobipluvia Malabarica	Yellow watted lapwing
कुररी	Milous migraus govinda	Curlew
सारंग	Ciconia ciconia	White-stork
चिमटा बगुला	Platalea leucorodia	Spoonbill
बूजा	Threskiornis melanocephalus	White-ibis
हंस	Cygnus	Swan
बगुला	Babulcus ifis	Cattle egret
सिलही	Nettapus coromandelianus	Cotton teal

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशु-पक्षियों की बोलियाँ

पशु-पक्षी अपने भावों को प्रकट करने के लिए विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ करते हैं। उनमें सुख-दुःख की अनुभूतियाँ हैं और मानव से अधिक वे भावुक हैं। ऋतु-परिवर्तन-काल में हम उनके अनेक सुखद एवं दुखद स्वरों को सुन सकते हैं। उल्लास में इनकी बोलियाँ बड़ी ही मनभावनी होती हैं, लेकिन भयातुर होकर ये भयावह स्वरों के द्वारा अपनी आशंकाओं को व्यक्त करने लगते हैं। प्रणय की भावना प्राणि-मात्र में स्वभावतः विद्यमान है अतः इसका प्रकाशन सब करते हैं और बड़े चाव से अपनी प्रेम-लीला को साधारणतः सब गुप्त रखना ही चाहते हैं लेकिन जीवन में कुछ क्षण ऐसे भी होते हैं जिनमें प्रेमाधिक्य के कारण उसकी (प्रेम लीला) अभिव्यक्ति करना ही श्रेयस्कर होता है।

मानव का इन प्राणियों से नैसर्गिक सम्बन्ध है अतः इसकी दृष्टि से वे कभी दूर रह ही नहीं सकते। इंसान ने सामान्य ज्ञान की प्राप्ति होते ही इन जीवों से सबसे पहले अपना साहचर्य स्थापित किया और अपने स्नेह से इन्हें इतना विमोहित किया कि वे भी इसके (इंसान) पारिवारिक जीवन के अंग बन गए।

कवि ने बहुत कुछ प्रेरणा इन नभचरों और थल चरों से प्राप्त की और इसी कारण उसने अपने काव्य में इनको चित्रित किया और उनकी भाषा को समझने का पूर्ण यत्न किया। वन-वर्णन में कवि की लेखनी ने इन वन्य जीवों की बोलियों को बताकर उल्लास और विषाद को अंकित किया और कानन की सुन्दरता और भयंकरता को प्रदर्शित करने में उसने इन प्राणियों के सुरीले तथा कर्कश स्वरों का सहारा लिया। इसी प्रकार प्रकृति-चित्रण में काव्यकार इन विहंगों और चतुष्पदों को कभी भूल ही नहीं सकता। ऋषियों ने अपने वेद-मंत्रों में भी इनकी ओर संकेत करके वैदिक और पौराणिक साहित्य को पशु-पक्षियों की बोलियों और कार्य-कलापों से समृद्ध बनाया है।

संस्कृत का काव्य तो इनके मधुर स्वरों से अधिक ललित बन गया है। प्रभात कालीन पवन से प्रमुदित होकर प्रमत्त सारसों के माधुर्य भरे कूंजन का महाकवि कालिदास ने संकेत 'पूर्वमेघ' में किया है। प्रणयातुर का स्वर अस्फुट होता ही है।

दीर्घी कुर्वन्पटु मदकलं कूजितं सारसानां,
प्रत्यूषेषु स्फुटित कमलामोद मैत्री कषायः।
यत्र स्त्रीणां हरति सुरतग्लानि मंगानुकूलः,
शिप्रावातः प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकारः।

—यहाँ (उज्जयिनी में) प्रत्यूष के समय शिप्रा नदी से आई हुई शीतल बयार सुदीर्घ काल तक मतवाले सारस पक्षियों के अस्फुट माधुर्य भरे कूजन को संप्रेरित करता है। मुकुलित कमल फूलों के साहचर्य से बयार में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुबास बस गई है। शरीर को कितनी प्रिय लगती है यह बयार ! यही मृदु समीर प्रणय-प्रार्थी की सी चाटुकारिता का प्रयोग करते हुए रमणियों का संभोग-जनित शैथिल्य भी हर लेता है। (लक्ष्मीमल्ल सिंघवी)

कपोत की बोली में प्यार करते समय अधिक मादकता आ जाती है :—

कल क्वणित गर्भेण कंठेनाधूर्णितेक्षणः।
पारावतः परावृत्यं रिरं सुश्चुम्बति प्रियाम् ॥
(अज्ञात)

गर्दन को बार-बार घुमाकर और मधुर बोली को बोलता हुआ यह कबूतर प्रेमभरी अँखियों से अपनी प्यारी को देखता है और चूमता भी है।

श्रीमद्भागवत के प्रणेता ने भृंगराज की मधुर ध्वनि को हरिकीर्तन के समान बताया है और कहा कि जब यह खग अपना गाना प्रारंभ करता है तब पारावतादि पक्षीगण शीघ्र ही चुप हो जाते हैं।

पारावान्यभृत सारस चक्रवाक दात्यूह हंस शुक,
तित्तिर वर्हिणां यः।
कोलाहलो विरमतेऽचिर मात्र गुच्चैः,
भृंगाधिपे हरिकथा मिव गायमाने ॥
(श्री करुणाशंकर दवे)

युद्धभूमि में मृतसैनिकों के शरीर-रक्त को पीकर शृगालियाँ प्रसन्न हैं। उनका चिल्लाना उनकी तृप्ति को बता रहा है :—

अन्योन्यास्फालभिन्नद्विपरुधिरवसामासमस्तिष्कपंके,
मग्नानां स्यन्दनानामुपरिकृतपदन्यास विक्रान्तपत्तौ।
स्फाता सृक्यानगोष्ठीरसद शिव शिवातूर्य नृत्यत्कवंधे,
संग्रामैकार्णवान्तः पयसि विचरितुं पंडिताः पाण्डुपुत्राः ॥

—द्रौपदी ! चिन्ता करने की कोई बात नहीं। पाण्डव उस संग्राम रूपी समुद्र के गंभीर जल के बीचों बीच विचरण करने में बड़े कुशल हैं, जिसमें एक दूसरे से टकराकर आहत हाथियों के रुधिर, वसा, मांस और मस्तिष्क का कीचड़ हो रहा हो, और उस कीचड़ में मग्न रथों पर पैर रखकर पदाति सेना लड़ रही हो, जहाँ यथेष्ठ रक्तपान से प्रसन्न होकर शब्द करती हुई अमंगल शृगालियों के चिल्लाने के तूर्यनाद की लय पर कबंध नाच रहे हों। (भदनारायण—संस्कृत-कवि-दर्शन, पृष्ठ 347)

हिन्दी कवियों ने भी यथावसर पशु-पक्षियों की बोलियों की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है ! वसन्त के आमोदपूर्ण वातावरण में खगों के कल कंठ मुखरित होने लगते हैं।

"कोकिल नकीब औ पपीहा चोबदार द्वार,
भँवर नफीरै, कीरै मंद मंद गायौ है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुटक कपोत-गोत ताल मानों नवलन का,
अबलन की जाति भाँति मोरबा नचायौ है ।।
तूती ताल देत भाव भाषत भुजंगी भेद,
चातक उतारै राई-लौन कौ बनायौ है ।
मदन महीपति कें 'मनीराम' माघ सुदी,
पंचमी को व्याहन बसंत रितु आयौ है ।।

× × × ×

वर्षा से धरती जब रसवती बनती है, तब मोर, कोयल, चातक आदि की सरस आवाज़ें श्रोताओं को मुग्ध कर लेती हैं :—

"मोरन के सोर, सुनि पिक की पुकार तैसी,
चातक-चिकार सुनि सूनी स्याम यामिनी ।
जुगुनू जमक देखि, झिल्ली की झनक लेखि,
भयसों विसेष 'सेष' उरै गज-गामिनी ।
झरन झरत नीर कंपन सरीर ए री,
बालम विदेस धीर धरै कैसे कामिनी ।
मारे डारै मदन मरोरै डारै दादुर ये,
दाबै आबै बादर दबाए आबै दामिनी ।

× × ×

पशु-पक्षियों की बोलियों के उल्लेख में कवियों ने बोली विषयक विशिष्ट शब्दों का प्रयोग किया है । सिंह का दहाड़ना, हाथी का चिंघाड़ना, घोड़े का हिनहिनाना, गधे का रेंकना, ऊँट का बलबलाना, गाय का रँभाना, भैंसे का डिड़कना, कुत्ते का भोंकना, बिल्ली का म्याऊँ-म्याऊँ करना, बन्दर का खिखियाना एवं रीछ का घुरघुराना आदि प्रसिद्ध हैं । इसी प्रकार पपीहा की पीउ पिउ, मोर की मे आओ, कौवे की काँव-काँव, कोयल की कूक, उल्लू की हू हू, कबूतर की गुट्रु गूँ, मैना की कीकी, चुर्र, चुर्र, सोन हरियल की बुह बूह, अथवा गुर-गुर गूम-गूम तथा तोते की टें टें, मुर्गे की कुकड़ूं कूं सर्वत्र प्रचलित हैं । 'पद्मावत' में कविवर जायसी ने कतिपय पक्षियों की ध्वनियों का सरस वर्णन किया है :—

बसहिं पंखि बोलहिं बहु भाषा, करहिं हुलास देखि कै साखा ।
भोर होत बोलहिं चुहचुही, बोलहिं पांडुक 'एकै तूही' ।
सारौं सुआ जो रहचहा करहीं, गिरहिं परेवा औ करबरहीं ।
'पीव पीव' कर लाग पपाहा, 'तुही तुही कर गडुरी जीहा ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुहू कुहू करि कोइलि राखा।
औ भिंग राज बोल बहु भाखा।
दही दही करि महरि पुकारा।
हारिल विनवै आपन हारा।
कुहुकहिं मोर सोहावन लागा।
होइ कुराहर बोलहिं कागा।
जावत पंखी जगत के, भरि बैठे अमराउँ।
आपनि आपनि भाषा, लेहिं दई कर नाउँ।

(सिंहल द्वीप वर्णन)

विशेष परिस्थिति में विशिष्ट भाव-प्रकाशन-काल में ये बोलियाँ परिवर्तित भी हो जाया करती हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने महाकाव्य 'रामचरितमानस' में कुछ पशुओं की बोलियों का संकेत इस प्रकार किया है:—

"कहि न जाइ कछु हृदय विषादू।
मनहुँ मृगी सुनि केहरि नादू।"

(अयोध्याकांड)

कट कटान कपि कुंजर भारी।
बहु भुजदंड तमकि महि मारी।

(लंकाकांड)

कंदर खोह नदी नद नारे।
अगम अगाध न जाहिं निहारे।
भालु बाघ वृक केहरि नागा।
करहिं नाद सुनी धीरज भागा।

(अयोध्याकांड)

बहु कृपान तरवारि चमंकहिं।
जनु दहँ दिसि दामिनि दमंकहिं।
गज रथ तुरग चिकार कठोरा।
गर्जहि मनहुँ बलाहक घोरा।

(लंकाकांड)

जंबुक निकर कटकट्ट कहहिं,
खाहिं हुआहिं अघाहिं दपट्टहिं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कोटिन्ह रुंड मुंड बिनु डोल्लहि,
सीस परे महि जय जय बोल्लहि।

(लंकाकांड)

बुभुक्षित शृगाल 'फेकरि फेकरि' बोलकर मृत शरीर को खाने लगता है—इस वन्य पशु की आँखें युद्ध स्थल में पड़ी हुई लोथों को देखकर प्रसन्न हो जाती हैं। 'कवितावली' में गोस्वामी जी ने इसी पशु-ध्वनि का संकेत किया है:—

लोथिन सों लोहू के प्रवाह चले जहाँ तहाँ,
मानहुँ गिरिन गेरु झरना झरत हैं।
सोनित-सरित घोर कुंजर करारे भारे,
कूल तें समूल बाजि विटप परत हैं।
सुभट-सरीर नीरचारी भारी भारी तहाँ,
सूरनि उछाह कूर कादर डरत है।
फेकरि फेकरि फेरु फारि फारि पेट खात,
काक कंक बकुल कोलाहल करत हैं।

× × ×

पक्षियों का चहकना सबको प्रसन्न कर देता है। कविवर पंत तो विहग-बालिका के मधुर गीत सुनने के लिए सदैव आतुर रहे हैं। प्रकृति की सुरम्य परिधि में रहकर श्रीपंत ने न जाने कितने विहंगों की ध्वनियों को समेट कर अपने मानस में भरा हैं।

बाँसों का झुरमुट—
संध्या का झुटपुट—
हैं चहक रहीं चिड़ियाँ
टी-वी-टी—टुट् टु ट्।

(युगांत)

संध्या का गहराया झुटपुट,
झीलों का सा घरे सिर मुकुट।
हरित चूड़ कुकड़ू कूँ कुक्कुट,
एक टांग पर तुले दीर्घ तर।
पास खड़े तुम लगते सुंदर।

(स्वर्णधूलि)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कवि तो खग की भाँति गाना चाहता है :—

गा सके खगों का सा मेरा कवि,
विश्री जग की संध्या की छवि।
गा सके खगों का मेरा कवि,
फिर हो प्रभात, फिर आए रवि।।

कविवर प्रसाद का भावुक हृदय तो श्यामा की रसीली ध्वनि से सदा प्रभावित रहा है—

चातक की चकित पुकारें।
श्यामा-ध्वनि सरल रसाली।
मेरी करुणार्द्र कथा की
टुकड़ी आँसू से गीली।
(आँसू)

कहा जाता है कि सरगम (स रे ग म प ध नि) की सृष्टि कतिपय पशु-पक्षियों की ध्वनि पर आधारित है।

षड़ज मोर स्वर ते बनत,
जाकौ बिमल अवाज।
बुधजन याकौ गिनत है,
सब पच्छिन को राज।
ऋषभ पपीहा शब्द तें,
बुधजन करत बखान।
जो संयोगिन सुखद है,
विरहिन दुःख महान।
बकरा के आवाज़ तें,
जाको होत प्रकास।
जानहु सो गन्धर्व स्वर,
पूरहि मन की आस।
सारस मध्यम बोलती,
जो प्रसिद्ध जग माँहि।
जन्म समीप ताके भवन,
विलसति सदा तहाँहि।
कोयल कूकति बाग में,
पंचम स्वर आलापि।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुरभि रसालन डार पर
बहु विधि करति कलापि।
घोड़न की आवाज से,
धैवन होत प्रकास।
करत सवारी सुघर जन,
श्रम नहिं आवत पास।
गज निषाद स्वर करत है
अनुभव सिद्धि अखात।
जेहिं सवार होइ सुघरजन,
मन भावत तहाँ जात।'

(डा० गोविन्द सिंह जी से प्राप्त)

यह तो सत्य है कि इन प्राणियों की बोलियाँ अस्पष्ट होने के कारण सामान्य मानव की समझ के बाहर हैं, फिर भी इन्हें हम निरर्थक नहीं कह सकते। जब विश्व का जनक ही इन्हें न समझ सकता तो फिर इन्सान की शक्ति ही कितनी है। लेकिन खुदा के बन्दे बहुत आगे बढ़ना चाहते हैं। आज का मानव परमेश्वर की सृष्टि को न कुछ समझकर स्वयं को महान मानने लगा है। उसकी सीमित बुद्धि असीमित विश्व को अपनी परिधि में बाँधना चाहती है। विज्ञान के युग में कुछ भी असम्भव नहीं है। एक विद्वान् ने पक्षियों की बोली-विषयक अस्पष्टता को बताते हुए गरुड़-मोह की कथा को सुनाया था। राम कथा में पक्षिराज गरुड़ की सेवाओं का भी उल्लेख है।

रणस्थल में भगवान रामचन्द्र ने मेघनाद के हाथों अपने को बँधा लिया था। भगवान को नाग-पाश से मुक्त करने के लिए नारद जी की आज्ञा से गरुड़ युद्ध-भूमि में गए थे और सर्पों का भक्षण करके उन्होंने श्री हरि को बन्धन हीन कर दिया था। यहीं उन्हें भ्रम हुआ और वे विचारने लगे—

व्यापक ब्रह्म बिरज बागीसा।
माया मोह पार परमीसा।
सो अवतार सुनेउँ जग माहीं।
देखेउँ सो प्रभाव कछु नाहीं।

दोहा—भव बन्धन ते छूटहिं नर जपि जाकर नाम।
खर्ब निसाचर बाँधेउ, नाग पास सोइ राम।

(राम च० मा०—उत्तराकाण्ड)

भगवान की लीला न समझने के कारण गरुड़ जी विकल हुए और वे अपनी शंका की निवृत्ति के लिए इधर-उधर फिरे। इसके पश्चात् ब्रह्मा जी की आज्ञा से वे भगवान शंकर के चरणों में आए। भगवान

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुबेर के घर जा रहे थे अतः उन्होंने परम भक्त काक भुशुण्डि के पास पक्षिराज को भेजा। भवानी पति ने स्वीकार किया है कि खग ही खग की बोली को समझते हैं।

पक्षियों की बोलियाँ

यहाँ विहगों की बोलियों को उनकी ध्वनियों के ही आधार पर उद्धृत किया जा रहा है। वैज्ञानिकों को इनके अर्थ स्पष्टीकरण के लिए प्रयत्न अवश्य करना चाहिए। सतत सम्पर्क के द्वारा वन्य जीवों की भाषा का अर्थ शिकारियों ने स्पष्ट किया है।

पक्षी का नाम	—	बोली
1. डोम काग	—	(तीव्र) काँव, काँव, काँव
2. सामान्य काग	—	(कोमल) काँव, काँव, काँव
3. खैरी सिसी	—	चिल्प-चिल्प, (कभी धीरे-धीरे और कभी लगातार)
4. पैंग गँगई—		व्हिच-व्हिच-व्हिच-री-री-री-री-री (मधुर संगीतात्मक स्वर में)
5. दक्खिनी गँगई—		क्रू-क्रू अथवा क्रोकान्त (मुरली-ध्वनि के रूप में)
6. बादामी गँगई—		स्विच-स्विच
7. पीत नयनी गँगरा—		चीप-चीप-चीप
8. सुभागी—		ची-ई
9. सित कपोली बुलबुल—		क्विक ए ड्रिन्क विघ यू
10. खैरी डुबकी—		डिजचिट-डिजचिट (कर्कश ध्वनि में)
11. नीला पिछा—		जिर्री-जिर्री—ट्रि-ट्रि-ट्रि-ट्रि-ट्रि (आवृत्ति के साथ)
12. काला पिछा—		चिक-चिक
13. काला थिरथिरा – तेलिन—		व्हिट-व्हिट-व्हिट
14. दहियल—		स्वी-ई-न्नि-र
15. भूरी कस्तूरी—		चेल्या-चेल्या-चिर्रली, चेल्या-चेल्या-चेल्या, चेल्या-चेल्या-जलिया
16. कस्तूरी (नीलगिरी)—		क्री-ई, चक-चक-चक
17. काल जीत कस्तूरा—		क्री-ई (कर्कश स्वर मे)
18. शाह बुलबुल—		चे या चे-च्वे
19. ल्हटोरा—(किरौला)—		व्हीट-व्हीट-व्ही-व्ही-व्ही-व्ही
20. बाल सहेली—		स्वी-स्वी (मंद संगीतात्मक स्वर में)
21. काला कसिया—		पिट-पिट-पिट (शीघ्रतापूर्ण आवृत्ति)
22. बड़ा कसिया—		टी—ई ई
23. भृंगराज—		व्हाट-व्हाट-व्हाट-व्हाट (सीटी के रूप में)
24. पतिया फुदकी 'दर्जिन'—		टोविट-टोविट टोविट अथवा प्रेटी-प्रेटी-प्रेटी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

25. पंखा पूंछ फुदकी—	चिप-चिप-चिप
26. पिंगली फुदकी—	किट-किट-किट
27. पीलक—	ची एह (कभी कभी—पि-लो-लो)
28. गलगल—	कीकी-कीकी-कीकी-चर-चर
(देशी मैना)	कोक-कोक-कोक-कोक (गरगराने की ध्वनि के साथ) अथवा रेडियो-रेडिग्रो-रेडिग्रो
29. बया—	चिट-चिट-चिट, ची-ई
30. देशी गौरैया—	टिसी-टिसी-टिसी अथवा चीर-चीर-चीर
31. कलमुड़ी गंदुम तथा लालसिर गंदुम	ट्विट-ट्विट (संगीतात्मक)
32. घूमली अबाली—	चिट-चिट-चिट (कोमल स्वर में)
33. सींक पूंछ अबाबील—	चिट-चिट-चिट (उड़ते हुए) तथा चिप-चिप-चिप
34. भूरा ममोला—	ची-चोप-ची-चोप
35. नीली फुलचुही—	चीविट-चीविट-चीविट (आवृत्ति के साथ)
36. फुल सुंघनी—	चिक-चिक-चिक
37. टुंइयाँ—	टूईं-टूईं अथचा टूई-टूई
38. हरा पतरंगा—	टिट-टिट अथवा ट्री-ट्री-ट्री
39. किलकिला—	चिर्रक-चिर्रक
40. नीला किलकिला—	चि-ची, चि-ची (तीव्र स्वर में)
41. धनेल—	क-क-क-के ए (तीव्र कड़कड़ाने के स्वर में)
42. हुदहुद—	हू-पो अथवाहू-पो-पो ।
43. चिपक—	चक-चक-चक-चक-र-र-र-र
44. घुग्घू—	बूम-ग्रो-बूम
45. साँप मार गरुड़—	किक्-किक्-किक-की
46. पहाड़ी कबूतर—	गूट्र-गू, गूट्र-गू
47. तुरतुरु पड़की—	ग्रू-गूर-गू-ग्रू-गूर्र-गू
48. भट तीतर—	कुट-रो
49. बटेर—	बेट-मी-लिप्स
50. काला तीतर—	जक-जक-टी-टी-टुर । कुछ कहते हैं कि काले तीतर की ध्वनि में 'सुभान तेरी कुदरत' अथवा 'लहसुन-प्याज, अदरक' सुनाई पड़ता है ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

51. उल्लू—	उर, उर, उर, उर, उर
52. श्वेत तीतर—	कटीतुर-कटीतुर अथवा पटीला-पटीला (आवृत्ति के साथ)
53. लाल फुली टिटहरी—	डिड-टी-डू-इट अथवा पिटी-टू-डू-इट
54. कररी—	कूर-ली अथवा कुर-ल्यू (उड़ते समय कर्कश तीव्र स्वर में)
55. मयूर—	मे-आओ-मे, आओ
56. सारस—	कर्र-कर्र-कर्र
57. कोयल—	कोइल-कोइल-कोईल
	कूऊ-कुऊ-कुऊ
	कर्री, कर्री-कर्री
	कूहू-कूहू
58. चील—	ची-ची-ची
59. फाख्ता (छोटी फाख्ता)—	कुक-कुक-कू-कू
60. लटकन तोता—	ची-ची-ची

पशुओं की बोलियाँ

पशु भी तो अपने जीवन को सुख-दुःख की विविध अनुभूतियों के साथ व्यतीत करते हैं। उनमें स्नेह है, विषाद है, क्रोध है और भय है। न वे प्रणय से शून्य हैं और न उनमें विरक्ति का अभाव है। इन सब मानसिक स्थितियों को वे अपनी बोलियों से स्पष्ट करते हैं। शारीरिक क्रियाएँ भी कभी-कभी उनके हृदयस्थित भावों को प्रकाशित कर देती हैं। पैर पटक कर, सिर घुमाकर और पैरों से जमीन खोदकर ये पशु अपने असहनीय आक्रोश को प्रायः दिखाते रहते हैं। सिंह ने अपनी गर्जना को भाव-प्रकाशन के लिए माध्यम बनाया हैं। इसकी मंदता एवं तीव्रता से कभी वह क्रोध बताता है तो कभी हर्ष। व्याघ्र (Tiger) मानव पर आक्रमण करते समय लघु-तीव्र[1] गुर्राने के साथ झपटता है। दो अथवा तीन बार की इस कर्कश ध्वनि में अत्यधिक तीव्रता रहती है। सहसा क्षुब्ध होने पर शेर हूफ (Whoof) करके आँखें लाल कर लेता है। क्रोधावेश में वह गरजता-गुर्राता (growl) है और कभी म्युओ (meow) करता है। प्रसन्न मुद्रा में यह वन्य पशु नासिका से वायु निकालता हुआ एक प्रकार का शब्द (Purring-noise) करता हुआ अपने ओष्ठों को कुछ खोल लेता है। यों तो व्याघ्र मौन-प्रिय अधिक है और लगातार गर्जना करना इसे अप्रिय है फिर भी कष्ट-सूचक इसकी दीर्घ हाँऽऽवँ H-O-W-N जंगल एवं पर्वतों को प्रकंपित कर देती है। कुछ शिकारियों का कहना है कि शेर (Tiger) कभी-कभी पुक (pook) शब्द करता हुआ साँभर को अपनी ओर आकर्षित करता है और उसे खा कर अपनी भूख शान्त कर लेता है। यह

1. Deep short grunting cough repeated two or three times.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुक (pook) ध्वनि साँभर से कुछ मिलती-जुलती होती है और वह (साँभर) भ्रमित होकर अपने काल के पास चला आता है।

तेन्दुआ क्रुद्ध होकर गुर्राता (growl) है और द्युत गति से आक्रमण करता हुआ वह 2-3 तीव्र लघु गहरी साँसें (खाँसता हुआ) निकालता है। यह ध्वनि शेर की भाँति होती है लेकिन इसकी स्वर-कर्कशता और कठोरता कम रहती है।

आक्रमणरत तेंन्दुआ अथवा चीता अधिक गुर्राता है।

तेन्दुए की एक साधारण बोली और है जो लकड़ी आरे से लकड़ी चीरने की सी आवाज़ की भाँति होती है। इसे sawing noise कहते हैं। इस ध्वनि को करते समय यह पशु अपने मुख को कुछ खुला रखता है और साँस को मंद गति से बाहर निकालता और भीतर ले जाता है। शिकारियों की धारणा है कि इस आवाज़ से वह मृगों को भयभीत करता है जिसे सुनकर वे (मृग) अपनी ध्वनि में भय-संकेत करते हैं, जिससे तेन्दुआ अपने खाद्य का अन्वेषण सुगमता से कर लेता है।

गौर (Gaur) कई प्रकार की ध्वनियाँ करता है। 'PFF-hong' (फ़फ़ हाँऽऽग) ध्वनि से वह अपनी भयाकुलता प्रकट करता है। भयँ (Bhay) इसकी संकट-सूचना की पुकार है। सीटी (Whistling) की भाँति इसकी प्रणय-बोली बताई गई है।

साँभर भयभीत होने पर पुक (Pook)-पुक बोलता है। कामातुर होने पर उसकी ध्वनि में कुछ विस्तार (a loud mettalic bellow and a more prolonged than the cry of alarm) और तीव्रता आ जाती है। डराने के लिए बड़ी भयावनी हाँऽऽक देता है।

हाथी अपनी चिंघाड़ की मन्दता एवं तीव्रता से अपने भावों की अभिव्यक्ति कर लेता है। कभी-कभी वह नासिका से वायु निकाल कर अपने कोप को प्रकट करता है। क्रुद्ध हाथी की चिंघाड़ बड़ी भयावह, कर्कश और गहरी साँस लिये हुए होती है। रोग-ग्रस्त होने पर गज भी आहें भरता है और कराहता भी है।

प्रणय के समय यह अपनी प्रेयसी के शरीर पर लम्बी सूँड रखकर कभी मन्द स्वर करता है तो कभी तीव्र शब्द द्वारा अपनी काम-वेदना को व्यंजित कर देता है। मदोन्मत हाथी की चिंघाड़ कभी-कभी मेघ गर्जन की याद दिलाती है।

साँभर की मृत्यु-चीत्कार एक लम्बी कर्कश चिल्लाहट होती है।

बारहसिंगा एक वाचाल पशु है। शत्रु को देखकर वह जोर से शब्द करता है। इसकी कर्कश चीख को (bray) रेकने के समान कह सकते हैं। इस पशु की "ee ON ee on"—ई ओंग ई ओंग ध्वनि विचित्र होती है। कभी-कभी यह Ring—Hon—Ring—Hon—रिंग-होंग-रिंग-होंग शब्द करके अपनी प्रफुल्लता को बताता है।

करकर (Barking deer) की भय विह्वलता-सूचक बोली तीव्र भोंकने (Sharp bark) के समान

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुनी गई है। प्रणय काल में इसकी चिल्लाहट कुछ तीव्रतर और फैली हुई (loud and more prolonged) हो जाती है।

नील गाय (Nilgai or Blue Bull) विपत्ति में पड़कर B—A—A—E (बा—ए—इ) करती है। संकट की समीपता में वह मन्द-मन्द किन्तु तेज शब्द करती है जो कर्कश होता है।

रीछ कानन में भ्रमण करता हुआ अधिक शब्द करता है। अपने भावों के प्रकाशन के लिए यह दो ध्वनियों (Puffing and humming) का सहारा लेता है। ऐसा श्री Blanford का कथन है। लेकिन मृगया-विशारदों की धारणा है कि यह पशु और भी ध्वनियों को करता है। अपने पंजों को चाटते हुए रीछ गुनगुनाहट (humming) की अलौकिक ध्वनि से श्रोताओं को शीघ्र ही आकर्षित कर लेता है। आक्रमण करते समय यह जोर से गुर्राता है। आहट होने पर उसका चीत्कार (roaring, yelling and whining) जंगल में चारों ओर फैल जाता है।

सोन कुत्ता—वन में शेर को भगा देने वाले ये कुत्ते अपने साहस के लिए प्रसिद्ध हैं। शिकार करते समय ये मौन रहते हैं और पक्षियों के चहचहाने तथा बन्दरों की किच-किच पर ध्यान नहीं देते हैं। 'भोंकना' शब्द की शुद्ध परिभाषा में इन कुत्तों की ध्वनि आती ही नहीं है, क्योंकि ये वन श्वान भोंकते नहीं हैं। इनकी बोली को अंग्रेजी में YAP कहते हैं। ये अपने उल्लास को प्रकट करने के लिए प्रायः पूंछ हिलाते हैं। समयानुसार ये रिरियाने भी (whimper and whire) रहते हैं। इनकी साधारण बोली चक-चक चक है। प्रणय-प्रमत्त होकर सोन कुत्ते शृगाल की ध्वनि-सी (हू हू हुआ—हूऽऽ) करते हैं जिसे लिखित भाषा में व्यक्त करना कठिन प्रतीत होता है।

सूअर (Indian Pig) भी विविध ध्वनियों को करता हुआ सुना गया है। चकित एवं बाधित होने पर यह गुर-गुराता (grunt) है और अपने साथियों से बिछुड़ जाने पर यह किकयाता (Squeal) है। आक्रमण के लिए सन्नद्ध सूकर 2-3 बार तीव्र स्वर से गुरगुराता है और अपने लक्ष्य पर पहुँचने का पूर्ण प्रयास भी करता है। मरणासन्न सुअर का चीत्कार कर्ण-कटु, भयावह एवं दीर्घ कालीन (prolonged) होता है।

अपने निकले हुए दाँतों को तेज करते समय भी यह पशु एक ध्वनि (clattering) करता है।

बन्दरों की अनेक जातियाँ होती हैं। ये समूह में रहते हैं। और एक वृद्ध बन्दर उस यूथ का नेता बनता है, जो विपत्ति काल में अपने साथियों को मार्ग दिखाता है। शिकारियों के लिए ये मर्कट बड़े सहायक होते हैं। शेर, चीता, तेंदुआ आदि की उपस्थिति को ये 'चिक-चिक' और 'हूप-हूप' की ध्वनियों से विज्ञापित करते हैं। कभी-कभी ये शाखा-मृग हिंसक पशुओं (व्याघ्र, चीता आदि) को देखकर क्रोध करते हैं और खूब चिल्लाते हैं। प्रातःकाल होते ही ये हूप-हूप करके कानन को ध्वनित कर देते हैं। रात में सोने के पूर्व भी इस प्रकार की ध्वनि सुनी जाती है। बन्दरों की दो बोलियाँ और हैं जिन्हें शब्दों द्वारा स्पष्ट नहीं किया जा सकता है। एक तो घोड़े को चलने के लिए कही गई कोचवान की बोली के समान

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होती है और दूसरी लगातार आने वाली हिचकियों (a series of hiccups) के सदृश कही जा सकती है। खैं-खैं खों-खों आदि बोलकर ये सबको डराया करते हैं और लंगूर हू-हा, हू-हू हू ध्वनि करके अपनी उपस्थिति को शीघ्र बताते हैं।

लकड़बग्घा की ध्वनियाँ भी अजीब होती हैं। कभी वह कड़-कड़ हँसी (chattering laugh) की भाँति बोलता है तो कभी विलक्षण रूप में गुरगुराता (Weird form of howling) है।

शृगाल की बोलियों से ग्रामवासी अधिक परिचित हैं। शाम होते ही वे गाँवों के समीप आकर विलाप की चिल्लाहट (Wailing howls) से सबको अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। कभी वे ऊँचे स्वर में बोलते हैं तो कभी धीमे में। इस चालाक पशु की एक विचित्र बोली होती है जिसे 'हुआ हुआ हूऽऽ" कहते हैं। बम्बई से कलकत्ते तक सर्वत्र शृगाल एक-सी बोली बोलते सुने गए हैं।

लोमड़ी एक सुन्दर लघुकाय वन-प्राणी है। बाग बगीचों में एवं ग्रामों के समीप यह चुपके से घूमता रहता है। इसकी चिल्लाहट में कट कटाने की ध्वनि (chattering bark) मिश्रित रहती है। यह कभी-कभी 2-3 बार कुत्ते की भाँति मन्द स्वर में भोंकता (yelp) है।

मृग की अनेक उपजातियों ने मानव-हृदय को प्राचीन काल से विमोहित कर रखा है। घास के मैदानों में कूदता हुआ हरिण कभी भयभीत होता है तो कभी अपने साथियों को निश्चित ध्वनि के द्वारा आने वाले संकट से सजग बनाता है। इसकी भी कई बोलियाँ होती हैं।

प्रणय के समय अथवा संभोग-काल में कामातुर मृग का प्रमत्त स्वर विशेष आकर्षक होता है। वह अन्य प्रेमियों को आवेश में आकर दूर भगाता है और प्रेमिका पर पूर्ण अधिकार कर लेता है। यह ललकार भरी ध्वनि रोमांचकारी एवं भीषण होती है।

मृगी अपने बच्चों को गम्भीर मन्द आवाज़ में बुलाती है।

पशुओं को बोलियों एवं पुकारों के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वे नैसर्गिक होती हुई भी अन्य साधनों से सीखी भी जा सकती हैं। कुत्ते भोंकते हैं लेकिन यह प्रवृत्ति भेड़ियों में नहीं है परन्तु परिस्थिति विशेष में रहकर श्वान भोंकना भूल जाते हैं और भेड़िए बन्दी रूप में कुत्तों की भाँति भोंकना सीख लेते हैं। शृगाल के बच्चे मानव से पोषित होकर अपने वंश के साथियों के समान चिल्लाना (howl) भूल जाते हैं। अतः सिद्ध होता है कि कतिपय ध्वनियाँ जन्म जात नहीं होती हैं अपितु अन्य बाह्य उपायों से प्राप्त तथा परिपूर्ण की जा सकती हैं।

पक्षियों की बोलियों के समान ही अंग्रेजी में (अन्य भाषाओं की भांति) पशुओं की बोलियों अथवा प्रकारों के लिए निश्चित क्रियाओं का प्रयोग होता है।

इन बोलियों का अध्ययन बड़ा रोचक है और विद्वानों को प्रो० गारनर (Prof. Garner) के समान दत्तचित होकर इनका विश्लेषण करना चाहिए।

लोक-कथाओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में पशु भी मानव की बोली बोलते थे। कुछ कारण वश दोनों में वैमनस्य हो गया और पशु जंगल में जाकर रहने लगे। मानव-समाज ने उदर-पूर्ति के लिए इन चतुष्पदों का संहार करना प्रारंभ किया और जंगलों में भी इनका अस्तित्व संदेहास्पद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हो गया। अभी पशु मानव-वाणी को नहीं भूले थे। एक दिन एक ब्राह्मण अपनी पुत्री की शादी के लिए जंगल में पत्ते लाने के लिए गया। उसे देखकर एक शूकरी ने गालियाँ देना शुरू किया। विप्र क्रुद्ध होकर भगवान के पास गया और शूकरी के दुर्व्यवहार की शिकायत की। स्वर्ग में सब वन्य पशुओं को बुलाया गया और भगवान ने शाप देते हुए कहा—"मूर्खो! तुम्हारी एक साथिन ने ब्राह्मण को गालियाँ दी हैं इसलिए अब तुम न मनुष्य की बोली बोल सकोगे और न उस के साथ रह सकोगे। तुम्हारे चाहने पर भी मानव तुम्हें अपने पास न आने देगा।" आज भी भगवान के शाप-वश पशु मानव की वाणी को नहीं बोल सकता है।

पशु-बोलियों के सम्बन्ध में भी अनेक कथाएँ प्रचलित हैं जिनसे प्रकट होता है कि समय-समय पर शेर, शृगाल, बिल्ली, कुत्ता, रीछ, लोमड़ी आदि ने देवी देवताओं के वरदान या शाप से अपने भावों के स्पष्टीकरण के लिए अनेक बोलियाँ सीखीं और अब तक वे उन्हें ही अपनाए हुए हैं। शेर ने गुर्राना दमे से पीड़ित एक देवता से सीखा था। कुत्ते ने भों-भों करना एक देवी से ही प्राप्त किया था।

बुन्देलखंड की लोक कथा के अनुसार हू-हू करने वाली आज की लोमड़ी एक समय कुटिला स्त्री थी। उसने हू-हू करके भगवान शंकर को डरवाया था। अतः भगवान ने क्रोध में आकर उसे लोमड़ी बना दिया और आज भी वह हू-हू करती है और सब को डराना चाहती है, लेकिन उस से अब कोई भी डरता नहीं है।

लोक-साहित्य का अनुशीलन भी इस बोली-समस्या के सुलझाने में सहायता दे सकता है, ऐसा मेरा अनुमान है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पक्षियों की आनुमानिक आयु

पक्षियों की निश्चित आयु का अनुमान करना सरल नहीं है। लघु-काय वाले इन प्राणियों के विनाशक अधिक हैं जिन्होंने इन्हें स्वाभाविक मृत्यु तक जीने भी नहीं दिया। मनुष्यों के अतिरिक्त जंगल के मांसाहारी विहंग भी तो अपनी उदर पूर्ति के लिए स्वजाति बन्धुओं को खाते रहते हैं। बाज पक्षी का स्वजाति द्वेष प्रबल होता है। भयानक संहार के बीच कौन पक्षी कब तक जीता है अथवा कितने समय तक स्वाभाविक रूप से जीवित रह सकता—इस तथ्य को जानने की किसे चिन्ता है। जीवो जीवस्य जीवनम् और जीवन संघर्ष तथा बलिष्ठ की अति जीविता के कारण तभी तक प्राणी विशेष जीवित रह सकता है जब तक वह अपनी रक्षा कर सकता है। प्रकृति का भयावह स्वरूप भी तो इन विटप-वासियों को नष्ट करता रहता है। घोर वर्षा के कारण अनेक पक्षधरों की अकाल मृत्यु होती है। आँधियाँ पक्षियों को मौत के मुँह में जाने के लिए विवश कर देती हैं। वनाग्नि की निर्दयी लपटें तो विहगों के वंशों तक को खा डालती हैं। इस बेचारे पक्षी का विनाश प्रत्येक रूप में संभव है। वस्तुतः इसका शरीर कुछ छोटी-छोटी हड्डियों से ही निर्मित है। एक उर्दू शायर ने बुलबुल के विषय में ठीक ही कहा है—

मालूम है हमें सब, बुलबुल तिरी हक़ीक़त[1]।
इक मुश्त[2] इस्तख़ाँ[3] है, दो पर लगे हुए हैं।

ये पंक्तियाँ प्रत्येक खग के सम्बन्ध में कही जा सकती हैं। ऐसी परिस्थिति में सुरक्षित होने से पालित पक्षी की जीवन-अवधि वन में रहने वाले आपन्न विहंग की ज़िन्दगी के फैलाव से अधिक विस्तृत रहती है।

श्री राजेश्वरप्रसाद नारायण सिंह अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'भारत के पक्षी' में लिखते हैं—

पक्षियों के सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उनकी पूर्णायु का है। किस पक्षी की आयु कितनी है, यह कहना कठिन है। इसका वास्तविक पता पाना कठिन तो है, पर जब से पक्षियों के पैर में छल्ला पहनाने की प्रणाली चल पड़ी है तब से यह कुछ आसान-सा हो गया है। इन छल्लों की मदद से साधारण तौर पर यह पाया गया है कि बड़े पक्षियों की आयु अधिक होती है, छोटों की कम। यह भी मालूम हुआ है कि जंगल में रहने वाले पक्षियों की अपेक्षा पालतू पक्षी ज्यादा दिन तक जीवित रहते हैं।...गरज यह कि जहाँ छोटी चिड़ियाँ जंगल में औसतन $1\frac{1}{2}$ वर्ष से अधिक नहीं जातीं, वहाँ बड़े पक्षी स्पष्टतः ज्यादा दिनों तक जिन्दा रहते हैं। जैसे कि उल्लू जिनकी जंगली अवस्था में औसतन आयु पाँच साल की होती है या गरुड़ जो कि औसतन चार साल तक जीते हैं।

1, असलियत 2. मुट्ठीभर 3. हड्डियाँ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यहाँ कतिपय पक्षियों की अनुमानिक आय दी जा रही है—

1.	तोता (Parrot)	50 वर्ष
2.	कबूतर (Pigeon)	18 ,,
3.	भारद्वाज (Skylark)	30 ,,
4.	राजहंस (Swan)	100 ,,
5.	फुदकी (Wren)	3 ,,
6.	दहगल (Magpic Robin)	20 ,,
7.	कस्तूरी (Black bird)	10 ,,
8.	कस्तूरा (Gray Black bird)	9 ,,
9.	सारस (Crane)	24 ,,
10.	कौआ (Crow)	100 ,,
11.	गरुड़ (Eagle)	100 ,,
12.	हंस (Goose)	50 ,,
13.	मुर्गी (Hen)	10 ,,
14.	तार बगला (Heron)	60 ,,
15.	मोर (Peacock)	30 ,,
16.	दामा (Roban)	12 ,,
17.	कालजीत (Thrush)	10 ,,
18.	चंडूल (Lark)	18 ,,
19.	तीतर (Partridge)	15 ,,

कुछ पक्षियों की आयु को लेकर लिखा गया, बिजावर (बुन्देलखण्ड) निवासी महाकवि बिहारीलाल जी का निम्नस्थ छन्द विचारणीय है—

रोबन द्वादस वर्ष पंचदश भीतर तीतर।
वय बुलबुल दश आठ बीस लग कहिगे कबूतर।
तीसक वर्ष कलापि कारिका पच्चिस लिज्जिय।
चील चलत चालीस मुरग पचास गिनिज्जिय।
सौ वर्ष काग कहिये गुनी, गृद्ध शतक द्व आनिए।
कह कवि 'विहार' इन खगन की यह विधि आयु प्रमानिए।

(साहित्य-सागर, पृष्ठ 396)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशुओं की आनुमानिक आयु

जिस प्रकार पशुओं का शरीर-माप देश-काल के प्रभाव से कम अधिक होता रहता है उसी प्रकार प्राणियों की आयु भी क्षेत्र एवं समय के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है। एक युग था जब हजारों वर्षों तक पशु रहते थे और अब उनकी जीवन-परिधि इतनी छोटी हो गई है कि उसकी सीमा निश्चित करना भी कठिन हो गया है।

आयु में वृद्धि तथा ह्रास परिस्थिति जन्य भी होता है। स्वतन्त्र रहने वाले पशुओं की आयु बन्धनों में निवास करने वाले प्रणियों से अधिक होती है। इसी प्रकार जीवन को सुविधाओं के साथ बिताने वाले पशु अपनी ज़िन्दगी को बहुत अधिक काल तक सुरक्षित रखते हैं लेकिन वे पशु जल्दी मर जाते हैं जो कष्ट से भोजन पाते हैं अथवा जीवनोपयोगी साधनों का पूर्ण रूप से उपयोग नहीं कर सकते हैं।

पौष्टिक भोजन खाने वाला पशु उस प्राणी से अधिक जीवित रहता है जो भरपेट खाना नहीं खा पाता। गरीबी के कारण आज भारतीयों की आयु अन्य देश वासियों की तुलना में कम पाई गई है। इसलिए यह मानना होगा कि बाह्य परिस्थितियाँ आयु की सीमा को घटाती-बढ़ाती रहती हैं।

कहा जाता है कि यदि घोड़े को धूलि में लोटने की सुविधा दी जावे और रात में उसे प्रकाश-युक्त स्थान में बाँधा जाय तो वह बत्तीस वर्षों तक स्वस्थ रहता है और अपने स्वामी को सवारी का सुख देता रहता है :—

धूरि धुआँ दीपक उजियारी।
बत्तिस बरस तुरग असवारी॥

बैल के विषय में भी लोक-कवि घाघ का कहना है कि यदि इस घरेलू पशु को खूब चराया जावे और सूखे स्थान में रखा जाय तो वह बीस वर्ष तक कृषि-कार्य को अच्छी तरह से करता है।

समतल जोतै पूत चरावै,
लगते जेठ भुसौला छावै।
भादों मास उठै जो गरदा,
बीस बरस तक जोतौ बरदा॥

—यदि बैल को समतल खेत में जोता जाय, किसान का पुत्र उसे स्वयं प्रेम से चरावे, जेठ लगते ही भूसा घर को छा दिया जाय और पावस में उसे सूखे स्थल में बाँधा जाय तो वह बीस बरस तक खेती के लिए उपयोगी रहता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशुओं की अनेक उपजातियाँ होती हैं और यही उपजाति विभिन्नता उनकी आयु में असमानता उत्पन्न करती है।

पशुओं की आयु के सम्बन्ध में वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में बहुत कुछ उल्लेख हुआ है। नीति विषयक ग्रन्थों में भी इस विषय की चर्चा हुई है। शुक्र-नीति के कुछ सम्बन्धित श्लोक यहाँ उद्धृत किये जाते हैं :—

नव तालश्च सुदृढ़ः सुमुखोष्ट्रः प्रशस्यते।
शतमायुर्मनुष्याणां गजानां परमं स्मृतः॥

—नौ ताल प्रमाण वाला और सुन्दर मुख वाला ऊँट श्रेष्ठ कहा जाता है। मनुष्य एवं हाथियों की अवस्था सौ वर्ष की उत्तम कही गई है।

मनुष्य गजयोर्बाल्यं यावद्विंशति वत्सरं।
नृणां हि मध्यमं यावत्षष्टि वर्ष वयः स्मृतं।

—मनुष्य और हाथी की बाल्यवस्था बीस वर्ष तक होती है और मनुष्यों की मध्यम अवस्था साठ वर्ष तक मानी गई है।

अशीति वत्सरं यावद्गजस्य मध्यमं वयः।
चतुस्त्रिंशत्तु वर्षाणामश्वस्यायुः परंस्मृतम्।

—अस्सी वर्ष तक हाथी की मध्यम अवस्था होती है। चौंतीस वर्ष की अवस्था घोड़े की पूरी मानी जाती है।

पंचविंशति वर्षं हि परमायुर्वृषोष्ट्रयोः।
बाल्यमश्ववृषोष्ट्राणां पंच संवत्सरं मतं।

—बैल और ऊँट की पूरी अवस्था पच्चीस वर्ष की होती है तथा घोड़ा, बैल एवं ऊँट इनकी बाल्यावस्था पाँच वर्ष की कही गई है।

मध्यं यावत्षोडशाब्दं वार्धक्यं तु ततः परं।
दंतानामुद्गमैर्वर्णैरायुर्ज्ञेयं वृषाश्वयोः।

—सोलह वर्ष तक मध्यम आयु और उससे आगे वृद्धावस्था होती है। दाँतों के निकलने और वर्ण से बैल तथा घोड़े की अवस्था जानी जाती है। (शुक्र नीति, भाषा टीका सहित अध्याय 4)

वीर रस के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'आल्हा' में कहा गया है कि कुत्ते की अवस्था 12 वर्ष है और शृगाल की पूर्णायु तेरह साल की होती है :—

बारह बरस लौं कूकर जीवै,
तेरह लैकें जिए सियार।
बरस अठारह छत्री जीवै,
आगे जीवन खों धिक्कार।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कतिपय पंचांगों में कलि-काल के स्वरूप का वर्णन करते हुए कुछ पशुओं की आयु का विवरण इस प्रकार दिया गया है[1]—

मनुष्य और हाथी की आयु	120 वर्ष
घोड़ों की आयु	32 ,,
बन्दरों की ,,	30 ,,
व्याघ्र की ,,	64 ,,
गधे की ,,	25 ,,
कुत्ते की ,,	12 ,,
बकरे की ,,	16 ,,
मृग की ,,	25 ,,
बैल की ,,	25 ,,
ऊँट की ,,	25 ,,

वन्य एवं पालित पशुओं से सम्बन्धित पुस्तकों के आधार पर कुछ पशुओं की आनुमानिक आयु निम्नलिखित है :—

1.	सिंह	30 वर्ष लगभग
2.	व्याघ्र (शेर)	30 ,, ,,
3.	हाथी	130—150 वर्ष
4.	हरिन	20 ,, लगभग
5.	चीता	25 ,, ,,
6.	बन विलाव	10 ,, ,,
7.	लकड़बग्घा	25 ,, ,,
8.	रीछ	40 ,, ,,
9.	भेड़िया	20—25 ,, ,,
10.	तेंदुआ	20—25 ,, ,,
11.	सुअर	12—20 ,, ,,
12.	घोड़ा	20—50 ,, ,, (63 ,,)
13.	बैल	8—10 ,,
	(विशेष जाति के बैलों की आयु	12—14 वर्ष)
14.	गाय	12—35 ,,
15.	भेड़	7 ,,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

16.	कुत्ता	12 वर्ष
17.	बिल्ली	9—20 ,,
18.	चूहा	4 ,,
19.	गिलहरी	12 ,,
20.	बकरा	15 ,,
21.	भैंस	32 ,,
22.	खच्चर	20 ,,
23.	गधा	32 ,,
24.	बन्दर	36 ,,

हथिनी की दीर्घायु के सम्बन्ध में एक किम्वदन्ती प्रचलित है। कहा जाता है कि औरंगजेब ने एक बूढ़ी हथिनी पुरस्कार रूप में एक कवि को दी। कवि ने इस पुरस्कार को असहनीय भार समझा और उसने निवेदन किया कि महाराज आपने मुझे एक ऐसी करिणी (हथिनी) दी है जिसे तैमूर लंग ने मोल लिया था और जो सम्राट् हुमायूँ, अकबर, जहाँगीर एवं शाहजहाँ की सेना में रही। वही बलहीन होकर आज शृगाल से भी भयभीत होकर जंगल में छिपती फिरती है :—

तिमिर लंग लइ मोल, रही बाबर के हल्के।
चली हुमायूँ संग, गई अकबर के दल के।
जहाँगीर जस लियो, पीठ को भार हटायो।
साहजहाँ करि-न्याय ताहि पुन माँड़ चटायो।
बल रहित भई पौरुष थक्यो, भगी फिरत बन स्यार डर।
औरंगजेब करिनी सोई, लै दीन्ही कविराज कर।

इस छप्पयपर विचार करने से हथिनी की आयु लगभग 300 वर्ष की बैठती है।

इसी प्रकार एक लोक-कथा कही जाती है, जिसमें मनुष्य की आयु प्रवृति का उल्लेख है और साथ ही साथ गधे, कुत्ते तथा उल्लू की उम्र का भी संकेत हुआ है, कथा इस प्रकार है —

एक समय की बात है। ब्रह्मा जी ने मनुष्य, गधा, कुत्ता और उल्लू इन चारों को अपने दरबार में बुलाया और कहा—"तुम सबों की उम्र 40 वर्ष है। मध्य लोक में जाओ और वहाँ जाकर अपना जीवन व्यतीत करो।" भगवान ब्रह्मा जी की आज्ञा सुनकर मनुष्य बोला—"भगवन्! मेरी आयु बहुत कम है। इतने कम समय में मैं मध्यलोक के सब सुखों को न भोग सकूँगा। मेरी आयु बढ़ाइए।" इतने में गधे ने कहा—"हे परमेश्वर! मेरी आयु बहुत है। बोझ को उठाते-उठाते मैं मर जाऊँगा। मेरी आयु कम कर दीजिए। आपकी बड़ी कृपा होगी।" गधे के कह चुकने पर कुत्ता रोकर बोला—"अन्नदाता मेरी भी उम्र

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बहुत अधिक है। घरों की रखवारी करने और दर-दर भटकने में मेरा शरीर मिट जाएगा, अपमान से भरी हुई मेरी जिन्दगी है। मैं लम्बी उम्र लेकर क्या करूँगा। दीन बन्धु मेरी उम्र आधी कर दीजिए। आपके इस एहसान को कभी न भूलूँगा।" कुत्ते का रोना बन्द हुआ कि उल्लू गिड़गिड़ाकर बोला—"हे संसार के बनाने वाले ईश्वर ! मेरी पुकार सुनिए। मेरा जीवन तो कष्टों से भरा हुआ है ही। दिन में न मैं बाहर फिर सकता हूँ और न किसी की कुछ सेवा ही कर सकता हूँ। रात में जब दुनिया सुख की नींद सोती है तब मुझे पेट भरने के लिए इधर-उधर चोर की भाँति फिरना पड़ता है। लम्बी उम्र देकर मुझे आप परेशान न करें। दया करके मेरी उम्र कम कर दीजिए। तभी मैं मनुष्य लोक में जाऊँगा अन्यथा नहीं।" भगवान का हृदय दया से भर गया और उन्होंने गधे, कुत्ते और उल्लू की आयु में से बीस-बीस वर्ष कम करके मनुष्य की उम्र सौ वर्ष की कर दी। विद्वानों का कथन है कि मनुष्य चालीस वर्ष तक सुख की ज़िन्दगी बिताता है। चालीस से साठ वर्ष तक गधे के समान परिवार का भार ढोता फिरता है। इसके बाद वह कुत्ते के समान घर की रखवाली करता है और जो कुछ उसके बच्चे उसे खाने को देते हैं, उससे ही आत्म-सन्तोष करता है। 80 वर्ष की आयु समाप्त करने पर उसके नेत्रों की शक्ति क्षीण हो जाती है और वह उल्लू की तरह देखता फिरता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशुओं का शरीर-माप

देश-काल के अनुसार जिस प्रकार पशुओं के शरीर-भार में परिवर्तन होता रहता है उसी प्रकार शरीर-माप पर भी देश-काल का अधिक प्रभाव पड़ता है। मानव के शारीरिक संगठन पर भी तो चिर-काल से समय और स्थान का असर पड़ रहा है। पर्वत-प्रदेशों के निवासी जीवों की शारीरिक लम्बाई एवं ऊँचाई मैदानों में रहने वाले प्राणियों के समान नहीं होती है। अन्वेषकों ने मृत पशुओं की प्राप्त हड्डियों से इनकी ऊँचाई और लंबाई का आश्चर्योत्पादक अनुमान किया है। महर्षियों का कथन हैं कि छह कालों से युक्त उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी के द्वारा भारत एवं ऐरावत क्षेत्रों के जीवों की आयु-ऊँचाई आदि में वृद्धि-ह्रास होता है।[1]

ऐसी परिस्थिति में पशुओं का शरीर-माप निश्चित करना सुगम नहीं है। इस विशाल वन-खण्ड में न मालूम कौन-सा पशु किस समय मिल जाय जिसकी लंबाई अथवा ऊँचाई दर्शक को चकित कर दे। अतः समय-समय पर शिकारियों की बन्दूकों से मारे गए वन्य पशुयों के शरीर-माप को अन्तिम निर्णय नहीं माना जा सकता। फिर भी एक नाप का ज्ञान हो ही जाता है। वन्य प्राणियों के शरीरिक माप के अध्ययन में मृगया-विशारदों के कथन अधिक महत्त्वशाली हैं। इसलिए इस निबन्ध में लिखी हुई मापों का आधार शिकारियों के कथन ही हैं। शेर की लम्बाई कतिपय प्रसिद्ध शिकारियों के मतानुसार 10 फीट के आस-पास होती है। 12 फीट लम्बे शेर का भी उल्लेख किया जाता है। शेरनी का शरीर-माप शेर की अपेक्षा कम होता है। 9 फीट और 6 इंच लम्बी शेरनी किसी समय प्रख्यात शिकारी की गोली का लक्ष्य बन चुकी थी। नैपाल के भयानक जंगलों में 10 फीट लम्बा शेर एवं 9 फीट लम्बी शेरनी का मिलना पूर्णरूपेण संभव है। साधारणतः शेरनी की लम्बाई 8 फीट, 4 इंच कही जाती है। 9 फीट, 11 इंच लम्बे शेर को मारने वाले आज भी जीवित हैं। कभी-कभी पूँछ की लम्बाई माप में विशेष अन्तर ला देती है। सबसे अधिक लम्बी एवं लघुतम पूँछ क्रमशः 45 इंच और 30 इंच तक देखी गई है। कुछ पशुओं का आनुमानिक शरीर-माप निम्नलिखित है—

1. सिंह (बब्बर शेर—Lion) — 9 फीट, 7 इंच / 10′ 7″ — लंबाई
2. रीछ (Sloth Bear) (नर) — लंबाई—5 फीट 7 इंच (पूँछ सहित); ऊँचाई—2 फीट 8 इंच (कंधे तक)

---

1. भारतैरावतयो वृद्धिह्रासौ षट् समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम—मोक्षशास्त्र, तृतीय अध्याय।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3. तेंदुआ (Leopard) (नर) 5 फीट, 4 इंच से 7 फीट तक

7 फीट, 2 इंच से 7 फीट, 9 इंच तक (गोल बाघ)

(नारी) 6 फीट लगभग।

नोट— शेर(Tiger) की पूंछ की अपेक्षा तेंदुए की पूंछ कुछ अधिक लंबी होती है। कुछ शिकारियों के मतानुसार तेंदुए की दीर्घतम पूंछ 38 इंच तक और लघुतम पूंछ 28 इंच तक देखी गई है। साधारणतः इस वन्य पशु की पूंछ 22 इंच से 28 इंच तक लम्बी बताई जाती है।

4. गौर (Gaur or Indian Bison) 6 फीट $\frac{1}{2}$ इंच, ऊँचाई

नर साधारणतः ऊँचाई इस से 5 इंच कम (कंधे तक)

लम्बाई—नाक से पूंछ के मूल भाग तक 9 फीट, 4 इंच

5. हाथी ऊँचाई—(1) 10 फीट से 10 फीट, 6 इंच तक (कंधे तक)

(2) 12 फीट से अधिक (अफ्रीका)

(3) 9 फीट, 11 फीट, 3 इंच (कंधे तक)

6. गेंडा ऊँचाई—(1) 5 फीट, 9 इंच से 6 फीट तक (कंधे तक)

(2) 4 फीट से $4\frac{1}{2}$ फीट तक (कंधे तक)

(3) 3 फीट, 8 इंच से अधिक नहीं (नारी)

(4) 6 फीट, 6 इंच से 6 फीट, 9 इंच तक (कंधे तक) (श्वेत गेंडा)

(5) 5 फीट, 8 इंच (कंधे तक)

(6) 5 फाट, 5 इंच (,,)

7. साँभर (Sambhar) नर ऊँचाई—55 इंच (कंधे तक)

(1) लंबाई—6 फीट, 9 इंच,
पूंछ की लम्बाई—12″

(2) ऊँचाई—59″ (कंधे तक)

(3) ऊँचाई—64″

8. बारहसिंगा (Swamp Deer) ऊँचाई कंधे तक 54″

9. चिंकारा (Chinkara) 26″ ऊँचाई (कंधे तक)

10. हरिण (Black Buck) 32″ ऊँचाई (कंधे तक)

11. चौसिंगा (Four horned Antelope) 25″ ऊँचाई

12. चीतल (Chital or spotted deer) 3 फीट ऊँचाई (लगभग)

13. कस्तूरी मृग(Musk deer) 20″ ऊँचाई

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

14. पिसूरा (Mouse deer)	10″—12″ ऊँचाई
15. नील गाय (Blue bull)	ऊँचाई—नर 52″—58″ तक, नारी कुछ छोटी होती है।
16. सूकर (Wild boar)	36″ ऊँचाई
17. नेवला (Common mungoose)	पूंछ सहित लम्बाई 3 फीट
18. बिज्जू (Ratel)	लम्बाई 25″—29″ पूंछ 6″
19. गिलहरी (Squirrel)	लम्बाई 5″—6″ पूंछ—कुछ अधिक लंबी
20. जंगली चूहा (Field mouse)	लम्बाई 6″—9″ पूंछ 5″—7″
21. सेही (Porcupine)	लम्बाई 28″—35″ पूंछ 3″—4″
22. खरगोश (Common hare)	लम्बाई 17″—19 इंच
23. जंगली बिल्ली (Wild cat)	लम्बाई 2 फीट से कुछ अधिक पूंछ 1 फुट (लगभग)
24. लकड़ बग्घा (Hyaena)	लम्बाई 5 फीट
25. भेड़िया (Wolf)	लम्बाई 3′-3″ से 3′-6″ तक पूंछ 14″—16″ तक
26. शृगाल (Jackal)	लम्बाई—2′ से 2′-6″ तक पूंछ 8″—11″ तक
27. लोमड़ी (Indian fox)	लंम्बाई 2′ से 2′-4″ तक बालों सहित पूंछ 18″ से 20″ तक
28. सोनकुत्ता (Wild dog)	लम्बाई 3′ पूंछ 16″—17″ तक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशुओं का शरीर-भार

पशुओं का शरीर-भार देश-काल से प्रभावित रहता है। आयु का परिवर्तन भी भार को परिवर्तित कर देता है। परिस्थितियों से पशु सुखी-दुखी बनते हैं और उनका स्वास्थ्य बनता बिगड़ता है। अतः परिस्थिति-विशेषता भार की वृद्धि और कमी का कारण मानी गई है।

पालित पशुओं के शरीर-भार का ज्ञान सुगमता से हो सकता है लेकिन वन्य जीवों के भार का परिज्ञान एक समस्या ही है। मृगया-प्रवीणों ने इस सम्बन्ध में बहुत खोज की है और अपने जीवन के मोह का परित्याग करके उन्होंने अनेक भयावह पशुओं के तनु-भार को मालूम किया। फिर भी मतैक्य नहीं। यह देखा गया है कि नर की अपेक्षा नारी (मादा) का शरीर-भार कम रहता है।

प्रसिद्ध शिकारियों के दिये गए नाप (Records) ही ऐसे विषयों के लिए अधिक उपयोगी माने गए हैं।

शेर (Tiger) का वज़न किसी ने 500 पौंड बताया है तो किसी ने 570, पौंड एवं 600 पौंड (लगभग) तक स्वीकार किया है। लघुकाय शेर का शरीर-भार 353 पौंड से 515 पौंड तक माना गया है।

शेरनी (Tigress) का शरीर-भार 290 पौंड से 343 पौंड तक कहा जाता है।

पूर्ण आयु प्राप्त रीछ (Sloth Bear) का तनु-भार 260 पौंड तथा रीछनी का 230 पौंड बताया जाता है।

कुछ शिकारियों के कथनानुसार रीछनी का वज़न 273 पौंड और रीछ का 198 पौंड निकला है। मंडलों के वन में मारे गए एक रीछ का शरीर-भार 400 पौंड से अधिक था। इसी प्रकार कूच-विहार के कानन में एक रीछ मारा गया था और उसके शरीर का वज़न 423 पौंड था।

कुछ पशुओं के शरीर-भार निम्नलिखित हैं—

1. तेंदुआ (Leopard)	सामान्यतः 85-115 पौंड, अधिकतम 150 पौंड नारी 115 पौंड
2. रीछ (Sloth bear)	280-320 पौंड
3. हाथी (Indian elephant)	8200 ,, से अधिक
4. वन भैंसा (Bison)	2000 ,, से अधिक
5. नील गाय (Blue bull)	800 ,, तक
6. सांभर (Sambhar)	500-700 ,,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

7. बारहसिंगा (Swamp deer)	370-400 पौंड
8. रीछ (Himalayan black bear)	200-250 पौंड, 400 पौंड
9. चीतल (Spotted deer)	130-230 ,,
10 भेड़िया (Wolf)	40-60 ,,
11. शृगाल (Jackal)	17-25 ,,
12. लाल लोमड़ी (Red fox)	10-20 ,,
13. लोमड़ी (Indian fox)	4-7 ,,
14. वन-श्वान (Wild dog)	43 ,,
15. खरगोश (Hare)	5-8 ,,
16. चिंकारा (Chinkara)	50 ,, लगभग
17. हरिन (Black buck)	90 ,, लगभग
18. बंदर (Bonnet Macaque)	13-19 ,,
	(नारी 7-8 ,,)
19. लंगूर (Common langur)	35-46 ,,
20. जंगली बिल्ली (Jungle cat)	10-20 ,,
21. ऊद विलाव (Smooth Indian otter)	16-24 ,,
22. बिज्जू (Ratel)	17-23 ,,
	(नर कुछ भारी होते हैं।)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पक्षियों का शरीर-माप

पक्षी का नाम	लम्बाई
1. देशी डोम काग (Jungle Crow)	17 इंच
2. सामान्य भस्मच्छवि काग (Common House Crow)	18 ,,
3. पाय काग (The Jackdaw)	13 ,,
4. देसी मूतरी (Indian Tree-Pie)	18 ,,
5. स्याह कंठ बनसरी (Black Throated Jay)	13 ,,
6. जाग़ (Chough)	17 ,,
7. राम गंगरा (Indin Grey Tit)	5 ,,
8. हरा राम गंगरा (Green Backed Tit)	5 ,,
9. पीत कपोती राम गंगरा (Yellow Cheeked Tit)	5 ,,
10. ताजदार श्याम राम गंगरा (Crested Black Tit)	4 ,,
11. लाल सिरा राम गंगरा (Red-headed Tit)	4 ,, (पूंछ सहित)
12. सिस्सी बादामी (Chestnut bellied Nuthatch)	5 ,,
13. सत भैया-गंगई (Jungle Babbler)	10 ,,
14. गँगई (Common Babbler)	9 ,,
15. दक्खिनी गँगई (Daccan Scimitar Babbler)	10 ,,
16. बादामी गँगई (Rufous Bellied Babbler)	5 ,,
17. पीतनयनी गँगई (Yellow eyed Babbler)	7 ,,
18. चित्ती गँगई (Spotted Babbler)	6 ,,
19. स्याह सिरी गँगई (Black headed Babbler)	5 ,,
20. सुभागी (Common Iora)	5 ,,
21. स्याह बुलबुल (Black Bulbul)	10 ,,
22. सोन हरेवा (Green Bulbul)	10 ,,
23. लाल पूंछ बुलबुल (Red Vented Bulbul)	8 ,,
24. सित कपोली बुलबुल (White Cheeked Bulbul)	8 ,,
25. लाल गाल बुलबुल (Red Whiskered Bulbul)	8 ,,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

26. सफेद भौंह बुलबुल (White Browed Bulbul)	7 इंच
27. दीवार रेंगनी (Wall Creeper)	7 ,,
28. नीला पिछा (Indian Blue Chat)	5 ,,
29. काला पिछा (Pied Bush Chat)	5 ,
30. खैर पिछा (Stone Chat)	5 ,,
31. भूरा पिछा (Dark Gray Bush Chat)	6 ,,
32. काला थिर थिरा (Black Redstart)	6 ,,
33. कलचिड़ी, तेलिन दामा (Indian Robin)	7 ,,
34. देहियल, ग्वालिन (Magpie Robin)	8 ,,
35. श्यामा (Shama)	11 ,,
36. नील गिरी कस्तूरी (Nilgiri Black Bird)	10 ,,
37. पांडु कस्तूरी (Blue Rock Thrush)	9 ,,
38. काल जीत कस्तूरा (Whistling Thrush)	12 ,,
39. नीला मखिया (Tickell's Blue Fly-catcher)	6 ,,
40. शाह बुलबुल, दूधराज (Paradise Flycatcher)	9 ,,
41. पंखा पूंछ मछरया (White Browed Fantail Flycatcher)	7 ,,
42. दूधिया, सफेद लटोरा (Grey Shrike)	10 ,,
43. पचानक लटोरा (Bay Backed Shrike)	7 ,,
44. मटिया लटोरा (Rufous Backed Shrike)	10 ,,
45. पहाड़ी लटोरा, देसी किरौला (Wood Shrike)	6 ,,
46. सहेली, लाल सहेली (Scarlet Minivet)	9 ,,
47. बाल सहेली (Small Minivet)	6 ,,
48. काला कसिया (Black Headed Cuckoo-Shrike)	7 ,,
49. भुजंगा (King Crow)	13 इंच (6 इंच वाली पूंछ सहित
50. पतिया फुदकी, दर्जिन (Tailor Bird)	5 ,,
51. पंखा पूंछ फुदकी, तुनतुनी फुदकी (Fantail Warbler)	4 ,,
52. पिंगली फुदकी (Ashy Wren Warbler)	5 ,, पूंछ सहित
53. पीलक (Golden Oriole)	9 ,,
54. पिरोला (Black headed Oriole)	9 ,,
55. सारिका, मैना (Indian Grackle)	10 ,,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

56.	गुलाबी मैना (Rosy Pastor)	9 इंच
57.	भूरी मैना (Grey headad Myna)	8 ,,
58.	पबई मैना (Brahming Myna)	8 ,,
59.	देसी मैना गलगल (Common Myna)	9 ,,
60.	गंगा मैना (Bank Myna)	9 ,,
61.	अबलखा (Pied Myna)	9 ,,
62.	बया (Common Weaver Bird)	6 ,,
63.	तोलिया बया (Striated Weaver Bird)	6 ,,
64.	सार मुनिया (White throated Munia)	5 ,,
65.	तेलिया मुनिया (Spotted Munia)	5 ,,
66.	लाल मुनिया (Red Munia)	4 ,,
67.	राजी गौरैया (Yellow throated Sparrow)	6 ,,
68.	देशी गौरैया (House Sparrow)	6 ,,
69.	धूमली अबाली (Dusky Crag Martin)	5 ,,
70.	भूरा ममोला (Grey Wag tail)	8 ,,
71.	चंडूल (Crested Lark)	7 ,,
72.	दबकी Ashy (Crowned Finch lark)	5 ,,
73.	सितनयनी (White eye)	4 ,,
74.	नीली फुलचुही (Purple Sunbird)	4 ,,
75.	फुल सुंघनी (Tickell's Flower Pecker)	3 ,,
76.	पित्ता, नौरंग (Indian Pitta)	7 ,,
77.	कठकोला (Mahratta Woodpecker)	7 ,,
78.	सोनापीठ कठकोला (Golden-Backed Wood pecker)	11 ,,
79.	लाल कपाल बसंता, तमेरा (Copper smith)	6 ,,
80.	नीलकंठ (Blue Jay)	13 ,,
81.	हरा पतरंगा (Green Bee-Eater)	9 ,,
82.	नीली पूंछपतरंगा (Blue Tailed Bee-Eater)	12 ,,
83.	कौड़िया किल किला (Pied King Fisher)	12 ,,
84.	नीला किलकिला (Common King fisher)	7 ,,
85.	घनेल (Common Grey Hornbill)	24 ,,
86.	हुदहुद (Hoopoe)	12 ,,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इमारती बबीला, बतासी (House Swift)		6 इंच
ताड़ बबीला (Palm Swift)		5 ,,
चिपक (Indian Night Jar)		10 ,,
बातक, पपीहा (Brain Fever Bird)		13 ,,
कोयल (Koel)		17 ,,
दहोख (Coucal)		19 ,,
लाल कंठी सुग्गा (Rose ringed Parakeet)		
टुंइयाँ (Blossom headed Parakeet)		14 ,,
बूसट, चुग़द (Spotted Owlet)		8 ,,
सफेद गिद्ध (White Scavenger Vulture)		24 ,,
लग्गर, जग्गर (Laggar Falcon)	पु०	16 ,,
	नारी	18 ,,
साँप मार गरुड़ (Crested Serpent Eagle)		28 ,,
शिकरा (Shira)	प०	12 ,,
	नारी	14 ,,
हरिल (Common Green Pigeon)		13 ,,
पहाड़ी कबूतर (Blue Rock Pigeon)		13 ,,
मोर (Common Peafowl)		40-46 ,,
	पूंछ सहित	70-90 ,,
	नारी	38 ,,
बटेर (Grey Quail)		8 ,,
तीतर (Black Partridge)		13 ,,
बटहा (Painted Sripe)	पु०	10 ,,
	नारी	11 ,,
सारस (Sarus Crane)		5 फीट
चकोर (Chukor)		15 इंच
चमटा बगुला (Spoonbill)		33 ,,
बुज़ा (White Ibis)		30 ,,
कटा (Comb Duck)	पु०	30 ,,
	नारी	26 ,,
सरिया (Cotton Teal)		13 ,,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh